नक्शबंदी सूफ़ी संत

स्वर्णिम श्रृंखला

पैगम्बर मुहम्मद से हिंदी सूफ़ियों तक

राजेन्द्र कुमार गुप्ता

महान क्रांतिकारी सूफी संत

मौलाना फ़ज्ल अहमद खां साहब (हुजूर महाराज)

के श्रीचरणों में सादर समर्पित

“हर शै में मौज़ूद है वो,
फिर भी सबसे पोशीदा,
ख़ुदी मिटा दे तू अपनी,
मिल जायेगा तुझे ख़ुदा”

नक्शबंदी सूफ़ी संत
स्वर्णिम श्रृंखला
पैगम्बर मुहम्मद से हिंदी सूफ़ियों तक

“बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम”

‘लेकर तेरा नाम, करें हर काम शुरु; तू बड़ा मेहरबान, रहम वाला है तू’

सभी गुणों का तू ही ख़जाना
सब तारीफ़ तेरी ही है,
इस दुनिया में जो कुछ है,
सब बख्शीस तेरी ही है ।

तू बड़ा मेहरबान, रहम वाला,
मालिक तू ही है जग का,
तेरी ही इबादत करते हम,
सही राह तू हमे दिखा ।

चलें नेक लोगों की राहों पर,
ना जिन पर बदबख्त चलें,
हो तेरी रहमत हम पर,
तेरी ही राह पर चले चलें ।

हे दीनानाथ ! हे परवरदिगार ! तूने हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) और बुज़ुर्गाने सिलसिला (रहम.) पर जो इनायतें और रहमते बख्शी हैं, उनका कुछ अंश इस नाचीज़ गुलाम को भी अता फ़रमा ।

आमीन ! आमीन ! आमीन !

सूफ़ी संतों का मार्ग प्रेम का मार्ग है, उनकी साधना का सार है परमात्मा या अपने गुरु के प्रति पूर्ण समपर्ण और प्रेम । यही उनके धर्म, कर्म और साधना का मर्म है । सूफ़ी संत धर्म के बाहरी स्वरूप से ऊपर उठकर आध्यात्मिकता को ही अपना सर्वोपरि लक्ष्य मानते हैं और उनके लिये धर्म के स्थूल रूप के पालन का महत्व उसी हद तक है जहाँ तक कि धर्म उनके लक्ष्य में बाधा उपस्थित नहीं करता, फिर भी लोग उन्हें वे जिस धर्म या सम्प्रदाय से सम्बंधित होतें है उससे जोड़कर उन्हें मुस्लिम या हिन्दू सूफ़ी इत्यादि नाम से संबोधित करते रहे हैं । सूफ़ीज्म (सूफ़ीवाद या तसव्वुफ़) कोई ‘वाद’ न होकर परम सत्य के प्रति पूर्ण समर्पण

व अनन्य प्रेम का ही दूसरा नाम है । यह न ही तो किसी सम्प्रदाय का नाम है न ही किसी पंथ का । सूफ़ी मत कोई सैद्धांतिक मत विशेष न होकर अध्यात्म की सरिता में गोता लगाने का एक ऐसा मार्ग है जो आचरण एवं अनुभवगत है और गुरु-कृपा का इसमें बहुत ही अहम स्थान है । 'सूफ़' अरबी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है ऊन और ज्यादातर सूफ़ी संत जो पुराने समय में स्वयं को ऊनी वस्त्रों से ढांपे रहते थे, 'सूफ़ी' कहलाने लगे । ज्यादातर विद्वान् इस बात से सहमत हैं कि ऊनी वस्त्रों के प्रयोग के कारण ये संत सूफ़ी कहलाने लगे ।

धर्म के स्थूल रूप का विशेष महत्व न होते हुवे भी सूफ़ी-संतों पर इस्लाम का प्रभाव साफ़ दिखाई पड़ता है, और वह इस कारण की इस्लाम का आधारभूत सिद्धांत-परमात्मा की एकता और अनन्यता (ला इलाहा इल्लल्लाह) सभी सूफ़ी साधनाओं का आधार-स्तम्भ है । इस्लाम का प्रादुर्भाव हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) के साथ हुआ और उनसे कुछ शताब्दियों बाद सूफ़ी शब्द प्रयोग में आया लेकिन सूफ़ी संत हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) साहब से पहले भी विद्यमान थे परन्तु तब उन्हें सूफ़ी नाम से संबोधित नहीं किया जाता था । परमात्मा द्वारा हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) से पहले भी समय-समय पर बहुत से पैगम्बर भेजे गये । इस्लामी मान्यता अनुसार पैगम्बरों की संख्या 124,000 और मसीहों की संख्या 313 है । मौलाना रूमी क़ुरआन से उद्घृत करते हैं कि 'पैगम्बरों का कहना है कि यदि सभी समुद्रों के जल को स्याही बना लिया जाए और सभी पेड़ों की कलम बना ली जाये तो भी वे परमात्मा की सभी विभूतियों और गुणों का वर्णन करने के लिये कम पड़ जायेंगी । लेकिन सम्पूर्ण क़ुरआन थोड़ी सी स्याही से ही लिख दिया गया है । अत: सारा ज्ञान क़ुरआन में ही निहित है कहना उचित नहीं होगा । हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) और क़ुरआन से पहले भी हजरत मूसा और जीसस की तरह पैगम्बर हुए हैं और परमात्मा का ज्ञान उपलब्ध था ।'

ये पूर्ववर्ती पैगम्बर एकेश्वरवादी अर्थात् परमात्मा की एकता को माननें वाले थे और उनका सन्देश था कि परमात्मा एक ही है । इस्लाम के पहले एकेश्वरवादियों को हनीफ कहा जाता था और माना जाता है कि वे अरब में पांचवी सदी ईसा-पूर्व से विद्यमान थे । वे मूर्तिपूजा के विरोधी और हजरत अब्राहम द्वारा प्रचारित धर्म के पुन:स्थापना के इच्छुक थे । वे स्वयं के आचरण पर जोर देने वाले और नैतिक मूल्यों, करुणा और सहानभूति के पक्षधर थे । कुछ ईसाई साधू छोटे-छोटे मठों में रहते अपना अधिकतर समय प्रार्थना एवं ध्यान में बिताते और दिन में पांच दफ़ा प्रार्थना किया करते थे । बाहरी शोर-शराबे से बचने के लिये ध्यान के वक़्त वे अक्सर अपने सिर को कपड़े से ढांप लेते और इनमे से कुछ सिज्दा भी करते थे ।

माना जाता है कि हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) बहुत से ऐसे साधुओं से मिले थे और वे उनकी श्रुद्धा, भक्ति और विनम्रता से प्रभावित थे । हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) सूफ़ी संतों का बहुत आदर करते थे । वे स्वयं तो उन्हें भोजन देते ही थे, अपने

साथियों को भी ऐसा करने के लिये प्रेरित किया करते थे । अली-अल-हुजवीरी के शब्दों में- 'पैगम्बर मुहम्मद साहब का स्वयं का कथन है कि वह जो सूफ़ी संतों के उपदेश को सुनकर आमीन नहीं कहता, अल्लाह की नज़रों में बेखबरों में शुमार किया जाता है ।'

सूफ़ीज्म का इतिहास बहुत पुराना है, यह उतना ही पुराना है जितना की मानवता का इतिहास । सूफ़ीज्म कोई इज्म (वाद) नहीं बल्कि प्राचीन प्रज्ञा है । तसव्वुफ़ (सूफ़ीज्म) आध्यात्मिकता की उचाईयों को प्राप्त करने का ऐसा मार्ग है जो प्राचीन ऋषि-मुनियों को ज्ञात था और उनमें प्रचलित था । वे प्राणाहुति द्वारा अपने शिष्यों में अध्यात्मिक उर्जा का संप्रेषण करते थे लेकिन समय के साथ यह विद्या विलुप्त हो गयी और इसका पुन: प्रादुर्भाव हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) द्वारा किया गया । पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) को दो तरह का ज्ञान बख्शा गया; एक वह जो उन पर आयतों के रूप में उतरा व पवित्र कुरआन के रूप में संग्रहित किया गया और दूसरा वह जो परमात्मा ने उनके हृदय में उतारा, जिसे उन्होंने अपने साहबाओं (उनके अध्यात्मिक साथियों) को हृदय-से-हृदय में प्रेषित किया और इसी से सूफ़ी संतों का सिलसिला फिर से शुरु हुआ ।

पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) से पहले सूफ़ी संतों को कमाल-पोश (यानि कम्बलधारी) कहा जाता था । कहा जाता है कि कमालपोशों का एक समूह अपने वक़्त के सभी पैगम्बरों के पास गया, लेकिन कोई उन्हें पूर्णतया संतुष्ट नहीं कर पाया । लेकिन जब वे हजरत मुहम्मद (सल्ल.) के पास गये तो वे पूर्णतया संतुष्ट हो गये और उन्हीं के साथ रहने लगे । ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि इस्लाम का फलसफा (कर्मकांड नहीं), इस्लामी शिक्षा-"केवल एक परमात्मा है, उसके सिवाय कुछ भी नहीं" जिस तरह से पेश किया गया वह बेहतरीन था । इसने सूफ़ीज्म जो एकेश्वरवादी सिद्धांत पर आधारित है, को फलने-फूलने के लिये उपजाऊ भूमि का काम किया । सूफ़ी संत जहाँ से जो अच्छा मिले, अपनी साधना पद्धति में शामिल करते रहे हैं ताकि वे आत्मिक उन्नति के सर्वोपरि स्तर पर पहुँच सकें ।

आध्यात्मिकता (रूहानियत) के लिये किसी धर्म (मजहब) विशेष की पाबन्दी कोई शर्त नहीं है । परमात्मा का सरोकार किसी धर्म विशेष से न होकर सिर्फ प्रेम से है । आध्यात्मिकता के लिये धर्मान्धता की आवश्यकता नहीं है । रस्मो-रिवाज़ धर्म के केवल बाहरी अंग हैं जो स्थान एवं सामाजिक परिस्थितियों पर निर्भर हैं । इसके विपरीत आध्यात्मिकता का अर्थ है परम सत्य की खोज और आत्म-साक्षात्कार । आध्यात्मिकता का सम्बन्ध आत्मा से है जो सभी में एक ही है । जो जिस समाज और धर्म में पैदा हुआ, उसकी रस्मो-रिवाज़ को निबाहना उसका कर्तव्य है । आध्यात्मिकता मनुष्य को फरागदिली सिखाती है ना कि मानसिक संकीर्णता ।

आध्यात्मिकता से तात्पर्य है सत्य की खोज करना और आत्म-साक्षात्कार करना जिसके लिये किसी समय विशेष की प्रतीक्षा करना उचित नहीं है । इसके लिये आज औए अभी ही प्रयास करना होगा । यदि इस क्षण को हाथ से निकल जाने दिया तो यह लौटकर नहीं

आएगा । आप शुभ या उचित समय की प्रतीक्षा में इस क्षण को दुनियावी तमाशे में उलझकर बिता सकते हैं, लेकिन जैसा कि हजरत शैख़ अहमद फारूकी साहब ने फ़रमाया है, “कमाल इस बात में है कि लोगों के साथ उठो-बैठो, खरीद-फरोख्त करो, शादी-ब्याह करो, लेकिन इन सबके बावजूद एक क्षण भी परमात्मा की याद से खाली न जाये ।” सूफ़ी-साधना का यही सार-तत्व है । सूफ़ी आज और अब में, वर्तमान में जीने वाले जिन्दादिल इंसान होते हैं ।

सूफ़ी संत सादगी और सहजता से रहते हुए परम सत्य के महान रहस्य को अपने स्वयं के जीवन द्वारा लोगों पर प्रकट करते रहे हैं, उन्हें समझाते रहे हैं परन्तु कुछ तो प्रचार-प्रसार से दूर रहने और कुछ आध्यात्मिकता का पांडित्यपूर्ण विश्लेष्ण करने में कोई विशेष रूचि न रखने के कारण उनके विषय में जन-साधारण में कोई विशेष जानकारी प्राय: उपलब्ध नहीं है । फिर भी तसव्वुफ़ कोई सैद्धांतिक मत विशेष न होकर अध्यात्म की सरिता में गोता लगाने का एक ऐसा मार्ग है जो केवल अपने आचरण और अनुभव द्वारा ही ठीक से जाना जा सकता है । तसव्वुफ़ ना ही तो कोई दर्शन है ना ही किसी धर्म विशेष का अनुपालन । तसव्वुफ़ न तो रस्म (प्रथा) है और ना ही इल्म (ज्ञान) । अगर रस्म होता तो मुजाहिदे यानि मेहनत और मशक्कत में दिल लगाने से (अभ्यास से) हासिल हो जाता, और अगर महज इल्म होता तो तालीम (शिक्षा) से हासिल हो जाता ।

तसव्वुफ़ अख्लाकी (आचरणगत) है, यह व्यक्ति के स्वयं के आचरण और अभ्यास पर निर्भर है । इस विषय में हजरत अबू-हफ्स का कहना है कि तसव्वुफ़ प्रत्येक काल और देश में एवं हरेक हाल में आचरणगत ही है । अवसर के अनुकूल आचरण करना ही सच्चा मनुष्य होना है । कश्मीर के प्रसिद्द विद्वान् सिराजुद्दीन का कथन है कि सूफ़ी गुलाबों में गुलाब होते हैं और काँटों में काँटा । जो आचरण का पालन नहीं करता वह परमात्मा से कोसों दूर है । महान सूफ़ी संत हजरत अबुल हसन खिरकानी साहब का भी कहना था कि सूफ़ी वह नहीं है जो हमेशा प्रार्थना का नमदा उठाये फिरता है या पैबंद लगे कपड़े पहनता है या कोई और विशेष वेश-भूषा या तौर-तरीके अपनाता है, बल्कि सूफ़ी वह है जो लोगों की निगाह से बचता है लेकिन फिर भी लोग उसकी तरफ़ आकृष्ट होते हैं; उसे न दिन में सूर्य की आवश्यकता है न रात में चाँद की । सूफ़ी होने का तात्पर्य है अपनी हस्ती को सम्पूर्ण रूप से इस तरह विलीन कर देना की उसे परमात्मा के सिवाय किसी के अस्तित्व की आकांक्षा ही न रहे । हाकिम जामी, जो एक महान सूफ़ी संत एवं विद्वान् थे, का कहना है कि तुम अपनी बुद्धि और ज्ञान का अभिमान मत करो क्योंकि इस राह में अक्सर बुद्धि तरक्की में रूकावट पैदा करती है और ज्ञान हासिल करना बेवकूफ़ी है । इस कथन का वास्तविक अर्थ है कि सूफ़ी-साधक को अपने दिल की किताब को पढ़ना चाहिये और उस पर नजर रखनी चाहिये । बुद्धि द्वारा ज्ञान हासिल करना अक्सर अहं को उभार देता है जबकि सच्चा ज्ञान प्रेम द्वारा स्वयं को मिटाने पर ह्रदय में स्वत: ही प्रकट हो जाता है ।

परमात्मा के हुज़ूर में हाज़िर रहना तसव्वुफ़ का सार है। सूफ़ी साधना का मतलब है हकीक़त की तरफ़ जागरूक होकर निरंतर आत्मोथान का प्रयास करना, जो केवल अभ्यास और अपने अनुभव पर आधारित है। लेकिन उनका यह आत्मोथान का प्रयास औरों के साथ सामंजस्यपूर्ण होता है और उनकी आत्मिक उन्नति का लाभ औरों पर भी परिलक्षित होता है। उनकी रूहानियत किसी विशेष अवसर या प्रयोजन के लिये नहीं होती, बल्कि उसका प्रभाव उनके दैनिक जीवन के कार्यों में भी दिखलाई देता है। उनका प्रयास एक सच्चा इंसान बनना होता है, जो बन्धनों एवं पूर्वाग्रहों से मुक्त हो। इंसान परमात्मा की सर्वोत्कृष्ट कृति है फिर भी उसके स्वयं के पृथक व्यक्तित्व, ज्ञान एवं आनंद की अनुभूति की इच्छा के कारण वह एक परिपूर्ण मानव के रूप में नहीं उभर पाता। इंसान में परमात्मा की सभी विभूतियों की छवि मिलती है, क्योंकि परमात्मा ने उसे अपनी प्रतिकृति के रूप में बनाया है। केवल इंसान के लिये ही यह संभव है कि वह उन्नति कर अपने सच्चिदानंद रूपी मूल स्वरूप को पुन: प्राप्त हो जाये। जो कुछ भी ब्रह्मांड में है, इंसान में वह सब कुछ सूक्ष्म रूप से मौजूद है। इंसान की आवश्यकता और उसकी पात्रता के अनुसार विभिन्न सम्भावनाएं समय-समय पर प्रकट होती रहती हैं।

शैख़ शम्सुद्दीन हबीबुल्लाह (मिर्ज़ा जानजाना) के अनुसार समस्त भौतिक सृष्टि परमात्मा के दिव्य गुणों एवं शून्य के मिश्रण से ही उत्पन्न होती है। इसीलिए भौतिक सृष्टि में दो विपरीत उद्गम समाहित रहते हैं। भौतिक सृष्टि की सघनता जिससे अन्धकार, अज्ञान एवं बुराई प्रकट होते हैं, शून्य के प्रभाव के कारण लक्षित होते हैं। इसके विपरीत प्रकाश, ज्ञान एवं सद्गुण परमात्मा की विभूतियों के कारण। सूफ़ी संत इसीलिए अपनी अच्छाइयों को परमात्मा के नूर की प्रतिछाया और उसकी कृपा मानते हैं, जिसमें उनकी अपनी कोई करामात नहीं है और वे स्वयं को एक सघन द्रव्य के रूप में देखते हैं जो दुर्गुणों एवं अन्धकार से परिपूर्ण है एवं जिसकी प्रकृति जानवरों से भी बदतर है। यह विचार उन्हें धीरे-धीरे मोह के बंधन से मुक्त होने में सहायता और परमात्मा की तरफ़ उन्मुख होने के लिये प्रेरित करता है। जैसे ही साधक स्वयं को परमात्मा की तरफ़ उन्मुख करता है परमात्मा कृपापूर्वक उसके हृदय को दिव्य प्रकाश एवं सामीप्य के लिये दृढ़ लगन से भर देता है।

सूफ़ी साधना और अन्य साधना मार्गों में यूँ तो कोई विशेष अन्तर नजर नहीं आता लेकिन सूफ़ी साधना अन्य साधना मार्गों से दो बातों में भिन्न है। एक तो बहुत मजबूत गुरु-शिष्य परम्परा एवं गुरु के प्रति अदब और दूसरी तवज्जोह। सूफ़ियों के लिये परमात्मा उनके गुरु में ही परिलक्षित होता है और परमात्मा ही स्वयं गुरु रूप में उनका पथ-प्रदर्शन करता है। मौलाना रूमी का कथन है अगर तुम्हारा शैख़ तुम्हें प्रार्थना के नमदे को शराब में भिगोकर लाने के लिये कहता है तो उसकी आज्ञा का पालन करो, वो बेहतर जानता है, तुम्हारे लिये क्या उचित है। तवज्जोह का अर्थ है आत्मिक उर्जा का सम्प्रेषण। यह वह तरीका है जिससे गुरु या शैख़ अपनी उच्च आत्मिक उर्जा या ज्ञान को अपने हृदय से शिष्य के हृदय में

उतारता है । इसके द्वारा शैख़ व अन्य बुज़ुर्ग संतों द्वारा प्राप्त आत्मिक अनुभव शिष्य के हृदय में उजागर होने लगते हैं और शिष्य बहुत कम समय में अध्यात्मिक ऊँचाइयों को छूने लगता है । जहाँ कि अन्य साधना पद्धितियों में साधारणतया साधक को आगे बढ़ने के लिये स्वयं प्रयास करना होता है, सूफ़ी साधना में शिष्य अपने गुरु द्वारा रूहानी पोषण प्राप्त करता है । विभिन्न सूफ़ी तरीकतों में साधना और आत्मिक उर्जा के सम्प्रेषण का तरीका अलग-अलग है और उसी के आधार पर सूफ़ियों के अलग-अलग सिलसिले भी हैं, जो करीब इकतालीस हैं, जिनमें मुख्य हैं-नक्शबंदी, चिश्ती, कादरी एवं सुहरावरदी ।

भारत में सुफ़ीज्म का पदार्पण चिश्ती सूफ़ी संत ख्वाजा मोईनुद्दीन चिश्ती (ख्वाजा गरीब नवाज) द्वारा हुआ जो करीब बारहवीं सदी के मध्य में भारत आये । अविभाजित भारत में आने वाले प्रथम सूफ़ी संत अली-अल-हुजविरी थे । चिश्ती सिलसिले के सूफ़ी संत चालीस दिनों का चिल्ला रखते हैं, जिस दौरान वे जहाँ तक संभव हो मौन रहते हैं, अल्प भोजन करते हैं और अपना ज्यादातर समय प्रार्थना एवं ध्यान में बिताने का भरसक प्रयत्न करते हैं । कव्वाली द्वारा भावावेश की स्थिति (हाल) में प्रवेश पाना भी इनकी साधना पद्धति का एक अहम् हिस्सा है । कहा जाता है कि ख्वाजा मोईनुद्दीन चिश्ती से प्रसन्न होकर अपनी आत्मिक उर्जा का संचार उनमें करने के लिये शैख़ इब्राहीम क़न्दोज़ी ने उन्हें स्वयं द्वारा चबाया हुआ रोटी का टुकड़ा दिया और एक ही क्षण में ख्वाजा मोईनुद्दीन चिश्ती के जीवन में विस्मयकारी परिवर्तन हो गया । उन्होंने अपना सब कुछ बेचकर और उस धन को गरीबों और जरुरतमंदों में बांटकर समरकंद और बुखारा होते हुए हारून में चिश्ती सम्प्रदाय के शैख़ ख्वाजा उठमान हारुनी से दीक्षा ग्रहण कर भारत में पदार्पण किया । इस सिलसिले के अन्य अत्यंत प्रसिद्द संत शैख़ कुतुबुद्दीन काकी, बाबा फरीद, हजरत निजामुद्दीन औलिया एवं शैख़ नसीरुद्दीन (चिरागे दिल्ली) हुए हैं, जिनके मुरीदों की संख्या लाखों में हैं और अब यह सिलसिला भारत में सूफ़ियों का प्रमुख सिलसिला है ।

चिश्तियों के बाद भारत में आने वाले अन्य मुख्य सूफ़ी संप्रदाय हैं सुहरावरदी, कादरी और नक्शबंदी । सुहरावरदी संप्रदाय को भारत में लाने का श्रेय शैख़ बहाउद्दीन ज़कारिया को जाता है जो शैख़ कुतुबुद्दीन काकी के समकालीन थे और कादरी सूफ़ी सिलसिले के प्रवर्तक हजरत अब्दुल कादिर जिलानी के नाती थे । कादरी सिलसिले का भारत में आगमन लगभग पंद्रहवी शताब्दी के शुरु में शैख़ मुहम्मद घाव्थ द्वारा हुआ । इस सिलसिले के प्रसिद्द संत हजरत मिया मीर ने गुरु रामदास जी के आग्रह पर हर-मंदिर साहब की नीवं रखी थी और हजरत बुल्ले शाह तो जग प्रसिद्द सूफ़ी-संत हुए हैं, जो अपने गीतों के माध्यम से जन-जन के हृदय में बस गये ।

नक्शबंदी सूफ़ी संत सबसे अंत में भारत में आये । नक्शबंदी सूफ़ी संतों ने अपनी कर्मभूमि मक्का-मदीना से शुरु कर ईरान और फिर उजबेकिस्तान और वहाँ से भारत चुनी । उजबेकिस्तान में इस सिलसिले के हजरत गजदेवानी, हजरत अजीजाँ, शाह बहाउद्दीन नक्शबंद

एवं अन्य महान संतों की समाधियाँ स्थित हैं । इन समाधियाँ का पिछले कुछ दशकों में उजबेकिस्तान के राष्ट्रपति ने जीर्णोद्धार कर उन्हें बहुत खूबसूरत बनवा दिया है और वहां इन बुज़ुर्ग संतों का फैज़ निरंतर बरसता रहता है । भारत में आने वाले प्रथम नक्शबंदी सूफ़ी संत थे हजरत मुहम्मद बाकी बिल्लाह जो सौलवही सदी में भारत आये और दिल्ली में रहने लगे । यह सिलसिला अन्यों से थोड़ा इसलिए भिन्न है कि इसमें मौन साधना पर अधिक बल दिया गया है । प्रेम का प्रवाह जाग्रत करना नक्शबंदी सिलसिले की विशेषता है । इस परम्परा में सतगुरु द्वारा शिष्य के हृदय में प्रेम जाग्रत किया जाता है । इसमें आत्मा आत्मा को आकर्षित करती है । इस परम्परा में साधना का सार अपने आप को पूर्णतया रिक्त कर सतगुरु के माध्यम से परम सत्य को हृदयंगम करना है । इस सिलसिले में अध्यात्मिक प्रगति का आधार रूहानी चक्रों को स्फुरित कर उन्हें पूर्ण उर्जावान बनाना है जो तवज्जोह द्वारा किया जाता है । परमात्मा की अद्वैतता को हृदयंगम करना इस सिलसिले के सूफ़ी संतों की साधना का सार है ।

इस सिलसिले के महान क्रान्तिकारी संत शाह मौलाना फ़ज्ल अहमद खान साहब (हुजूर महाराज) ने एक हिन्दू, महात्मा रामचन्द्र जी महाराज (जनाब लालाजी महाराज, फ़तेहगढ़) को बाकायदा बैअत कर (दीक्षा देकर) इज़ाज़त-ताम्मा (पूर्ण सतगुरु पदवी) देकर नक्शबंदी-मुजद्दिदी-मजहरी परम्परा का उतराधिकारी घोषित किया और उनके माध्यम से इस सिलसिले का प्रचार एवं प्रसार हिन्दुओं में किया । उनका कहना था कि यह हिन्दुओं की प्राचीन अध्यात्मिक विद्या है जो अब उनमें पुन: प्रसारित की जा रही है । श्रीमदभगवद्गीता में भी इसका स्पष्ट संकेत मिलता है । श्रीमदभगवद्गीता अपने आप में भगवान श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को युद्ध क्षेत्र में एक बहुत ही शक्तिशाली तवज्जोह (शक्तिपात) का उदाहरण है । श्रीमदभगवद्गीता का उपदेश भौतिक स्तर पर न होकर अध्यात्मिक स्तर पर दिया गया था क्योंकि युद्ध प्रारम्भ होने के शंखनाद के बाद इस वार्तालापी उपदेश के पूर्ण हो जाने तक युद्ध के रुके रहने की सम्भावना नजर नहीं आती । श्रीमदभगवद्गीता यह भी कहती है कि यह ज्ञान (हृदय-से-हृदय में शक्तिपात द्वारा आत्मज्ञान का प्रेषण) पूर्व में भगवान श्रीकृष्ण ने विवस्वान को, विवस्वान ने इक्ष्वाकु को और इक्ष्वाकु ने इसे मनु को दिया था, जिनके द्वारा यह ज्ञान राजर्षियों में पहुँच कर कालक्रम से खंडित हो गया । भगवान श्रीकृष्ण ने यह ज्ञान अर्जुन को दिया और पुन: यह ज्ञान लुप्त हो गया, जो हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) द्वारा पुन: प्रसारित किया गया ।

सूफ़ी साधना के आवश्यक तत्व क़ुरआन मजीद में बहुतायत से शामिल हैं और उनके कुछ साहबाओं में जो रहस्यवादी प्रवृति देखने में आती है, उसका समर्थन और औचित्य भी क़ुरआन मजीद में मिलता है । सांसारिक सुखों का त्याग और ख़ुदा से अत्यधिक खौफ़ की प्रवृति शुरु के मुस्लिम अनुयायिओं और विशेषकर सूफ़ी संतों में प्रचुरता से देखने में आती है । उनके अध्यात्मिक विकास में भी जप, तप और साधना का विशेष महत्व रहा है । लेकिन

नक्शबंदी सूफ़ी परम्परा में साधना पद्धति में विकास होता रहा है और इसमें प्रेम और भक्ति और शिष्य के आत्मिक उत्थान में गुरुकृपा का महत्व उतरोतर अधिक होता गया है । इस सिलसिले का नाम 'नक्शबंदी' हजरत शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) पर पड़ा । कहा जाता है कि शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) की तीव्र उत्कंठा थी कि उन्हें ऐसा मार्ग मिले कि जिसका अनुसरण करने से साधक को परमात्मा का साक्षात्कार हो जाये । दैवीय प्रेरणा के रूप में ईश्वर की ओर से यह प्रश्न हुआ कि तूने जो इस रास्ते में कदम रखा है, किस लिये ? शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने कहा कि 'जो कुछ मैं कहूं या चाहूं वह हो ।' उत्तर मिला नहीं, जो कुछ हम कहते हैं या चाहते हैं वही होगा । शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने कहा "मैं ऐसा नहीं कर सकता । मुझे जो मैं कहूं या चाहूं, करने की इज़ाज़त होनी चाहिये वर्ना मुझे यह तरीकत (राह या सिलसिला) स्वीकार नहीं ।" उन्हें फिर उत्तर मिला कि नहीं जो कुछ हम कहते हैं या चाहते हैं, वही होगा । उन्होंने पुन: कहा जो मैं कहूं या चाहूं, वह हो । तब उन्हें पंद्रह दिन अकेला छोड़ दिया गया और वे गहरे अवसाद से घिर गये । अंत में उन्हें सुनाई दिया 'ओ बहाउद्दीन ! जो तुम चाहते हो, तुम्हेँ दिया जायेगा ।' वे बहुत प्रसन्न हुए और कहा, "मुझे ऐसा रास्ता चाहिये जिस पर चलने वाला सीधा परमात्मा के हुज़ूर में हाजिर हो जाये । मुझे मुशाहद: (दिव्य दर्शन) हुआ और आवाज सुनाई दी कि जो तुम्हे चाहिये वो दिया गया ।" और यह तरीका है क़ल्ब (हृदय चक्र) का जाकिर होकर अनहद नाद द्वारा निरंतर परमात्मा का जिक्र; नीचे के रूहानी चक्र छोड़कर हृदय चक्र (अनाहत चक्र) से शुरुआत कर इस एक चक्र को स्फुरित और जागृत कर बाकी के सभी चक्रों का भी स्वत: उर्जावान हो स्फुरित और जागृत होने से साधक का तीव्रता से अपने लक्ष्य की तरफ़ बढना । हजरत मुजद्दिद अल्फ़सानी ने हृदय चक्र से सीधे आज्ञा चक्र को स्फुरित और जागृत करने का मार्ग अपनाया और हजरत मिर्जा जानजाना ने इस प्रक्रिया में सतगुरु की दया और कृपा को प्रमुखता देने का कार्य किया और धीरे-धीरे इस सिलसिले में शिष्य की प्रगति में गुरु की सहायता और जिम्मेदारी का स्थान प्रमुखता पाता गया । महात्मा रामचन्द्र जी ने आज के युग की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए इस साधना पद्धति को मात्र गुरु के प्रति पूर्ण प्रेम व समर्पण पर आधारित कर इसे और भी सहज और सरल बना दिया । महात्मा डॉ. चन्द्र गुप्ता ने एक और कदम आगे बढ़कर गुरु और परमात्मा में कोई भेद न माना । आपका फ़रमाना है कि "मेरे लिये मेरे गुरु के आलावा कोई और भगवान नहीं है ।" यह बात स्थूलता के स्तर पर नहीं कही गयी है बल्कि आपका तात्पर्य है कि सतगुरु का सारभूत ही ईश्वर का सारभूत है, तत्वत: गुरु और भगवान एक ही हैं । परमात्मा ही गुरु के हक़ीकी रूप में स्वयं अवतरित होता है । इस तरह यह सिलसिला आज वेदांत के अद्वैततावादी सिद्धांत को समाहित कर एक सरल और अत्यंत प्रभावशाली साधना पद्धति में ढल गया है और विश्व के कोने-कोने में फ़ैल रहा है । इसीलिए वर्तमान में इस सिलसिले को नक्शबंदिया मुजद्दिदिया मजहरिया रामचंद्रिया कहा जाने लगा है ।

इस पुस्तक में बुजुर्गों के नाम के साथ उनके प्रति श्रद्धा और सम्मान प्रकट करने के लिये कुछ संकेताक्षर प्रयोग किये गये हैं जिनका अर्थ इस प्रकार है: **सल्ल.-'सल्लल्लाहु अलैहिवसल्लम'**-यह हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब के नाम के साथ प्रयोग किया जाता है। इसका अर्थ है उन पर परमात्मा की रहमत और सलामती हो; **रजि.-'रजी अल्लाह अनहु'**-यह हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) के परिवार वालों और उनके साहबाओं के लिये प्रयोग किया जाता है जिसका अर्थ है परमात्मा उनसे राजी रहे; **रहम.-'रहमतुल्लाहु अलैहि'**-यह महान सूफ़ी संतों के नाम के साथ प्रयोग किया जाता है। इसका अर्थ है उन पर परमात्मा की रहमत हो; **(कु. सि.)-'कुद्स सिर्रहू'**-यह सूफ़ी संतों के नाम के साथ प्रयोग किया जाता है। इसका अर्थ है उनकी आदतें व स्वभाव पवित्र हों और **अलैहि.-'अलैहिस्सलाम'**-यह हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) के आलावा अन्य पैगम्बरों और फरिश्तों के नाम के साथ प्रयोग किया जाता है। इसका अर्थ है उन पर परमात्मा की सलामती हो।

इस पुस्तक को लिखने के लिये जो बहुमूल्य जानकारी मुझे पूर्ववर्ती लेखकों की पुस्तकों और वेब-साइट्स से मिली है, मैं उन सबके प्रति हृदय से अपना आभार प्रकट करता हूँ। इससे पहले 'प्रेम प्रवर्तक सूफ़ी' पुस्तक में हजरत बायजीद बिस्तामी (रहम.) से लेकर महात्मा डॉ. चन्द्र गुप्ता तक संतों की जीवनी एवं उनके उपदेशों का कुछ वर्णन किया गया है। प्रस्तुत पुस्तक में आज के पाठकों की रूचि और भाषा को ध्यान में रखते हुए श्रृंखला के शुरु से सभी महापुरुषों को अर्थात हजरत पैगम्बर मोहम्मद (सल्ल.) से लेकर सभी नक्शबंदी सूफ़ी संतों को शामिल किया गया है। मौलाना फ़ज्ल अहमद खां साहब (हुजूर महाराज) से पहले के संतों के बार में अधिक जानकारी प्राय: उपलब्ध नहीं है अत: प्रयास किया गया है कि उनसे पहले के संतों के बारे में जानकारी थोड़ी विस्तार से दी जाये और उनके बारे में सभी रोचक जानकारी, विशेषकर जो साधारण तौर पर आसानी से उपलब्ध नहीं है, उसे पाठकों को उपलब्ध करायी जाये। इस प्रयास में यथासम्भव उनके जन्म, देहावसान और समाधियों के चित्र व वे कहाँ स्थित हैं और उनके मुख्य:-मुख्य: उपदेशों की जानकारी भी देने का प्रयास किया गया है। पुस्तक के आकार को ध्यान में रखते हुए हुजूर महाराज और उनके बाद के संतों के बारे में जानकारी संक्षिप्त में ही दी गयी है। इस कार्य का एकमात्र उद्धेश्य महान बुजुर्गों के जीवन की एक झलकी प्रेमी-साधकों के समक्ष प्रस्तुत करना है। गुरु भगवान का यह कार्य उन्ही के श्रीचरणों में सादर समर्पित है। इसमें जो कुछ भी त्रुटी रह गयी हो, वह मेरी अपात्रता के कारण, जिसके लिये मैं विज्ञ पाठकों से क्षमाप्रार्थी हूँ। आप वेब-साईट www.sufisaints.net देखने और अपने सुझाव 9899666200/011-22718010 और rkgupta51@yahoo.com पर देने के लिये आमंत्रित हैं।

दासानुदास

राजेन्द्र कुमार गुप्ता

हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.)

'या इलाही अपनी अज़मत और अता के वास्ते,
नूरे ईमां दे मुहम्मद मुस्तफा के वास्ते'
(हे परमात्मा ! अपनी मान-प्रतिष्ठा और दानशीलता के नाम पर,
ईमान का प्रकाश बख्श पवित्र हजरत मुहम्मद के नाम पर)

हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) इस्लाम धर्म के प्रवर्तक थे। आपका जन्म सोमवार 12 रबी-उल-अव्वल, तदनुसार 11 नवम्बर 569 ई. में हजरत अब्राहम के वंश में मक्का में हुआ। उनके पिता का नाम अब्द-अल्लाह (अब्दुल्लाह पुत्र अब्दुल मुत्तलिब) था। उनके जन्म के पहले ही उनके पिता का निधन हो गया था। उनकी माता का नाम अमीना था। जब आप माता के गर्भ में थे, आपकी माताजी ने स्वप्न में एक व्यक्ति को यह कहते देखा कि उनके गर्भ में एक ऐसा व्यक्ति है जो दुनिया का सरदार होगा और उसका नाम मुहम्मद होगा। उनके जन्म के समय उनकी माताजी ने देखा कि एक नूर उनसे निकला जिसके प्रकाश में उन्हें शाम (डमास्कस) नगर दिखलाई पड़ा। उनके जन्म के समय उनकी माता के पास फातमा (हजरत उस्मान की माता) थी। उनका कहना था की हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) के जन्म के समय उन्होंने देखा कि जैसे सितारे आसमान से लटक कर मक्का की जमीन के नजदीक उतर आये हैं।

हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) के वंश का नाम कुरैश था जो अरब का एक प्रमुख वंश था। इस वंश में यह रिवाज था की वे अपने नवजात शिशुओं को नजदीकी गावों में दूध पिलाने वाली स्त्रियों को दे दिया करते थे, जो उन्हें अपने घर ले जाया करती थीं। यह सौभाग्य साअद नामक कबीले को प्राप्त हुआ। उनकी धाय का नाम हलीमा था। कहा जाता है कि आप अपनी धाय के केवल दाहिने स्तन का दूध पीते थे और दुसरे स्तन का दूध अपने दूध-भाई के लिये छोड़ दिया करते थे। दो वर्ष बाद उनकी धाय ने उन्हें उनकी माता के पास वापस भेज दिया।

उनकी माता भी जब हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) 6 वर्ष के ही थे, मदीना जो तब याथ्रिब नाम से जाना जाता था, वहाँ से लौटते वक़्त बीमार होकर चल बसीं। उनके लालन-पालन की जिम्मेदारी उनके दादा अब्दुल मुत्तलिब पर आ पड़ी और वे भी दो वर्ष बाद उन्हें एक बार फिर से अनाथ छोड़कर चल बसे। इसके बाद वे अपने चाचा अबू तालिब के पास रहने चले आये।

हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) जब अपने चाचा के साथ डमास्कस जा रहे थे तो रास्ते में बोस्त्रा में उन्हें बुहीरा राहिब नाम के एक साधू मिले जो वहाँ एक मठ में रहते थे जिन्होंने उन्हें एक पैगम्बर के रूप में पहचाना और उनके चाचा से कहा कि वे उन्हें वहाँ से

वापस ले जाये, उनके हाथों बहुत बड़े काम होने वाले हैं और यह उनके लिये अधिक सुरक्षित होगा। जब आप करीब 10-11 वर्ष के हुए तो अपने हमउम्र साथियों के साथ बकरियां चराने के लिये जाने लगे, जो उन दिनों प्रचलन में था और अच्छे घरों के बच्चे भी यह किया करते थे। आपके चाचा आपका भली-भांति लालन-पालन करते थे। वे एक व्यापारी थे और तिजारत (व्यापार) के सिलसिले में एक बार आपका सीरिया जाना हुआ। हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) तब कोई बारह वर्ष के थे और इस यात्रा में वे अपने चाचा अबू तालिब के साथ रहे।

उस जमाने में अरब के कबीले आपस में लड़ते रहते थे। इन नित्य की लड़ाइयों से लोग तंग आ चुके थे और चाहते थे की ये लड़ाइयाँ समाप्त होकर शांति कायम हो। कुछ लोगों ने मिलकर, जिनमे हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) भी शामिल थे, इन कबीलों में समझोता करवाया। लेकिन एक बार फिर से झगड़े, यहाँ तक की खून खराबे की नौबत भी आ गयी क्योंकि अतिवर्षा के कारण काबे का पवित्र घर क्षतिग्रस्त हो गया था और मरम्मत के बाद ये कबीले 'हजरे असवद' (पवित्र काला पत्थर) को उसके स्थान पर अपने कबीले द्वारा रखे जाने पर अड़े हुये थे। जब कई दिनों तक कोई निर्णय नहीं हुआ तो सबने मिलकर यह निश्चय किया कि अगली सुबह जो भी पहला व्यक्ति वहाँ आये उसका निर्णय मान लिया जाये। ईश्वर की कुछ ऐसी कृपा हुई की यह सौभाग्य उसने हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) को दिया। आपने इस झगड़े को सुलझाने के लिये एक अनोखा तरीका अपनाया। उन्होंने 'हजरे असवद' को एक चादर पर रखवाकर सभी कबीलों के सरदारों को उस चादर के कोनों को पकड़कर एक साथ उठाने के लिये कहा। जब वह पवित्र पत्थर उपयुक्त स्थान तक उठा लिया गया तो आपने उसे अपने हाथों से उठाकर उसके स्थान पर स्थापित कर दिया। इस घटना के बाद आप बहुत पवित्रता के साथ रहने लगे और इबादत में दृढ़ता से कोशिश फरमाने लगे।

उस ज़माने में अरबों का मुख्य काम व्यापार ही था और कुरैश तो ज्यादातर व्यापार में ही संलग्न थे। हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) जब जवान हुए तो आपने भी व्यापार को अपने रोजगार के रूप में अपनाया। व्यापार में आप इतने इमानदार और सच्चे थे कि कुछ ही समय में सब लोग आप पर विश्वास करने लगे और उनके साथ हिस्सेदारी के लिये उत्सुक रहने लगे। लोग आदर से उन्हें 'सादिक' (सच्चा) और 'अमीन' (अमानतदार) के नाम से जानने लगे।

आप जब करीब पच्चीस वर्ष के हुए तो आपकी नेकी, सच्चाई और अमानतदारी से प्रभावित होकर कुरैश की एक मान्य और धनी महिला हजरत खदीजतुल कुबरा (हजरत खदीजा) ने भी आपको अपना व्यापारिक सहायक बनाकर तिजारत (व्यापार) के लिये भेजा। हजरत खदीजा ने आपको अपनी धारणा से भी अधिक सच्चा और ईमानदार पाया। हजरत खदीजा के एक गुलाम मेसरा ने भी जो आपके साथ गया था, उनके बहुत से चमत्कार जो

उसने रास्ते में देखे थे हजरत खदीजा से बयान किये । इन सबसे प्रभावित होकर हजरत खदीजा ने उनसे विवाह का पैगाम भेजा । हजरत खदीजा इससे पहले दो बार विवाह कर विधवा हो चुकी थीं और उनके दो पुत्र और एक पुत्री थीं । इस समय हजरत खदीजा की उम्र 40 वर्ष थी । हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर उनसे विवाह कर लिया और 26 वर्ष तक हजरत खदीजा के जीवन पर्यन्त उनके साथ रहे । इस दौरान उन्होंने किसी अन्य स्त्री से विवाह नहीं किया ।

उन दिनों अरब में विभिन्न धर्म एवं विश्वासों का बोलबाला था । अरब के प्राचीन निवासी मूर्ती-पूजा भी किया करते थे । उनके बुत (मूर्तियाँ) दो प्रकार के थे, एक मलाइक और अरवाह अर्थात् वे जो अस्पर्श ताकतों (देवता इत्यादि) से ताल्लुक रखते थे । इन मूर्तियों में मुख्य थीं-हुबुल, वद, सुवाअ, यगूस, यऊक, नसर, उज्जा, लात और मनात । दूसरे महापुरुषों के बुत जो अपने जीवन काल में अच्छे काम करते रहे थे । ये मूर्तियाँ उनकी यादगार के रूप में और इस ख्याल से पूजी जाती थी कि ये महापुरुष उनकी इच्छाओं और प्रार्थनाओं को परमात्मा तक पहुंचा सकते हैं और मृत्यु उपरान्त परमात्मा से उनके गुनाहों की माफ़ी की सिफ़ारिश कर सकते हैं । कुछ मूर्तियों पर क़ुरबानी भी दी जाती थीं, और कुछ मूर्तियाँ पहाड़ों पर व काबा के अन्दर भी स्थापित करी गयी थीं । कुछ हद तक ख़ुदा-परस्ती (ईश्वर भक्ति) भी अरब वासियों में मौजूद थी । कुछ अज्ञात और छिपी प्राकृतिक ताक़त को अपने अस्तित्व का रचेता मानते थे लेकिन उनके शेष विचार धर्म से विमुख थे और कुछ ख़ुदा को सत्य जानते थे और क़ियामत, नजात, हश्र (हिसाब किताब का मैदान), बकाए रूह (रूह का जीवन) और उसके जज़ा और सज़ा (इनाम व अज़ाब) के कायल थे । कुछ ख़ुदा, धर्म, कोई किताब या प्रलय इत्यादि किसी को नहीं मानते थे और दुनिया को नित्य (सदा रहने वाली) मानते थे । यहूदी धर्म भी कुछ हद तक अरब में दाखिल हो चुका था ।

अपने व्यापारिक जीवन में भी हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) सामाजिक समस्याओं और लोगों के आचरण व व्यवहार के बारे में भी विचार करते रहते थे । शिर्क (अनेकेश्वरवाद-ईश्वर के साथ किसी अन्य को शामिल करना) और मूर्तिपूजा उन्हें नापसंद थी और इन बुराइयों को वे लोगों से दूर करना चाहते थे । जब भी आपको मौका मिलता आप एकान्त में बैठकर एक अल्लाह का ध्यान और याद करने में समय बिताते । रमजान के महीने में तो विशेषकर आप आबादी से दूर निकल जाते और वहाँ एकान्त में बैठकर अल्लाह का ध्यान करते । इसके लिये उन्होंने मक्का से करीब तीन मील दूर पहाड़ पर गारे हिरा ('हिरा' नाम की एक गुफा) को चुन लिया था जहाँ वे कई-कई दिन बिता दिया करते थे । ऐसे ही एक रमजान के महिने में जब आप करीब चालीस वर्ष के थे, आठ रबीउल अव्वल दो शबः (रविवार) के दिन हजरत जिब्रील अलैहिस्सलाम आप के पास एक वह्य (ईश्वर की और से सन्देश या आदेश, ईश्वरीय संकेत) लेकर आये और आपसे उसे पढ़ने के लिये कहा । हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) ने कहा कि मैं ख्वांदा (पढ़ा-लिखा) नहीं हूँ । इस पर हजरत

जिब्रील अलैहिस्सलाम ने उन्हें गले लगाकर जोर से भीचा और छोड़कर कहा कि अब पढ़ो । आपने फिर कहा कि मैं ख्वांदा नहीं हूँ । फिर हजरत जिब्रील अलैहिस्सलाम ने खूब जोर से उन्हें दबोचा । इस तरह यह प्रकरण तीन दफे दोहराया गया । फिर हजरत जिब्रील अलैहिस्सलाम ने यह आयत पढ़ाई 'ऐ मुहम्मद ! अपने उस अल्लाह के नाम से पढ़ो जिसने पैदा किया और इन्सान को वह बात सिखाई जो वह नहीं जानता था ।' वह्य के नाजिल (उतरने) होने के कारण आपके जिस्म को तक्लीफ़ हुई । आप इस घटना के तुरंत बाद घर आ गये, आप का दिल काँप रहा था, आपने हजरत खदीजा से कम्बल ओढ़ाने को कहा । कम्बल ओढ़ कर कुछ देर बाद जब आपको कुछ शांति हुई तो आपने हजरत खदीजा को सब हाल कह सुनाया और कहा 'मुझे अपनी जान का खतरा है' । हजरत खदीजा ने उन्हें उनकी नेकियाँ गिनवाते हुए यह कहकर ढांढस बंधाया की अल्लाह आपको कभी रुसवा नहीं करेगा । फिर वे उन्हें एक बूढ़े इसाई बरका बिन (पुत्र) नीफल के पास ले गयीं, जिसने सारा हाल सुनकर कहा कि यह वही फरिश्ता है जो हजरत मूसा के पास आया और कहा कि उसे यकीन है कि अल्लाह ने हजरत मुहम्मद साहब को अपना रसूल (नबी या पैगम्बर या सन्देश-वाहक) चुना है ।

आपने गारे हिरा में जाना जारी रखा और लगभग 6 महीने तक कोई और वह्य नही उतरी । उसके बाद वह्य उतरने का सिलसिला शुरु हुआ । दूसरी वह्य जो उतरी वह यह थी 'ऐ (मुहम्मद) जो कपड़ा लपेटे पड़े हो, उठो और हिदायत कर दो, (लोगों को गुमराही के नतीजे से आगाह कर दो) और अपने रब की महानता का बखान करो और अपने कपड़ो को पाक रखो और नापाकी से दूर रहो और अधिक प्राप्त करने के इरादे से किसी पर अहसान मत करो और अपने परवरदिगार के लिये सब्र करो ।' (74:1-7)

इस प्रकार हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) नबूबत (नबी या पैगम्बर होने की जिम्मेदारी) के कार्य पर लगा दिए गये और भटके हुए लोगों को मार्ग दिखाने का कार्य आपके जिम्मे कर दिया गया । आपने इस कार्य में पहले तेरह वर्ष मक्का में और अगले दस वर्ष मदीने में बिताये । मक्का में बिताया समय प्रचार की दृष्टी से अत्यंत महत्वपूर्ण रहा । क़ुरआन शरीफ का बड़ा हिस्सा इसी ज़माने में उतरा । शुरु के तीन साल आपने अपने सगे-सम्बन्धियों, परिवारवालों और मित्रों को इस्लाम की शिक्षा गुप्त रूप से देने में बिताये । हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) ने अपने चाचा अबू तालिब को भी इस्लाम क़ुबूल करने की दावत दी लेकिन उन्होंने अपने बाप-दादा का दीन (धर्म) छोड़ना स्वीकार नहीं किया लेकिन उनके विरोधियों में भी शामिल नहीं हुए । सबसे पहले हजरत खदीजा ईमान लाईं, उनके बाद नवजवानों में हजरत अली और बड़ी उम्र वालों में हजरत अबुबक्र सिद्दीक ईमान लाये । उनके बाद कुरैश के कई लोगों ने भी इस्लाम स्वीकार कर लिया जिनमे हजरत जैद और हजरत उस्मान भी थे । हजरत मुहम्मद (सल्ल.) दो तरह की तालीम देते थे, जन-साधारण के बीच रोजमर्रा की जिन्दगी के तौर-तरीके की और अपने साहबाओं के मध्य आत्मिक उन्नति की

गुह्य तालीम जो सीना-ब-सीना तालीम थी । यही सीना-ब-सीना तालीम नक्शबंदी सूफ़ी परम्परा की आधारशिला है, जिसे हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने अपने साहबाओं को गुप्त रखने के लिये कहा । अबू हुरयरा ने इसकी पुष्टि 'बुखारी' में की है ।

इन तीन वर्षों के दौरान मुसलमानों की संख्या बढ़ने लगी तो वे दार अल-अरक़म को मस्जिद के रूप में इस्लाम की शिक्षा, नमाज़ और छिपने के लिये इस्तेमाल करने लगे । आयतों को हजरत मुहम्मद (सल्ल.) द्वारा स्वरचित बताने वालों के लिये यह आयत उतरी कि वे उन लोगों को वैसी ही कोई आयत बनाने की चुनौती दें, पर कोई भी ऐसा नहीं कर सका । तब आयते 'फासद: बेमातूमर' ("फस्द बेमातूमर") नाजिल हुई अर्थात् जो हुक्म उन्हें हुआ उसका खुल्लम-खुल्ला बयान करने का निर्देश हुआ । अब आपने लोगों को एक अल्लाह की प्रभुता स्वीकार करने और मूर्तिपूजा इत्यादि से इन्कार करने का निमंत्रण देने का काम शुरु कर दिया । यह काम लगभग दो वर्ष तक होता रहा । इस दौरान कुफ्फार (इस्लाम के विरोधी) उनके दुश्मन होकर उन्हें तरह-तरह से कष्ट पहुँचाने लगे । मक्का के सरदारों ने मिलकर मुसलमानों (इस्लाम मानने वाले) पर तरह-तरह से अत्याचार करना शुरु कर दिया, लेकिन वे लोग अपने इमान पर डटे रहे । सांसारिक जीवन की विपदाएं उन्हें डिगा नहीं पाईं क्योंकि आखिरत पर और मृत्यु के बाद शाश्वत जीवन और अल्लाह की नेमतों पर इनका दृढ़ विश्वास था ।

जब हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) ने यह देखा कि मुसलमानों पर अत्याचार कम होने का नाम नहीं ले रहे हैं तो आपने कुछ मुसलमानों के हबशा (इथोपिया) प्रयाण [हिजरत-दीन (धर्म) के लिये स्वदेश छोड़कर किसी ऐसी जगह जाना जहाँ दीन के तकाजे पूरे हो सकें] का निर्णय कर लिया । कुरैश का हबशा से व्यापारिक सम्बन्ध था । मक्का के लोगों ने उनका पीछा हबशा तक किया और वहाँ के बादशाह निजाशी को इन मुहाजिरों (हिजरत करने वाले) के विरुद्ध भड़काने का प्रयास किया । बादशाह ने इन मुसलमानों को दरबार में बुलाकर उनसे हजरत ईसा के विषय में प्रश्न किये । उनकी तरफ़ से हजरत जाफर ने सूर: मरयम पढ़कर सुनाई और इस्लाम की शिक्षा और उसने किस तरह लोगों के जीवन को सुधारा संक्षिप्त रूप में बतलाया । हजरत जाफर की बातें और क़ुरआन की आयतों ने निजाशी को बहुत प्रभावित किया । वह बोला अल्लाह कसम ! यह कलाम और इन्जील (बाइबिल) दोनों एक ही दीप के प्रतिबिम्ब है । उसने हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) की नुबूवत की पुष्टि की और इस्लाम स्वीकार कर लिया । इसी बीच हजरत उमर भी अपनी बहन से जो पहले ही इस्लाम स्वीकार कर चुकी थी, क़ुरआन की आयतों को सुनकर इस्लाम पर इमान ले आये ।

हजरत उमर के इस्लाम स्वीकार करने से मुसलमानों की ताक़त बढ़ गयी और उन्हें काबे में नमाज़ पढ़ने से कोई नहीं रोक सकता था । इसके जवाब में तमाम कबीलों ने मिलकर हजरत मुहम्मद (सल्ल.) और उनके वंशजों का बहिष्कार करने का निश्चय किया, न कोई

उनसे मिले न कोई उनसे कोई खरीद-फरोख्त करे और यह तब तक जारी रहे जब तक वे स्वयं हजरत मुहम्मद (सल्ल.) को कत्ल के लिये उनके हवाले न कर दें । यह अहदनामा काबे के दरवाजे पर लटका दिया गया । अबू तालिब अपने जीते जी हजरत मुहम्मद (सल्ल.) पर कोई विपत्ति नहीं आने देना चाहते थे, अत: उन्होंने यह समझोता स्वीकार न कर वहाँ से दूर चले जाना ठीक समझा । वे अपने समस्त परिवार (बनी हाशिम) को पहाड़ के एक दर्रे में ले जाकर रहने लगे और तीन वर्ष तक बड़ी ही तक्लीफ़ो का सामना करते रहे । तीन वर्ष बाद हजरत मुहम्मद (सल्ल.) को ईश्वरीय संकेत द्वारा यह मालूम चला की उस अहद्नामे को कीड़ों ने खा लिया है और सिवाय अल्लाह के नाम के कुछ बाकी नहीं बचा । अबू तालिब ने जब कुरैश को यह बात बताई तो वे लोग इसकी सच्चाई जानकर इस जुल्म से बाज आये और उस अहद्नामे को नष्ट कर डाला ।

इसके कुछ समय बाद, नुबूवत के दसवें वर्ष में आपके चाचा अबू तालिब और पत्नी हजरत खदीजा दोनों का ही इंतकाल हो गया । हजरत मुहम्मद (सल्ल.) इससे बहुत दुखी हुए । उधर हजरत अबू तालिब के न रहने के कारण कुरैश हजरत मुहम्मद (सल्ल.) और उनके साथियों को निरंकुश होकर सताने लगे । हज के दिनों में हजरत मुहम्मद (सल्ल.) को बहुत से लोगों से मिलने का मौका मिलता, जिन्हें वे इस्लाम की बातें बताते । इसी दौरान हजरत मुहम्मद (सल्ल.) मक्का के बाहर भी इस्लाम के प्रचार प्रसार के लिये जाने लगे थे । वे तायफ़ भी गये लेकिन वहाँ के लोगों ने आपके साथ बुरा सलूक किया । वहाँ से लौटते वक्त खजूर के एक बाग में जिन्नों ने आपसे क़ुरआन सुना ।

हालाँकि बहुत से लोग उनके सन्देश का विरोध करते थे, जिनमे अबू लहब को इस काम में खास दिलचस्पी थी, लकिन कुछ लोग क़ुरआन की आयतें सुनकर प्रभावित भी होते और इस प्रकार सारे अरब में इस्लाम की चर्चा होने लगी और दूर-दूर तक उनकी बातें पहुँचने लगी । मदीने में भी आपकी चर्चा होने लगी थी । वहाँ के यहूदियों ने अपने धर्म-ग्रंथों में पढ़ रखा था कि अल्लाह के एक और नबी आने वाले हैं । अत: मदीना वासियों ने भी इस्लाम पर इमान लाना शुरु कर दिया । प्रारम्भ में मदीना के 6 लोगों ने इस्लाम स्वीकार किया और जब उन्होंने मदीना में इसकी चर्चा की और सभी बातें बतलाई तो 12 लोगों की एक मण्डली हजरत मुहम्मद (सल्ल.) से मिलने आई, आपकी बातें सुनी और इस्लाम कुबूल किया । मदीने में इस्लाम तेजी से फैलने लगा और अगले साल तक इस्लाम मानने वालों की संख्या 72 हो गयी, जिन्होंने हर हाल में हजरत मुहम्मद (सल्ल.) का साथ देने का वचन दिया ।

नुबूवत के बारहवें वर्ष में 27 रजब (620 ई.) को हजरत मुहम्मद (सल्ल.) के सामने हजरत जिब्रील अलैहिस्सलाम प्रकट हुए । वे उन्हें उठाकर मक्का में काबा की मस्जिद (मस्जिदे हराम) ले गये और वहाँ उनके हृदय से सब अपवित्रता दूर कर उसे इमान और हिक्मत से भर दिया । वे अपने साथ बुराक (दिव्य अश्व) लाये थे जिससे वे उन्हें जेरुसलम में मस्जिदे अल-अक्सा ले गये (मस्जिदे अल-अक्सा मुसलमानों के लिये तीसरा सबसे पवित्र

स्थान माना जाता है और इसे दूरस्थ स्थित मस्जिद भी कहा जाता है) । यहाँ से हजरत मुहम्मद (सल्ल.) अध्यात्मिक आरोहण (मेराज) कर सातों आसमान पार कर अल्लाह के हुज़ूर में हाज़िर हुए । कहा जाता है कि इस दौरान वे पूर्ववर्ती पैगम्बरों से भी मिले । यह यात्रा अध्यात्मिक स्तर पर की गई या भौतिक स्तर पर, इस विषय पर अलग-अलग विद्वानों में मत-भेद हैं, लेकिन यह सच है कि हजरत मुहम्मद (सल्ल.) को इस यात्रा से बहुत सी दिव्य विभूतियाँ प्राप्त हुईं । उन्हें पांच स्तरों पर फ़ना की उच्चतम अवस्था हासिल हुई । जैसे जैसे वे अल्लाह के हुजूर में हाज़िर होने के लिये ऊपर उठते जा रहे थे, उनका हृदय दिव्य ज्ञान से परिपूर्ण होता जा रहा था । अंत में वे अस्तित्व के सम्पूर्ण रूप से परमात्मा में विलीन होने की अवस्था में पहुँच गये जहाँ से परमात्मा ने उन्हें फिर से लौटाया । इस अवस्था में उनसे पूछा गया, ओ मुहम्मद ! तुम कौन हो ? वे बोले, यह आप (परमात्मा) ही हैं । यह परमात्मा की कैवल्यता को इंगित करती है जिसमें परमात्मा के सिवाय और किसी का कोई अस्तित्व नहीं है ।

सुबह जब हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने यह हाल बयान फ़रमाया तो उनके विरोधी और भी मजाक उड़ाने लगे और उन्होंने हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) से पूछा कि क्या अब भी वे हजरत मुहम्मद (सल्ल.) को सच्चा कहेगें ? हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) ने कहा कि अगर वे ऐसा कह रहें हैं तो यह सच ही होगा और उसी वक़्त हजरत मुहम्मद (सल्ल.) की सेवा में हाज़िर हुए । मेराज का हाल सुनकर उसकी पुष्टि की । इसी वक़्त से हजरत अबू बक्र का नाम 'सिद्दीक (रजि.)' हुआ ।

मक्का में हालात ऐसे बन गये थे कि मुसलमानों का वहाँ रहना दूभर हो रहा था अत: हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने असहाब (उनके साथी) को इजाज़त दी कि वे मदीना को हिजरत कर जायें । उन लोगों ने गुप्त रूप से मदीना प्रस्थान करना शुरु कर दिया । केवल हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) व हजरत अली (रजि.) उनके साथ मक्का में रह गये बाकी सभी लोग मदीना चले गये । इधर मक्का में कबीलों के सरदारों ने मिलकर हजरत मुहम्मद (सल्ल.) का कत्ल करने के लिये हर एक कबीले से एक-एक नौजवान चुन लिया । दुश्मन की इन चालों का पता हजरत मुहम्मद (सल्ल.) को भी चल गया और उन्हें अल्लाह की ओर से यह हुक्म भी मिल गया कि वे भी मक्का छोड़कर मदीना चले जायें ।

इसी बीच एक रात कुफ्फारों (उनके विरोधियों) ने हजरत मुहम्मद (सल्ल.) को उनके घर पर ही घेर लिया । आपने अपनी जगह हजरत अली (रजि.) को लेटा दिया और कहा कि कुफ्फार तुम्हे कष्ट नहीं पहुंचा सकेंगे और लोगों की अमानतें, जो वे अब भी उनकी इमानदारी पर भरोसा कर हजरत मुहम्मद (सल्ल.) के पास ही रखवाते थे, हजरत अली (रजि.) को सौंप दी और स्वयं पैदल ही हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) को उनके घर से लेकर मक्का से निकल गये । हजरत मुहम्मद (सल्ल.) बिना जूतों के उँगलियों के बल चल

रहे थे ताकि निशान मालूम न हों । आपके पाँव जख्मी हो गये तब हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) ने आपको कंधे पर सवार कर गारे सौर (सौर नामक गुफा) तक पहुँचाया ।

इस ख्याल से कि गुफा में कोई खतरा हो सकता है, हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) ने पहले स्वयं प्रवेश करने का निश्चय किया । गुफा में उन्हें सांप का एक बिल दिखलाई पड़ा जिसे उन्होंने अपने पाँव से ढक दिया । हजरत मुहम्मद (सल्ल.) भी गुफा में आकर हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) की जांघ पर सिर रखकर लेट गये । तभी एक सांप ने हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) के पाँव में काटना शुरु कर दिया । हालाँकि सांप के काटने से उन्हें बहुत दर्द हो रहा था लेकिन उन्होंने अपना पाँव नहीं हिलाया, फिर भी उनकी आँख से एक आंसू हजरत मुहम्मद (सल्ल.) की गाल पर टपक पड़ा । जैसा कि कुरआन में लिखा है, "उन्होंने (हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने) अपने दोस्त [हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.)] से कहा-'उदास मत हो, अल्लाह हमारे साथ है ।'" (8:40) पूछने पर हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) ने कहा कि मैं उदास नहीं हूँ, लेकिन मुझे सांप के काटने से दर्द हो रहा है । मुझे डर है कहीं वो आपको नुक्सान न पहुंचाए । मैं रो रहा हूँ क्योंकि मेरा हृदय आपके और आपकी सुरक्षा के लिये दग्ध हो रहा है । हजरत मुहम्मद (सल्ल.) इस उत्तर से बहुत प्रसन्न हुए और अपना हाथ उनके हृदय पर रखकर उसी क्षण उनके हृदय में अल्लाह का दिया सम्पूर्ण गुह्य ज्ञान उंडेल दिया, जैसा कि उन्होंने अपनी एक हदीस में फ़रमाया है-'जो भी अल्लाह ने मेरे हृदय में उंडेला, वह सब मैंने अबू बक्र के हृदय में उंडेल दिया ।' इसके बाद आपने अपना हाथ हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) के पाँव पर रखकर फ़रमाया-'अल्लाह के नाम पर जो रहमवाला और कृपालु है' और तुरंत उनका पाँव ठीक हो गया । इस तरह से नक्शबंदी सूफ़ी परम्परा की नीव हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) के आश्रय में रखी गयी और उन्हें यह ज्ञान सीना-ब-सीना बख्शा गया । यह दिव्य गुह्य ज्ञान नक्शबंदी सूफ़ी परम्परा में सीना-ब-सीना उतरता चला आ रहा है । हजरत पैगम्बर ने अल्लाह के आदेश पर हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) को (भविष्य में) इस सिलसिले में दाखिल होने वाले सभी सूफ़ी-संतों की रूहों का आह्वान करने को कहा और उन्हें अपने अनुयायियों का हाथ अपने हाथ में लेकर दीक्षा प्राप्त करने के लिये कहा । हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) ने अपना हाथ उनके ऊपर रखा, उनके ऊपर हजरत पैगम्बर ने और सबसे ऊपर अल्लाह ने और उन सबको सर्वशक्तिमान अल्लाह का यह नाद जो वहाँ सुनाई दे रहा था, दोहराने के लिये कहा:

अल्लाहू अल्लाहू अल्लाहू हक़
अल्लाहू अल्लाहू अल्लाहू हक़
अल्लाहू अल्लाहू अल्लाहू हक़

सभी नक्शबंदी साधकों की रूहें (भविष्य में होने वाले साधक क्योंकि यह सिलसिला हजरत मुहम्मद (सल्ल.) एवं हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) से शुरु हुआ) उस समय वहाँ उपस्थित थीं, उन्होंने अपने शैखों को और उन शैखों ने जो हजरत मुहम्मद (सल्ल.) से सुना उसे दोहराया । सर्वशक्तिमान और सर्वोपरि परमात्मा ने खुत्ब:-ऐ-ख्वाजगान (आचार्यों का जप) का

रहस्य हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी को बतलाया जो इस सिलसिले में इस जिक्र के अग्रणी माने जाते हैं। हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) इस घटना से अत्यंत प्रसन्न एवं चकित थे। इस घटना से उन्हें यह मालूम चला कि हजरत पैगम्बर ने इस यात्रा में क्यों उन्हें ही अपने साथ ले चलने के लिये चुना था। नक्शबंदी शैख़ गारे सौर में घटी घटनाओं को इस सिलसिले की आधारशिला समझते हैं। यह उनकी नित्य साधना का स्रोत ही नहीं बल्कि इस विश्वास का भी प्रणेता है कि सभी नक्शबंदी साधकों की रूहें उस समय एक साथ वहाँ उपस्थित थीं।

उधर दुश्मन यह सोचकर की हजरत मुहम्मद (सल्ल.) अभी मक्का से अधिक दूर नहीं गये होंगे, घोड़ों, ऊंट और पैदल हजरत मुहम्मद (सल्ल.) को पकड़ने दौड़ पड़े और कुछ तो ठीक गारे सौर के मुहाने तक जा पहुँचे, जो कि गुफा का एकमात्र रास्ता था। हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) को अपने से ज्यादा हजरत मुहम्मद (सल्ल.) की चिंता थी कि उन्हें किसी तरह का कोई नुक्सान न पहुँचे, कि तभी यह वह्य नाजिल हुई-'ला तहजन इन्न्ल्लाह मअना' अर्थात् गम न करो, अल्लाह हम दोनों के साथ है। हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) के दिल को तस्सली हुई और ढांढस बंधा की अल्लाह उनके साथ है। ऐसा ही हुआ, दुश्मन गुफा के छोटे से मुहाने को घास से ढका देखकर वापस चले गये, उनके मन में यह ख्याल ही नहीं आया की कोई इस गुफा में भीतर जा भी सकता है।

मदीना में मस्जिद नबावी

तीन दिनों तक वे दोनों गारे सौर में छिपे रहे, रात में हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) की बेटी उनके लिये खाना पहुंचा जाती और उनके बेटे अब्दुल्लाह दुश्मनों की हरकतों की खबर उन तक पहुंचा जाते। तीसरे दिन हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) के घर से दो तेज रफ्तार ऊंटनिया आ गयी, जिन पर सवार होकर वे वहाँ से निकल चले। आगे इस सफर में पहले वे मदीना के निकट कुबा नामक गाँव में कुछ दिनों तक रुके। हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने वहाँ एक मस्जिद का निर्माण करवाया और वहाँ जुम्मे की पहली नमाज़ अदा की। उसके बाद उन्होंने अल्लाहु अकबर और अल्हम्दुलिल्लाहि (सब तारीफ़ ख़ुदा के लिये ही है) के नारों के बीच मदीना में प्रवेश किया और जहाँ उनकी ऊँटनी स्वत: रुक गयी वहीं रुक गये और अबू अय्यूब अल अंसारी के घर में ठहरे। यह जमीन जहाँ ऊँटनी रुकी थी, दो यतीमों की थी

जिसे हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) की सम्पत्ति में से दस दीनार में खरीदा गया । उस जमीन पर मस्जिद के निर्माण के लिये नीव का एक पत्थर हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने स्वयं अपने पवित्र हाथों से रखा और उसके पास एक-एक पत्थर हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.), हजरत उमर एवं हजरत उस्मान से रखवाया और फ़रमाया 'हाउलाइल खुलफाए मिन बादी' यानि यह लोग मेरे बाद खलीफ़ा होंगे । अत: ऐसा ही हुआ । यह सन 622 ई. था, जिससे 17 वर्ष बाद उनके दूसरे खलीफ़ा हजरत उमर ने हिजरी वर्ष का प्रारम्भ किया ।

मक्का से जो लोग मदीना आये थे वे सब कुछ छोड़-छाड़कर, बिना कोई सामान लिये खाली हाथ ही आए थे । मदीना में उनके पुनर्वास के लिये हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने मदीना वालों को बुलाकर उनसे फ़रमाया कि मक्का से आये ये सब मुसलमान तुम्हारे भाई हैं और अब तुम आपस में भाई-भाई हो और उसके बाद उन्होंने एक-एक मदीने वाले के साथ एक-एक मक्का वाले को अपने घर ले जाकर रखने के लिये प्रेरित किया । आपने मदीना वालों को अंसार (सहायता करने वाले) और मक्का वालों को मुहाजिर (अल्लाह के लिये घरबार छोड़ने वाले) नाम दिया और अंसार और मुहाजिरों को भाई-भाई बना दिया । अंसार ख़ुशी-ख़ुशी मुहाजिरों को अपने साथ अपने घर ले गये और अपनी जायदाद, सामान और व्यापार में उन्हें शरीक कर भाइयों की तरह हिस्सा बाँट दिया । इसके बाद हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने जकात को (आय के एक हिस्से को दान या सामाजिक कार्यों के लिये देना) मुसलमानों के लिये एक फर्ज़ करार दिया । इसके अलावा अब तक इस्लाम का क़िब्ला (तवज्जोह का केंद्र) 'बैतूल मकदिस' जो येरुशलम में है और यहूदियों का भी क़िब्ला था अर्थात् वे उसी और मुँह कर नमाज़ पढ़ते थे, उसकी जगह अब काबा को मुसलमानों का क़िब्ला बनाने का आदेश उतरा और हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने नमाज़ पढ़ते-पढ़ते ही अपना चेहरा उत्तर में बैतूल मकदिस की ओर से फेरकर दक्षिण में काबे की ओर कर लिया । यह एक तरह से इस्लाम के पक्ष में ईश्वरीय संदेश था ।

जिस वर्ष उक्त घटना घटी, उसी वर्ष रमजान माह में रोजे रखना और हिजरत (मक्का से मदीना तशरीफ़ लाने के बाद) के नवें वर्ष हज भी फर्ज़ करार दिया गया । इस दौरान हजरत मुहम्मद (सल्ल.) को कुफ्फारों के विरुद्ध जिहाद (नास्तिकों के विरुद्ध युद्ध) करने का ईश्वरीय आदेश हुआ और आपने छोटी-बड़ी मिलाकर करीब 65 लड़ाइयाँ लड़ी । 10 वीं रमजान 8 हिजरी को हजरत मुहम्मद (सल्ल.) दस हजार सेना के साथ मदीना से मक्का को फतह करने के इरादे से निकले और बिना विशेष प्रयास के ही आपने मक्का पर फतह हासिल कर ली । आपने पूरे अरब से मूर्ती-पूजा का नामोनिशान मिटा दिया और समाज सुधार के अनेकों कार्य जिनमे स्त्री का सम्मान और समाज में यथोचित स्थान, मद्दपान और दुराचार का अंत शामिल हैं, किये ।

आपका व्यक्तित्व अत्यंत आकर्षक था और आप बहुत सुन्दर भी दिखते थे । आप मझौले कद के थे लेकिन भुजाएं लम्बी थी, माथा भी चौड़ा और चमकदार था । आँखे बड़ी-बड़ी और

कुछ लालिमा लिये हुए। चेहरे पर भरी हुई दाढ़ी और सुन्दर गर्दन आपकी शोभा बढ़ाती थी। आपके शरीर से नूर टपकता सा लगता था। आपकी चाल काफ़ी तेज थी और लोगों को उनके साथ चलने के लिये मशक्कत करनी पडती थी। चलते वक़्त उनकी निगाहें अपने पाँव की तरफ़ रहती थी। भीड़ में भी आप सबसे अधिक तेजस्वी मालूम होते। जिस गली से आप निकलते वह महक जाती और लोग पहचान लेते कि आप इधर से गुजरे हैं। आपको पाकीजगी (सफाई और पवित्रता) बहुत पसंद थी। आपका आचरण उच्च दर्जे का और चरित्र में धैर्य और सहनशीलता थी। उनके बारे में क़ुरआन शरीफ में यह आयत उतरी-"तुम बहुत अख्लाक (सद्‌चरित्र) वाले हो।" इसके अलावा भी आपकी बुलंदी के बारे में बहुत सी आयतें नाजिल हुई जैसे:

- ऐ मुहम्मद ! हमने तुम्हे हक़ (सत्य) के साथ खुशखबरी सुनाने वाला और (लोगों को) डराने (सचेत करने) वाला भेजा है और कोई गिरोह (समुदाय) ऐसा नहीं जिसमें कोई हिदायत करने वाला न गुजरा हो। (35:24)
- वह अल्लाह अत्यंत महिमाशाली है जिसने अपने बन्दे [हजरत मुहम्मद (सल्ल.)] पर क़ुरआन उतारा ताकि वह दुनिया वालों को हिदायत करे। (25:1)
- और (ऐ मुहम्मद !) हमने तुम को तमाम लोगों के लिये खुशखबरी सुनाने वाला और डराने वाला बना कर भेजा है, लेकिन अक्सर लोग नहीं जानते। (34:28)
- मुहम्मद तुम लोगों में से किसी के वालिद (पिता) नहीं हैं, बल्कि ख़ुदा के पैगम्बर और नबियों की मुहर (अंतिम; शीर्षस्थ-सर्वोच्च शिखर पर आरूढ़, पूर्ववर्ती नबियों की सत्यता और विश्वसनियता के प्रमाण) और ख़ुदा हर चीज को जानता है। (33:40)

आपके व्यक्तित्व का ऐसा रुआब था कि जो भी आपको पहली बार देखता, आपसे खौफ़ खाता लेकिन जब आपसे मिलता तो आपके प्रेम भरे व्यवहार से प्रभावित हो आपका हो रहता और समझता आप मुझसे सब से अधिक मुहब्बत करते हैं। कोई मिलने आता तो उसे पूरा सम्मान देते, पहले स्वयं सलाम करते। कहीं जाते तो सब के साथ सामान्य लोगों की तरह बैठते। आपको गुस्सा देर से आता और प्रसन्न जल्दी हो जाते। कम बोलते और जब बोलते तो बड़ी नरमी से बोलते थे। किसी को मजबूरी में कुछ कहना होता तो संकेत रूप से कहते। भोजन में जो बना होता खा लेते और सबके साथ बैठकर खाना पसंद करते, पानी तीन दफे और छोटी-छोटी घूँट में पीते। अक्सर सफ़ेद कपड़े पहनते और बोरी पर सोते। आप बहुत सहनशील थे और पूर्णरूप से क्षमतावान होते हुए भी अपराधियों का कसूर मुआफ़ फ़रमा देते। किसी की बुराई सुनना पसंद न करते। आप बड़े कृपालु और दानशील थे और रमजान के महीने में तो किसी को निराश न करते। आपकी निगाह हमेशा आखिरत (अल्लाह की पसंद) पर रहती और दुनियावी सुखों को नगण्य गिनते। आप खुद अपना जूता गांठते, कपड़ो पर पैबंद लगाते और अपने घर के कामों में सहयोग करते। स्वयं या उनका परिवार कोई दान-

पुण्य स्वीकार न करते । आपने घोषणा कर दी थी यदि कोई मुसलमान बिना कर्ज चुकाए मर जाता है तो उसका कर्ज वे स्वयं चुकायेगें और उनके धन-सम्पति के वारिस उनके नाते-रिश्तेदार होगें । आपकी अत्यंत प्रिय सुपुत्री हजरत फातिमा के सिर पर साबुत ओढनी भी न थी लेकिन आप जरूरतमंदो की मदद में लगे रहते । बहुत बार ऐसा हुआ कि आपने आटा और दूध जरूरतमंदो को दे दिया और घर में उस दिन फ़ाका रहा । आप किसी गरीब को उसकी ग़ुरबत के कारण छोटा न समझते, न किसी बादशाह से उसकी बादशाहत की वजह से डरते । एक बार आपसे जंग के दौरान अर्ज किया गया कि दुश्मनों पर लानत करें (धिक्कारें) पर आपने फ़रमाया कि मुझे रहमत के लिये भेजा गया है न कि लानत के लिये । किसी काफ़िर (नास्तिक या मूर्तिपूजक) के लिये बददुआ करने के लिये कहे जाने पर आप बददुआ करने के बजाये उसके हक़ में उसके कल्याण के लिये प्रार्थना करते । हमेशा अपने नफ्स (मनस्थिति) की बेहतरी के लिये प्रयासरत रहते । आप इतने शूरवीर थे कि घमासान लड़ाई में जब अच्छे-अच्छों के पैर उखड़ जाते तो भी आप इस प्रकार अडिग खड़े रहते मानो दुश्मन का कोई अस्तित्व ही नहीं है ।

हिजरत के दसवें वर्ष यानि सन 632 ई. में हजरत मुहम्मद (सल्ल.) हज के इरादे से मदीना से रवाना हुए । उनके साथ मुहाजिरों, अंसारों और अरब के रईसों का एक दल था । हज के चार दिन गुजर जाने के बाद, इतवार के दिन वे मक्का में दाखिल हुए । आपने इस हज के दौरान लोगों को हज करने के तरीके की तालीम दी और अरफात में एक लम्बा व्यक्तव्य दिया, जिसमें बहुत सी हिदायतों के बाद आपने फ़रमाया-'मेरे बाद तुम काफ़िर न बनो कि एक दूसरे की गर्दने मारते फिरो ।' यह ऐसी बात थी जैसी कोई व्यक्ति अपने अंत समय करता है अत: इस हज को 'हजतुल विदा' कहा जाता है । इसकी कुछ मुख्य:-मुख्य: बातें इस प्रकार थीं:

- अरब को औरों पर और औरों को अरब पर कोई श्रेष्ठता प्राप्त नहीं है, सभी आदम की औलाद हैं और आदम मिट्टी से पैदा हुए थे ।
- सभी मुसलमान आपस में भाई-भाई हैं ।
- गुलामों के साथ इंसानियत से पेश आओ, जो खुद खाओ और पहनों, उन्हें भी वही दो ।
- अज्ञान काल के तमाम कत्ल अनृत ठहरा दिए गये अर्थात् अब किसी को पुराने खून का बदला (खूंबहा) लेने का हक नहीं रहा और सबसे पहले हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने अपने वंश का खून अनृत ठहराया ।
- औरतों के मामलों में अल्लाह से डरो यानि उन्हें बेवजह दु:ख या तक्लीफ़ मत पहुँचाओ ।
- औरतों को चाहिये कि वे अपने मर्दों की आज्ञा का पालन करें ।

- अगर तुमने अल्लाह की किताब (क़ुरआन शरीफ) को मजबूती से पकड़े रखा (अनुसरण किया) तो गुमराह न होंगे ।

आखिर में आपने लोगों से पूछा कि तुमसे अल्लाह के यहाँ मेरे बारे में पूछा जायेगा तो क्या कहोगे । लोगों ने जवाब दिया कि हम कहेंगे की आपने अल्लाह का संदेश हम तक पहुंचा दिया और अपना कर्तव्य पूरा किया । आपने ऊपर को ऊँगली उठाई और कहा "हे अल्लाह ! तू गवाह रहना ।"

इसी वर्ष अरफ़: (अरबी जिलहिज्ज: महीने का नवां दिन, जिस दिन हज शुरु होता है) के दिन यह आयत नाजिल हुई-"तुम्हारे लिये आज मैंने तुम्हारा दीन कामिल (पूर्ण) किया और तुम पर अपनी नेमत पूरी की और तुम्हारे लिये इस्लाम का दीन पसंद किया ।" इस आयत के नाजिल होने के कुछ समय बाद सूर: अन-नस्र जिसमें तीन आयतें हैं: जब अल्लाह की मदद आ जाये और फतह हो; और तुम देखो कि लोग अल्लाह के दीन में गिरोह के गिरोह दाखिल हो रहे हैं; तो तस्बीह (माला जपना-याद करना) अपने रब की हम्द (प्रशंसा) के साथ और उससे क्षमा की प्रार्थना करो, नाजिल हुई जिससे आपके असहाब लोगों को यह अंदेशा हो गया कि हजरत मुहम्मद (सल्ल.) की वफ़ात (अंत समय) नजदीक है । इसके बाद सफ़र अरबी महीने 11 हिजरी (सन 642 ई.) को आपको दर्द पैदा हुआ और उसी हालत में आपने फ़रमाया कि एक बन्दे को यह इख्तियार दिया गया है चाहे वह दुनिया की धन-दौलत और यश को ग्रहण करे या उस चीज को जो अल्लाह के पास है । फिर फ़रमाया कि उसने दुनिया को इख्तियार नहीं किया बल्कि आखिरत (परलोक-अल्लाह का सामीप्य) को इख्तियार किया । हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) आपका आशय समझ गये और जार-जार रोने लगे । हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने फ़रमाया:

"मैं तुम्हें डरने की नसीहत करता हूँ और ख़ुदा से तुम्हारे लिये रहम की दरख्वास्त करता हूँ और उसकी निगहबानी में तुमको छोड़ता हूँ और तुमको उसके सुपुर्द करता हूँ । मैं तुमको खौफ़ और खुशखबरी दोनों सुनाता हूँ कि तुम ख़ुदा के आदेशों में ज्यादती न करो और उसके शहरों में ज्यादती न करो और उसकी मखलूक (प्रजा-लोगों) पर ज्यादती न करो । क्योंकि ख़ुदा ने मुझ से भी और तुम से भी यह कहा है कि आखिरत (परलोक) का घर (जन्नत) एक ऐसा मकाम है कि जिसका मालिक केवल उन लोगों को बनाऊंगा जो जमीन में सरकशी (विद्रोह) के मुरतकिब (अपराधी) न हो और न जमीन में वे किसी किस्म का फसाद करते हों क्योंकि जन्नत पाक लोगों के लिये है और उसने कहा है कि क्या जहन्नम में मुतकब्बिर (घमंडी) लोगों के सिवा और भी होगा (अर्थात् न होगा)? फिर आपने मस्जिद की तरफ़ के जितने दरवाजे थे सभी को बद करने का हुक्म दे दिया केवल अबू बक्र के दरवाजे को छोड़कर । फिर यह कहा कि मैं किसी को अबू बक्र से ज्यादा अपनी सोहबत (महफिल) में अफ्जल (श्रेष्ठ) नहीं जनता हूँ और यदि मैं किसी को अपना खलील (दोस्त) बनाता तो अबू बक्र को अपना खलील बनाता ।"

हजरत मुहम्मद (सल्ल.) को आखरी दिनों में तेज सिर-दर्द और बुखार रहने लगा और नमाज़ के लिये मस्जिद में जाना दूभर हो गया । आप बारह दिन बीमार रहे और इस दौरान आपने हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) को इमामत करने का आदेश फ़रमाया जो कि इस बात का भी इशारा था कि आपने अपने साहबाओं में हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) को अपने उत्तराधिकारी के रूप में चुना है । हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) ने आपकी अलालत (बीमारी) की हालत में तेरह नमाजें पढ़ायीं । जिस दिन आपने वफ़ात पायी, सुबह के समय आप सिर पर पट्टी बांधे बाहर तशरीफ़ लाये । उस वक्त हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) नमाज़ पढ़ा रहे थे । उन्होंने पीछे हटने का इरादा किया तो आपने अपने हाथ से दायीं तरफ़ बैठकर नमाज़ पढ़ाने का इशारा किया और स्वयं एक दफे उनके पीछे बैठकर और एक दफे उनके बराबर खड़े रहकर नमाज़ अदा की । आपने 12 रबीउल अव्वल दो शम्ब: (इतवार) (632 ई.) को दोपहर ढले हजरत आयशा (रजि.) (हजरत मुहम्मद (सल्ल.) की पत्नी और हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) की सुपुत्री) के आँगन में वफ़ात पाई ।

आपकी समाधि (अंतिम विश्रामस्थली-कब्रगाह) मदीना में स्थित है ।

आपकी वफ़ात से सब तरफ़ कोहराम मच गया ओर लोगों के होशो-हवास ठिकाने न रहे । हजरत उमर तो इस बात पर यकीन करने की मनोदशा में ही नहीं थे और नंगी तलवार लेकर कह रहे थे कि जो कोई भी कहेगा की हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने वफ़ात पाई, मैं उसका कत्ल कर दूंगा । इससे एक अजब परेशानी पैदा हो गयी । तब हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) हजरत मुहम्मद (सल्ल.) के कमरे में गये और उनके पवित्र माथे को श्रद्धासहित चूमा और मस्जिद नबवी में आकर यह फ़रमाया:

“जो मुहम्मद (सल्ल.) की पूजा करता हो तो मुहम्मद (सल्ल.) का देहांत हो गया और जो अल्लाह की पूजा करता हो तो वह ऐसा जिन्दा है कि कभी नहीं मरेगा और मुहम्मद (सल्ल.) तो पैगम्बर हैं । उनके पहले भी बहुत से पैगम्बर गुजर चुके हैं । क्या अगर पैगम्बर का देहांत हो जाये या कत्ल कर दिए जाएँ तो क्या तुम उलटे पाँव लौट जाओगे और कोई व्यक्ति लौट जाये तो यह अल्लाह को किसी तरह जरर (नुक्सान) नहीं पहुंचा सकता और वह (अल्लाह) शुक्रगुजार बन्दों को नेक बदला देगा ।”

इस खुत्बे को सुनते ही सब लोगों को विश्वास हो गया कि हजरत मुहम्मद (सल्ल.) का देहांत हो गया और सबके होश ठिकाने आ गये । उनकी सुपुत्री हजरत फातिमा को इस कदर सदमा पहुंचा कि आप फिर ताउम्र कभी नहीं हंसी और दफन के बाद हजरत मुहम्मद (सल्ल.) की कब्र शरीफ की खाक उठाकर आखों से लगाईं और सूंघी और इस आशय के कुछ अशआर पढ़े कि ‘क्या चाहिये उनको जो सूंघे खाक कब्र हजरत मुहम्मद (सल्ल.) की, यह चाहिये कि न सूंघे सारी उम्र कोई खुशबू । मुझ पर ऐसी मुसीबत आकर पड़ी की अगर दिन पर पड़ती तो वह रात बन जाता ।’

हजरत मुहम्मद (सल्ल.) अल्लाह तआला की इबादत करना इंसान का सर्वोपरि कर्तव्य समझते थे, जैसा कि कुरआन शरीफ में अल्लाह का फरमान है-'मैंने जिन्नों और इंसानों को सिर्फ इसलिए पैदा किया है कि वे मेरी इबादत करें ।'

आपके जीवन से बहुत सी चमत्कारी घटनाएँ सम्बंधित हैं । एक बार हजरत अनस (रजि.) आपके पास अपने हाथ में कुछ जौ की रोटियां लाये, जिससे आपने 80 से ज्यादा लोगों को पेट भर खिला दिया । इसी प्रकार थोड़े से खजूर से आपने पूरी फ़ौज को तृप्त कर दिया और फिर भी खजूर बच रहे और एक छोटे से प्याले में पानी में हाथ डालने पर आपकी अँगुलियों से पानी की धार फूट पड़ी जिससे पूरी फ़ौज ने वुज़ू कर लिया और अपनी प्यास भी बुझा ली । एक बार आपने दुश्मन की फ़ौज को मुट्ठी भर धूल से बेचैन और बेकार कर दिया । आप कुरआन शरीफ पढ़कर लोगों को स्वस्थ कर दिया करते थे । एक व्यक्ति (कुतदा) की आँख निकल कर गिर पड़ी थी जिसे आपने अपने हाथ से उसी जगह रख दिया और वह ठीक हो गयी । हजरत अली (रजि.) के लिये आपने प्रार्थना की कि उन्हें सर्दी या गर्मी से तक्लीफ़ न हो और ता-उम्र उन्होंने सर्दी या गर्मी से तक्लीफ़ महसूस नहीं की । इब्न अबी अतीक जिनकी टांग को जो टूट गई थी, आपने हाथ से सहला कर तुरंत ठीक कर दिया । जिस मिंबर पर चढ़कर आप ख़ुत्बा (धर्मोपदेश) पढ़ा करते थे वह आपके लिये आर्तनाद किया करता था और आपके हाथों में पत्थर भी अल्लाह की प्रशंसा में ध्वनि निकाला करते थे । आपने बहुत सी भविष्य में घटने वाली घटनाओं के बारे में भी पहले से ही बता दिया था जिनमे उनकी अत्यंत प्रिय सुपुत्री हजरत फातिमा की उनके बाद सबसे पहले मृत्यु होगी भी थी, जो कि सच घटित हुई ।

आपके मुख्य:-मुख्य: उपदेशों (जिन्हें हदीस कहा जाता है) का सार है:

इंसान को चाहिये कि वह अल्लाह तआला का जिक्र (जाप-स्मरण) खूब करे । आप का फ़रमाना था कि सुबह-शाम को अल्लाह तआला का जिक्र करना राहे-ख़ुदा में धर्मयुद्ध करने और पानी बहाने की तरह दान करने से बेहतर है । जब बंदा परमात्मा को अपने दिल में याद करता है तो परमात्मा भी उसे अपने दिल में याद करता है ।

हलाल (ईमानदारी) की कमाई से अपना और परिवार का जीवनयापन करना जिहाद (धर्मयुद्ध) करने जैसा है । इबादत का मुख्य: आधार हलाल की कमाई है ।

सूद (ब्याज) लेना जिना (व्यभिचार) से भी बढ़कर गुनाह है । (इसका असली तात्पर्य है किसी की मजबूरी का फायदा उठाना बहुत बड़ा गुनाह है ।)

ईश्वर-भक्तों को और ज्ञानी लोगों को अमीरों से परहेज करना चाहिये ।

जो शख्स अपनी जबान पर काबू रखता है, अल्लाह उसके ऐब छिपाता है । वाणी का प्रयोग अच्छी बात कहने के लिये करना चाहिये । बेहूदा बातें करने वालों और हद से गुजरने वालों को अल्लाह पसंद नहीं करता ।

परमात्मा से डरना और सच्चरित्रता जन्नत में दाखिल होने की कुंजी है । लोगों से प्रेम करने वालों को लोग प्रेम करते हैं । औरों के प्रति न तो बुरे विचार रखने चाहिये, नाही एक-दुसरे का भेद टटोलना । चुगली करना और दोस्तों में जुदाई करवाना बुरी बात है । अपने भाई की आवश्यकता पूरी करना तमाम उम्र ईश्वर की खिदमत करने जैसा है । अपने भाई के लिये वही चाहो जो अपने लिये । ईमानदार की मुश्किल आसान करना और मजलूम (जिस पर जुल्म हुआ हो) की मदद करना अल्लाह से अपने गुनाह बख्शवाने का साधन है । बीमार का हाल पूछना और उसे सांत्वना देना अल्लाह की रहमत पाने का साधन है ।

पड़ोसी की इज्जत और मदद करना चाहिये । ऐसा कोई काम न करो जिससे पड़ोसी या उसके परिवार को रंज पहुँचे या उसकी सुविधा में बाधा खड़ी हो । अपनी हांडी के बधार से उसको कष्ट मत दो, मगर इस सूरत में कि एक चमचा उसके यहाँ भेजो ।

माता-पिता की सेवा नमाज़, रोजा और काबा शरीफ की परिक्रमा और अल्लाह के लिये जिहाद से अधिक श्रेष्ठ है । इसमें भी माँ की सेवा का फल पिता की सेवा से दुगना है । अवज्ञाकारी और माता-पता से सम्बन्ध तोड़ने वाला पुत्र कभी जन्नत की खुशबू नहीं सूंघेगा । परमात्मा के सिवाय किसी की इबादत न करो और वृद्ध माता-पिता को उफ़ तक न कहो । अल्लाह से उनके लिये रहम की दुआ करो और कहो-'ऐ परवरदिगार ! इन पर रहम कर, जैसा इन्होंने हमें बचपन में पाला है ।' एक व्यक्ति ने हजरत मुहम्मद (सल्ल.) से अर्ज किया-'या रसूल अल्लाह ! मेरे अच्छे बर्ताव का सबसे ज्यादा हकदार कौन है ? आपने फ़रमाया, तुम्हारी माँ । उसने अर्ज किया, फिर ? फ़रमाया, 'तुम्हारे बाप ।'

किसी ने आप से पूछा, 'दीन क्या है ।' आपने फ़रमाया, सदाचार । वह व्यक्ति दायें-बाएं से आकर यही सवाल पूछता रहा और आप हर बार यही जवाब देते रहे । आखिर में आपने फ़रमाया कि 'तू नहीं जानता कि दीन (धर्म) यही है कि तू गुस्सा न किया कर ।' फरमाते थे कि गुस्सा ईमान को ख़राब कर देता है, जो अपना गुस्सा पी जाता है अल्लाह तआला उस पर से अपना अज़ाब (प्रकोप) हटा लेता है । हसद (ईर्ष्या) नेकियों को ऐसा खाता है जैसे आग लकड़ियों को । फ़रमाया आपस में हसद न करो, न एक दुसरे से मिलना छोड़ो, न बुग्ज (द्वेष) करो, न नाता तोड़ो और हो जाओ अल्लाह के बंदा भाई ।

जिस व्यक्ति में यह तीन बातें हो-बात करे तो झूंठी, वादा करे तो पूरा न करे, कोई कुछ जमानत उसके पास रख जाये तो पूरी न करे, वह मनाफिक है (मुसलमान होने लायक नहीं है) । अगर वादा पूरा करने की नीयत हो लेकिन पूरा न कर सके तो गुनाह नहीं है । इरशाद

फ़रमाया कि तीन आदमियों से ख़ुदा दुश्मनी रखता है-एक बहुत कसमें खाने वाला सौदागर, दूसरा अहंकारी फ़क़ीर और तीसरा कंजूस, जो देकर एहसान जतावे ।

इन छह बातों का पालन करने वालों के लिये जन्नत में स्थान सुरक्षित होगा-जब कहो झूठ न कहो, वादा करो तो खिलाफ न करो, अमानत में खयानत न करो, बदनिगाह (बुरी दृष्टी) न करो, किसी को कष्ट न दो और शर्मगाह (शील) की हिफाजत करो । ये चार चीजें जिसके पास हों, उसे कोई जरर (नुक्सान) नहीं-रास्तगुफ्तारी (सच बोलना), हिफ्ज अमानत (किसी की अमानत की सुरक्षा), खुश खुल्की और गिजाए हलाल (नेक कमाई) ।

गीबत यानि चुगली करना दुश्चरित्रता से भी अधिक बुरा है । गीबत इंसान के सद्‌गुणों का शीघ्र ही विनाश कर देती है । अल्लाह के नजदीक वह होंगे जो दुनिया में अच्छे हैं, मृदुल व्यवहार करते हैं और औरों से मुहब्बत करते हैं और लोग उनसे मुहब्बत करते हैं । अल्लाह के नजदीक बुरे वह हैं जो गीबत करते हैं और भाइयों में जुदाई डालते हैं और निष्कलंक लोगों के ऐब ढूंढते हैं ।

दुनिया मौमिन (सच्चा मुसलमान-ईमान रखने वाला) के लिये कैदखाना और काफ़िर के लिये जन्नत है । दुनिया और उसमे मौजूद चीजें, सिवाय उनके जो ख़ुदा के वास्ते हैं, तिरस्कृत हैं । जो दुनिया से मुहब्बत रखता है वह आखिरत को नुक्सान पहुंचाता है और जो आखिरत से मुहब्बत रखता है वह अपना दुनियावी नुक्सान करता है । दुनिया की नश्वर चीजों से लगाव न रखो बल्कि उन बातों को ग्रहण करो जो शाश्वत हैं । सम्पत्ति और सम्मान की चाहत दीन में नुक्सान करती है । इच्छाओं का अंत नहीं होता । संतोष बड़ी बात है । अल्लाह तआला से डरो और बीच की राह इख्तियार करो । नमाज़ ऐसे पढ़ो कि आखरी नमाज़ है, फिर पढ़ने का मौका मिले न मिले । किसी के माल की अभिलाषा न रख । दुनिया में अपने आपसे कम को देखो, ज्यादा पर नजर न करो ।

तीन चीजें नजात देने वाली हैं । एक अंदर और बाहर दोनों में ईश्वर का खौफ़ । दूसरे मन में अमीरी की तृष्णा और फ़क़ीरी दोनों में बीच वाली चाल । तीसरी सुख और दुःख दोनों में संतुलित अवस्था में रहना ।

परमात्मा को सद्‌चरित्रता और दानशीलता पसंद है और वह दुश्चरित्रता और कंजूसी को नापसंद करता है । अल्लाह तआला किसी व्यक्ति की बेहतरी चाहता है और वह उसे नेमतें बख्शता है तो वह उससे लोगों की जरूरतें पूरी कराता है । दानशील गुनहगार परमात्मा की निगाह में कंजूस इबादत करने वाले से ज्यादा नजदीक है । परमात्मा का आदर-सत्कार और उसके हक़ के पहचान में यह बात है कि तू अपने दर्द का शिकवा और अपनी मुसीबत का जिक्र न करे । अपनी इच्छाओं के आधीन रहना और परमात्मा की नजदीकी चाहना अहमक होने की निशानी है । दुनिया में अपने से कमतर को और दीन में अपने से बेहतर को देखना सब्र व शुक्रिया की निशानी है ।

हर हाल में परमात्मा का शुक्रिया और मुसीबतों में विचलित न होना परमात्मा की दोस्ती का नजदीकी रास्ता है । क़यामत के दिन अमल वालों के नेक आमाल (अच्छे कर्म-रोजा, नमाज़, सदका आदि) सब तराजू में तोले जायेंगे और अल्लाह तआला द्वारा उनका पूरा-पूरा सबाब इनायत होगा लेकिन मुसीबतों में अडिग और परमात्मा का शुक्रिया अदा करने वालों के लिये तराजू न होगा बल्कि उन पर उसी तरह सबाब डाला जायेगा अर्थात् उन पर उसी तरह रहमतें बख्शी जायेंगी । एक दिन का बुखार साल भर का कफ्फारा (प्रायश्चित) होता है । अपने पर जुल्म करने वाले के हक़ में भी दुआ करनी चाहिये यह समझते हुए कि यह जुल्म भी ख़ुदा की मर्जी से ही हो रहा है । अल्लाह तआला जब किसी को दोस्त रखता है तो उस पर बला भेजता है । वह अगर सब्र करता है तो अल्लाह तआला उसे प्रतिष्ठित करता है और अगर उस पर राजी होता है तो उसे पवित्र करता है ।

अल्लाह तआला गुनाह से तौबा करने वाले की तौबा कुबूल कर उस पर मेहरबान होता है । अल्लाह तआला से तौबा करो और बख्शीस चाहो । अल्लाह तआला बन्दे की तौबा उस वक्त तक कुबूल करता है जब तक मृत्यु की खरखराहट शुरु न हो यानि अंतिम समय तक अल्लाह तआला बंदे को तौबा करने का अवसर प्रदान करता है ।

जो परमात्मा से डरता है, उससे हर चीज डरती है और जो परमात्मा के सिवाय अन्य से डरता है परमात्मा उसको हर चीज से डराता है । बुद्धिमता का सार खौफे ख़ुदा है । खौफे ख़ुदा का अर्थ है अल्लाह का हुक्म मानना यानि बुरे आमालों (जिन बातों को करने से मना किया गया है) बचना और जिन कामों को करने के लिये कहा गया है उन्हें अपनाना ।

अपनी जबान बंद रख, घर से मत निकल और अपनी खताओं पर रोया कर ।

परमात्मा से फ़क़ीर हो कर मिल न कि गनी (अमीर) हो कर ।

जन्नत की कुंजी दीन-असहाय लोगों की सहायता करना है ।

बन्दों में परमात्मा को वह अधिक प्यारा है जो उसकी दी हुई रोजी पर संतुष्ट और परमात्मा से खुश रहता है । परमात्मा की राजी में रजा रहने वाला फ़क़ीर श्रेष्ठ है । जो गृहस्थ फ़क़ीर किसी से कुछ न मांगता हो, परमात्मा उसे अपना दोस्त रखता है । अल्लाह तआला जिसकी बेहतरी चाहता है उसे संयमी और परहेजगार और अपने दोषों पर निगाह रखनेवाला बना देता है । परमात्मा पर भरोसा रखने वालों का वह हर तरह ख्याल रखता है ।

परमात्मा अपने संतों के विरोधियों के ख़िलाफ़ युद्ध छेड़ देता है ।

इस दुनिया में अजनबी और मेहमान की तरह रहो । मस्जिद को ही अपना घर बना लो ।

सच बोलो चाहे वह तुम्हारे ख़िलाफ़ ही क्यों न हो ।

अच्छे के सिवाय कुछ न बोलो अर्थात् अपने मुँह से कभी कोई बुरी बात न बोलो ।

अमानत में कभी खयानत मत करो ।

जब परमात्मा अपने किसी बन्दे के लिये बेहतरी चाहता है तो उसे किसी मार्गदर्शक (संत) के पास भेज देता है ।

औरों को मुआफ़ करो वह तुम्हें मुआफ़ करेगा, औरों पर रहम करो वह तुम पर रहम करेगा ।

जो तुम करो (अपनी साधना और दूसरों की भलाई) उसे गुप्त रखो ।

समस्त सृष्टि परमात्मा की सेवक है और वह जो दूसरों की सहायता करता है वह परमात्मा को सर्वाधिक प्रिय होता है ।

"ला इलाहा इल्लल्लाह" (नहीं है ख़ुदा सिवाय ख़ुदा के) का जाप करने से परमात्मा तुम पर से अपना अज़ाब उठा लेगा और तुम्हारी बेहतरी करेगा ।

ऐ लोगों ! क्या तुम्हें शर्म नहीं आती की तुम अपनी जरूरत से ज्यादा खाना और रहने के लिये घर बनाते हो ।

मदीना में मस्जिद नबावी-हजरत पैगम्बर (सल्ल.) की अंतिम विश्रामस्थली हरे गुम्बद के नीचे

हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.)

‘दिल मेरा हो नूरे वहदत से मुनव्वर व वहीद,
हज़रते अबू बक्र ज़ेबे अत्किया के वास्ते’
(अद्वैतता के भाव से परिपूर्ण और प्रकाशित हो मेरा हृदय,
सयंमियों में श्रेष्ठ हजरत अबू बक्र के नाम पर)

हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) हजरत पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) के साहबाओं में से सबसे प्रमुख, सबसे निकट, उन पर अपना सर्वस्व निछावर करने वाले, हर कदम उनका साथ निभाने वाले और उनके बाद उनके पहले खलीफ़ा थे । क़ुरआन शरीफ में आपसे सम्बंधित कुछ आयतों में कहा गया है: ‘तो जिस ने (ख़ुदा के रास्ते में माल) दिया और परहेजगारी की और नेक बात को सच जाना, उस को हम आसान तरीके की तौफीक देंगे ।’ (92:5-7) ‘और जो बड़ा परहेजगार है, वह (भड़कती आग से) बचा लिया जायेगा, जो माल देता है ताकि पाक हो, और (इसलिए) नहीं (देता कि) उस पर किसी का अहसान (है), जिस का वह बदला उतारता है, बल्कि अपने ख़ुदावंदे आला की रजामंदी हासिल करने के लिये देता है, और वह बहुत जल्दी खुश हो जायेगा ।’ (92:17-21) इब्न अल-जव्ज़ी के अनुसार सभी मुस्लिम विद्वान और हजरत मुहम्मद (सल्ल.) के साहबा इस पर एकमत थे कि ये आयतें हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) से ही संदर्भित हैं । समस्त लोगों में वे सबसे पवित्र आचरण वाले और निष्ठा वाले माने जाते हैं, जिनसे दोजख़ (नरक) की अग्नि को दूर कर दिया गया था । हजरत मुहम्मद (सल्ल.) पर यह आयत उतरने पर कि ‘ख़ुदा और उसके फ़रिश्ते पैगम्बर पर दरूद भेजते हैं’ (33:56) अर्थात् उन पर अपना आशीर्वाद प्रेषित करते हैं, जब हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) ने पुछा की क्या वे भी इस आशीर्वाद पाने में शामिल हैं तो यह आयत उतरी ‘वही तो है, जो तुम पर रहमत भेजता है और उसके फ़रिश्ते भी, ताकि तुम को अंधेरों से निकाल कर रोशनी की तरफ़ ले जाये और ख़ुदा मोमिनों पर बड़ा मेहरबान है ।’ (33:43)

हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) की सातवीं पीढ़ी और हजरत मुहम्मद (सल्ल.) की सातवीं पीढ़ी मिलती है, अर्थात् ऊपर की सातवीं पीढ़ी में ये दोनों खानदान एक ही थे । उनका जन्म सन 573 ई. में मक्का में कुरैश वंश में हुआ । उनका पूरा नाम अबू बक्र अब्दुल्लाह बिन अबी कुहफा था । आप कृशकाय, गौर वर्ण और माथा उभरा हुआ था । जब वे करीब दस वर्ष के थे तो एक व्यापारिक काफिले में अपने पिता के साथ सीरिया की यात्रा पर गये । इस काफिले में हजरत मुहम्मद (सल्ल.) भी, जो उस समय बारह वर्ष के थे, शामिल थे । 18 वर्ष की उम्र में हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) ने अपने पिता का पारिवारिक कपड़े का व्यवसाय अपना लिया और व्यापर के सिलसिले में उन्होंने यमन, सीरिया इत्यादि देशों की यात्रा की

और बहुत धन कमाया। उनके व्यापर के फलने-फूलने से वो अपने पिता के जीवित रहते हुये ही समाज के एक जाने-माने व्यक्ति बन गये। हालाँकि अन्य अमीरों के बच्चों की तरह वे भी पढ़े-लिखे नहीं लेकिन उनकी याददाश्त बहुत अच्छी थी और कविता के प्रति रुचि उन्हें ईश्वर की तरफ़ से मिली थी। वे स्वयं भी कविता करते थे और लम्बी-लम्बी कवितायेँ उन्हें कंठस्थ थीं जिन्हें वे अपने ही अंदाज में सुनाया करते थे और अरबवासियों में वे बहुत लोकप्रिय थे। इस्लाम लाने के बाद वे क़ुरआन शरीफ को मधुरता से और लय में पढ़ा करते थे, जिसे सुनकर और उन्हें नमाज़ अदा करते देख लोग बहुत प्रभावित होते और बहुत से लोगों ने तो उनसे कुरआन शरीफ सुनकर ही इस्लाम ग्रहण कर लिया। उनकी तेज याददाश्त के कारण ही बहुत सी हदीसे और तौर-तरीके लोगों तक पहुँच पाये। करीब 142 हदीसे उनके द्वारा प्रकाश में लायी गयीं। उन्होंने ही पहली दफ़ा कुरआन शरीफ को एकत्र किया जिसे तब 'मुशाफ' कहा गया।

जब वे बीस वर्ष के हुए तो ऐसी ही एक व्यापारिक यात्रा में वे हजरत मुहम्मद (सल्ल.) के साथ व्यापार के लिये शाम (डमास्कस) मुल्क की ओर गये। रास्ते में एक पेड़ के नीचे वे रुके। वहीँ नजदीक एक ईसाई सन्यासी (दरवेश) रहता था। वे उनके पास गये तो दरवेश ने उनसे पूछा कि पेड़ के नीचे कौन है ? हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) ने कहा मुहम्मद बिन अब्दुल्ला बिन मुत्तलब। दरवेश ने कहा 'वल्लाह ! वह नबी है। हजरत ईसा मसीह (अलैहि.) के बाद इस पेड़ की छाया में कोई नहीं बैठा, सिवाय मुहम्मद नबी अल्लाह (सल्ल.) के। दरवेश की यह बात हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) के हृदय में पत्थर की लकीर की तरह जम गयी और तभी से उन्होंने हजरत मुहम्मद (सल्ल.) की सोहबत और मुहब्बत का रास्ता अपने लिये चुन लिया और ताउम्र उस पर दृढ़ता से कायम रहे।

अभी जब हजरत मुहम्मद (सल्ल.) पर नुबूवत नहीं बख्शी गयी थी, हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) ने एक स्वप्न देखा। उन्होंने ख्वाब में देखा कि एक नूर अजीम आसमान से काबा की छत पर उतरा और फिर तमाम मक्का के घरों में फैला है। इसके बाद वह नूर जमा हो गया और उनके घर में आ गया। कुछ वर्षों बाद एक यात्रा के दौरान उन्होंने इस ख्वाब की ताबीर (स्वप्न फल) एक यहूदी फ़क़ीर से पूछी। उसने बताया कि तुम कुरैशियों में से अल्लाह तआला एक पैगम्बर पैदा करेगा। उसके जीवन काल में तुम उसके वजीर होंगे और उसके बाद उसके एक खलीफ़ा।

38 वर्ष की उम्र में हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) को जब इस्लाम में दाखिल होने का न्यौता दिया गया तो उन्होंने बिना तर्क-वितर्क और बिना एक भी क्षण गवाये इस्लाम ग्रहण कर लिया। जब वे चालीस वर्ष के हुए तो उनके लिये यह आयत नाजिल हुई '...यहाँ तक कि जब खूब जवान होता और चालीस वर्ष को पहुँच जाता है, तो कहता है कि ऐ मेरे परवरदिगार ! मुझे तौफीक दे कि तूने जो अहसान मुझ पर और मेरे माँ-बाप पर किये हैं, उनका शुक्रगुजार हूँ और यह कि नेक अमल करूं, जिनको तू पसंद करे और मेरे लिये मेरी औलाद

में इस्लाम (व तक्वा) दे । मैं तेरी तरफ़ रजूअ करता हूँ और मैं फ़रमाबरदारों में हूँ ।' (46:15)

हजरत मुहम्मद (सल्ल.) उनकी प्रशंसा में अपने साहबाओं से फ़रमाया करते थे कि तुममे और अबू बक्र में यह फ़र्क़ है कि अबू बक्र ने बिना हुज्जत इस्लाम कुबूल किया और तुम लोगों ने बहुज्जत (तर्क-वितर्क के बाद) । आपने अपना जीवन इस्लाम और इस्लाम ग्रहण करने वालों की सेवा में पूर्णतया अर्पित कर दिया था । इस्लाम के शुरूआती वक्त में जिन मुसलमानों को कफ्फार अपना गुलाम बनाकर उन पर अत्याचार करते, आप उन्हें अपना धन देकर आज़ाद करवा लेते । इन आजाद हुए मुस्लिमों में हजरत बिलाल (रजि.) भी थे । वे गुलामों को केवल आज़ाद ही नहीं कराते बल्कि इन लोगों को अपने घर में रखकर उनकी परवरिश और शिक्षा की भी व्यवस्था करते थे । इस्लाम लाते वक्त आपके पास चालीस हजार दीनारें (सोने के सिक्के या अशर्फियाँ) और चालीस हजार दिर्हम (चांदी के सिक्के) थे, जिन्हें आपने इस्लाम की राह में लगा दिया । अन्य लोगों ने हालाँकि प्रचुर मात्रा में अपना धन-सम्पत्ति इस्लाम की राह में लगाया लेकिन हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) पहले ऐसे व्यक्ति थे जिसने अपना सब कुछ इस्लाम के लिये अर्पित कर दिया था । जब उनसे पूछा गया कि उन्होंने अपने बच्चों के लिये क्या छोड़ा तो आपका उत्तर था "परमात्मा और उनके रसूल ।" यह सुनकर हजरत उमर ने फ़रमाया कि इस्लाम की सेवा करने में कोई हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) का मुकाबला नहीं कर सकता ।

हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) इस्लाम स्वीकार करने के बाद सिवाय उनकी आज्ञा के कभी हजरत मुहम्मद (सल्ल.) से अलहदा नहीं हुए । हालाँकि वे एक शांत प्रकृति के और सज्जन व्यक्ति थे लेकिन लड़ाई के मैदान में वे सबसे आगे रहते और हजरत मुहम्मद (सल्ल.) का पूरा साथ देते और उचित सलाह मश्विरा भी देते । जब और लोग हजरत मुहम्मद (सल्ल.) का साथ छोड़ देते या लड़ाई के मैदान से भाग जाते और वे अकेले पड़ जाते तब भी हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) उनके साथ खड़े रहते । हजरत अली (अलैहि.) का फ़रमाना था कि हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) साहबाओं में सबसे अधिक बहादुर थे । बद्र के मैदान में हजरत मुहम्मद (सल्ल.) के एकमात्र रक्षक हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) थे जिन्होंने तलवार हाथ में लेकर जब हजरत मुहम्मद (सल्ल.) नमाज़ अदा कर रहे थे, दुश्मन को उनके निकट फटकने भी नहीं दिया । मक्का से मदीना पलायन के वक़्त भी वे अकेले ही हजरत मुहम्मद (सल्ल.) के साथ थे । इस सन्दर्भ में यह आयत नाजिल हुई 'अगर तुम पैगम्बर की मदद न करोगे तो ख़ुदा उनका मददगार है । (वह वक्त तुमको याद होगा) जब उनको काफिरों ने घरों से निकाल दिया, (उस वक्त) दो (ही शख्स थे, जिन) में (एक खुद अल्लाह के रसूल), दूसरे (अबू बक्र थे), जब वे दोनों (सौर के) गार में थे, उस वक्त पैगम्बर अपने साथी को तसल्ली देते थे कि गम न करो, ख़ुदा हमारे साथ है.....।' (9:40) उन्हें अपने लिये यह 'दो में दूसरे' कहा जाना अत्यंत प्रिय था । उन्हें हजरत मुहम्मद

(सल्ल.) की जान अपने से अधिक प्यारी थी, जो गारे-सौर में सांप द्वारा काटने की घटना से स्पष्ट है । हजरत उमर (रजि.) फरमाते थे कि हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) का उस दिन का यह कार्य उनके [हजरत उमर (रजि.)] जीवन के सारे कार्यों पर भारी है ।

हजरत मुहम्मद (सल्ल.) का और उनके साहबाओं का हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) के बारे में कथन है कि:

परमात्मा अपना गौरव साधारण लोगों पर साधारण तरीके से दर्शायेगा लेकिन अबू बक्र पर विशेष तरीके से ।

किसी पैगम्बर के सिवाय सूर्य कभी किसी पर इतनी महानता से उदय या अस्त नहीं हुआ जैसे की अबू बक्र पर ।

कोई ऐसी बात (गुह्य रहस्य) नहीं जो मुझ पर जाहिर हुई और मैंने उसे अबू बक्र के हृदय में न उड़ेला हो ।

कोई ऐसा व्यक्ति नहीं जिसका अहसान मैंने चुकता न किया हो, सिवाय अबू बक्र के, क्योंकि उनके मुझ पर बहुत से अहसान है जिनका बदला परमात्मा उन्हें क़यामत के दिन देगा ।

यदि मुझे परमात्मा के अलावा किसी और को घनिष्ठ मित्र के रूप में चुनना हो तो मैं अबू बक्र को चुनूंगा ।

अबू बक्र तुम से श्रेष्ठ नमाज़ या रोजों की वजह से नहीं बल्कि उस गुह्य ज्ञान की वजह से है जो उनके हृदय में उड़ेला गया है ।

हजरत इब्न अब्बास के अनुसार यह आयत '.....और अपने कामों में उनसे मश्विरा लिया करो...' हजरत अबू बक्र (रजि.) और हजरत उमर (रजि.) के सन्दर्भ में नाजिल हुई थी । हजरत अली (अलैहि.) के सुपुत्र हजरत मोहम्मद इब्न हनाफिय्या (रजि.) के हवाले से कहा जाता ही कि "मैंने अपने पिता से पूछा कि हजरत पैगम्बर के बाद सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति कौन है, तो उन्होंने फ़रमाया 'अबू बक्र' । मैंने पूछा 'उनके बाद', तो उन्होंने फ़रमाया 'उमर' । इस आशंका से कि वे उनके बाद उस्मान का नाम लेंगे, मैंने कहा उनके बाद आप, तो उन्होंने कहा मैं तो एक साधारण व्यक्ति हूँ ।" हजरत अली (अलैहि.) ने भी पूछने पर फ़रमाया था कि "वह [हजरत अबू बक्र (रजि.)] ऐसे व्यक्ति हैं जिन्हें अल्लाह ने हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के मुँह से 'सिद्दीक' कहलवाया और वे उनके [हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के] खलीफ़ा हैं । हम उन्हें अपने धर्म और इस दुनिया के लिये स्वीकार करते हैं ।"

हजरत अबू बक्र (रजि.) स्वप्नों के एक जाने-माने व्याख्याकार थे । जैसा कि उन दिनों रिवाज था, हजरत पैगम्बर (सल्ल.) भी अपने स्वप्नों का सही-सही तात्पर्य जानने के लिये

हजरत अबू बक्र (रजि.) से ही सलाह लिया करते थे क्योंकि उच्च कोटि के स्वप्नदृष्टाओं के स्वप्नों की सही-सही व्याख्या कोई उच्च कोटि का सच्चा और दानिशमंद व्यक्ति ही कर सकता था । उहद के युद्ध के पहले हजरत पैगम्बर (सल्ल.) ने एक स्वप्न में देखा कि वे पशुओं को चरा रहे थे जिनमे से कुछ को कत्ल किया जा रहा था और उनके हाथ में जो तलवार थी उसका एक भाग खंडित था । हजरत अबू बक्र (रजि.) ने इस स्वप्न की व्याख्या करते हुए बताया कि कत्ल किये गये पशुओं से तात्पर्य था की बहुत से मुसलमान मारे जायेंगे और खंडित तलवार उनके किसी निकट सम्बन्धी की मृत्यु इंगित करती है । दुर्भाग्यवश उहद के युद्ध में दोनों ही बातें सच निकली ।

हजरत अबू बक्र (रजि.) हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के बाद 8 जून 632 को उनके पहले खलीफ़ा बने और 23 अगस्त 634 को वफ़ात पाने तक 2 वर्ष 2 माह 14 दिन तक लोगों के रहनुमा बने रहे । आपने हजरत आयशा (रजि.) को वसीयत की थी कि आपको हजरत मुहम्मद (सल्ल.) के पास ही दफन कर दिया जाए । उनकी वसीयत के अनुसार ही उनकी कब्र हजरत मुहम्मद (सल्ल.) के पास खोदी गयी और हजरत मुहम्मद (सल्ल.) के कंधे के पास आपका सर रखा गया । हजरत उमर (रजि.), हजरत उस्मान (रजि.) और आपके सुपुत्र हजरत अब्दुल रहमान ने आपको कब्र में उतारा । आपकी समाधि हजरत मुहम्मद (सल्ल.) के साथ मदीना में बनी है ।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

आप 'ला इलाहा इल्लल्लाह' को हृदय को शुद्ध करने के लिये जिक्र के रूप में अपनाने के लिये कहने वाले प्रथम व्यक्ति थे ।

जो बात अल्लाह की प्रसन्नता के लिये न कही जाये, उसका कोई मूल्य नहीं ।

जब तक हृदय से दुनिया की लालसा न निकल जाये, उसे अल्लाह की प्रसन्नता नही मिल सकती ।

अहंकार से बचो, याद रखो तुम्हें एक दिन मिट्टी में मिल जाना है ।

जब लोग उनकी प्रशंसा करते तो वे परमात्मा से प्रार्थना करते थे कि 'ओ परमात्मा ! तू मुझे मुझसे बेहतर जानता है और मैं अपने आप को इन लोगों से बेहतर जानता हूँ । ये जो मेरे बारे में सोचते हैं, मुझे उससे बेहतर बना और मुझे मेरे गुनाहों की माफ़ी बख्श जिन्हें ये लोग नहीं जानते । मुझे जो ये कह रहें हैं उसका जिम्मेदार मत ठहरा ।'

लोगों के प्रति दयालु बनो ताकि तुम्हें परमात्मा की कृपा हासिल हो ।

मौत को हमेश याद रखो और हरेक दिन को आखरी दिन समझ कर जियो ।

परमात्मा को जानने का मार्ग उसे जानने की अपनी असहायता और सामर्थ्यहीनता को जानने से ही मिलता है ।

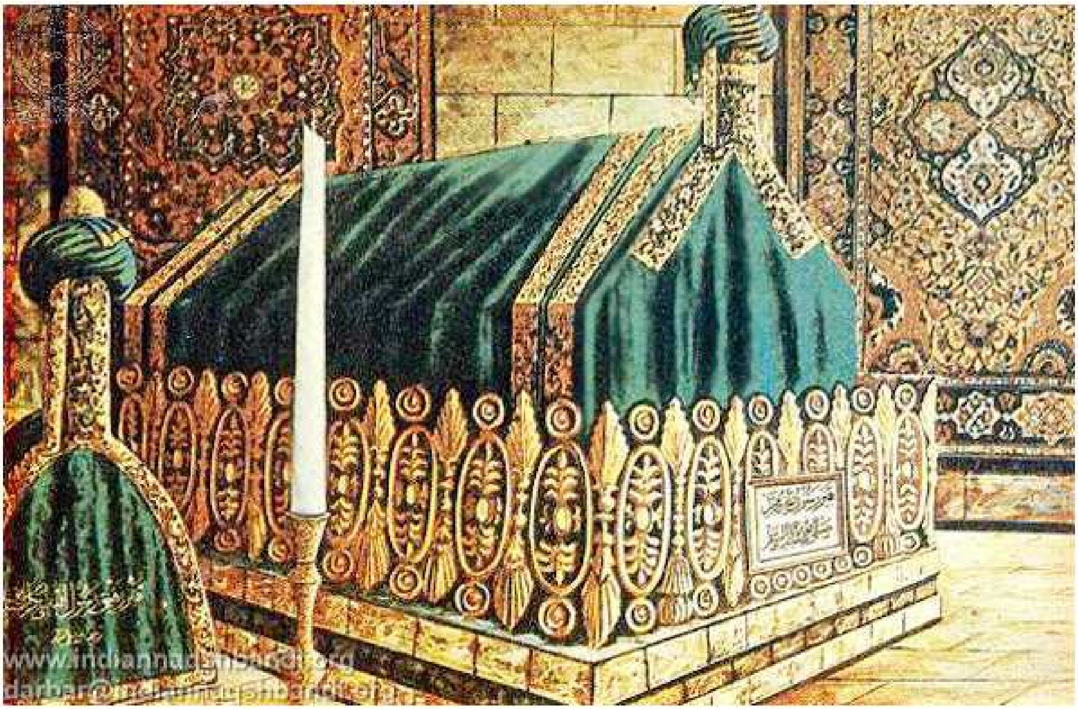

पैगम्बर मोहम्मद साहब (सल्ल.) की समाधि और उनके बांयी ओर हजरत अबू बक्र (रजि.) की समाधि

मदीना में अबू बक्र मस्जिद

हजरत सलमान फ़ारसी (रजि.)

‘या इलाही नफ्से काफ़िर से मुझे इब्लीस से,
ले बचा सलमान मुर्शिद बासफ़ा के वास्ते’
(मन की वासनाओं रूपी शैतान से हे परमात्मा !
बचा ले पवित्र गुरुवर सलमान फ़ारसी के नाम पर)

हजरत सलमान फ़ारसी (रजि.) का जन्म फारस (पर्सिया) में इसफाहन शहर के नजदीक जय्याँ में एक प्रभावशाली परिवार में लगभग सन 568 ई. में हुआ था और आपका नाम रुज्बेह रखा गया था। आपके पिता नगर-प्रमुख और झोरास्ट्रियन पादरी थे जो मगियन धर्म के मानने वाले और अग्नि की पूजा किया करते थे। उनके पिता उनसे इतना प्यार करते थे की वे उन्हें घर से बाहर ही नही निकलने दिया करते थे। एक दिन जब वे घर से बाहर गये हुए थे, रास्ते में उन्हें एक चर्च से प्रार्थना की मधुर आवाज़ सुनाई दी। वे चर्च के भीतर गये और पूछने पर मालूम चला कि वे लोग ईसाई हैं और उन्होंने परमात्मा की एकता, क़यामत और मसीह के बारे में बताया जिसने आपको बहुत प्रभावित किया और आपने ईसाई धर्म भी स्वीकार कर लिया। आपको मालूम चला की बड़े पादरी सीरिया में रहते हैं। इसके बाद हालाँकि उनके पिता ने उन्हें घर में ही रोककर रखा लेकिन वे सब बंधन तोड़कर अपने पिता के एक सेवक मेहरान, जिसने उन्हें बचपन से पाला-पौसा था, की सहायता से अगले काफ़िले के साथ सीरिया के लिये निकल पड़े।

सीरिया पहुंच कर वे बड़ी चर्च में बिशप के साथ रहने लगे। बहुत समय तक वे बिशप की सेवा में रहे लेकिन बाद में उन्हें मालूम चला कि बिशप धन-लोलुप था और लोगों का दिया धन छिपा कर रखता था। उसकी मृत्यु के बाद वे नए बिशप की सेवा में रहे, जिसने उन्हें मोसुल जाने की सलाह दी। हजरत सलमान फ़ारसी (रजि.) एक के बाद दुसरे बिशप की सेवा में रहे और अंत में अम्मुरियाह (सीरिया का एक भाग, मदीना से करीब 1250 कि. मी.) पहुँचे जहाँ बिशप ने उन्हें बताया कि उसने परमात्मा के पैगम्बर का एक ‘खजूर के वृक्षों से लदे शहर’ में आने और उनके संकेत चिन्हों के बारे में सुना है। उन्होंने कल्ब नामक एक अरब कबीले को जो घोड़ो के सौदागर थे स्वयं को अरबिया ले जाने के लिये धन दिया लेकिन उस कबीले ने उन्हें धोखा दे दिया। वे तेज याददाश्त व तीव्र बुद्धि वाले मजबूत कद-काठी के करीब 19-20 वर्ष के नौजवान थे। उस कबीले ने उन्हें एक यहूदी के हाथों गुलाम के रूप में बेच दिया और उस यहूदी ने उन्हें एक मजदूर के रूप में अपने भतीजे उठमान बिन अश्हेल को बेच दिया, जो उन्हें मदीना, जो उन दिनों याथ्रिब कहलाता था, ले गया। यही वह ‘खजूर के वृक्षों से लदा शहर’ था जो अम्मुरियाह में उस बिशप ने बताया था।

जब हजरत मुहम्मद (सल्ल.) मक्का से मदीना आ गये तो उनके बारे में जानकर हजरत सलमान फ़ारसी (रजि.) बहुत प्रसन्न हुए और वे उनके दर्शन के लिये जाना चाहते थे लेकिन उनके मालिक ने उन्हें जाने न दिया। एक दिन मौका मिलने पर वे हजरत पैगम्बर मुहम्मद (सल्ल.) से मिलने पहुँच गये। हजरत पैगम्बर मुहम्मद (सल्ल.) का चेहरा देखकर आप बहुत प्रभावित हुए और उनके दिल ने कहा कि यह चेहरा किसी झूठे व्यक्ति का नहीं हो सकता। वे अपने साथ धर्मार्थ के लिये कुछ खजूर ले गये थे जिन्हें उन्होंने हजरत मुहम्मद (सल्ल.) को खाने के लिये भेंट करना चाहा लेकिन हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने उन खजूरों को स्वीकार नहीं किया। कुछ दिनों बाद हजरत सलमान फ़ारसी (रजि.) पुन: हजरत मुहम्मद (सल्ल.) की खिदमत में हाजिर हुए और उन्हें कुछ खजूर भेंट किये, जिन्हें हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने स्वीकार कर अपने साहबाओं के साथ खाया। हजरत सलमान फ़ारसी (रजि.) हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के शरीर पर संकेत चिन्ह देखने के लिये उनकी पीठ की तरफ़ गये तो हजरत पैगम्बर (सल्ल.) ने अपने चोगे को नीचे कर दिया ताकि हजरत सलमान फ़ारसी (रजि.) को चिन्ह दिखाई दे सके। हजरत पैगम्बर (सल्ल.) को पहचान कर वे अपने घुटनों के बल बैठ उनके कदम चूमने लगे और क्रंदन करने लगे। हजरत पैगम्बर (सल्ल.) ने तब उनसे उनकी दास्तान सुनी और यह जानकर कि उनका मालिक उन्हें छोड़ने के बदले 300 पाम वृक्ष की पौध और 1600 चांदी के सिक्के चाहता है, अपने साहबाओं से इसके लिये मुक्तहस्त से धन देने को कहा और अपने हाथों से खजूर के वृक्ष की 300 पौध लगाकर दी और हजरत सलमान फ़ारसी (रजि.) को दासता से मुक्त करवाया। दासता से मुक्त होकर आपने इस्लाम को स्वीकार किया और हजरत मुहम्मद (सल्ल.) के विशेष कृपापात्र बने। यहाँ तक कि हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने उन्हें अपने अहले बैत (घर वालों) में शामिल कर लिया और तब से आप हजरत मुहम्मद (सल्ल.) की पवित्र सेवा में रहने लगे। जब किसी ने उनसे उनके पूर्वजों के बारे में पूछा तो आपने कहा, 'मैं इस्लाम का बेटा और आदम का वंशज सलमान हूँ।'

दासता के कारण हजरत सलमान फ़ारसी (रजि.) बद्र और उहद की लड़ाईयों में भाग नहीं ले पाये थे। लेकिन खन्दक की लड़ाई में उन्होंने भाग लिया। इस लड़ाई में यह खबर मिली थी कि मक्का से दस हजार सैनिकों की एक फ़ौज इस्लाम का नामो-निशान मिटा देने के ईरादे से मदीना की तरफ़ आ रही है। हजरत सलमान (रजि.) ने हजरत मुहम्मद (सल्ल.) को सुझाव दिया कि शहर की सुरक्षा के लिये वे मदीना के बाहर खुली सीमा पर जहाँ से दुश्मन आ सकते थे इतनी चोड़ी और गहरी खन्दकें खुदवा लें जिन्हें घोड़े लांघ न सकें। हजरत मुहम्मद (सल्ल.) को यह सुझाव बहुत पसंद आया। हजरत सलमान फ़ारसी (रजि.) स्वयं भी खन्दक की खुदाई में लग गये। खन्दक की खुदाई करते वक्त उनके सामने एक चट्टान आ गयी जिसे वे तोड़ नहीं पा रहे थे। यह देखकर हजरत मुहम्मद (सल्ल.) स्वयं आगे आये और एक कुदाली लेकर उन्होंने उस चट्टान पर प्रहार किया। कुदाली के प्रहार से एक चिंगारी निकली। हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने फिर दूसरी और तीसरी बार प्रहार किया

और दोनों बार फिर चिंगारी निकली । हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने हजरत सलमान (रजि.) से पूछा कि क्या तुमने ये चिंगारियां देखीं ? उनके हां कहने पर हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने फ़रमाया कि मुझे मुशाहिदा (परमात्मा की तरफ़ से दृश्य-संकेत) हुआ है कि पहली चिंगारी के साथ परमात्मा ने मुझ पर यमन का रास्ता खोल दिया, दूसरी चिंगारी के साथ डमास्कस (शाम) और पश्चिम दिशा (में स्थित शहरों) का और तीसरी के साथ पूर्व दिशा (में स्थित शहरों) का । उन्होंने बताया कि हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने फ़रमाया कि 'परमात्मा से विनती के सिवाय और किसी तरह से उसके हुक्म को टाला नही जा सकता' और 'तुम्हारा मालिक दानी और उदार है और जब उसका कोई सेवक उसकी ओर हाथ उठाकर कुछ मांगता है तो वह उसे खाली हाथ लौटाने में लज्जित महसूस करता है ।'

मस्जिद सलमान फ़ारसी, मदीना

हजरत अत-ताबरी के अनुसार सन 637 ई. में मुस्लिम फ़ौज पर्सिया की सीमा पर तैनात थी । पर्सिया के बादशाह को एक जगह घेरने के प्रयास में मुस्लिम फ़ौज ने पाया कि वे उनके सामने टिगरिस नदी के दूसरे किनारे पर एक जगह इकट्ठे हो गये थे । साद इब्न अबी वक्कास (रजि.) जो इस फ़ौज के कमांडर थे, उन्होंने अपने एक स्वप्न के अनुसार पूरी फ़ौज को नदी में कूद जाने का आदेश दिया । बहुत से लोग भयभीत होकर वहीं रुके रहे । हजरत साद (रजि.) जिनके साथ हजरत सलमान (रजि.) भी खड़े थे, उन्होंने पहले प्रार्थना की कि 'अल्लाह हमें फतह दिलाये और अपने (अल्लाह के) दुश्मनों को हराये ।' उनके बाद हजरत सलमान (रजि.) ने प्रार्थना की कि 'इस्लाम लोगों को सौभाग्य देता है । अल्लाह की सौगंध, मुस्लिमों के लिये नदियों को पार करना उतना ही आसान हो गया है जैसे रेगिस्तान । उसके

वास्ते (अल्लाह के लिये), जिसके हाथ में सलमान की रूह है, नदी से उतने ही सैनिक बाहर निकल कर आयें, जितने की उसमें उतरें ।' हजरत साद (रजि.) और हजरत सलमान (रजि.) इसके बाद टिगरिस नदी में कूद गये । कहा जाता है कि उस वक्त नदी घोड़ों और आदमियों से पटी पड़ी थी । घोड़े तैरते- तैरते थक जाते तो लगता की नदी का पानी ऊपर उठकर उनकी तैरने में सहायता कर रहा है ताकि उनमें फिर से हिम्मत आ जाये । कुछ को तो लग रहा था की घोड़े बिना किसी प्रयास स्वत: ही तरंगो पर सवारी कर रहे थे । जैसी की हजरत सलमान (रजि.) ने प्रार्थना की थी सारी फ़ौज मय साजो-सामान, सिवाय टिन के एक कप के, दूसरी ओर सकुशल उतर आये ।

मुस्लिम फ़ौज ने पर्सिया की राजधानी को जीत लिया । हजरत सलमान (रजि.) ने प्रवक्ता के रूप में हारे हुए पर्सिया के लोगों से कहा 'मैं भी तुम्हारी तरह पर्सिया से हूँ । मैं तुम्हारे प्रति सहानुभूतिपूर्ण रवैया रखूँगा । तुम्हारे पास तीन रास्ते हैं-या तो तुम भी इस्लाम इख्तियार कर लो, तब तुम हमारे भाई बन जाओगे और तुम्हारे भी वही अधिकार और जिम्मेदारियां होंगी जो हमारी हैं, या तुम गैर-मुस्लिमों पर लगने वाला कर चुकाओ और हम तुम पर न्यायसंगत तरीके से शासन करेंगे, या हम तुम्हारे विरुद्ध युद्ध की घोषणा करें । नदी को सकुशल पार कर आने का चमत्कार अपनी आखों से देख उन लोगों ने अपने लिये दूसरा विकल्प चुना ।

कालांतर में हजरत उमर फारुक ने उन्हें मदायन (पर्सिया-आधुनिक ईरान) क्षेत्र का गवर्नर नियुक्त किया । उनके आधीन 30000 सैनिकों की फ़ौज थी और उनकी तनख्वाह 5000 दिर्हम निर्धारित की गयी थी परन्तु आप वह सब धन फ़क़ीरों में बाँट देते और अपनी जीविका अपनी मेहनत से उपार्जित करते थे । उन्होंने अपने लिये कोई घर न बनाया और वे पेड़ों की छाँव में ही विश्राम कर लेते थे । आप के पास ऊंट के बालों की एक कमली थी, जिसे वे दिन में अपने ऊपर लपेट लेते और रात में उसे ओढ़ लिया करते ।

कहा जाता है कि जब आप मदायन शहर के हाकिम थे और बाज़ार में कहीं जा रहे थे, एक शख्स जिसके पास कुछ माल था, किसी मजदूर की तलाश कर रहा था कि उसकी नजर आप पर पड़ गयी । आप क्योंकि कम्बल ओढ़े हुए थे, उसने उन्हें मजदूर समझ लिया और उनसे माल उठवा कर चल दिया । रास्ते में एक व्यक्ति ने उन्हें पहचान लिया और पूछने लगा आपने यह असबाब क्यों उठा रखा है ? वह व्यक्ति जिसने आप को मजदूर समझ लिया था, आपकी हक़ीक़त जानकार बहुत घबराया और पाँव पड़ कर माफ़ी मांगने लगा, लेकिन आपने कहा कि तुमने अपने मकान तक ले जाने का ईरादा किया था, अब वहाँ पहुंचाकर ही वापस हूँगा ।

वे रात का समय प्रार्थना और जिक्र (जाप करने) में बिताते । वे कहते थे कि उन्हें इस बात से आश्चर्य होता है कि लोग दुनियावी बातों में उलझ कर अपना सारा जीवन व्यतीत

कर देते हैं और परमार्थ के बारे में सोचते तक नहीं । आप साहबे करामात (चमत्कारी महापुरुष) थे । एक बार आपने जंगल में दौड़ते हुए हिरण को अपने पास बुलाया तो वह तुरंत आपके पास हाजिर हो गया । इसी तरह एक बार आपने उड़ती हुई चिड़िया को आवाज दी तो वह तुरंत आपके पास उतर आई ।

हजरत सलमान (रजि.) हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के बहुत प्रिय और निकट थे और उनकी पवित्र सेवा में आपने बहुत वर्ष गुजारे । हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के बाद आपने फैज़ बातिनी (गुह्य अध्यात्मिक ज्ञान) हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) से भी हासिल किया और उनकी खास तवज्जोह से पूर्णता हासिल की । आप हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) के खलीफ़ा थे और आपके खलीफ़ा इमाम अबू अब्दुर रहमान कासिम इब्न मुहम्मद इब्न अबू बक्र हुए जो हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) के सुपौत्र थे ।

आपकी समाधि मदायन (ईरान) में स्थित है ।

हजरत सलमान फ़ारसी की समाधि, मदायन

हजरत सलमान फ़ारसी का समाधि परिसर, मदायन

हजरत इमाम कासिम बिन मुहम्मद बिन अबू बक्र (रजि.)

'या इलाही इश्क से अपने मुझे कर सरबुलन्द,
हज़रते कासिम इमामे बेरियां के वास्ते'
(प्रतिष्ठित कर अपने प्रेम से तू मुझे, हे परमात्मा !,
निष्कपटों में अग्रणी हजरत कासिम के नाम पर)

हजरत इमाम अबू अब्दुर रहमान कासिम बिन मुहम्मद बिन अबू बक्र (रजि.) हजरत अबू बक्र (रजि.) के सुपौत्र थे । आपका जन्म 36 या 38 हिजरी सन में हुआ । हजरत अबू बक्र (रजि.) हजरत आयशा (अलैहि.) के पिता और हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के श्वसुर थे । इस तरह आपके पिता और हजरत आयशा (अलैहि.) भाई-बहन थे और हजरत पैगम्बर (सल्ल.) हजरत इमाम कासिम (रजि.) के फूफा थे । आप अपनी पूज्य माताजी की तरफ़ से हजरत अली इब्न अबू तालिब (हजरत फातिमा (रजि.), हजरत पैगम्बर (सल्ल.) की सुपुत्री के पति) से सम्बंधित थे । इस तरह आप अपने पिता और माता दोनों ही तरफ़ से हजरत पैगम्बर (सल्ल.) से सम्बंधित थे । आपके पूज्य पिता मुहम्मद बिन अबू बक्र (रजि.) की शहादत के बाद आपको आपकी फूफी हजरत आयशा (अलैहि.), जो बहुत वर्षों तक जीवित रहीं, ने पाला पौसा और रूहानी तालीम भी बख्शी । आपने हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के कुछ साहबाओं से भी मुलाकात की थी । अध्यात्मिक विद्या (इल्म बातिन) आपने हजरत सलमान फ़ारसी (रजि.) से हासिल की और इमाम जैनुल आबदीन (रजि.), (हजरत इमाम हुसैन के सुपुत्र और हजरत अली के सुपौत्र) जिनके आप मौसेरे भाई थे, की सोहबत से हजरत अली (रजि.) की भी निस्बत (अध्यात्मिक सम्बन्ध) हासिल की ।

आप अपने वक़्त के मुस्लिम धर्मशास्त्रों के प्रकाण्ड विद्वानों में गिने जाते थे । मदीना में उस समय के सात विद्वानों में, जिनके द्वारा इस्लाम की रिवायतें, हदीस, धर्मशास्त्र एवं कुरआन शरीफ से सम्बंधित भाष्य लोगों तक पहुँचे, आप सर्वोपरि थे । इस्लाम के मदीना से बाहर प्रसार और सुन्न: की प्रमाणिक जानकारी पहुँचाने वाले लोगों में आप अग्रणी थे । हदीसों की तफसील से जानकारी देने में आप अद्‌वितीय थे और आपके द्‌वारा बहुत सी हदीसे प्रकाश में आई । अबू ज़न्नद के अनुसार-'मैंने अपने जीवन में हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के सुन्न: (हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के आचरण) का उनसे बेहतर जानने और अनुसरण करने वाला कोई अन्य व्यक्ति नहीं देखा । हमारे जमाने में किसी व्यक्ति को तब तक कामिल (पूर्ण या अति श्रेष्ठ) नहीं समझा जाता था जब तक की वह सुन्न: के पालन करने में पूरा-

पूरा खरा न उतरे, और कासिम सबसे अधिक कामिल है ।' हजरत कासिम (रजि.) क़ुरआन शरीफ और प्रमाणिक सुन्न: को हदीस पर तरजीह (प्राथमिकता) देते थे ।

11 वीं सदी के हिल्यत अल-अवलिया के अनुसार-'वे [हजरत कासिम (रजि.)] इस्लामिक न्याय की प्रभावी से प्रभावी पूर्ववर्ती निर्णय को खोज निकालने में प्रवीण थे और अपने तौर-तरीके और नैतिक आचरण में सर्वोपरि थे ।' लोग उनके बारे में क्या सोचते हैं, इससे वे बेपरवाह रहते और परमात्मा की प्रसन्नता उनके लिये सब कुछ थी । एक बार कुछ लोग उनके पास दान के लिये रखे धन को लेकर आये और उनसे उसे गरीबों में बांटने के लिये निवेदन किया । आप उसे बांटकर नमाज़ पढ़ने के लिये चले गये । अभी जब वे नमाज़ अदा कर ही रहे थे कि लोगों ने उनके बारे में उल्टा-सीधा कहना शुरु कर दिया। उनके सुपुत्र को यह बुरा लगा और उन्होंने लोगों से कहा तुम उस व्यक्ति के पीठ-पीछे उसकी बुराई कर रहे हो, जिसने तुम्हारे कहने पर तुम्हारे सारे धन को गरीबों में बाँट दिया और अपने लिये एक पाई तक नहीं रखी । जैसे ही हजरत कासिम (रजि.) नमाज़ पूरी करके आये और उन्हें मालूम चला, उन्होंने अपने पुत्र को झिड़कते हुए चुप रहने को कहा । वे अपने पुत्र को यह सन्देश देना चाहते थे कि वह उनको लोगों की निंदा से बचाने का प्रयास न करे, क्योंकि उनके लिये परमात्मा की प्रसन्नता सर्वोपरि थी और लोगों की उनके बारे में राय उनकी निगाह में कोई महत्व नहीं रखती । वे स्वयं अपने पीछे अपनी हक़ की कमाई से करीब एक लाख दीनार गरीबों में बांटने के लिये छोड़ गये ।

हजरत उमर इब्न अब्दुल अजीज़ जो हजरत अबू बक्र, हजरत उमर, हजरत उस्मान और हजरत अली के बाद दिव्य कृपापात्र (उचित मार्गदर्शन प्राप्त किये) खलीफ़ा माने जाते हैं, का फ़रमाना था कि अगर मेरे हाथ में होता तो मैं खिलाफत उनके सुपुर्द कर देता ।

वे मदीना छोड़कर कुद्यद, जो मक्का और मदीना के बीच स्थित है, चले गये जहाँ वे मृत्यु पर्यन्त रहे । उन्होंने 70 वर्ष की आयु में सन 730 या 731 ई. में वफ़ात पाई । आपकी समाधि कुद्यद में स्थित है ।

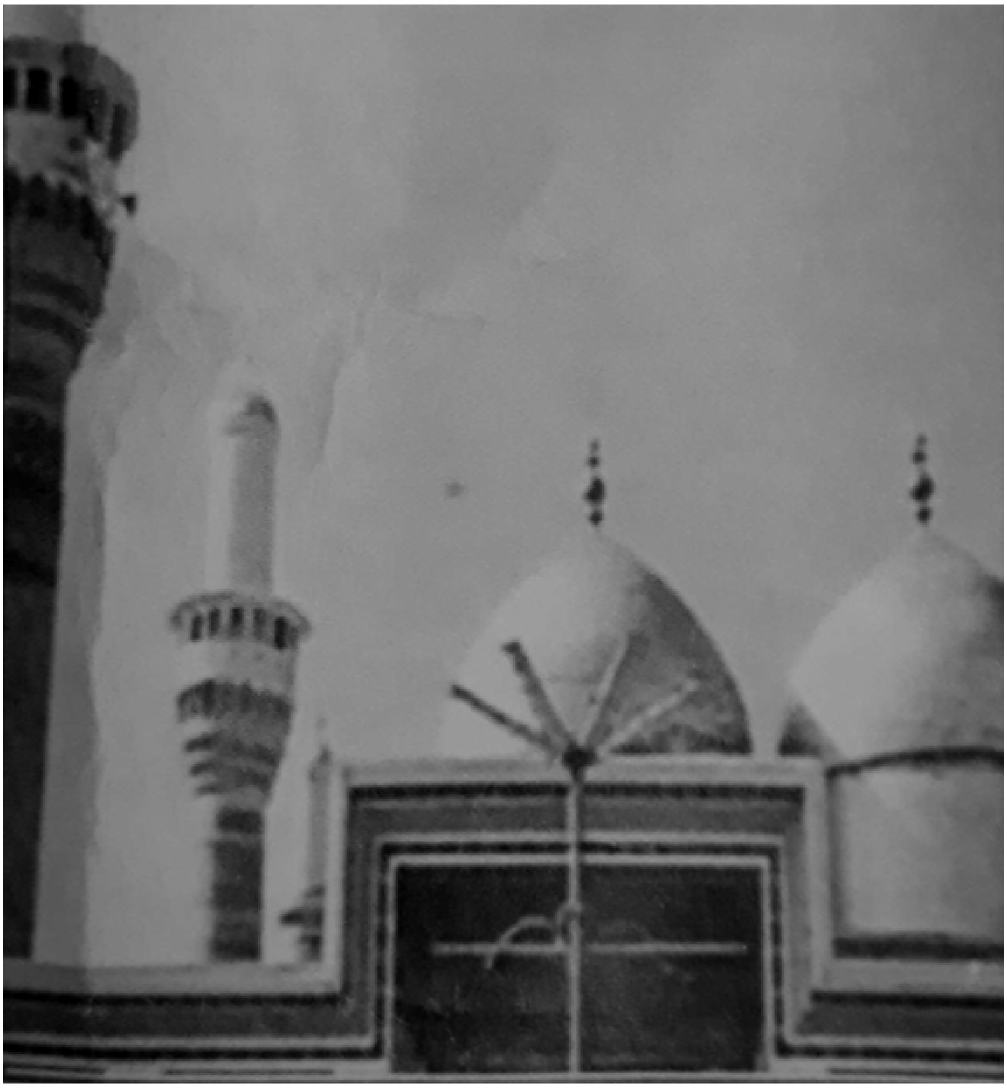

हजरत कासिम बिन मुहम्मद बिन अबू बक्र की समाधि (कुद्यद, मक्का और मदीना के बीच में)

कुद्यद

हजरत जाफ़र सादिक (रजि.)

या इलाही इश्क की आतिश से हो सीना कबाब,
जाफ़रे सादिक इमामे पेशवा के वास्ते'
(दग्ध कर मेरा हृदय, अपने प्रेम से हे परमात्मा !,
इमामों में अग्रणी हजरत जाफर सादिक के नाम पर)

हजरत इमाम जाफ़र सादिक (रजि.) का जन्म हिजरी सन 83 (23.4.702) में रमजान महीने के आठवें दिन हुआ था और वे हजरत कासिम बिन मुहम्मद बिन अबू बक्र (रजि.) के नवासे और हजरत इमाम हुसैन के परपोते थे । इस प्रकार आप हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के पवित्र परिवार से सम्बंधित थे । आपको इल्म बातिन (अध्यात्म विद्या) में अपने नाना हजरत कासिम (रजि.) और हजरत इमाम मुहम्मद बाक़र (हजरत अली के वंशज) से निस्बत (आत्मिक सम्बंध) हासिल हुई । आपका फ़रमाना था कि 'मैं हजरत अबू बक्र (रजि.) से दो दफ़ा पैदा हुआ । मेरा एक जन्म तो उनसे दुनियावी हुआ, मेरी माता के द्वारा जो उनकी प्रपौत्री थीं, और दूसरा जन्म बातिनी (आत्मिक) कि इल्म बातिनी भी मैंने उन्हीं से पाया ।' आप बातचीत और व्यवहार में इतने सच्चे थे कि आपका नाम ही 'सादिक' (सत्यवादी) कहा जाने लगा ।

'दी हार्ट ऑफ़ दी शिया स्कोलरशिप' नामक पुस्तक जो फ्रेंच विद्वानों ने लिखी है, कहा गया है कि जब आप मदरसा जाते तो वहां अपने से बड़े विद्यार्थियों से धर्मशास्त्रो की चर्चा करते । जब वे करीब 11 वर्ष के ही थे उनका कहना था जिस तरह सूर्य रोजाना सुबह पूर्व दिशा में उगता है और शाम को पश्चिम में अस्त होता है और जिस तरह दिन-रात होते हैं, वह दर्शाता है कि पृथ्वी चपटी नहीं हो सकती । उनका कहना था कि पृथ्वी गोल है वरना यह सब इतने सटीक तरीके से नहीं हो सकता था ।

आपके व्यक्तित्व से दिव्यता झलकती थी और बहुत से जाने माने लोगों ने आपकी तेजस्विता को स्वीकार कर शिष्यत्व ग्रहण किया, जिनमें इमाम अबुहनीफा (रहम.), अहिय बिन सईद अंसारी (रहम.) और इमाम मलिक (रहम.) शामिल हैं । आप कुरआन मजीद के प्रकाण्ड विद्वान् और व्याख्याकार थे और साथ-साथ ही दुनियावी विद्याओं में भी पूर्णरूपेण पारंगत थे । आपने अपना समस्त जीवन इबादत और धार्मिक कार्यों में ही लगा दिया । उन्होंने सांसारिक पद-प्रतिष्ठा का परित्याग कर परमात्मा की भक्ति के लिये एकाकी जीवन का चयन किया । आपके असीम ज्ञान और फैज-बातिनी (आत्मिक उर्जा का सम्प्रेषण-

तवज्जोह) से लोगों को बहुत लाभ होता था। कुछ समय बाद आप ईराक चले गये और वहाँ बहुत समय तक रहे।

आप दिखावे, उपदेश देने या इमामत वैगरह से दूर ही रहते थे। एक बार हजरत दाउदताई (रहम.) आपके पास आये और बोले मेरा दिल स्याह हो गया है, मुझे कुछ उपदेश दीजिये। हजरत जाफर (रजि.) ने फ़रमाया आप तो स्वयं पवित्र आत्मा और तपस्वी हैं, आपको मेरे उपदेश की क्या आवश्यकता है ? हजरत दाउदताई (रहम.) बोले आप हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के वंशज हैं और अल्लाह ने रसूल (सल्ल.) की संतान को औरों पर श्रेष्ठता बख्शी है, अत: आपको उचित ही है कि आप मुझे उपदेश दें। आपने फ़रमाया, 'ऐ दाउद ! मुझे खुद को यह अंदेशा है कि कहीं क़यामत के दिन मेरे बुज़ुर्ग मुझसे न पूछने लगें कि तूने दुनिया में रहकर क्या किया, हमारे रास्ते पर क्यों न चला ? निश्चय ही वहां किसी का वंश नहीं देखा जायेगा, बल्कि उसने क्या कर्म किये यह देखा जायेगा।' हजरत दाउदताई (रहम.) उनकी निराभिमानिता से बहुत प्रभावित हुए और सोचने लगे की जब उन जैसा श्रेष्ठ व्यक्ति ऐसा सोचता है तो मुझ जैसे लोगों की क्या बिसात ?

इसी तरह की एक और घटना है। आप एक बार अपने शिष्यों के साथ बैठे थे, आपने फ़रमाया कि आओ आपस में यह इकरार करें कि हममें से जिस को भी मोक्ष मिले वह अल्लाह से सबके लिये मोक्ष की सिफ़ारिश (शफाअत) करे। वे सब कहने लगे कि ऐ रसूल अल्लाह के वंशज आपको हमारी शफाअत की क्या जरूरत है, आप तो दुनिया को मोक्ष दिलाने वाले बुजुर्गों के खानदान से हैं। आपने फ़रमाया कि मुझे अपने कर्मों पर शर्म आती है कि उनको लेकर बुजुर्गों के सामने कैसे हाजिर होऊं ?

आपकी निराभिमानिता और विनम्रता के बावुजूद किसी ने आपसे कहा कि आपमें सब दुनियावी और आत्मिक कमाल (खूबियाँ) हैं, लेकिन आपमें तकव्वुर (अहंकार) है। आपने जवाब दिया की मुझमें अपना अहंकार नहीं है, यह तो मेरे मालिक (परमात्मा), जो अत्यंत महान और दयालु है, उसकी महानता है जो मेरे गरूर और किब्र (अहंकार और महानता) को छोड़ने के बाद मुझमें दाखिल हो गई है। इस बारे में हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) का फ़रमाना था की इस सिलसिले (नक्शबंदी सिलसिले) के बुज़ुर्ग बहुत गयूर (स्वाभिमानी) होते हैं और यह स्वाभिमान उनमें अल्लाह की देन है।

एक व्यक्ति की थैली गुम हो गयी, उसने हजरत इमाम जाफ़र सादिक (रजि.) को पकड़ लिया और उन पर इल्जाम लगा दिया। आपने पूछा उसमे कितनी दीनार थी और उसके एक हज़ार दीनार कहने पर उसे एक हज़ार दीनार दे दिये। उसकी थैली मिल गयी तो उसे अपनी गलती का अहसास हुआ और वो आपकी दीनारें लौटाने आया और माफ़ी मांगने लगा। आपने फ़रमाया कि हम दी हुई चीज वापस नहीं लेते और वे दीनारें नहीं लीं।

एक बार एक व्यक्ति ने आपके खिलाफ़ उस वक़्त के खलीफ़ा मंसूर से कोई शिकायत कर दी । आप हाजिर हुए और उस व्यक्ति को कसम खाने के लिये कहा और यह भी की अगर उसने झूठ कहा हो तो अल्लाह उसे दण्ड दे । वह अपनी बात पर अड़ा रहा और हजरत जाफ़र (रजि.) उसके कसम खाने पर । जैसे ही उसने कसम ली, तुरंत वह निष्प्राण होकर गिर पड़ा । इसी प्रकार एक बार खलीफ़ा मंसूर ने आप का कत्ल करवाने के इरादे से अपने दरबार में बुलवाया । सिपाहियों को आदेश था की खलीफ़ा मंसूर के इशारा करने पर उनका कत्ल कर दिया जाये, लेकिन आपके आने पर खलीफ़ा मंसूर उनके सम्मान में उठा और उन्हें मसनद पर बैठाकर उनके साथ अदब से पेश आता रहा । उनके जाने के बाद जब उससे पूछा गया तो उसने बताया कि मुझे हजरत जाफ़र (रजि.) के साथ एक मुँह खोले अजदहा (सांप) दिखलाई दिया जो लगता था कि उन्हें जरा सी भी तक्लीफ़ देते ही मुझे निगल जायेगा ।

एक बार हजरत इमाम जाफ़र सादिक (रजि.) कहीं जा रहे थे । रास्ते में उन्हें एक बुढ़िया जो अपने बच्चों के साथ एक मरी हुई गाय के आगे बैठी रो रही थी दिखी । आपने उनके रोने का कारण पूछा तो मालूम चला कि उसी गाय के दूध से उनका गुजर-बसर चलता था, अब उनके भूखे मरने की नौबत आ गयी है । आपने फ़रमाया कि क्या तुझे मंजूर है कि अल्लाह इसे जिन्दा कर दे ? बुढ़िया ने कहा हम पर तो यह मुसीबत आ पड़ी है और आप ऐसा मजाक कर रहे हैं । आपने फ़रमाया, मैं मजाक नहीं करता, और यह कहते आपने गाय को ठोकर मरी और वह उठ खड़ी हुई । आप चुपचाप जाकर आम लोगों में मिल गये ताकि किसी को इस बात का पता न चले ।

एक बार आप से एक शख्स ने परमात्मा के दर्शन करवा देने के लिये कहा । आपने उसे बहुत समझाया और कहा क्या तुझे मालूम नहीं कि हजरत मूसा को परमात्मा ने 'लनतरानी' अर्थात तू मुझे नहीं देख सकता, कहा था । लेकिन वह शख्स नहीं माना और बोला यह मिल्लते मुहम्मदी (मुहम्मद का धर्म) है, जहाँ एक शख्स कहता है कि मेरे दिल ने मेरे परवरदिगार को देखा । आपने लोगों से कहकर उसके हाथ-पाँव बंधवाकर दजला नदी में फेंकवा दिया । पानी ने ऊपर उछाला तो वह फ़रियाद करने लगा । आपने कुछ ध्यान न दिया और वह शख्स कई बार पानी में ऊपर-नीचे हुआ । जब जीवन से निराश होने लगा तो कहने लग 'या अल्लाह फ़रियाद है ।' आखिर आपने लोगों से कह उसे बाहर निकलवाया । जब वह संभला तो आपने पूछा, 'क्या तूने अल्लाह को देखा ?' वह बोला जब तक मैं लोगों को पुकारता रहा तब तक मैं पर्दे में रहा लेकिन थक-हारकर जब मैंने अल्लाह को पुकारा तो मेरे दिल में एक सुराख सा खुला । आपने फ़रमाया, 'जब तक तूने दूसरों को पुकारा, तू झूठा था, अब उस सुराख की हिफाजत कर कि तुझे परमात्मा के दर्शन हों ।'

एक बार आपको मालूम चला कि हक्म इब्न अल-अब्बास अल-कल्बी ने अपने चाचा ज़ैद को कत्ल कर खजूर के पेड़ से लटका दिया है । आप इसे सुनकर इतने अप्रसन्न हुए कि

आपने हाथ उठाकर कहा 'ओ अल्लाह ! अपने किसी कुत्ते को उसे सबक सिखाने के लिये भेज ।' कुछ ही देर बाद खबर आयी की हक्म को रेगिस्तान में एक शेर ने मार डाला ।

आपने 148 हिजरी (7.12.765) में लगभग 64 वर्ष की उम्र में वफ़ात पाई । आपकी समाधि जन्नत अल-बाकी, मदीना में है ।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

'नून' (अक्षर 'न') जो सूर: क़लम के आरम्भ में है, सृष्टि के पूर्व के नूर का प्रतीक है, जिससे परमात्मा ने सारी सृष्टि की रचना की और वह मुहम्मद है । इसी कारण इस सूर: में यह आयत है-'और तुम्हारे (हजरत पैगम्बर मुहम्मद के) अख्लाक (आचरण) बुलंद हैं ।' (68:4)

परमात्मा का कहना है 'उसकी सेवा करो, जो मेरी सेवा करे और उसे त्रास जो दुनिया की सेवा करे ।' जो परमात्मा से प्रेम करता है वह दुनिया से दूर रहता है ।

अगर परमात्मा से तुम्हें कोई बख्शीश मिली हो तो उसे अपने पास रखने के लिये तुम्हें परमात्मा का बहुत शुक्रिया और प्रसंशा करनी चाहिये, जैसा की कुरआन शरीफ में लिखा है- '...अगर शुक्र करोगे तो मैं तुम्हें ज्यादा दूंगा....।' (14:7)

प्रार्थना प्रत्येक पवित्रात्मा का स्तम्भ, तीर्थयात्रा कमजोर लोगों का पवित्र संघर्ष और उपवास शरीर की जकात है ।

बिना अच्छे कर्म किये परमात्मा की कृपा चाहना बिना धनुष के बाण छोड़ने जैसा है ।

गुनाह करने वाले से मुहब्बत मत रख कि गुनाह तुझ पर हावी हो जायेगा । परामर्श ऐसे आदमी से कर जो बंदगी करता हो । जो हर किसी की सोहबत रखता है, वो सलामत नहीं रहता और जो बुरे रास्ते चलता है उस पर लांछन लगना तय है । जिसका जुबान पर काबू नहीं उसे शर्मिंदगी उठानी पड़ेगी ।

झूठ बोलने वाले को मुरव्वत (शील और संकोच) नहीं होती और ईर्ष्यालू को राहत (आराम) नहीं होती । दुराचारी को सरदारी (बड़प्पन) नहीं होती और मुलूक (बादशाह) को उखुव्व्त (भाईचारा-बंधुत्व) नहीं होती ।

अपने को अल्लाह तआला के महारिम (जो परमात्मा की निगाह में हराम हो) से बचाना ताकि आबिद (इबादत करने वाला) बन सके और जो कुछ किस्मत में हो गया, उस पर राजी रहना ताकि ईश्वरभक्त हो ।

कुछ ऐसे गुनाह हैं जिनकी वजह से बंदा परमात्मा के नजदीक हो जाता है और कुछ ऐसी इबादत हैं जिनकी वजह से बंदा परमात्मा से दूर हो जाता है, क्योंकि अहंकारी उपासक

गुनहगार होता है और अपने गुनाहों पर शर्मिंदा होने वाला उपासक होता है । परमात्मा ने तौबा को इबादत पर तरजीह दी है ।

अक्लमन्द वह है जो दो अच्छी बातों में से बेहतर को चुन सके और उसे ग्रहण करे और दो बुरी बातों में से ज्यादा बुरी को पहचान सके और मजबूरी हो कि उन दोनों में से किसी एक से बचना है तो ज्यादा बुरी बात से बचे ।

ईश्वरीय प्रेरणा ईश्वर के कृपापात्रों पर उतरती है और अधर्मी उसे तर्क और बुद्धि के आधार पर निराधार सिद्ध करने का प्रयास करते हैं ।

हजरत जाफ़र सादिक की समाधि ढहाये जाने से पहले (जन्नत अल-बाकी, मदीना)

हजरत जाफ़र सादिक की समाधि ढहाये जाने के बाद (जन्नत अल-बाकी, मदीना)

हजरत अबू याजीद बिस्तामी (रहम.)

'या इलाही जुज़ तेरे, भूलूं मैं सब दुनिया व दीन,
बयाजीदे पेशवा मर्दे ख़ुदा के वास्ते'
(भूल जाऊं तेरे सिवा सब दुनिया और दीन, हे परमात्मा !,
ईश्वर-भक्तों में अग्रणी हजरत बयाजिद के नाम पर)

हजरत तैफ़ूर अबू याजीद बिस्तामी (हजरत बयाजिद) (रहम.) अपने समय के जाने-माने सूफ़ी-संत थे जिनका सूफ़ी-रहस्यवाद पर काफ़ी गहरा प्रभाव पड़ा। उनके समकालीन विद्वानों की राय में हजरत बयाजिद (रहम.) फ़ना (लय-अपने अस्तित्व को परमात्मा या गुरु में पूर्णतया लय कर देना) की वास्तविकता के विषय में बयान करने वाले पहले व्यक्ति थे। तेरहवीं सदी के जाने-माने विद्वान हजरत तमैय्या ने उन्हें अपना आचार्य स्वीकार किया और उनके अनुसार हजरत बयाजिद (रहम.) ने उस श्रेणी की फ़ना हासिल की जो केवल महान संतों और पैगम्बरों के लिये ही संभव है। उनका यह भी कहना है कि हजरत बयाजिद (रहम.) को परमात्मा के सिवाय किसी अन्य का अस्तित्व स्वीकार्य नहीं है। वह (हजरत बयाजिद) न ही तो अन्य किसी की पूजा उपासना का समर्थन करते हैं न ही अन्य किसी से कुछ मांगने का। वे परमात्मा की इच्छा पूर्ण हो इस चाहना के आलावा किसी अन्य चाहना को नहीं चाहते, जिसे उनके खलीफ़ा हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) ने असली चाहना कहा।

हजरत बयाजिद (रहम.) का जन्म सन 804 ई. में ईरान में बस्ताम नामक जगह पर एक जाने-माने झोरास्ट्रियन परिवार में हुआ था। उनके दादा का नाम सुरुशन और पिता का नाम तैफ़ूर था। आपके दादा पहले अग्नि की पूजा किया करते थे लेकिन बाद में आपने इस्लाम स्वीकार कर लिया। बस्ताम में जन्म होने के कारण आप बस्तामी या बिस्तामी कहलाये। आपकी पूज्य माताजी का कहना था कि आप जब गर्भ में ही थे, वे जब कभी शुबहा का लुकमा (संशययुक्त खाना जो हलाल की कमाई का न हो) खा लेती तो आप (हजरत बयाजिद) पेट में हरकत शुरु कर देते और उन्हें बेचैनी शुरु हो जाती और जब तक वे कै न कर देती, उन्हें आराम न आता। हजरत बयाजिद (रहम.) से किसी ने पूछा इस राह (साधना मार्ग) में सबसे बेहतर क्या है ? हजरत बयाजिद (रहम.) ने फ़रमाया 'गर्भावस्था में आने के बाद से परमानन्द या धन्यता प्राप्त करना' जो उनकी माताजी की उपरोक्त बात की पुष्टि करता है।

उचित वक़्त पर उन्हें पढ़ने के लिये भेजा गया और जब वे कुरआन मजीद की सूर: लुकमान की इस आयत पर पहुँचे 'मेरा शुक्र अदा करो और अपने वालदैन का' तो आपका हृदय इस बात से आंदोलित हो गया और आपने अपने माता-पिता से अर्ज किया कि 'मुझसे

दो का शुक्र अदा नहीं हो सकता, या तो अल्लाह तआला से शुक्र मुआफ़ करा दो या अपना शुक्र बख्श दो ।' यह सुनकर उनकी पूज्य माताजी ने फ़रमाया कि हमने अपना हक़ बख्शा और तुमको बिलकुल अल्लाह तआला का कर दिया ।

माँ द्वारा उन्हें ईश्वर के हवाले कर देने के बाद हजरत बयाजिद (रहम.) बस्ताम छोड़कर इधर से उधर करीब तीस वर्षों तक ज्ञान की खोज में घूमते रहे और विभिन्न महापुरुषों से ज्ञान अर्जित करते रहे । शाम (डमास्कस) के जंगलों में आप जप, तप और ईश आराधना में तल्लीन रहे । आपने फ़रमाया कि इस दौरान बारह वर्ष तक स्वयं अपना लुहार बन कर मैंने अपने आप को तपस्या की भट्टी में तपाया और उसके बाद पांच वर्ष तक अपने हृदय रुपी दर्पण को चमकाया । इसके बाद एक वर्ष तक उसमें देखने पर पाया की अभी तक अविश्वास की जंजीरें मुझे जकड़े हुए हैं । इन्हें काटने में उन्हें बारह वर्ष लगे । जब उन्होंने सच्चा मुसलमान बनकर दुनिया को देखा तो सबको मुर्दा पाया (अर्थात ईश्वर प्रेम से शून्य पाया) । कहा जाता है कि जिस वक्त आप नमाज़ पढ़ते, आपके सीने से परमात्मा के खौफ़ और आदर में ऐसे जोर की आवाज आती कि लोगों को सुनाई देती । लेकिन जुहद (इन्द्रिय निग्रह) और सेवा से वे जो पाना चाहते थे, वह उन्हें अपनी पूज्य माताजी की सेवा से मिला ।

हजरत बयाजिद (रहम.) की निगाह में मदीना की यात्रा का अत्यधिक महत्व था क्योंकि वहाँ हजरत पैगम्बर (सल्ल.) की समाधि स्थित है । उन्होंने जब मदीना जाने का विचार किया तो लोगों की एक बड़ी भीड़ उनके साथ जाने के लिये तैयार हो गयी । उन्होंने परमात्मा से फरियाद करी कि लोगों की आखों पर उनके (हजरत बयाजिद) के रूप में स्वयं (ईश्वर) को छिपाने के लिये पर्दा मत डाल । फिर उन्होंने सुबह की नमाज़ (फ़ज्र की नमाज़) के बाद, लोगों के दिल में स्वयं के प्रेम की जगह ईश्वर के प्रेम के लिये, उनकी तरफ़ देखकर यह कलाम पढ़ा-'निःसंदेह मैं अल्लाह हूँ, मेरे सिवाय कोई पूज्य नहीं, तू मेरी इबादत कर ।' यह सुन कर लोग उन्हें दीवाना समझ कर छोड़ कर चले गये और हजरत बयाजिद (रहम.) अपने रास्ते चल दिये ।

मार्ग में हजरत बयाजिद (रहम.) को एक कपाल (मुर्दे की खोपड़ी) मिली जिस पर लिखा था 'गूंगे, बहरे और अंधे, ये लोग नहीं समझते ।' हजरत बयाजिद (रहम.) ने क्रंदन करते हुए उसे उठा लिया और चूमा और फ़रमाया अवश्य यह परमात्मा में फ़ना किसी सूफ़ी-संत का कपाल है । जिसके पास शाश्वत नाद को सुनने के लिये कान, शाश्वत सुंदरता को देखने के लिये आँख और परमात्मा की महिमा का गुणगान करने के लिये जबान नहीं है, उसके लिये इस कलाम को समझने का कोई कारण नहीं, जैसे धूल का एक कण परमात्मा के दिव्य ज्ञान को अपने में समाहित नहीं कर सकता ।

हजरत बयाजिद (रहम.) के पास एक ऊंट था जिस पर वे अपना और अपने मुरीदों का समान लाद कर चला करते थे । किसी ने ऊंट पर इतना सामान लदा देख कर कहा कि बेचारे ऊंट पर कितना सामान लाद दिया है । आपने फ़रमाया 'गौर से देखो, क्या इस पर कोई बोझ है ?' उसने देखा तो सामान को ऊंट की पीठ से एक हाथ ऊँचा उठा पाया । यह देख कर वह दंग रह गया और बोला वाह, क्या चमत्कार है । हजरत बयाजिद (रहम.) ने फ़रमाया, सुबान अल्लाह यदि मैं अपना हाल गुप्त रखता हूँ तो मेरी आलोचना करते हो और असलियत जाहिर करूं तो उसको बरदाश्त करने की ताकत तुममें नहीं है ।

हजरत बयाजिद (रहम.) ने फ़रमाया कि जिस काम को मैंने सबसे बाद का समझा था वह सबसे अव्वल निकला । और वह था अपनी पूज्य माताजी की प्रसन्नता हासिल करना, जिससे मुझे वह हासिल हुआ जो अब तक मैं स्वयं पर काबू पाने के अनेक प्रयत्न और सेवा करके पाना चाहता था । मदीना से जब वे वापस हुए तो उनके दिल में अपनी पूज्य माताजी के दर्शन का ख्याल आया । सुबह की नमाज़ के वक्त वे घर पहुँचे, कान लगाकर सुना तो माताजी वुजू कर रही थीं और यह दुआ मांग रही थीं 'ऐ अल्लाह ! तू मेरे मुसाफिर (बेटे-बयाजीद) को आराम से रखना और बुजुर्गों को उससे राजी रखना और नेक बदला उसे देना ।'

वे फरमाते हैं कि एक रात मेरी माँ ने मुझसे पानी माँगा । मैं जग में से पानी लाने के लिये बढ़ा लेकिन जग में पानी नहीं था, वह खाली था । मैंने घड़े को देखा, वह भी खाली था । मैं घड़े को लेकर नदी पर गया और पानी भर कर लाया लेकिन जब तक मैं वापस आया माँ सो चुकी थीं । वह सर्द रात थी, मैं पानी भरा जग अपने हाथ में लेकर माँ के पास खड़ा था । थोड़ी देर में वे जागीं और पानी पीकर मुझे आशीर्वाद दिया । फिर उन्होंने देखा कि वह जग मेरे हाथ में जम गया है तो उन्होंने आश्चर्य से पूछा कि तुमने जग को एक तरफ़ क्यों नहीं रख दिया ? मैंने कहा, मुझे डर था कि न जाने आपकी नींद कब खुल जाये और मैं पानी लेकर हाजिर न हूँ । माँ तब 'दरवाजा आधा खुला रखना' कहकर सो गयीं । मैं तकरीबन भोर होने तक निगरानी करता रहा कि दरवाजा ठीक से आधा खुला रहे, जैसा कि उन्होंने कहा था और उनकी अवज्ञा न हो । भोर के वक्त मेरे हृदय ने वह पाया जिसकी उसे मुद्दत से तलाश थी ।

हजरत बयाजिद (रहम.) को रूहानी निस्बत (आत्मिक सम्बंध) हजरत इमाम जाफ़र सादिक (रजि.) से प्राप्त हुई । यह उवैसी तरीके से हासिल हुई । सिलसिला-ऐ-आलिया-नक्शबंदी में कई संतों ने अध्यात्मिक विद्या को उवैसी तरीके से हासिल किया । उवैसी तरीके से तात्पर्य है बुज़ुर्ग संतों से उनके पर्दा कर जाने के बाद (उनके मरणोपरांत) उनसे निस्बत हासिल करण अर्थार्त उनसे दीक्षा ग्रहण कर आत्मिक उर्जा प्राप्त करना । अपनी साधना काल में आपने अनेक संतों के दर्शन पाये और आपने दिन-रात तपस्या में लीन

रह कर तीन साल में ही बहुत कुछ पा लिया । आप तौहीद (अद्वैतवाद) के महान स्तम्भ थे । उस वक्त के महान संत जुन्नैद बगदादी (रहम.) आपके तौहीद के कायल थे । हजरत बयाजिद (रहम.) का फ़रमाना था कि मुझे साधना काल की शुरुआत में ही ऐसी कृपा प्राप्त हुई जो किसी को मुश्किल से ही अनेकों वर्षों की तपस्या के बाद मिले ।

जिन लोगों से इन तीस सालों में हजरत बयाजिद (रहम.) मिले, उनमें से एक 'सादिक' नाम के आचार्य भी थे । एक बार जब हजरत बयाजिद (रहम.) उनके समक्ष हाजिर थे, उन्होंने यकायक उनसे खिड़की में से कोई किताब उठाकर लाने को कहा । हजरत बयाजिद (रहम.) बोले खिड़की, कौन सी खिड़की । वे आचार्य बोले तुम यहाँ इतने समय से आ रहे हो और आज तक तुमने खिड़की नहीं देखी ? हजरत बयाजिद (रहम.) ने अर्ज किया मुझे खिड़की से क्या काम, जब मैं आप के समक्ष होता हूँ तो अपनी आखें आपके सिवाय सब ओर से बंद लेता हूँ । आचार्य बोले यह इंगित करता है कि तुम्हारा उद्धेश्य पूरा हो गया अब तुम बस्ताम वापस चले जाओ और उन्होंने वहाँ एक बड़े आचार्य से मिलने का संकेत भी दिया । बहुत दूर चलकर हजरत बयाजिद (रहम.) उन आचार्य से मिलने गये लेकिन उन्होंने देखा कि वे आचार्य मक्का की दिशा में थूक रहे हैं । यह देखकर हजरत बयाजिद (रहम.) ने वहीं से अपने कदम यह कहते हुए वापस खींच लिये कि यदि उन आचार्य ने इस राह में कुछ हासिल किया होता तो वे कभी भी ऐसी हरकत न करते ।

इसी सन्दर्भ में कहा जाता है कि उनके घर से मस्जिद 40 कदम दूर थी लेकिन मस्जिद का आदर करते हुए उन्होंने मस्जिद के मार्ग में कभी थूका नहीं । काबा की यात्रा पूरी करने में उन्हें पूरे बारह वर्ष लगे । वे हर कदम पर दो रकअत नमाज़ पढ़ते । इस विषय में आप का फ़रमाना था की ख़ुदा का दरबार कोई आम बादशाह का दरबार नहीं है कि उठे और दरबार पहुँच गये । उस तक पहुँचने की राह तो विनम्रता और प्रेम भरी प्रार्थना के साथ तय होनी चाहिये ।

हजरत बयाजिद (रहम.) ने फ़रमाया कि एक बार उन्हें स्वप्न में परमात्मा के दर्शन हुए । आपने परमात्मा से पूछा, या अल्लाह ! तेरा रास्ता किस तरह है ।' उत्तर मिला- 'अपने नफ्स को छोड़ और आ ।' यह परमात्मा द्वारा बताया सबसे सरल रास्ता था । नफ्स से तात्पर्य है दुनियावी इच्छायें जो दिल को अपने वश में कर परमात्मा की याद भुला देती हैं । 'नफ्स को छोड़ और आ' अर्थात अपने आप को सम्पूर्ण रूप से भुलाकर परमात्मा की ओर अपनी निगाह करना । इस बारे में हजरत इब्राहीम खब्बास ने कहा कि परमात्मा ने हजरत बयाजिद (रहम.) को जो मार्ग बताया वह था दोनों लोकों, इहलोक और परलोक (इस दुनिया और जन्नत) के सन्दर्भ में अपने स्वार्थ का सम्पूर्ण रूप से परित्याग ।

हजरत बयाजिद (रहम.) का यह भी फ़रमाना था कि 'नमाज़ के सिवाय खड़ा होने के और रोजा के सिवाय भूखे रहने के कुछ न पाया। मुझको तो जो कुछ मिला है अल्लाह तआला के फ़ज्ल (कृपा) से मिला है न कि अमल से क्योंकि जुहद (तपस्या-इन्द्रिय निग्रह) व कोशिश से कुछ हासिल नहीं हो सकता ।' कहा जाता है कि एक बार आप ऐसी मनोस्थिति में आ गये कि आपका दिल उचट गया और मन इबादत में न लगता, जिसे सूफ़ी-भाषावली में कब्ज होना कहते हैं। नाउम्मीद होकर आपने इस्लाम छोड़ने के इरादे से बाज़ार से जुन्नार (जनेऊ) खरीद कर कमर में बाँधने का निश्चय किया। आपने अपने दिल में जुन्नार की कीमत एक दिर्हम (चांदी का सिक्का) ख्याल की और दुकानदार से पूछा। दुकानदार ने कीमत एक हज़ार दिर्हम बताई। इतनी ज्यादा कीमत सुनकर आप खामोश हो गये। तभी आपको गैबी (दैवी) आवाज सुनाई दी कि जो जुन्नार तू बांधे उसकी कीमत हज़ार दिर्हम ही होनी चाहिये। हजरत बयाजिद (रहम.) फरमाते हैं कि उनका दिल खुश हो गया कि अल्लाह तआला की उनके हाल पर इनायत है। इसी तरह आप फरमाते हैं कि "एक बार मुझ पर इल्हाम हुआ (दैवीय प्रेरणा) कि 'ऐ बयाजिद ! जो तू इबादत करता है उससे बेहतर ला और ऐसी चीज ला जो कि मेरी दरगाह में न हो ।' मैंने अर्ज किया, 'या अल्लाह ! तेरे पास क्या नहीं है ?' इल्हाम हुआ 'बेचारगी, आजिजी (विनम्रता), नियाज (प्रार्थना, आरजू) और शिकस्तगी (टूट-फूट, जीर्णता, शरणागति) नहीं है वही ला', अर्थात अपने में ये गुण पैदा कर।

एक बार जब हजरत बयाजिद (रहम.) एकान्त में जज्ब (ब्रह्मलीनता, आत्मलीनता) की अवस्था में थे, उनकी जबान से यह कलमा निकला 'सुभानी मा आजम शानी' अर्थार्त मैं पवित्र हूँ और मेरी शान कितनी बुलंद है। जब वे ख़ुदी में लौटे तो उनके मुरीदों ने उन्हें बताया कि आपकी जबान से यह कलमा निकला। आपने फ़रमाया अगर फिर से ऐसा हो तो तुम लोग मुझे तलवार से कत्ल कर देना। कुछ समय बाद फिर ऐसा ही हुआ और आपके मुरीदों ने आपको तलवार से कत्ल कर देना चाहा लेकिन उन्हें हर ओर हजरत बयाजिद (रहम.) ही दिखाई दे रहे थे और उनके शरीर से तलवार ऐसे आर-पार हो जा रही थी मानो पानी काट रही हो। आखिर में आप एक जगह बैठे दिखयी दिए तो मुरीदों ने सारा किस्सा बयान किया। आपने फ़रमाया बयाजिद तो यह है जो तुम्हे बैठा दिखयी दे रहा है, वह जो तुमने उस वक्त देखा, कोई और था।

कठिन तपस्या और अहंकार के सर्वथा त्याग के बाद भी एक बार आपके मन में गुमान हुआ कि मैं अपने ज़माने का बहुत बड़ा शैख़ हूँ। खुरासान जाते वक्त वे तीन दिन तक एक मस्जिद में इस इरादे के साथ रुके रहे कि जब तक परमात्मा उन्हें उनकी असली स्थिति से अवगत नहीं करा देता वे आगे नहीं जायेंगे। चौथे दिन उन्हें ऊंट पर सवार एक काना व्यक्ति उधर आता दिखा। ऊंट की तरफ़ देखकर हजरत बयाजिद (रहम.) ने उसे ठहरने का ईशारा किया तो ऊंट के पाँव जमीन में धस गये और वो वहीँ रुक गया। ऊंट

सवार बोला कि क्या तू चाहता है कि मैं अपनी खुली आँख बंद करके बंद आँख खोलूं और बस्ताम को बयाजिद समेत डुबा दूं ? यह सुनकर हजरत बयाजिद (रहम.) ने घबरा कर पूछा आप कहाँ से तशरीफ़ लाये हैं ? उसने कहा जब तूने अल्लाह से आगे न जाने का अहद किया मैं यहाँ से तीन हजार फरसंग (एक फरसंग यानि करीब सवा दो मील) की दूरी पर था और वहीँ से आ रहा हूँ, और फिर यह कहकर कि 'तू अपने दिल की निगहबानी कर और खबरदार हो जा' उनकी नजरों के सामने ही गायब हो गया ।

एक बार आपसे किसी ने पूछा कि आपका गुरु कौन है ? आपने फ़रमाया 'एक बूढ़ी औरत' और पूछने पर बतलाया कि "एक दफ़ा परमात्मा को पाने की उत्कट इच्छा की दशा में मैंने जंगले में एक बूढ़ी औरत को लकड़ियों का बोझ उठाते देखा । बोझ ज्यादा था, उसने मुझसे कहा कि बोझ उठा ले, मुझसे नहीं उठता । उस वक्त मेरी हालत ऐसी थी कि खुद का शरीर बोझ लगता था, उसका बोझ क्या उठाता । मुझे एक शेर दिखाई दिया, उसको इशारा कर अपने पास बुलाया और उसकी पीठ पर वह बोझ रख उस बूढ़ी औरत से पूछा कि शहर में जाएगी तो तू क्या बयान करेगी कि तूने किसको देखा है ? वह बोली कि यह कहूँगी कि आज मैंने एक अहंकारी और जालिम को देखा है । मैंने पूछा कि ऐसा कैसे तो वह बोली कि जिसको ख़ुदा तक्लीफ़ न दे उसको तू तक्लीफ़ देता है, इससे जाहिर होता है कि तू जालिम है और उस पर तू चाहता है कि शहर के लोग ये जाने की तू साहबे चमत्कार (सिद्धपुरुष) है और शेर तेरे वश में है, जिससे जाहिर होता है कि तू अहंकारी है, जो सबसे बड़ा ऐब है । यह बात मेरे मन को लग गयी और मन ही मन उसे मैंने अपना गुरु मान लिया ।" इसके बाद आप हमेशा सावधान रहते और अगर कोई चमत्कारी घटना घटित होती तो उसमे उनका अहंकार तो शामिल नहीं है इसकी वास्तविकता जानने के लिये परमात्मा से प्रार्थना करते । ऐसे वक्त उन्हें परमात्मा का नूर नजर आता जिसमें पांच पैगम्बरों का नाम हरे रंग में लिखा दिखाई पड़ता तो समझ जाते कि यह ठीक है । आपका फ़रमाना था की अक्सर शैतान चमत्कारी शक्तियों द्वारा अहंकार पैदा कर संतों को गुमराह कर देता है ।

एक बार आप कब्रिस्तान से आ रहे थे कि रास्ते में आपने एक नौजवान रईस को देखा कि बाजे के साथ गाते चला आ रहा था । उसे देख कर आपने 'लाहौल बिला कूवत इल्ला बिल्ला इल अलीइल अजीम' (न गुनाह से बचना, न नेक काम की कूवत, मगर साथ मदद अल्लाह के जो बरतर बुज़ुर्ग है) पढ़ा । यह सुनकर उस रईस नौजवान ने बाजा उनके सिर पर दे मारा । बाजा भी टूट गया और हजरत बयाजिद (रहम.) के सर में चोट भी लगी । दूसरे दिन उन्होंने बाजे की कीमत और कुछ हलुआ उस नौजवान के घर अपने एक मुरीद के हाथों माफ़ी मांगते हुए भिजवाया । रईस नौजवान पर उनके इस सद्व्यवहार का बड़ा गहरा असर पड़ा । वह आकर उनके कदमों पर गिर कर रोया, तौबा की और

उनका मुरीद बन गया। उसके साथी भी उसको देख हजरत बयाजिद (रहम.) की शरण में आ गये।

हजरत बयाजिद (रहम.) एक बार कहीं जा रहे थे, तभी उनके सामने एक कुत्ता आ गया। इस विचार से कि उनके कपड़े खराब न हो, हजरत बयाजिद (रहम.) ने अपना दामन समेटा और कुछ पीछे हट गये। यह देख कर उस कुत्ते ने मनुष्यों की भाषा में कहा "आपने दामन क्यों समेटा ? अगर दामन छू भी जाता तो आप उसे धो सकते थे, लेकिन आपके मन में मेरे लिये जो नफरत की भावना है, वह सात समुंदर के पानी से भी साफ़ नहीं की जा सकती, ।" यह सुनकर हजरत बयाजिद (रहम.) को बड़ी हैरानी हुई। उन्होंने कहा तू सच कहता है, तुझमे बाहरी नापाकी है तो मुझमे अन्दरूनी। फिर उन्होंने कुत्ते से प्रार्थना की कि वह कुछ दिन उनके साथ रहे ताकि उनमें पाकीजगी (पवित्रता) आ जाये। इस पर उस कुत्ते ने कहा, "मैं तुम्हारे साथ कैसे रह सकता हूँ, जबकि लोग मेरी उपमा एक तुच्छ प्राणी के रूप में देते हैं और तुम एक पीर हो।" फिर उसने एक चुटकी सी लेकर कहा, 'मैं अगले दिन के लिये कुछ बचाकर नहीं रखता जब की आप अनाज लाकर जमा करते हैं।' हजरत बयाजिद (रहम.) को एक नयी अन्तर्दृष्टि मिली और वे बोले, "मैं उस परमात्मा के साथ की कल्पना किस प्रकार कर सकता हूँ, जबकि अभी मैं एक कुत्ते के साथ रहने की भी योग्यता नहीं प्राप्त कर सका हूँ।"

आप जब नमाज़ पढ़ने मस्जिद जाते तो अक्सर दरवाजे पर खड़े होकर रोया करते। लोगों ने कारण पूछा तो आपने बताया कि जब मैं अपने को देखता हूँ तो अत्यंत अपवित्र पाता हूँ और इससे डरता हूँ कि कहीं भीतर आने से मस्जिद अपवित्र न हो जाये।

हजरत बयाजिद (रहम.) का परमात्मा के प्रति असीम समर्पण इस बात से भी पता चलता है कि एक बार उन्होंने एक इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ी। नमाज़ के बाद इमाम ने आपसे पूछा कि आपका खाना-पीना कहाँ से चलता है ? आपने फ़रमाया कि तुम्हारी बात का जवाब मैं बाद में दूंगा पहले मैं नमाज़ दोबारा पढ़ लूं क्योंकि जो शख्स रोजी देने वाले को न जाने, उसके पीछे नमाज़ पढ़ना उचित नहीं है।

एक रोज हजरत बयाजिद (रहम.) से किसी ने उनके वस्त्र का एक टुकड़ा माँगा ताकि उसे उनकी बरकत हासिल हो। आपने फ़रमाया अगर मेरे बदन का चमड़ा भी पहन लो तो क्या होगा, जब तक मेरे अमल न करो। फिर फ़रमाया कि सच्चा आराधक और सच्चा कर्मयोगी वो होता है जो तेगे जुहद (संयम रूपी तलवार) से तमाम इच्छाओं का सर काट दे और उसकी तमाम इच्छाएं और अभिलाषा ईश्वर के प्रेम में सिमट जाएँ और ईश्वर की इच्छा उसकी इच्छा हो जाय।

हजरत बयाजिद (रहम.) का एक शिष्य तीस वर्षों से उनके साथ था । हजरत बयाजिद (रहम.) रोजाना उससे उसका नाम पूछते और अगले दिन भूल जाते । आखिर एक दिन उसने उनसे इसका कारण पूछ ही लिया । हजरत बयाजिद (रहम.) ने फ़रमाया कि 'मैं तुमसे हंसी नहीं करता । जबसे ख़ुदा का नाम दिल में आ गया, कुछ याद नहीं रहता । हर रोज तुम्हारा नाम पूछ लेता हूँ और हर रोज भूल जाता हूँ ।'

हजरत धुल नून अल-मिसरी (रहम.) का एक शिष्य हजरत बयाजिद (रहम.) के पीछे-पीछे घूमा करता था । हजरत बयाजिद (रहम.) ने उससे पूछा कि क्या चाहिये ? उसने उत्तर दिया मैं बयाजिद से मिलना चाहता हूँ । हजरत बयाजिद (रहम.) का प्रत्युत्तर था- 'बरखुरदार, बयाजिद पिछले चालीस सालों से खुद अपने को ढूंढ रहा है और अभी तक अपने को ढूंढ नहीं पाया ।' जब उसने यह बात जाकर हजरत धुल नून अल-मिसरी (रहम.) को बताई तो वे भावावेश में आ गये और फ़रमाया, 'मेरे गुरुदेव हजरत बयाजिद ने अपने आपको ईश्वर प्रेम में इस तरह लय कर दिया है कि वो अपने आप को ढूंढ रहे हैं ।'

हजरत पैगम्बर मुहम्मद (सल्ल.) की तरह आपने भी आत्मिक आरोहण किया और परमात्मा के समक्ष हाजिर हुए । उन्होंने फ़रमाया कि मैंने इस संसार का तीन बार त्याग किया, ताकि मुझे इसमें लौटना न पड़े । जब मैंने परमात्मा की सहायता की गुहार की तो मुझे प्रार्थना की स्वीकार्यता के बारे में ज्ञात हुआ । वहां मेरे अहं का कोई अस्तित्व नहीं था । परमात्मा की कृपा से मैंने अनुभव किया कि मेरे स्वयं का कोई अस्तित्व नहीं है एवं मैं उसके अस्तित्व में विलीन हो गया हूँ । परमात्मा ने कृपा कर मुझे अपने प्रकाश और विभूतियों से परिपूर्ण कर दिया । उनका फ़रमाना था, 'मेरे सर्वोपरि गौरव के लिये मेरी प्रशंसा करो' और यह कि 'मैं एक ऐसे महासागर की यात्रा पर निकला, पूर्ववर्ती पैगम्बर जिसके किनारे पर ही थे और कि हे परमात्मा ! आपकी कृपा मेरे प्रति अभूतपूर्व है । आप कृपा कर मेरी प्रार्थना स्वीकार कर रहे हैं जबकि मैं अभी तक आपकी आज्ञा पालन करने में पूर्णतया असमर्थ हूँ ।'

हजरत बयाजिद (रहम.) ने यह भी फ़रमाया कि मैंने अपने अध्यात्मिक जीवन के प्रारम्भिक दौर में चार गलतियाँ की । उनका कहना था कि 'मैं सोचता था कि मैं उसे (परमात्मा को) याद करता हूँ, कि मैं उसे जानता हूँ, कि मैं उससे प्रेम करता हूँ और कि मैं उसको पाना चाहता हूँ, लेकिन जब मैं उसके हुज़ूर में हाजिर हुआ तो मैंने देखा कि मेरे उसको याद करने से पहले वो मुझे याद कर रहा था, कि मेरे उसके जानने से पहले वो मुझे जानता था, कि मेरे उसके प्रति प्रेम से कहीं पुराना उसका प्रेम मेरे प्रति था और वह मुझे चाह रहा था ताकि मैं उसे चाहने लगूं ।'

उन्होंने यह भी फ़रमाया कि "जब परमात्मा ने मुझे अपने हुज़ूर में हाजिर फ़रमाया और मुझसे पूछा कि मैं उसके समक्ष कैसे पहुंचा तो मैंने कहा अपने आप को नकारने

और संसार के त्याग (सांसारिक इच्छाओं के त्याग) द्वारा । उसने (परमात्मा ने) कहा, उसकी निगाह में दुनिया की कीमत किसी मच्छर के पंख से ज्यादा नहीं है, फिर तुमने किस तरह का त्याग किया है ? मैंने कहा, हे परमात्मा ! मुझे माफ़ कर, मैं आप पर विश्वास कर यहाँ तक पहुंचा हूँ । उसने कहा 'क्या मैंने कभी अपना वादा न निभा कर तुम्हारे विशवास को तोड़ा है ? मैंने कहा, हे परमात्मा ! मुझे माफ़ कर, मैं आप तक आपके द्वारा ही पहुंचा हूँ । तब परमात्मा ने कहा, 'अब हम तुम्हें स्वीकार करते हैं ।'"

किसी व्यक्ति ने हजरत बयाजिद (रहम.) से परमात्मा को पाने का मार्ग पूछा । उन्होंने फ़रमाया 'ईश्वर के भक्तों से प्रेम करो, इस हद तक कि वे तुमसे प्रेम करने लगें, क्योंकि ईश्वर जब उनके हृदय में तुम्हारा नाम अंकित देखेगा तो वह तुम्हारे गुनाहों को माफ़ कर अपने प्रेम से तुम्हें सरोबार कर देगा ।' यही कारण है कि नक्शबंदी सिलसिले में जिज्ञासुओं को अपने गुरु से प्रेम करने के लिये प्रेरित किया जाता है । गुरु के प्रति प्रेम उन्हें आनन्द एवं परमात्मा के हुज़ूर में हमेशा हाजिरी (सामीप्य) प्रदान करता है ।

एक बार आपके किसी शिष्य ने कहा, मुझे उस पर हैरत होती है जो अल्लाह तआला को जानता है पर इबादत नहीं करता । आपने फ़रमाया, मुझे उस पर हैरत होती है जो अल्लाह तआला को जानता है और इबादत करता है, अर्थात अल्लाह तआला को जानकर भी अपने होशों-हवास कायम रखता है ।

हजरत बयाजिद (रहम.) एक बार एक न्यायविद की सभा में उपस्थित थे । वह उत्तराधिकार सम्बन्धी नियमों की व्याख्या कर रहा था कि जब कोई व्यक्ति अमुक वस्तु छोड़कर मर जाता है, तो उसके पुत्र को अमुक वस्तु उत्तराधिकार में मिलेगी । इस पर हजरत बयाजिद (रहम.) ने कहा, 'ओ न्यायविद, तुम उस व्यक्ति के लिये क्या कहोगे, जिसने उत्तराधिकार में ईश्वर प्रेम के अलावा कुछ नहीं छोड़ा । गुलाम का अपना क्या होता है । जब वह मरता है तो अपने मालिक के सिवाय क्या शेष छोड़ जाता है ? वह वैसा ही रहता है जैसा कि ईश्वर ने उसे बनाया था ।' हजरत बयाजिद (रहम.) का यह कथन सुनकर लोग क्रंदन करने लगे । हजरत बयाजिद (रहम.) ने यह आयत पढ़ी, 'और जैसा हमने तुमको पहली बार पैदा किया था, ऐसा ही आज अकेले हमारे पास आये..।' (6:94)

हजरत अद-दय्लामी का कहना है कि एक बार मैंने अब्दुर रहमान इब्न याहया से परमात्मा में विश्वास के बारे में पूछा । उन्होंने कहा-'अगर तुम अपना हाथ शेर के मुँह में रख दो और ईश्वर के सिवाय किसी और से (अर्थात शेर से) न डरो, यह विश्वास है ।' मैंने अपने दिल में हजरत बयाजिद (रहम.) का ख्याल कर उनसे यह सवाल करना चाहा । मैंने उनके दरवाजे पर दस्तक दी तो भीतर से सुनाई दिया 'क्या जो अब्दुर रहमान ने तुमसे कहा वो काफ़ी नहीं है ? तुम केवल प्रश्न पूछने आये हो, मुझसे मिलने नहीं ।' मैं

समझ गया और पुन: एक वर्ष बाद जाकर उनका दरवाजा खटखटाया । इस बार उन्होंने कहा, 'आओ वत्स ! तुम्हारा स्वागत है । इस बार तुम मुझसे मिलने आये हो न कि प्रश्नकर्ता की तरह ।'

हजरत इब्न हजार का हजरत बयाजिद (रहम.) के बारे में कहना है कि 'परमात्मा ही सभी रहस्य और सबके दिल की जानता है । हजरत बयाजिद (रहम.) ने हक़ीक़त के बारे में जो भी कहा उनके वक्त के लोगों ने नहीं समझा । उन्होंने हजरत बयाजिद (रहम.) की भर्त्सना की और सात दफ़ा उन्हें शहर से निष्कासित किया और हर बार उनके निष्कासन पर शहर पर विपत्तियों का पहाड़ टूट पड़ता, लोग उन्हें वापस लाते, कसमे खाते और उनके प्रति अपना विशवास जताते ।' हजरत अत्तार और हजरत अलुसी का कहना है कि हजरत बयाजिद (रहम.) फरमाते थे 'ओ धन्य शहर बस्ताम, बयाजिद जिसे नामंजूर है ।'

आपने 261 हिजरी (सन 875 ई.) में 70 वर्ष से अधिक की उम्र में वफ़ात पाई । मृत्यु से कुछ समय पहले किसी ने उनसे उनकी उम्र पूछी तो आपने कहा 'मेरी उम्र चार वर्ष है, 70 वर्ष तक तो मुझ पर पर्दा पड़ा रहा ।' कहा जाता है कि आपको दो जगह दफनाया गया, एक डमास्कस में और दूसरे ईरान में । ईरान में आपकी समाधि बस्ताम शहर में स्थित है । हजरत बयाजिद (रहम.) के नाम पर उनके मुरीदों द्वारा 850 ई. बनवाई एक सूफ़ी दरगाह चिट्टागोंग में भी स्थित है ।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

नजात (मुक्ति) के लिये दो बातें काफ़ी हैं, अल्लाह तआला तेरे हर हाल से आगाह है और जो तू करता है वह देखता है और तेरे अमल से बेपरवाह है ।

अल्लाह तआला को पहचानने की यह निशानी है कि बंदा दुनिया से दूर भागे और धन-दौलत से परहेज करे ।

सज्जन लोगों की सुहबत अच्छे कर्मों से बेहतर है और बुरे लोगों की सुहबत बुरे कर्मों से बदतर है ।

जिसने अपनी इच्छाएं त्याग दीं, उसने ईश्वर को पा लिया ।

अपने आप को वैसा ही जाहिर कर जैसा कि तू वास्तव में है ।

जिक्र (जाप, ईश्वर को याद करना) का महत्व संख्या से नहीं, सावधानी से ईश्वर की ओर मन लगाने से है ।

परमात्मा की मुहब्बत और नजदीकी यह है कि इहलोक और परलोक दोनों की इच्छा न रखे, समस्त प्राणियों की सेवा करे और उनकी मुसीबतों में उनका साथ दे और प्रसन्न चित्त रहे ।

मर्दों का काम यह है कि सिवाय अल्लाह तआला के किसी और से दिल न लगाएं ।

किसी मुसलमान (सच्चे साधक) को अपने से ज्यादा बुरा देखने का नाम अहंकार है ।

भूख बहुत बड़ी शिक्षक है । अगर फिरौन को भूख का अहसास होता तो 'मैं तुम्हारा सबसे बड़ा ख़ुदा हूँ', न कहता ।

परमात्मा अपने सेवक को तीन चीजें बख्शता है, जो इस बात का प्रमाण है कि परमात्मा उसे प्रेम करता है-समुद्र की तरह उदारता, सूर्य की तरह कृपालुता और धरती की तरह विनयशीलता । सच्चा प्रेमी कभी भी किसी कष्ट को बड़ा नहीं समझता और अपने विश्वास पर अडिग रहता है ।

हे परमात्मा ! जहन्नुम की आग क्या है, कुछ नहीं । मुझे इसमें जलने दे ताकि अन्य सभी इससे बच जाएँ । आपकी जन्नत क्या है, बच्चों का एक खिलौना । ये विश्वासहीन कौन हैं जिन्हें तू दण्ड देना चाहता है ? तेरे सेवक हैं ये, इन्हें क्षमा कर ।

हे परमात्मा ! इसमें क्या ताज्जुब कि मैं, तेरा एक कमजोर सेवक, तुझसे प्रेम करता हूँ, ताज्जुब तो यह है कि तू बादशाहों का बादशाह होकर मुझे प्रेम करता है ।

सूफ़ी होने का अर्थ है आराम त्याग कर कठिनाइयों का वरन करना ।

जिसका कोई गुरु नहीं, उसका गुरु शैतान होता है ।

दिल में अगर गहरी चाहत हो तो परमात्मा अपना ज्ञान अवश्य बख्शता है ।

यदि परमात्मा मुझे अपने समय के सभी लोगों की मध्यस्थता (उनकी सिफ़ारिश) की इज़ाज़त दे तो मेरे लिये यह गर्व की बात नहीं है क्योंकि मैं केवल मिट्टी के एक टुकड़े के लिये यह कर रहा हूँगा ।

'ला इलाहा इल्लल्लाह' (परमात्मा के सिवाय और कोई परमात्मा नहीं) का साक्षी होना जन्नत की राह है लेकिन इसके लिये चार चीजों का होना जरुरी है: 1. वो जबान जो न झूठ बोले न चुगली करे; 2. दिल जो विश्वासघात न करे; 3. पेट जो संशय और हराम की कमाई के लुकमे से न भरा हो; और 4. अमल (कर्म) बिना फल की इच्छा के ।

उनसे पूछा गया की आदमी इंसान कब बनता है ? उन्होंने फ़रमाया, ‘जब उसे अपने नफ्स की बुराइयाँ समझ आ जाय और वह उन्हें सुधारने में लग जाये ।’

हजरत बयाजिद बिस्तामी का समाधि परिसर (बस्ताम, ईरान)
(श्री योगेश चतुर्वेदीजी, कनाडा, के सौजन्य से)

हजरत बयाजिद बिस्तामी की समाधि (बस्ताम, ईरान)

हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.)

'या इलाही फ़ज्ल से दे दौलते फुक्रो फ़ना,
बुल हसन ख्वाजा हमारे बासफ़ा के वास्ते'
(हे परमात्मा ! कृपा कर बख्श मुझे दरवेशी और तल्लीनता,
हमारे पवित्र ख्वाजा बुल हसन खिरकानी के नाम पर)

हजरत ख्वाजा अबुल हसन खिरकानी इब्न जफ़र अल-खिरकानी (रहम.) का जन्म एक फ़ारसी परिवार में 352 हिजरी (सन 963 ई.) में खिरकान (या खारकान) में हुआ था जो अब ईरान के शाहरूद के पास सेमनान इलाके में स्थित है । हजरत शैख़ अबुल अब्बास क़स्साब अमोली उनके आचार्य थे लेकिन हजरत बयाजिद बिस्तामी (रहम.) से उन्हें सिलसिला नक्शबंदी में उवैसीयत (हजरत बयाजिद बिस्तामी (रहम.) की मृत्यु के बाद उनसे आत्मिक निस्बत) हासिल हुई । हजरत बयाजिद बिस्तामी ने सन 875 ई. में ही वफ़ात पा ली थी और इस तरह हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) ने उनकी वफ़ात से करीब सौ वर्ष बाद निस्बत हासिल की, उनके खलीफ़ा बने और इस तरह उनके द्वारा नक्शबंदी सिलसिले का सरित-प्रवाह आगे बढ़ा ।

हजरत बयाजिद बिस्तामी (रहम.) ने उनके बारे में पहले ही बता दिया था । कहा जाता है कि हजरत बयाजिद बिस्तामी (रहम.) हर साल शहीदों (बुजुर्गों) की समाधियों के दर्शन के लिये जाया करते थे । एक बार रास्ते में खिरकान पहुंचकर आप एक जगह खड़े हुए और कुछ सूंघने लगे । पूछने पर आपने फ़रमाया कि इस गाँव में एक मर्द की खुशबू आती है, जिसमें तीन बातें मुझसे ज्यादा होंगी । वह बाल-बच्चों की जिम्मेदारी निभाएगा, खेती करेगा और वृक्ष लगाएगा ।

कहा जाता है कि अपनी रूहानी साधना के प्रारम्भिक बारह वर्षों के दौरान हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) इशा की नमाज़ (शाम की नमाज़ के बाद पढ़े जाने वाली रात की नमाज़) अदा करने के बाद हजरत बयाजिद बिस्तामी (रहम.) की मजार शरीफ पर हाजिर होते और वहां आपकी पवित्र आत्मा की ओर ध्यान लगाकर उनकी दया, कृपा, निकटता और नेमतों की प्रतीक्षा करते और परमात्मा से प्रार्थना करते कि उन्होंने (परमात्मा ने) जो इनायतें और रहमते हजरत बयाजिद बिस्तामी (रहम.) को बख्शी हैं उनमें से अबुल हसन को भी अता फ़रमा । इसके बाद वहां से आकर इशा के वुज़ू से ही फ़ज्र की (सुबह की) नमाज़ अदा करते अर्थात पूरी-पूरी रात इबादत में गुजारते और इसी तरह आपने चालीस वर्ष साधना में गुजारे ।

हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) बेहद निरभिमानी थे, अर्थात अहंकार आपको छू तक नहीं गया था और आपने अपने आप को सभी तरह की उपमाओं से दूर रखा था, यहाँ तक कि वे अपने आप को सूफ़ी तक कहलाना पसंद नहीं करते थे । उनका कहना था कि न तो वे कोई आबिद (इबादत करने वाले) हैं, न जाहिद (इन्द्रिय-सयंमी) और न आलिम (ज्ञानी), ईश्वर एक है और वे उसकी एकता में समाहित एक नाचीज शै (महत्वहीन वस्तु) हैं । चालीस वर्षों तक लगातार आपने अपने हृदय में परमात्मा की विद्यमानता के अलावा और किसी विचार को प्रविष्ट न होने दिया ।

एक बार आपको अपने खानकाह (आश्रम) में मुरीदों और दरवेशों के साथ फाका करते सात दिन गुजर गये लेकिन भोजन के लिये कुछ न मिला । एक दिन एक व्यक्ति कुछ भोजन सामग्री लेकर आया और आवाज दी कि सूफ़ियों के वास्ते लाया हूँ । आपने आश्रम में उपस्थित लोगों से कहा कि तुममें से जो सूफ़ी हो वो यह भोजन सामग्री ले ले, मेरी तो हिम्मत नहीं पड़ती कि मैं सूफ़ी होने का दावा करूं । अत: किसी ने भी उस भोजन सामग्री को न लिया । इसी तरह एक बार एक व्यक्ति ने आपसे अर्ज किया कि हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) उसे अपना खिर्का (उतारा हुआ वस्त्र) पहनाएं । आपने उस व्यक्ति से फ़रमाया कि पहले एक बात का जवाब दो कि अगर कोई औरत मर्द के कपड़े पहन ले तो क्या वो मर्द हो जाएगी ? उसने कहा नहीं । आपने फ़रमाया फिर तुम्हें मेरे खिर्के से क्या फायदा होने वाला है ?

सूफ़ियों के सन्दर्भ में हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) का कथन है कि सूफ़ी वह नहीं जो हमेशा प्रार्थना का नमदा उठाये फिरता है या जो पैबंद लगे कपड़े पहनता है या कोई विशेष तौर तरीके अपनाता है, बल्कि सूफ़ी वह है जो अपने आप को छिपाता है, लेकिन फिर भी लोग उसकी तरफ़ आकृष्ट होते हैं । सूफ़ी वह है जिसे न दिन में सूर्य की आवश्यकता है न रात में चंद्रमा की । सूफ़ी होने का निष्कर्ष है अपने हस्ती को इस तरह विलीन कर देना कि उसे ईश्वर के सिवाय अन्य किसी के अस्तित्व की आकांक्षा ही न रहे ।

फर्ज़-अदायगी और सेवा का दर्ज़ा इबादत से कहीं ज्यादा है, यह हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) के जीवन में घटी एक घटना से पता चलता है । एक बार उनकी पूज्य माताजी बीमार पड़ गयीं । आप दो भाई थे । माँ की सेवा और इबादत दोनों के लिये आप दोनों ने काम इस तरह बाँट लिया कि एक भाई माँ की सेवा में रहता तो दूसरा इबादत में । एक रात आपके भाई की बारी माँ की खिदमत करने की थी और आपकी इबादत करने की मगर आपके भाई ने कहा कि आप माँ की खिदमत करें, मैं इबादत करूंगा । आप ख़ुशी-ख़ुशी माँ की खिदमत में लग गये । आपके भाई इबादत खाने में चले गये और इबादत करने लगे । इबादत शुरु करते ही उन्हें एक दिव्य वाणी सुनाई दी “हमने तेरे भाई

को बख्शा (मोक्ष दी) और उसके तुफैल में (हेतु) तुझे भी बख्शा ।" आपके भाई को बड़ा आश्चर्य हुआ । वे बोले "या अल्लाह ! मैं तेरी इबादत में हूँ, चाहिये तो ये था कि मेरा भाई मेरी इबादत के तुफैल में बख्शा जाता ।" आवाज आई "तू हमारी इबादत करता है, जिसकी हमे जरूरत नहीं और तेरा भाई माँ की खिदमत में है, जिसकी उसे जरूरत है ।"

हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) ऐसे जबरदस्त संत हुए हैं कि आप के नाम की आन देकर सच्चे मन से प्रार्थना करने पर कि पत्थर में भी अनाहत नाद पैदा हो जाये तो ऐसा हो जाता है । यह बात स्वानुभूत है और पूर्णतया सच है । आपका फ़रमाना था कि 'बहुत से ऐसे लोग हैं जो जमीन पर चलते हैं मगर मुर्दा हैं और बहुत से ऐसे जो कब्र में भी जिन्दा हैं । सत्तर साल से मैंने अपने नफ्स की एक दफ़ा भी इच्छा पूरी नहीं की । एक रोज मुझे इल्हाम हुआ कि जो तेरी मस्जिद में आये वह दोजख़ नहीं जायेगा और जो तेरी मस्जिद में तेरे जीवन काल में या उसके बाद दो रकअत नमाज़ पढ़ लेगा, कयामत के दिन आबिदों (इबादत करने वालों) में उठेगा । मुझको गवारा है कि दुनिया से कर्जदार जाऊं और क़यामत के दिन कर्ज देने वाले मेरा दामन पकड़ लें (अपना कर्ज मांगें), मगर यह गवारा नहीं कि कोई साइल (मांगने वाला) मुझसे सवाल करे (मांगे) और मैं उसकी हाजत रद्द कर दूं (उसकी जरूरत पूरी न करूं) ।' आप से सम्बंधित सात किस्से हैं और आपका फ़रमाना था कि उन किस्सों को हृदयंगम करने वाले का अदने से अदना यह दर्जा होगा की मृत्यु के बाद वो शख्स आपके सामने जाजिम (दरी) पर बैठेगा और मौत का फ़रिश्ता उसके आमालों का हिसाब नहीं मांगेगा ।

एक बार बादशाह महमूद गजनवी (971-1030) हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) के दर्शन की इच्छा से खिरकान गया । उसने अपने एक दूत को उनके पास भेजा कि वह उनसे कहे की वे बादशाह सलामत को उसके खेमे पर आकर दर्शन देने की कृपा करें और अगर वे खेमे पर आने से इन्कार करें तो उन्हें कुरआन शरीफ की यह आयत सुनाने के लिये कहा "अति उल्लाह ब अतिउर्रसूल ब उलिल अमरे मिनकुम" अर्थात अल्लाह का हुक्म मानो और रसूल की फरमाबरदारी करो और तुममें से जो हाकिम हो उसकी फरमाबरदारी करो । दूत ने आपसे बादशाह का सन्देश निवेदन किया । आपने फ़रमाया 'मुझे माफ़ करो' (अर्थात बादशाह के पास हाजिर होने में मजबूरी जाहिर करने पर) तो दूत ने उन्हें बादशाह की आज्ञानुसार कुरआन शरीफ की वह आयत पढ़कर सुनाई । जवाब में आपने फ़रमाया कि 'मैं अल्लाह की इबादत में इतना तल्लीन हूँ कि रसूल की इताअत (आज्ञा पालन) के लिये भी वक्त नहीं फिर दुनिया के हाकिमों का तो जिक्र ही क्या ?' दूत से यह सुनकर महमूद गजनवी समझ गया कि वे उसकी सोच से भी बढ़कर महान संत हैं । फिर भी उसने अपनी बादशाही प्रवृति के अनुसार उनकी परीक्षा लेनी चाही और अपनी जगह अयाज नामक एक गुलाम को बादशाही पोषाक पहना दी और स्वयं गुलाम की पोषाक पहनकर दस दासियों को मरदाना पोषाक पहनाकर उनके साथ हजरत अबुल हसन

खिरकानी (रहम.) के सामने हाजिर हुआ । हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) ने महमूद गजनवी जो गुलाम के वेश में था के सलाम का जवाब तो दिया लेकिन कोई आदर न किया । अयाज की तरफ़ भी उन्होंने कोई ध्यान न दिया और महमूद गजनवी को हाथ पकड़कर अपने पास बैठाकर कहा कि यह सब फरेब छोड़ो और इन दासियों को बाहर भेजो ।

महमूद गजनवी ने हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) से विनती की कि हजरत बयाजिद बिस्तामी (रहम.) के बारे में कुछ फरमायें । आपने कहा कि हजरत बयाजिद बिस्तामी (रहम.) ने फ़रमाया है 'जिसने मुझे देखा बदबख्ती (दुर्भाग्य) से बरी हो गया ।' बादशाह को इस जवाब से संशय हुआ, उसने पूछा कि क्या उनका [हजरत बयाजिद बिस्तामी (रहम.) का] दर्जा हजरत पैगम्बर (सल्ल.) से भी ज्यादा है क्योंकि अबु जहल ने हजरत पैगम्बर (सल्ल.) को देखा पर वो अभागे ही रहे ? आपने फ़रमाया, 'ऐ महमूद ! अदब का लिहाज रख और अपनी सल्तनत को खतरे में मत डाल । अबु जहल ने अपने भतीजे को देखा न कि हजरत पैगम्बर (सल्ल.) को और असलियत तो यह है कि उन्हें अर्थात हजरत पैगम्बर (सल्ल.) को उनके चार खलीफाओं और साहबाओं के सिवाय किसी ने उन्हें पैगम्बर के रूप में नहीं देखा और इसका सबूत यह आयत है "ऐ मुहम्मद ! तू उन्को देखता है जो तेरी तरफ़ नजर करते हैं, हालाँकि वे तुझे नहीं देख सकते ।" बादशाह को यह असलियत समझ आई और उसने उन्हें कुछ और उपदेश देने के लिये निवेदन किया । आपने उसे और उपदेश दिये । फ़रमाया जो चीजें हराम हैं, उनसे दूर रहो । दानशील बनो, नमाज़ लोगों के साथ अदा करो । लोगों के साथ दया व प्रेम पूर्वक व्यवहार करो ।

महमूद गजनवी ने तब उनसे अपने लिये दुआ करने को कहा । आपने फ़रमाया कि मैं हर वक़्त परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि वह मोमिन (ईश्वर पर ईमान रखने वाले) मर्दों और औरतों को बख्श दे । महमूद गजनवी ने अपने लिये किसी विशेष दुआ के लिये अर्ज किया तो आपने दुआ की कि 'ऐ महमूद ! तेरी आकिबत (अंजाम) महमूद (श्रेष्ठ) हो ।' महमूद गजनवी ने तब उन्हें अशर्फियों से भरी एक थैली भेंट करनी चाही तो आपने उसके सामने जौ की एक सूखी रोटी खाने के लिये रख दी । महमूद गजनवी ने एक टुकड़ा तोड़कर मुँह में रखा और देर तक उसे चबाता रहा, वह कोर उसके गले के नीचे नहीं उतर रहा था । हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) बोले जैसे तेरे गले में यह जौ की रोटी अटकती है मेरे गले में भी तेरी अशर्फियों की थैली अटकती है । बादशाह के आग्रह करने पर भी उन्होंने एक भी अशर्फी लेने से इंकार कर दिया और फ़रमाया बिना जरूरत कोई चीज लेना ठीक नहीं । बादशाह हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) की निस्पृहता से बहुत प्रभावित हुआ और विदा लेते वक्त उनसे अपनी कोई निशानी उपहार के रूप में मांगी । आपने अपनी एक कमीज उसे दे दी और फ़रमाया कि बादशाह उसे हाथ में लेकर

कोई दुआ मांगेगा तो इंशाअल्लाह मंजूर होगी । फिर बादशाह वापस जाने के लिये खड़ा हुआ तो हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) भी उसको आदर देने के लिये उठ खड़े हुये । उन्हें अपने आदर में खड़े हुये देख बादशाह ने विनम्रता से पूछा कि जब मैं यहाँ आया तो आपने मुझे कोई आदर नहीं दिया लेकिन अब जा रहा हूँ तो आप मुझे आदर दे रहे हैं । आपने फ़रमाया जब तुम आये थे तो एक बादशाह होने के दर्प के साथ लेकिन अब जा रहे हो फ़क़ीरी की विनम्रता के साथ, जिसका आदर करना जरूरी है ।

इस अमूल्य तोहफे को महमूद गजनवी अपने साथ रखता था और सोमनाथ की लड़ाई के वक्त भी यह उसके पास था । इस घमासान लड़ाई में एक वक्त ऐसा आया की उसे लगने लगा कि उसकी हार हो जाएगी । इस विकट परिस्थिति में उसे हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) की कमीज की याद आई और घोड़े से कूदकर उसने उस कमीज को हाथ में लेकर अपनी जीत की दुआ मांगी । कुछ ऐसा हुआ कि बाजी पलट गयी और महमूद गजनवी जीत गया । उसी रात महमूद गजनवी ने स्वप्न में हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) को देखा, वे फ़रमा रहे थे कि 'ऐ महमूद ! तूने हमारे खिर्के की कुछ इज्जत न की । अगर तू अल्लाह तआला से तमाम काफिरों के मुसलमान हो जाने की दुआ मांगता तो सब मुसलमान हो जाते ।'

आपकी पूज्य धर्मपत्नी बहुत तुनक मिजाज थीं । एक बार जब हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) जंगल में लकड़ियाँ लाने गये हुए थे, किसी संत ने आपके घर आकर पूछा कि हजरत शैख़ अबुल हसन खिरकानी (रहम.) कहाँ हैं ? इस पर आपकी पूज्य धर्मपत्नी ने बहुत झुंझलाकर जवाब दिया कि तू ऐसे जिन्दीक (नास्तिक) और बुरे आदमी को शैख़ कहता है ? मैं किसी शैख़ को नहीं जानती । हाँ, मेरा शौहर जरूर लकड़ियाँ लाने जंगल गया है । वे साहब हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) को खोजते जंगल पहुँचे तो देखते हैं कि आप लकड़ियों का गट्ठर एक शेर पर लादे चले आ रहे हैं । उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ कि घर पर तो ये हालात हैं और आप शेर पर लकड़ियाँ लादे चले आ रहे हैं । उसने पूछा कि यह क्या माजरा है तो आपने फ़रमाया 'अगर मैं घर में अपनी बीबी की तुनक मिजाजी न सहूँ तो यह शेर मेरा बोझ क्यों सहे ? फिर आप उन्हें अपने साथ घर लेकर आये और कुछ देर सतसंग के बाद उनसे इज़ाज़त मांगी की मिट्टी भिगो चुका हूँ और अब मुझे दीवार बनानी है । दीवार बनाने लगे तो बसौली हाथ से छूट कर नीचे गिर गयी । उन संत ने उठाकर देना चाह लेकिन उससे पहले ही बसौली खुद-ब-खुद उठकर हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) के हाथ में चली गयी ।

एक बार यात्रियों का एक दल हज के लिये जा रहा था, रास्ते में खतरा था इसलिए वे लोग आकर हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) से मिले और प्रार्थना की कि वे कोई ऐसी दुआ बता दें कि जिससे उन पर कोई मुसीबत न आये । उनोने जवाब में बस इतना

ही फ़रमाया कि अगर कोई मुसीबत आ जाये तो तुम मुझे याद कर लेना । वे लोग सफर पर निकल गये और जैसा उन्हें अंदेशा था, डाकुओं ने उन्हें घेर लिया । इस दल में एक अमीर व्यक्ति भी था, डाकू जिसे विशेषकर लूटना चाहते थे । डाकुओं से घिर जाने पर दल के लोग ख़ुदा को याद करने लगे पर डाकुओं ने उन्हें लूट लिया, केवल वह अमीर व्यक्ति उन सबकी आखों से ओझल हो गया और लुटने से बच रहा । डाकुओं के जाने के बाद लोगों ने उससे पूछा कि वो कहाँ गायब हो गया था तो उसने बताया कि उसने हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) को याद किया और सबकी नजरों से ओझल हो गया । लौटते वक्त यह दल फिर हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) से मिला और उन्हें सब बात बताकर पूछा कि यह क्या माजरा है कि हम लोग ख़ुदा को याद करते रहे पर लुट गये लेकिन यह शख्स बचा रहा ? हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) ने फ़रमाया 'तुम लोग अल्लाह को जबान से याद करते हो और अबुल हसन दिल से । बस तुम अल्लाह को दिल से याद करने वाले उसके किसी बंदे को दिल से याद करो तो वह तुम्हारे लिये ख़ुदा को याद करे और तुम महफूज हो जाओ ।'

हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) के एक मुरीद ने एक बार लेबनान पर्वत पर (करीब एक हजार मील दूर) जाने की इच्छा प्रकट की । उसे मालूम चला था कि वहाँ एक कुतबे-आलम (संत-शिरोमणि) आकर नमाज़ के इमाम बनकर नमाज़ अदा करते हैं । वह उनके दर्शन करना चाहता था । आपने इजाज़त दे दी । उसके पहुँचने के थोड़ी देर बाद ही वे कुतबे-आलम पधारे और नमाज़ के इमाम बने । इस मुरीद ने देखा कि वे कोई और नहीं बल्कि हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) थे । वह शिष्य यह देखकर आश्चर्यचकित रह गया और जब तक वह संभलता वे वहाँ से जा चुके थे । उसने लोगों से दरियाफ्त किया तो मालूम चला कि वे कुतबे-आलम पांचों वक्त आकर नमाज़ के इमाम बनते हैं । वह मुरीद अगली नमाज़ के वक्त तक रुका रहा और जब हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) अगली नमाज़ के लिये पधारे और नमाज़ के बाद वापस जाने लगे तो उसने आपका दामन पकड़ लिया । आप चुपचाप उसे एक ओर ले गये और उससे वादा लिया कि यह बात वह किसी और पर जाहिर नहीं करेगा ।

एक बार आपके घर कुछ मेहमान आये । आपकी पूज्य धर्मपत्नी ने बताया की घर में कुछ रोटियों के सिवाय कुछ नहीं है । आपने कहा कि रोटियों को एक कपड़े से ढक दो और निकाल-निकाल कर मेहमानों को परोसते रहो, कोई कमी नहीं पड़ेगी । सब मेहमानों ने पेट भर खाया । तब नौकर ने कपड़ा उठाकर देखा तो वहाँ कुछ न था । आपने फ़रमाया 'गलती की वरना कभी कमी न पड़ती ।'

हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) ने चालीस वर्षों तक कठिन तपस्या की और इस दौरान आपने तकिया पर सर न रखा अर्थात पूरी-पूरी रात इबादत में गुजारी । इतनी मुद्दत

के बाद एक रात आपने तकिया माँगा तो उनके मुरीदों को ताज्जुब हुआ। आपने फ़रमाया आज मुझे परमात्मा की निस्पृहता और कृपा का दर्शन हुआ है। तीस साल से परमात्मा के सिवाय कोई दूसरा ख्याल मेरे दिल में न आया। एक रात आप नमाज़ पढ़ रहे थे कि आपको एक दिव्य वाणी सुनाई दी कि "ऐ अबुल हसन ! क्या तू चाहता है कि जो कुछ हम तेरे बारे में जानते हैं, दुनिया पर जाहिर कर दें ताकि दुनियावाले तुझे संगसार करें (पत्थर से मारें)।" आपने जवाब दिया कि "ऐ अल्लाह ! क्या तू चाहता है कि जो कुछ मैं तेरी रहमत के बारे में जानता हूँ और तेरी कृपा से देखता हूँ, दुनिया पर जाहिर कर दूं ताकि दुनियावाले तेरी इबादत करना छोड़ दें (अर्थात तू इतना कृपालु और दयालु है कि तू अपनी इबादत का भूखा नहीं वरन लोगों पर अहेतुकी कृपा करता है)।" उत्तर मिला, "ऐ अबुल हसन ! न तू कहे, न हम कहें।"

चालीस वर्ष तक आपने अपनी ठंडा पानी और खट्टी छाछ पीने की और बैंगन खाने की इच्छा को पूरी न किया। चालीस वर्ष बाद आपने अपनी माँ के जोर देने पर बैंगन खा लिया। उसी रात आपके बेटे को कत्ल कर दिया गया और उसका सर कोई आपके दरवाजे पर रख गया। आपने फ़रमाया परमात्मा की अवज्ञा का इससे कम दण्ड क्या हो सकता था। आपने अपनी माँ से कहा, देखा, मैंने पहले ही कहा था मेरा मामला ख़ुदा के साथ इतना आसान नहीं, मगर तुमने जिद करके बैंगन खिला दिया। और यह बैंगन की नाफ़रमानी ही आपके लिये हिजाब (पर्दा) बन गयी क्योंकि आपकी पूज्य धर्मपत्नी ने कहा कि 'दूर की बात तो जाने पर घर का जिसे पता न हो, उस शख्स को मैं वली नहीं मानती।' आपने फ़रमाया 'जंगल की घटना के वक्त अल्लाह ने मेरा हिजाब (पर्दा) उठा लिया था और बेटे की हत्या के वक्त मैं हिजाब में था।' आप जिस जंगल की घटना की बात कर रहे थे, वो उसी रात घटी थी जिसे आपने बता दिया था कि जंगल में डाकू एक काफिले को लूट रहे हैं और बहुतों को जख्मी किया है और यह बात सच निकली, लेकिन उसी रात आपको अपने बेटे के कत्ल के बारे में कुछ पता न चला।

हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) के एक संत-मित्र थे हजरत मुहम्मद बिन हुसैन (रहम.) जिनसे आपने यह वादा कर दिया था कि इंशाअल्लाह उनके अंत समय में आप उनके पास आयेंगे। लकिन हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) ने अपने मित्र से पहले ही वफ़ात पा ली (देहत्याग कर दिया)। जब आपके मित्र मृत्यु शैय्या पर थे, वे अचानक से उठ खड़े हुये। उनके बेटे ने आश्चर्य से पूछा कि क्या हुआ तो वे बोले कि मैं हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) को देख रहा हूँ। उनके साथ बहुत से बुज़ुर्ग हैं और फ़रमा रहे हैं कि मौत से मत डरो। इस तरह आपने अपना वह वादा पूरा किया।

एक शख्स ने आपसे निवेदन किया कि वह हदीसों के अध्ययन के लिये इराक जाना चाहता है। आपने पूछा क्यों क्या यहाँ हदीस पढ़ाने वाला कोई नहीं है ? उसने कहा यहाँ

हदीस जानने वाला कोई नहीं है जबकि इराक में हदीस जानने वाले बहुत से हैं। इस पर हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) बोले कि एक तो मैं ही हूँ, हालाँकि मैं पढ़ा-लिखा नहीं हूँ लेकिन अल्लाह ने सब इल्म मुझ पर जाहिर कर दिए हैं और हदीस तो मैने खुद हजरत रसूल अल्लाह (सल्ल.) से पढ़ी हैं। उस शख्स को विश्वास नहीं हुआ। रात को हजरत रसूल अल्लाह (सल्ल.) उसके स्वप्न में आये और फ़रमाया 'जवां मर्द सच्ची ही बात कहते हैं।' सुबह को वह हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) के पास हाजिर हुआ और हदीस पढ़ना शुरु कर दिया। पढ़ाते समय आप बीच-बीच में कह बैठते थे कि यह हदीस रसूल अल्लाह (सल्ल.) ने नहीं फरमाई है। उसने पूछा आपको कैसे मालूम तो आपने फ़रमाया कि जब भी तुम हदीस पढ़ते हो तो मैं रसूल अल्लाह (सल्ल.) को देखता हूँ। सही हदीस पर वे खुश होते हैं और जो हदीस सही नहीं होती उस पर उनके चेहरे पर शिकन पड़ जाती है।

आपने फ़रमाया कि जब तक मैं सिवाय अल्लाह के दूसरों को भी देखता रहा, मैंने अपने अमल में हर्गिज इख्लास (ईश्वर के प्रति सच्चा और निष्कपट प्रेम) नहीं पाया। लेकिन जब मैंने दुनिया को छोड़कर सिर्फ ईश्वर की तरफ़ देखना शुरु कर दिया तो इख्लास बगैर मेरी कोशिश के पैदा हो गया।

हजरत फरीदुद्दीन अल-अत्तार (रहम.) ने जो अपने समय के प्रसिद्ध सूफ़ी संत एवं कवि हुए हैं, अपनी पुस्तक तजकिरात उल-औलिया (संतों की जीवनी) जो कि महान संतों की जीवन के बारे में है, उसमें हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) के बारे में विस्तार से वर्णन किया है और उन्हें संतों के बादशाहों का बादशाह, अध्यात्मिक ज्ञान का महासागर इत्यादि उपमायें दी है। इसी तरह मौलाना रूमी और जामी ने उन्हें अपनी बहुत सी कवितायेँ समर्पित कीं और उनके बहुत से किस्सों का भी वर्णन किया। उनके शिष्यों ने उनके विषय में 'नूर उल-उलूम' नामक पुस्तक लिखी, लिसकी एक प्रति लंदन म्यूजियम में सुरक्षित है।

उनके प्रमुख शिष्यों में ख्वाजा अब्दुल्लाह अंसारी, अविसन्ना इब्न सीना, शाह महमूद गजनवी और अबू सैद अबुल खैर हैं। नासिर खुस्राव ने उनसे मिलने के लिये खिरकान की यात्रा की और उनके प्रति अगाध श्रद्धा व्यक्त की।

आपने मंगलवार मुहर्रम की दसवीं तारीख 425 हिजरी (सन 1033 ई.) को वफ़ात पाई। आपकी समाधि खिरकान (बस्ताम शहर का एक गाँव), ईरान में स्थित है। आपकी इच्छानुसार आपकी कब्र तीस गज गहरी खोदी गयी ताकि वह हजरत बयाजिद बिस्तामी (रहम.) की कब्र से ऊँची न हो।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

सबसे बेहतर चीज है दिल में अल्लाह तआला की याद ।

सूफ़ी वह है जो न हो; अर्थात जिसने अपना अस्तित्व परमात्मा में विलीन कर दिया ।

सच्चा इन्सान वह है जो दिल में है वो कहे ।

बंदगी का अर्थ है समस्त इच्छाओं का त्याग ।

साधुता से तात्पर्य है दिल का ईश्वर प्रेम में ऐसा रंग जाना कि किसी और चीज का कोई असर न हो ।

तवक्कुल (ईश्वर पर पूर्ण निर्भरता) का अर्थ है शेर, सांप, नदी और आग सब तेरे लिये एक से हो जायें क्योंकि आलिमे तौहीद (ईश्वर की एकता में समस्त चराचर की एकता) में सब एक ही है ।

अल्लाह तआला के लिये जो किया जाये वह सच्चा और निष्कपट प्रेम है और जो दुनिया के लिये किया जाये वह मक्कारी है ।

परमात्मा अपने गुनाहों पर पश्चाताप में आसूं बहाने वालों को और टूटे हुए दिल वालों को जो विनीत भाव से फ़रियाद करते हैं, प्रेम करता है ।

संगीत के जरिये ख़ुदा को याद करने से बेहतर है क़ुरआन पढ़े और ख़ुदा को याद करे ।

रसूल अल्लाह (सल्ल.) का सच्चा उत्तराधिकारी वह है जो उनके आचरण का अनुकरण करे ।

आलिम (ज्ञानी) और आबिद (इबादत करने वाले) लोगों का सतसंग करना चाहिये ।

मर्द वह है जो साठ साल गुजर जाये मगर बुरे कर्मों का लेखा-जोखा लिखने वाला फ़रिश्ता कुछ न लिखे अर्थात कोई गुनाह न हो और इस पर भी वह अल्लाह से शर्माए और उसके सामने आजिजी करे ।

ईश्वर भक्त ऐसा होना चाहिये कि वह दोजख़ (नर्क) के किनारे खड़ा हो जाये और अल्लाह तआला जिसे दोजख़ भेजे उसे हाथ पकड़कर बहिश्त (स्वर्ग) में ले जाये ।

फरिश्तों को तीन जगह औलियाओं (संतों) का खौफ़ आता है-एक यमराज को उनकी जान निकलते वक्त; दूसरे अच्छे-बुरे कर्मों को लिखते वक्त; और तीसरे मुन्कर नकीर को उनसे सवाल करते वक्त (मरने वाले से कब्र में सवाल पूछने वाले फरिश्तों को मुन्कर नकीर कहते हैं) ।

दुनिया के चाहने वाले पर दुनिया ग़ालिब (सवार) होती है और उससे मुँह फेरने वाला दुनिया पर ग़ालिब होता है ।

दरवेश वह है जो इस दुनिया और परलोक (स्वर्ग) दोनों से लगाव न रखे ।

अच्छे कर्म और पवित्रता में पवित्रता श्रेष्ठ है ।

जिस दिल में अल्लाह तआला के सिवाय कुछ और भी है, वो दिल मुर्दा है, चाहे वह पूरी तरह आज्ञापालक हो । दीन (धर्म) को शैतान से अंदेशा नहीं है बल्कि उस ज्ञानी से जिसके दिल में दुनिया की तृष्णा मौजूद है और अज्ञानी तपस्वी से ।

अगर दुनिया भर का भोजन भी मेहमान को परोस दिया जाये तो भी उसका हक अदा नहीं हुआ ।

सबसे रोशन वह दिल है जिसमें सदाचार हो, सबसे अच्चा वह काम है जिसमें दुनिया का अंदेशा न हो, सबसे अच्छा वह लुकमा (खाने का ग्रास) है जो हक़ की कमाई का हो और सबसे बेहतर वह दोस्त है जिसकी जिन्दगानी अल्लाह तआला के वास्ते हो ।

तीन चीजों की हद मुझे (हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) को) मालूम नहीं हुई- हजरत रसूल अल्लाह (सल्ल.) की अध्यात्मिक दशाएं; मन की छल, कपट और फरेब की हद और अध्यात्म या ब्रह्मज्ञान की हद ।

सुख, चैन तन्हाई में है और सलामती ख़ामोशी में है ।

जिसने मुझको पहचाना और दोस्त रखा, हक़ ने उसे दोस्त रखा ।

अल्लाह तआला ने गम और कष्ट जवां मर्दों के लिये रखे और उन्होंने उसके लिये अल्लाह तआला का शुक्रिया अदा किया ।

नमाज़ और रोजा अच्छी चीज है लेकिन दिल से गरूर और तृष्णा दूर करना बेहतर है ।

बहुत रोओ और मत हंसो; बहुत खामोश रहो और बात न करो; बहुत दो और अपने लिये मत रखो और बहुत जागो और मत सोओ ।

दुनिया वालों के साथ आदर सत्कार के साथ, हजरत रसूल अल्लाह (सल्ल.) के साथ उनके आचरण के अनुकरण के साथ और परमात्मा के साथ पवित्रता से रहना चाहिये क्योंकि वह पवित्र है और उसे पवित्रता पसंद है ।

लोगों को अल्लाह की तरफ़ ले जाने की दावत देना अच्छा है बशर्ते कि इसका उद्धेश्य उन्हें अपनी तरफ़ आकृष्ट करना न हो ।

एक क्षण के लिये भी परमात्मा का हो रहना अन्य सब आमालों से बेहतर है ।

जो दुनिया के प्रति दयालु और मेहरबान नहीं उसके दिल में ईश्वर के प्रति प्रेम नहीं हो सकता ।

तमाम उम्र में एक बार भी अगर तूने अल्लाह तआला को अप्रसन्न किया हो और उसने तुझे मुआफ़ भी कर दिया हो तो भी तमाम बाकी उम्र यह पश्चाताप न जाये कि मैंने ऐसे मालिक को क्यों अप्रसन्न किया ।

अल्लाह की तरफ़ जाने के अनेक रास्ते हैं, जितने भी प्राणी हैं सब अल्लाह ने पैदा किये हैं और समझो उतने ही रास्ते हैं । हर प्राणी अपनी सामर्थ्य और स्वभाव की हद तक उसकी तरफ़ जाता है और मैं हर रास्ते से गया और किसी रास्ते को मैंने खाली न पाया । हर एक रास्ते पर मैंने एक प्राणी को चलते पाया । मैंने दुआ की कि मुझे वो रास्ता बता जिसमें सिवा तेरे और मेरे किसी दुसरे की गुजर न हो । आवाज आई, गम और कष्ट का रास्ता ऐसा है जिसमें कोई जा नहीं पाता । गम और कष्ट में ईश्वर का शुक्रिया अदा करने वाला औरों की बनिस्बत अल्लाह की समीपता जल्द हासिल कर पाता है ।

जिस कौम में अल्लाह किसी को सरफ़राज़ (प्रतिष्ठित) करता है, उसके तुफैल (हेतु) में सारी कौम को बख्श देता है ।

बंदे से अल्लाह तक हजार मंजिलें हैं, जिनमे पहली मंजिल चमत्कार है, कम हिम्मत बंदे यहीं रुक जाते हैं, आगे नहीं बढ़ पाते और आगे के मुकामात से वंचित रह जाते हैं ।

मोमिन (सच्चा मुस्लमान या सच्चा ईश्वर भक्त) के लिये हरेक प्राणी एक फंदा है । मालूम नहीं वह किस फंदे में रह जाये ।

अल्लाह को जानकर नफ्स की आफत और शैतान के फरेब से बेखबर न हो जाये । और जब तक शैतान के फरेब में है, अल्लाह चुप है, और जब शैतान हार जाता है, अल्लाह चमत्कार और स्नेह (उन्स) में डाल देता है, मगर जवां मर्द वह है जो किसी चीज पर नहीं रीझता ।

बाज लोग ऐसे हैं जो उम्र गुजार कर हक़ीक़त से वाकिफ होते हैं और बाज ऐसे हैं जो उसकी कृपा से एक ही क्षण में सब भेद और रहस्य से वाकिफ हो जाते हैं और दुनिया से बेखबर हो जाते हैं ।

हजरत अबुल हसन खिरकानी का समाधि परिसर (खिरकान, ईरान)

हजरत अबुल हसन खिरकानी की समाधि (खिरकान, ईरान)
(श्री योगेश चतुर्वेदीजी, कनाडा, के सौजन्य से)

हजरत अबुल कासिम गुरगानी

‘या इलाही ता अबद कायम रहे यह सिलसिला,
ख्वाजा बुल कासिम, नूर उल हुदा के वास्ते’
(हे परमात्मा ! यह नक्शबंदी सिलसिला बना रहे नित्य,
सच्चाई की रोशनी ख्वाजा बुल कासिम गुरगानी के नाम पर)

हजरत अबुल कासिम गुरगानी (रहम.) इब्न अली इब्न अब्दुल्लाह गुरगानी अपने समय के पूर्ण समर्थ संतों में से थे और आप दोनों विद्या, इल्मे बातिन (अध्यात्मिक ज्ञान) एवं इल्मे जाहिर (दुनियावी ज्ञान), में पारंगत थे । आपका जन्म गुरगान, उत्तरी ईरान में 380 हिजरी में हुआ था । आपको नक्शबंदी सूफ़ी सिलसिले में हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) से उवैसी तरीके से निस्बत हासिल हुई अर्थात हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) के देहत्याग के बाद । हजरत इमाम जुन्नैद अल-बगदादी (रहम.) (218-298 हिजरी) की निस्बत भी आपको कुछ अन्य संतों शैख़ अबू उस्मान अल-मगरीबी (रहम.) (वफ़ात 373 हिजरी-आपकी समाधि निशापुर उत्तरी-पूर्वी ईरान में स्थित है), शैख़ अबू अली अल-कातिब (रहम.) (वफ़ात 356 हिजरी) और शैख़ अबू अली मुहम्मद इब्न कासिम अर-रुद्बरी (रहम.) (वफ़ात 322 हिजरी) के माध्यम से उवैसी तरीके से हासिल हुई ।

हजरत अबुल कासिम गुरगानी (रहम.) के विषय में जो कुछ जानकारी उपलब्ध है वह हजरत सय्यैद अली हुजविरी (रहम.) (हजरत दाता गंज बख्श के नाम से लोकप्रिय) के माध्यम से । हजरत अबुल कासिम गुरगानी (रहम.) हजरत सय्यैद अली हुजविरी (रहम.) के शैखों में से एक थे । फ़ारसी भाषा में सूफ़ीज्म पर लिखी पहली किताब ‘कश्फ़ अल-महजूब’ में हजरत हुजविरी (रहम.) ने उन्हें अर्थात हजरत अबुल कासिम गुरगानी (रहम.) को अपने वक्त का संत-शिरोमणि और ध्रुवपद पर आरूढ़ माना । अपनी पुस्तक में उन्होंने उनका परिचय इन शब्दों में दिया है:

“अपने वक्त में वे अद्वितीय और सर्वश्रेष्ठ थे । उनकी शुरुआत अत्यंत श्रेष्ठ और पुरजोर थी और उनकी यात्रायें पूरे अदबोआदाब और धार्मिक नियमों के पालन के साथ की गयीं । उनके सभी मुरीदों और साधकों के दिल उनकी तरफ़ मुखातिब रहते थे और उन सबका उनमें पूर्ण विशवास था । मुरीदों की अंदरूनी हालत और अनुभवों को जानने की उनमें आश्चर्यजनक शक्ति थी और वे अनेक विद्याओं में पारंगत थे ।”

अपनी किताब में वे एक जगह लिखते हैं-“मैंने एक दिन उन महान शैख़-हजरत अबुल कासिम गुरगानी (रहम.)-से पूछा कि किसी दरवेश में ऐसी क्या बातें होनी चाहिये कि वो गरीबों में गुणी गिना जाये ? उन्होंने फ़रमाया-“किसी भी दरवेश में इसके लिये कम से कम तीन बातें होनी चाहिये, पहली उसे सही पैबंद लगाना आना चाहिये, दूसरी उसे मालूम होना चाहिये कि सही कैसे सुना जाता है और तीसरी उसे मालूम होना चाहिये कि जमीन पर सही से कदम कैसे रखा जाता है ।”

इन बातों का असली अर्थ जो उन्होंने अपनी पुस्तक में बतलाया वह यह है-सही पैबंद लगाने का अर्थ है जो गरीबी के लिये लगाया जाये न कि दिखावे के लिये; सही से सुनने से तात्पर्य है वह शब्द जो गुहृय ज्ञान के लिये सुना जाये और व्यवहार में लाया जाये न कि ख्वाहिश के लिये यूँ ही और जो जीवन में उतरे न कि तर्क के लिये; और सही कदम रखने से तात्पर्य है वह कदम जो जमीन पर सच्चे उल्लास के साथ रखा जाये न कि खेल या औपचारिकता के लिये ।

मित्रता और संगति के बारे में आपका फ़रमाना था कि मित्रता में अपना स्वार्थ नहीं ढूँढना चाहिये क्योंकि मित्रता में सारी बुराइयों का प्रवेश स्वार्थ सिद्धि की लालसा के कारण ही होता है । स्वार्थी व्यक्ति के लिये एकांतवास बेहतर है । जो अपने स्वार्थ की जगह मित्र के लाभ के बारे में सोचता है, वह सच्चा मित्र है ।

हजरत अबुल कासिम गुरगानी (रहम.) की चमत्कारिक शक्तियों के बारे में हजरत हुजविरी (रहम.) ने अपनी उपरोक्त पुस्तक में लिखा है कि “एक बार मैं उनके सामने हाजिर होकर अपने अनुभव और मुशाहद: (दिव्य प्रेरणा या दिव्य-दर्शन) के बारे में बता रहा था कि शायद वे इनकी सत्यता के बारे में कुछ कहें क्योंकि इस विषय में उनकी गहरी पैठ थी । वे मेरी बात कृपापूर्वक सुन रहे थे । युवावस्था के आग्रह और अभिमान ने मुझे उन अनुभव और मुशाहद: के साथ स्वयं को जोड़ने को उत्सुक कर दिया था और मैं सोचने लगा की शायद उन्हें स्वयं को अपनी प्रारम्भिक अवस्था में वे सब अनुभव और मुशाहद: न हुए हों वरना वे मेरे प्रति इतनी सहनशीलता न दिखाते और इस बारे में जानने को इतने उत्सुक न होते । परन्तु उन्होंने मेरे मन की बात जैसे पढ़ ली । वे बोले, ‘मेरे प्यारे दोस्त ! तुम्हे जानना चाहिये कि मेरी विनम्रता तुम्हारे या तुम्हारे अनुभवों की वजह से नहीं है बल्कि उसके प्रति है जो ये अनुभव प्रदान करता है । ये अनुभव केवल तुम पर ही गुजरे हों, ऐसा नहीं है, सभी साधक इन अनुभवों से गुजरते हैं ।’ यह सुनकर मुझे झटका लगा । वे मेरी भ्रमित दशा देखकर बोले, ‘बरखुरदार ! आदमी का इस रास्ते से इससे ज्यादा सम्बन्ध नहीं है कि जब वह इससे जुड़ा रहता है तो वो कल्पना करने लगता है कि उसने इसे पा लिया है और जब वह इससे अलग हो जाता है तो वह अपने अनुभव को शब्द देने लगता है । इसलिए दोनों उसका इन्कार या हामी और उसका वजूद

या गैरमौजूदगी दोनों ही कल्पना मात्र हैं । आदमी कभी कल्पना की कैद से आजाद नहीं होता । उसे यह उचित है कि वह एक सेवक की भांति उसके दरवाजे पर खड़ा रहे और सिवाय उसके हुक्म का ताबेदार होने के बाकी सब निस्बत (सम्बन्ध या रिश्ते) अपने दिल से निकाल दे ।' इसके बाद भी मैं उनसे बहुत बार अध्यात्मिक बातें करता रहता लेकिन यदि मैं कभी उनकी चमत्कारिक शक्तियों को उभारने का प्रयास करता तो वो निष्फल ही रहता ।"

हजरत अबुल कासिम गुरगानी (रहम.) द्वारा लिखी एक पुस्तक 'फुसुल अल-तरीका वा फुसुल अल-हकिका' है । इस किताब में आपने कहा है:

"उस बात में जो गुनाह न हो, भाइयों का साथ देना, स्वेच्छा से व्रत (रोजा) रखने से कम नहीं है और व्रत रखने का एक अदब यह है कि व्रत रखने वाले को अपने व्रत रखने की कोई कीमत नहीं समझनी चाहिये ।"

शैख़ शराफ अल-दीन याह्या ने अपनी 'सौ पत्र' नामक किताब में लिखा है कि एक बार उनके (हजरत गुर्गनी साहब) प्रमुख शिष्य एवं उत्तराधिकारी हजरत शैख़ अबू अली फरमादी (रहम.) ने अपने गुरुदेव से अपने एक स्वप्न के बारे में पूछा कि 'आपने मेरे स्वप्न में मुझसे इस तरह बात की, ऐसा क्यों हे मेरे शैख़ ?' हजरत अबुल कासिम गुरगानी (रहम.) ने अपना चेहरा दूसरी तरफ़ फेर लिया और फ़रमाया "अगर तुम्हारे दिल में 'क्यों' के लिये कोई जगह ही नहीं होती तो यह सवाल तुम्हारे होठों तक ही न पहुंचा होता ।"

हजरत अबुल कासिम गुरगानी (रहम.) बहुत ही शांत स्वभाव के थे और दिखावे से दूर ही रहा करते थे । कहा जाता है कि एक बार हजरत सय्यैद अली हुजविरी (रहम.) (हजरत दाता गंज बख्श) आपसे किसी मसले पर बातचीत करने पहुँचे । जब वे वहाँ पहुँचे तो आप एक खम्बे से मुखातिब होकर उस मसले का जवाब दे रहे थे ।

आपने 23 सफ़र 450 हिजरी (19 या 20 अप्रैल 1058 ई.) को वफ़ात पाई । आपकी दरगाह ईरान में तोरबत हेदरीयह से 3 कि. मी. दक्षिण में एक गाँव (गुरगान) में स्थित है (लेटीट्यूड 35.23435-लोंगीटयूड 59.19795) ।

हजरत अबुल कासिम गुरगानी का समाधि परिसर (गुरगान, ईरान)

हजरत अबुल कासिम गुरगानी की समाधि (गुरगान, ईरान)
(श्री योगेश चतुर्वेदीजी, कनाडा, के सौजन्य से)

हजरत शैख़ अबू अली फरमादी तुसी (रहम.)

'या इलाही जब मैं तेरा नाम लूं तब हो हुज़ूर,
अबू अली मकबूल दरगाहे ख़ुदा के वास्ते'
(हे परमात्मा ! हाजिर हूँ जब मैं करूं तुझे याद,
तेरे दरबार में प्रिय अबू अली फरमादी के नाम पर)

हजरत शैख़ अबू अली फ़ज्ल इब्न मुहम्मद अल-फरमादी अत-तुसी (रहम.) हजरत अबुल कासिम गुरगानी (रहम.) के प्रमुख शिष्य एवं आत्मिक उत्तराधिकारी और उनके दामाद थे । आपका जन्म 402 हिजरी में हुआ था । आपको उवैसी तरीके से हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) से निस्बत हासिल थी, अर्थात हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) की वफ़ात के बाद उनसे आत्मिक सम्बन्ध हासिल किया लेकिन पूर्णता आपने हजरत अबुल कासिम गुरगानी (रहम.) से प्राप्त की ।

आपका कहना था की मैं अपनी युवावस्था में निशापुर (उत्तरी-पूर्वी ईरान) में पढ़ा करता था, जहाँ मैंने एक दिन सुना कि शैख़ अबू सैद अबुल खैर (रहम.) (हजरत अबुल हसन खिरकानी साहब के शिष्य एवं खलीफा) महना से आये हुए हैं और एक जगह प्रवचन कर रहे हैं । मैं उनके दर्शन हेतु गया और जब मैंने उनके चेहरे की तरफ़ देखा तो मेरे मन में उनके और सूफ़ियों के प्रति प्रेम और सम्मान के भाव उभर आये । एक दिन जब में मदरसे में बैठा हुआ था, यकायक मेरे मन में उनके दर्शनों की तीव्र उत्कंठा पैदा हो गयी जबकि वह उनके दर्शन का सामान्य समय नहीं था । मैंने बहुत कोशिश की पर खुद को उनके पास जाने से रोक नहीं पाया । वे बहुत से लोगों से घिरे बैठे थे । मैं भी उनमें शामिल हो गया और थोड़ी ही देर में वे 'समाअ' (अध्यात्मिक साधना-अधिकतर संगीत या नृत्य के माध्यम से) में तल्लीन हो गये । मैं एक ऐसी जगह बैठा था जहाँ उनकी नजर मुझ पर नहीं पड़ रही थी । समाअ में तल्लीन हो शैख़ अबू सैद अबुल खैर (रहम.) भावावेश में आ गये और अपनी कमीज के टुकड़े-टुकड़े कर वहां उपस्थित लोगों में बांटने लगे । उसके बाद उन्होंने कमीज की आस्तीन अपने हाथ में लेकर मेरे नाम की आवाज लगाईं । उन्होंने पुकारा 'ओ अबू अली तुसी ! कहाँ हो तुम ।' मैंने सोचा शैख़ न ही तो मुझे जानते हैं न मुझे देख सकते हैं, शायद वे अपने किसी मुरीद को पुकार रहे हों ? उन्होंने फिर पुकारा लेकिन मैं तब भी खामोश रहा । जब उन्होंने तीसरी दफ़ा पुकारा तो लोग कहने लगे वे तुम्हे ही पुकार रहे हैं । मैं उनके सामने हाजिर हुआ तो उन्होंने वो आस्तीन-मुबारक का टुकड़ा मुझे दे दिया और फ़रमाया कि मैं उसे संभालकर रखूँ । इस घटना के बाद मुझ पर आशीर्वादों की झड़ी लग गई और उनकी सेवा में मुझ पर कई अध्यात्मिक स्थितियां उतरने लगीं ।

कहा जाता है कि शैख़ अबू सैद अबुल खैर (रहम.) के चालीस प्रमुख शिष्य थे शैख़ अल-इस्लाम अहमद जाम (रहम.) और शैख़ अबू अली फरमादी (रहम.) इनमें शामिल हैं । कहा जाता है कि शैख़ अबू अली फरमादी (रहम.) को इल्म बातिनी बख्शा गया पर अभी उसे औरों पर प्रकट करने की इज़ाज़त उन्हें नहीं दी गयी थी जबकि शैख़ अहमद जाम (रहम.) को यह इज़ाज़त दे दी गयी थी ।

शैख़ अबू सैद अबुल खैर (रहम.) के निशापुर से लौट जाने के बाद हजरत फरमादी (रहम.) इमाम अबुल कासिम कुशैरी (रहम.) की सेवा में उपस्थित होने लगे । वे सूफीज्म के एक महान इमाम थे और उन्होंने 'रिसाला कुशैरिया' नामक पुस्तक की रचना भी की । उन्होंने हजरत फरमादी (रहम.) को अपनी पढ़ाई जारी रखने को कहा जिस दौरान हजरत फरमादी (रहम.) को विभिन्न अध्यात्मिक अनुभव होते रहे । हजरत फरमादी (रहम.) फरमाते हैं कि 'इसके बाद मैं तीन वर्ष तक पढ़ता रहा जब तक कि एक दिन अपना पैन (कलम) उठाने पर उसे स्याही से खाली पाया । मैंने यह वाक्या इमाम अबुल कासिम कुशैरी (रहम.) को अर्ज किया तो आपने फ़रमाया कि पढ़ाई ने तुम्हें छोड़ दिया है तो तुम भी अब पढ़ाई को छोड़कर अध्यात्मिक पथ पर आगे बढने में लग जाओ । मैंने अपना सामान मदरसे से उठाया और उनकी खानकाह में आकर उनकी सेवा में रहने लगा ।'

किस प्रकार उन्हें इमाम अबुल कासिम कुशैरी (रहम.) से इल्म बातिन प्राप्त हुआ इस बारे में वे स्वयं अपने शब्दों में कहते हैं "एक बार इमाम अबुल कासिम कुशैरी (रहम.) नहाने के लिये स्नानागृह गये, मैं भी उनके साथ गया । उनके नहाने के लिये मैंने पानी भरकर रख दिया । नहाकर आने के बाद इमाम अबुल कासिम कुशैरी (रहम.) ने प्रार्थना की और फिर पूछा कि पानी किसने भर कर रखा ? मुझे लगा कि शायद मैंने उनके हुज़ूर में कुछ बेअदबी कर दी है अत: मैं चुप रहा । उन्होंने दोबारा और फिर तीसरी बार पूछा । तब मैंने अर्ज किया कि यह काम आपके इस सेवक का है । उन्होंने फ़रमाया 'ओ अबू अली ! अबुल कासिम कुशैरी ने सत्तर साल में जो अर्जित किया वो सब तुमनें इस एक बाल्टी पानी के बदले में पा लिया ।'"

एक दिन उन्हें एक उच्च अध्यात्मिक स्थिति की प्रतीति हुई तो उन्होंने इस बारे में इमाम अबुल कासिम कुशैरी (रहम.) को बताया । इमाम अबुल कासिम कुशैरी (रहम.) ने फ़रमाया कि उनकी अध्यात्मिक यात्रा उसी मुकाम तक है तो हजरत फरमादी (रहम.) ने आगे खोज जारी रखने का निश्चय किया और इसी खोज में वे हजरत अबुल कासिम गुरगानी (रहम.) की शरण में पहुँचे, जिन्होंने उन्हें तक्मील (पूर्णता) तक पहुँचाया ।

हजरत सय्यैद अली हुजविरी (रहम.) (हजरत दाता गंज बख्श) जो हजरत गुरगानी (रहम.) के प्रमुख मुरीदों में से थे, ने अपनी पुस्तक 'कश्फ़ अल-महजुब' में हजरत फरमादी (रहम.) की प्रशंसा में लिखा है कि 'उनके (हजरत गुरगानी (रहम.) के) सभी शिष्य समाज के गहने हैं

। हे परमात्मा ! आपकी कृपा से उन्हें अत्युत्म आत्मिक उत्तराधिकारी अर्थात हजरत फरमादी (रहम.), जिसने कभी अपने गुरुदेव के प्रति अपने किसी कर्तव्य की अनदेखी नहीं की और सारी दुनिया की ओर से अपना मुँह फेर लिया, और इस त्याग की बदौलत ईश्वर द्वारा उन्हें अपने पूज्य शैख़ का आत्मिक प्रवक्ता (जबाने हाल) बनाया गया, मिलेगा और जिसकी प्रभुता समस्त सूफ़ी समाज स्वीकारेगा ।

हजरत फरमादी (रहम.) ने 477 हिजरी में वफ़ात पाई । आपकी समाधि उत्तर-पश्चिम ईरान में मशहद शहर के उत्तर में करीब 20 कि. मी. फरमाद गाँव के नजदीक स्थित है ।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

यदि तुम्हे अपने शैख़ से सच्चा प्रेम है तो उनके प्रति अदब रखना तुम्हारा कर्तव्य है ।

सच्चे जिज्ञासु के लिये एक वक्त ऐसा जरुर आएगा जबकि उसे सच्चे ज्ञान का प्रकाश आलोकित कर उस अलक्षित को देखने का सामर्थ्य प्रदान करेगा ।

ईश्वर अपने बन्दों का हृदय, जब वे किसी ईश्वर भक्त का दर्शन करते हैं, आनंद से भर देता है । इसलिए सूफ़ी सिलसिलों में शिष्यों को अपने गुरु पर ध्यान केन्द्रित (तसव्वुर) करने के लिये कहा जाता है, जब तक कि वे पूर्णता तक न पहुँचे ।

हजरत अबु अली फरमादी की समाधि (फरमाद, ईरान) (पहले)

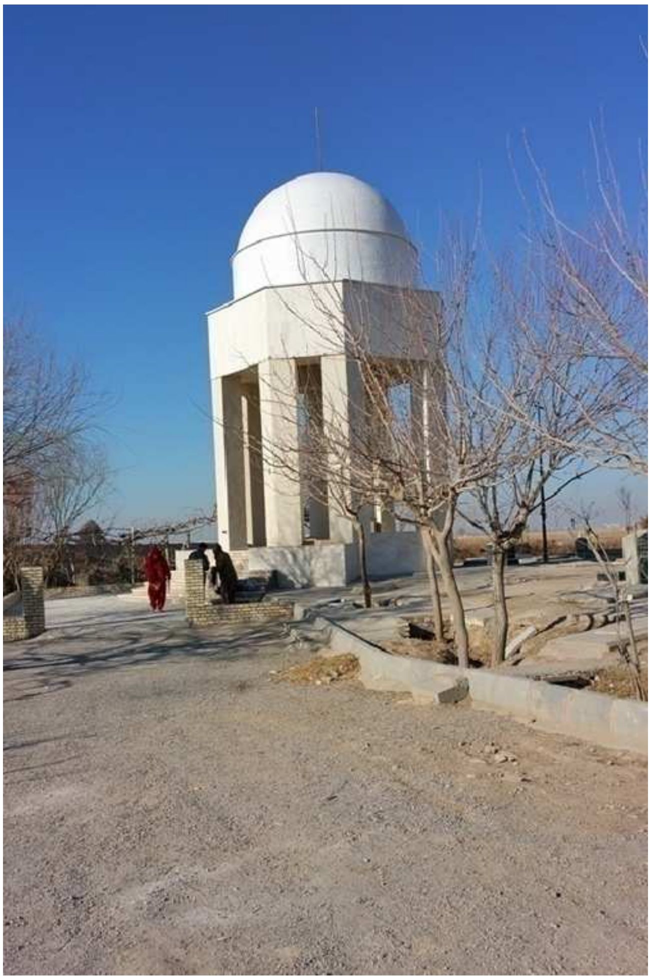

हजरत अबु अली फरमादी की समाधि (फरमाद, ईरान) (वर्तमान में)
(श्री योगेश चतुर्वेदीजी, कनाडा, के सौजन्य से)

हजरत ख्वाजा युसूफ हमदानी (रहम.)

'या इलाही कर हिजाबे तन से मुझको पाक साफ़,
ख्वाजा युसूफ कुत्बे आलम बासफा के वास्ते'
(हे परमात्मा ! हटा मुझ पर से वासनाओं के पर्दे,
संत-शिरोमणि ख्वाजा युसूफ हमदानी के नाम पर)

हजरत अबू याकूब युसूफ हमदानी (ख्वाजा युसूफ हमदानी) हजरत शैख़ अबू अली फ़ज्ल इब्न मुहम्मद अल-फरमादी अत-तुसी के प्रमुख शिष्य और आत्मिक उत्तराधिकारी थे । कहा जाता है कि आपको हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) से उवैसी तरीके से निस्बत हासिल थी और आपको हजरत शैख़ अब्दुल्ला चोपनी (कु. सि.) एवं जैसा कि 'रशहानुल हयात' नामक ग्रन्थ में लिखा है, हजरत शैख़ जोएनी (कु. सि.) से भी गुरु पदवी की इज़ाज़त मिली । आप हजरत शैख़ हसन समनानी (कु. सि.) की सुहबत में भी रहे । आपका जन्म 440 हिजरी (1062 ई.) में हमदान के निकट बुज़नजिर्द में हुआ था । 18 वर्ष की उम्र में आप हमदान से बगदाद चले आये जहाँ आपने शैख़ इब्राहीम इब्न अली इब्न युसूफ अल-फिरोज़ाबादी की शागिर्दी में 'शफिल' न्याय व्यवस्था का अध्ययन किया । बगदाद में आपको अपने वक़्त के महान विद्वान् हजरत अबू इशाक अश-शिराज़ी की सुहबत में रहने का भी लाभ मिला और वे आपको, सबसे युवा होने के उपरान्त भी, अपने सभी विद्यार्थियों में सबसे अधिक महत्व देते थे । अपने आचार्यों से अलग आपने हनाफ़ी मत को स्वीकारा ।

आपने युवावस्था में ही बगदाद, इस्फहान, इराक, खुरासान, समरकंद और बुखारा वगैरह में सांसारिक विद्याओं और हदीस का ज्ञान हासिल कर लिया था और आप प्रवचन भी देने लगे थे । इमाम याफई (कु. सि.) ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि हजरत ख्वाजा युसूफ हमदानी (रहम.) साहबे अहवाल और साहबे करामात थे अर्थात पूर्ण सिद्ध संत एवं रिद्धि-सिद्धियों के भण्डार थे । आपकी खानकाह में हमेशा विद्वानों और देर्वेशों की भीड़ लगी रहती थी और आपने अनेक लोगों को अध्यात्म विद्या प्रदान की । आप लगभग साठ वर्ष तक लोगों को अध्यात्म की राह पर आगे बढ़ाते रहे ।

कहा जाता है कि एक बार एक स्त्री आपके पास रोती हुई आई और अर्ज किया कि मेरे लड़के को फिरंगी पकड़ कर ले गये हैं, दुआ फरमाइये कि वह वापस आ जाये । आपने उसे सांत्वना देते हुए घर जाने को कहा और फ़रमाया कि तुम्हारा लड़का घर आ जायेगा । उस स्त्री ने घर पहुँच कर देखा कि लड़का घर पर ही मौजूद है, उसे बड़ा आश्चर्य हुआ और उसने बेटे से पूछा कि वह कैसे आ गया ? बेटे ने बताया की वह कुस्तुन्तुनियाँ में क़ैद था और पहरेदारों से घिरा था कि एकाएक एक अनजाना शख्स आया और मेरा हाथ पकड़कर मुझको

यहाँ पहुंचा गया, कोई कुछ न कर सका। उस स्त्री ने आश्चर्यचकित हो जाकर यह बात हजरत ख्वाजा युसूफ हमदानी (रहम.) को बतलाई तो आपने फ़रमाया 'तुझे हुक्मे ख़ुदा से ताज्जुब आता है ?'

कहा जाता है कि एक बार जब आप प्रवचन दे रहे थे, दो फकीह (मुस्लिम धर्मशास्त्र के विद्वान्) जो वहाँ मौजूद थे कहने लगे कि चुप रहो तुम यानि हजरत ख्वाजा युसूफ हमदानी (रहम.) बिदअती (इस्लाम धर्म में नयी बात पैदा करने वाले) हो। आपने फ़रमाया कि तुम खामोश रहो, तुमको मौत आई, और तुरंत उसी जगह वे दोनों निष्प्राण होकर गिर पड़े।

अबू सईद अब्दुल्लाह अपने मित्र इब्न-अस-सका के साथ धार्मिक ज्ञान प्राप्त करने हेतु विद्वानों की खोज में लगे रहते थे। हजरत ख्वाजा युसूफ हमदानी (रहम.) के बारे में सुनकर कि वे एक विलक्षण संत हैं जो अपनी इच्छानुसार प्रकट और गुप्त हो जाते हैं, हजरत अब्दुल कादिर जिलानी (रहम.), जो उन दिनों युवा ही थे, को भी साथ लेकर आपके दर्शन हेतु गये।

इब्न-अस-सका ने कहा कि जब वह उनसे मिलेगा तो उनसे एक सवाल पूछेगा जिसका उत्तर उन्हें मालूम नहीं होगा। अबू सईद अब्दुल्लाह ने कहा कि वह भी एक सवाल पूछेगा कि देखें वे क्या उत्तर देते हैं ? लेकिन हजरत अब्दुल कादिर जिलानी (रहम.) ने कहा कि परमात्मा उन्हें ऐसे महान संत से कुछ भी प्रश्न करने से बचाए व उन्हें उनका आशीर्वाद और दिव्य ज्ञान बख्शे।

जब वे तीनों ख्वाजा हमदानी (रहम.) के समक्ष पहुँचे तो बहुत समय तक वे उन्हें दृष्टिगोचर ही नहीं हुए। जब वे प्रकट हुए तो उन्होने आग्नेय नेत्रों से इब्न-अस-सका की तरफ़ देखा और बिना उसका नाम पूछे कहा 'ओ इब्न-अस-सका, तुम्हारी हिम्मत कैसे हुइ कि मेरी परीक्षा लेने के लिये मुझसे सवाल पूछो। तुम्हारा प्रश्न यह है और उसका उत्तर यह है। मैं तुम्हारे हृदय में कुफ्र की आग जलती देख रहा हूँ। इसके बाद उन्होंने अबू सईद अब्दुल्लाह की तरफ़ देखकर कहा कि तुम अपने प्रश्न के उत्तर की प्रतीक्षा कर रहे हो। ओ अब्दुल्लाह, तुम्हारे प्रश्न यह है और उसका उत्तर यह है। लोग तुम्हारे बारे में जानकर उदास होंगे। इसके बाद ख्वाजा हमदानी (रहम.) ने हजरत अब्दुल कादिर जिलानी (रहम.) की तरफ़ देखा और कहा मेरे पास आओ, मैं तुम्हे आशीर्वाद देता हूँ। ओ अब्दुल कादिर, तुमने मेरे प्रति अदब दिखाकर अल्लाह व उसके पैगम्बर का सम्मान किया है। मैं तुम्हारे भविष्य में देख रहा हूँ कि तुम बगदाद के सर्वोच्च आसन पर आरूढ़ हो रहे हो और लोगों का पथ प्रदर्शन करते हुए कह रहे हो की इस वक्त के सभी महापुरुष तुम्हारे सामने नत-मस्तक हो रहे हैं।

ख्वाजा हमदानी (रहम.) की तीनों बातें सच निकलीं। इब्न-अस-सका इस्लाम का विशेष जानकार था जिसने अपने वक्त के अन्य विद्वानों को वाद-विवाद में पीछे छोड़ दिया था। एक बार उसके आचार्य ने उसे बैजन्तियम के राज-दरबार में भेजा। वहाँ राजा ने ईसाई धर्म-विज्ञों को बुलाकर उनका शास्त्रार्थ इब्न-अस-सका से करवाया और उसने उन सबको निरुत्तर कर दिया। वे सब उसके सामने निस्तेज दिखने लगे। राजा ने उससे प्रभावित होकर उसे

अपनी पारिवारिक सभाओं में भी बुलाना प्रारम्भ कर दिया। इस दौरान इब्न-अस-सका को राजकुमारी से प्रेम हो गया और उसने विवाह का प्रस्ताव रख दिया। राजकुमारी ने अपनी स्वीकारोक्ति केवल इस शर्त पर देना मंजूर किया कि इब्न-अस-सका ईसाई धर्म को स्वीकार कर ले। इब्न-अस-सका मान गया और ईसाई बन गया। विवाह के कुछ समय बाद वह गंभीर रूप से रुग्ण हो गया। उसी रुग्णावस्था में उसे महल से बाहर निकाल दिया गया। बाद में लोगों ने उसे दर-दर की ठोकरें खाते और भोजन के लिये भीख मांगते हुए देखा।

अबू सईद अब्दुल्लाह डमास्कस चला गया जहाँ राजा ने उसे धार्मिक विभाग का मुखिया नियुक्त कर दिया। इसके परिणामस्वरूप उसे धन-दौलत और शोहरत ने घेर लिया और वह परमात्मा की राह से दूर हो गया जैसा कि उसके बारे में ख्वाजा हमदानी (रहम.) ने फ़रमाया था।

हजरत अब्दुल कादिर जिलानी (रहम.) के बारे में भी उनकी बात सच निकली और एक वक्त ऐसा आया जब हजरत अब्दुल कादिर जिलानी (रहम.) ने अक्षरक्ष: दोहराया कि इस वक्त के सभी औलिया मेरे सामने नत-मस्तक हैं।

ख्वाजा हमदानी (रहम.) मध्य एशिया के 'ख्वाजगान' (आचार्य) नाम से जाने जाने वाले नक्शबंदी सूफ़ियों में प्रथम सूफ़ी-संत थे।

आपकी खानकाह मर्व (या मरू-आधुनिक तुर्कमेनिस्तान) में थी और वहीं आपने सोमवार 22 रबी अल-अव्वल 535 हिजरी (4 नवम्बर 1140 ई.) को वफ़ात पाई। आप मर्व से दो बार हेरात गये और जब वे दूसरी बार हेरात से लौट रहे थे तो रास्ते में आपका शरीरान्त हो गया। जिस गाँव (बमियिन) में आपका देहांत हुआ आपको वहीं दफन कर दिया गया लेकिन बाद में उनके एक मुरीद इब्नुल नज्जार आपकी देह को मर्व ले आये और आपकी समाधि मर्व में बनायीं गयी।

आपने बहुत सी पुस्तकें लिखी, जिनमे से एक 'रुत्बत अल-हयात' (फ़ारसी भाषा में) प्रकाशित भी हुई। उनकी अन्य पुस्तकों में से दो 'मंजिल अल-सलिकीं' और मंजिल अल-सीरिं' हैं।

आपने अपने चार प्रमुख शिष्यों को अपनी खिलाफ़त और नियाबत (प्रतिनिधत्व) पर मुकर्रर किया। पहले खलीफ़ा हजरत अब्दुल्ला बर्की (रहम.), दुसरे हजरत ख्वाजा हसन अन्दाकी (रहम.), तीसरे हजरत ख्वाजा अहमद यसवी (रहम.) और चौथे हजरत ख्वाजा अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.)। पहले दोनों खलीफाओं ने अपनी खिलाफ़त को अंजाम नहीं दिया और तीसरे खलीफ़ा ने जब वे तुर्किस्तान के लिये रवाना हुए तो अपने मुरीदों को हजरत ख्वाजा अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) का अनुसरण करने के लिये कहा।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

एक दफ़ा ख्वाजा हसन अन्दाकी (रहम.) भावावेश की एक विशिष्ट अवस्था में आ गये और आप घर-बार और व्यापार से अलग हो एकान्तवास करने लगे। जब ख्वाजा हमदानी (रहम.) को इसका इल्म हुआ तो आपने उन्हें फ़रमाया: "तुम तंगदस्त (धनहीन) हो और

तुम पर अपनी पत्नी और बच्चे की जिम्मेदारी है । यह जिम्मेदारी तुम्हारी व्यक्तिगत है कि उनकी ठीक से देखभाल करो, इसकी अनदेखी करना न तो तर्कसंगत है न शरअ: समर्थित ।" नक्शबंदी आचार्य अध्यात्म के नाम पर समाज से भागने को उचित नहीं मानते । वे हमेशा इस बात पर जोर देते हैं कि व्यक्ति अपनी सामाजिक जिम्मेदारियां पूरी तरह सतर्कता से निभाए ।

एक बार किसी दरवेश ने आपको बताया कि वह शैख़ अहमद गज़ाली की महफिल में था जहाँ वे अपने मुरीदों के साथ कुछ कह रहे थे कि अचानक वे भावावेश में आ गये । उस अवस्था से बाहर आने के बाद उन्होंने फ़रमाया कि अभी-अभी हजरत रसूलल्लाह (सल्ल.) ने प्रकट होकर अपने हाथों से मुझे लुकमा (खाने का ग्रास) खिलाया । ख्वाजा हमदानी (रहम.) ने फ़रमाया 'ये सब ख्याली बातें हैं जो अध्यात्म मार्ग पर चलने वाले शुरूआती साधकों को उत्साहित करने के लिये हैं ।' आपका तात्पर्य था कि ऐसे मुशाहद: (आभास या दर्शन) शुरुआत की निशानी हैं न कि मुकम्मल होने की ।

समाअ (सतसंग जिसमें दरवेश ईश्वरीय प्रेम में मग्न हो नाचते, गाते हों) में ईश्वरीय संगीत उसका आशीर्वाद, रूह की खुराक, शरीर का पौषक तत्व, दिल का प्राण और ईश्वरीय कृपा का स्थायित्व है । यह ईश्वरीय कृपा के दरवाजे खोलने का साधन है जो बिजली और प्रखर सूर्य की तरह प्रकाश फैलाता है ।

फ़क़ीरों को बादशाहों के पास नहीं जाना चाहिये, और ध्यान रखो कि कोई भी लुकमा हराम का न हो ।

किसी ने उनसे पूछा कि संतों के पर्दा कर जाने पर हमें क्या करना चाहिये ? आपने फ़रमाया उनकी कही बातों पर ध्यानपूर्वक मनन ।

ख्वाजा हमदानी (रहम.) का समाधि परिसर (मर्व, तुर्कमेनिस्तान)

हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.)

'या इलाही इज्जते दुनिया व दीन हो अता,
अब्दे खालिक गजदेवानी बहया के वास्ते'
(इहलोक और परलोक में इज्जत बख्श, हे परमात्मा !,
लज्जावान हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी के नाम पर)

हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) हजरत ख्वाजा युसूफ हमदानी (रहम.) के चौथे लेकिन सबसे प्रमुख खलीफ़ा थे और ख्वाजगान (मध्य एशिया के नक्शबंदी सूफ़ियों के आचार्य) की सबसे बुज़ुर्ग हस्तियों में से थे जिनसे सिलसिला अजीजां-नक्शबंद शुरु हुआ । आपका जन्म ग्यारहवीं सदी के अंत में या बारहवीं सदी के शुरु में बुखारा (आधुनिक उजबेकिस्तान) से करीब 30 कि. मी. दूर गजदेवान नामक गाँव में हुआ । आपके पूज्य पिताजी शैख़ अब्दुल जमील (रहम.) हजरत इमाम मलिक (रहम.) [हजरत इमाम जाफ़र सादिक (रजि.) के शिष्य] के वंशज थे और अपने समय के प्रख्यात विद्‌वान एवं आध्यत्मिक विद्‌याओं में पूर्ण पारंगत थे । आपकी पूज्य माताजी सेलजुक के राजा अंतालिया की पुत्री थीं ।

कहा जाता है कि आपके पिताजी को हजरत खिज्र (अलैहि.) ने शुभसंदेश दिया था कि तुम्हारे घर में एक लड़का पैदा होगा, उसका नाम अब्दुल खालिक रखना, उसे हम अपनी फर्जन्दगी में लेंगे (अध्यात्मिक पुत्र की तरह पालेंगे) और अपनी निस्बत से बाबस्ता करेंगे (सौभाग्यशाली बनायेंगे) । इसके बाद कालांतर में संयोग से शैख़ अब्दुल जमील (रहम.) को सपरिवार रोम से आकर बुखारा के नजदीक गजदेवान में बसना पड़ा, जहाँ हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) का जन्म और पालन-पोषण हुआ । आपकी शिक्षा-दीक्षा बुखारा शहर में हुई जहाँ आपने अपने समय के उच्च कोटि के विद्‌वान उस्ताद हजरत इमाम सदरुद्दीन से तालीम हासिल की । एक समय क़ुरआन पढ़ते वक्त आप इस आयत पर पहुँचे "अपने अल्लाह से गुप्त रूप से गिड़गिड़ाते हुए दुआ करो, बेशक वह हद से आगे बढने वालों से मुहब्बत नहीं करता ।" अर्थात अपने पालनकर्ता ईश्वर की याद हृदय की गहराइयों में गुप्त रूप से की जानी चाहिये । आपने अपने उस्ताद से पूछा कि अल्लाह की याद हृदय की गहराइयों में गुप्त रूप से करने का क्या तरीका है ? अगर जाकिर (जिक्र या जप करने वाला) जबान से जिक्र करता है और जिक्र के वक्त शरीर हरकत करता है तो लोगों पर जाहिर हो जाता है और वह गुप्त नहीं रहता और अगर दिल में कहे तो इस हदीस कि 'शैतान इंसान की रगों में खून की तरह दौड़ता है' के मुताबिक शैतान वाकिफ हो जाता है ।

आपके उस्ताद ने फ़रमाया कि यह इल्मे लदुन्नी (ईश्वर प्रदत्त ज्ञान) है । अगर ईश्वर को मंजूर होगा तो तुझे कोई संत इसका रहस्य बताएगा ।

तब से हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) किसी ऐसे संत की प्रतीक्षा में रहते जो उन्हें गुप्त जाप के बारे में बताये । संयोग से एक रोज जब आप अपने बाग के दरवाजे पर बैठे हुए थे, एक बुज़ुर्ग आपके पास आये । आपने उनका बड़ा आदर-सत्कार किया । उन बुज़ुर्ग ने फ़रमाया कि मैं तुममें आसार बुज़ुर्गी देखता हूँ, तुम किसी से बैअत (दीक्षित) हुए हो या नहीं ? हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) ने अर्ज किया कि मैं इसी तलाश में हूँ । तब उन बुज़ुर्ग ने अपना परिचय दिया कि वे खिज्र (अलैहि.) (हरित पुरुष-एक दीर्घायु प्राप्त बुज़ुर्ग संत, जो हजरत मूसा से मिले थे और समय-समय पर संतों का पथ-प्रदर्शन करते रहे, कुरआन मजीद में भी आपका जिक्र आया है) हैं और फ़रमाया कि मैंने तुम्हे अपनी फरजन्दी में कुबूल किया, और उन्हें हौज में गोता मारकर (एक तरह से सांस रोककर-प्राणायाम द्वारा) दिल से 'ला इलाहा इलाल्लाह, मुहम्मदुर्रसूलाल्लाह' का जाप करने का तरीका बताया और इस अभ्यास को करते रहने का हुक्म फ़रमाया । गारे सौर में हजरत पैगम्बर (सल्ल.) और हजरत अबू बक्र सिद्दीक जब शरण लिये हुए थे तो सर्वशक्तिमान और सर्वोपरि परमात्मा ने ख़त्म-ऐ-ख्वाजगान (आचार्यों का जप) का रहस्य हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) को (आत्म रूप में) बतलाया था जो इस सिलसिले में इस जिक्र के अग्रणी माने जाते हैं । हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) इस अभ्यास में लग गये और इसमें सफलता व बढ़ोतरी पायी ।

इसके बाद हजरत ख्वाजा युसूफ हमदानी (रहम.) बुखारा तशरीफ़ लाये तो हजरत गजदेवानी (रहम.) उनके हुज़ूर में हाजिर होते रहे । आपका फ़रमाना था की जब वे करीब बाईस वर्ष के थे तब हजरत खिज्र (अलैहि.) ने हजरत ख्वाजा युसूफ हमदानी (रहम.) को मेरी रुहानियत की शिक्षा-दीक्षा के लिये वसीयत फरमाई । हालाँकि हजरत ख्वाजा युसूफ हमदानी (रहम.) का तरीका जिक्रे-जाहिर अर्थात आवाज के साथ जप करने का था लेकिन आपने हजरत गजदेवानी (रहम.) को हजरत खिज्र (अलैहि.) के तरीके अर्थात गुप्त जाप पर ही कायम रहने को कहा । नक्शबंदी सिलसिले में गुप्त जाप का अभ्यास करने वाले आप पहले बुज़ुर्ग हैं । आपको पूर्ण गुरु पदवी हजरत ख्वाजा युसूफ हमदानी (रहम.) से मिली और आप उनके आत्मिक उत्तराधिकारी बने ।

एक दिन आप इबादतखाना में रो रहे थे । मुरीदों ने कहा कि आप ऐसे श्रेष्ठ आचरण वाले व्यक्ति हैं और आप की इतनी इज्जत है, फिर आपकी खौफ़ और रोने की वजह क्या है ? आपने फ़रमाया कि जिस वक्त अल्लाह की तरफ़ ख्याल करता हूँ और उसकी निस्पृहता (बेनियाजी) देखता हूँ तो अल्लाह के नजदीक हो जाता हूँ और खौफ़ इस लिये आता है कि शायद अनजाने में मुझसे कुछ ऐसा न हो गया हो कि अल्लाह तआला को नापसंद हो ।

हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) परमात्मा की याद हृदय की गहराइयों में गुप्त रूप से करने वाले अर्थात अनाहत नाद (अनहद नाद) का अभ्यास करने, इसमें निपुणता हासिल करने और इस सिलसिले में प्रसारित करने वाले प्रथम संत थे। उनकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक फ़ैल गयी और लोग उनके दर्शनों के लिये उमड़ पड़ते थे। अपने पुत्र अल-क़ल्ब अल-मुबारक शैख़ औलिया अल-कबीर को लिखे एक पत्र में आपने फ़रमाया:

"ऐ मेरे बेटे ! तुम्हें वसीयत करता हूँ कि इन्द्रिय निग्रह को अपना स्वभाव बनाना और जिक्र एवं आराधना में मन लगाए रखना। अपने मन का निरीक्षण करते रहना। अल्लाह तआला और रसूलअल्लाह (सल्ल.) का हक़ अदा करते रहना। माता-पिता के हक़ का (अर्थात उनके प्रति अपने कर्तव्यों का) ध्यान रखना कि इन गुणों से अल्लाह तआला भी सम्मानित होगा। अल्लाह तआला की आज्ञा का पालन करना कि वह तुहारा रक्षक बने। क़ुरआन शरीफ चाहे याद हो या न याद हो, को देख कर और फ़िक्र, दूरदर्शिता, शोक और रुदन के साथ पढ़ना। ब्रह्मज्ञान हासिल करने में लगे रहना; इस्लामी धर्मशास्त्र और हदीस पढ़ना और अज्ञानी सूफ़ियों से परहेज करना। जन-साधारण से दूर रहना कि वे धर्म के मार्ग से भटका सकते हैं। कोशिश करना की गुमनाम रहो, ताकि दीन ख़राब न हो। न खानकाह (आश्रम) में बैठना, न बनाना। हजरत पैगम्बर (सल्ल.) और बुज़ुर्गाने सिलसिला के आचरण का अनुसरण करना। लोगों के साथ नमाज़ अदा करना। पद और प्रसिद्धि की चाहत से दूर रहना, बादशाहों और उनकी संतानों से भी दूर रहना। अधिक खाने और सोने से बचना। एकांतवास करना और हक़ की कमाई का खाना। दुनियावी ख्वाहिशों से बचना कि वे तुम्हे भटका न दें। ज्यादा मत हँसना कि यह दिल की मौत का सामान है। अपनी तारीफ़ मत करना, लोगों से बहस में मत उलझना और अल्लाह के सिवाय किसी से कुछ न मांगना। अल्लाह के अज़ाब (पापों के दण्ड) से निडर न होना और उसकी रहमत से मायूस (निराश) न होना। खौफ़ और रिज़ा (प्रसन्नता) के बीच का रास्ता अपनाना कि सालिकों (साधकों) का यही मुकाम होता है। हमेशा आखिरत का ख्याल रखना। किसी की सेवा न लेना और अपने आचार्यों की सेवा तन-मन-धन से करना और उनके आचरण पर सवाल मत उठाना। किसी सतगुरु की बात का उल्लंघन न करना। जो उनकी निंदा करता है वह सुरक्षित नहीं रह सकता, क्योंकि वह उन्हें नहीं समझता। अपने सभी कर्म अल्लाह को समर्पित करना और विनीत भाव से उससे प्रार्थना करना।

चाहिये कि दिल तेरा हमेशा फिक्रमंद हो, अर्थात ईश्वर चिंतन की फ़िक्र करे, शरीर नमाज़ में हो, अमल निश्चल हो, दुआ में सयंम मांगे, तेरे वस्त्र पुराने, साथी दरवेश, मस्जिद घर हो और माल असबाब के रूप में धार्मिक किताबें हों। जब तक किसी में ये पांच बातें न हो उससे सम्बंध न रखना-पहली-फ़क़ीरी को अमीरी पर तरजीह (प्राथमिकता) दे; दूसरी, इल्म को दुनिया के कामों पर तरजीह दे; तीसरी, जिल्लत (अपमान) को इज्ज़त से बेहतर जाने; चौथी, सांसारिक और ईश्वरीय ज्ञान को देखने वाला हो और पांचवी, मौत के वास्ते मुस्तैद (तैयार)

हो । और ऐ फरजंद ! जिस तरह मैंने अपने पीर से यह वसीयत सुनकर याद की और अमल किया, उसी तरह तुम भी करना और इस पर अमल करना ।"

उन्होंने निम्नलिखित सूफ़ी सिद्धांतों का प्रतिपादन किया जो बाद में सभी सूफ़ी सिलसिलों द्वारा अपना लिये गये ।

1. होश दर दम: होश दर दम का शाब्दिक अर्थ है सचेत श्वास अर्थात सच्चे साधक को हमेशा सचेत रहना चाहिये कि कोई भी श्वास परमात्मा की याद से खाली न जाये, हर वक्त परमात्मा की याद बनी रहे और मन इधर-उधर दुनियावी ख्यालों में न भटके । शाह बहाउद्दीन नक्शबंद, जो 1317 ई. में जन्में, ने फ़रमाया कि इस साधना में श्वास का विशेष महत्व है और साधक को श्वास लेने, श्वास छोड़ने और इन दोनों क्रियाओं के मध्य ध्यान रखना चाहिये कि परमात्मा की याद बनी रहे । इसी तरह हजरत उबेदुल्लाह अल-अहरार, जो इस सिलसिले में हजरत गजदेवानी (रहम.) से नौ पीढ़ी बाद 1404 ई. में हुए, का इस सन्दर्भ में फ़रमाना है कि यह सबसे महत्वपूर्ण बात है कि साधक को हर वक्त अपने श्वास पर नजर रखनी चाहिये, जिसका तात्पर्य है कि साधक को हर समय चैतन्यता के साथ व्यतीत करना चाहिये और परमात्मा की याद में गुजारना चाहिये । गैरख्याली में बिताया वक्त हाथ से निकल जाता है । साधक को विशेष ध्यान रखना चाहिये कि उसका कोई भी पल गुनाह या गलत कार्य में न गुजरे ।

शैख़ नजमुद्दीन कुबरा (कु. सि.) ने अपनी पुस्तक 'फवातिह अल-जमाल' में लिखा है कि जिक्र (अनाहत नाद) प्रत्येक प्राणी में उसकी इच्छा के बगैर परमात्मा की आज्ञा के प्रमाण के रूप में अनवरत गूँज रहा है । यह उसके जीवन का एक अभिन्न अंग और जीवित रहने की आवश्यकता है । अत: साधक को प्रत्येक श्वास के साथ परमात्मा के सामीप्य में रहना चाहिये । लेकिन यह कठिन कार्य है कि कोई भी श्वास गफलत में न जाये । अत: साधक को परमात्मा से क्षमा याचना करनी चाहिये ताकि परमात्मा उसे पवित्र कर अपने सर्वत्र और सर्वदा विद्यमान होने की अनुभूति कराये ।

2. नजर बर कदम: नजर बर कदम का शाब्दिक अर्थ है अपने कदम पर नजर रखना । साधक का हर कदम सावधानीपूर्वक परमात्मा की याद में उठना चाहिये अर्थात साधक को कोई ऐसा काम नहीं करना चाहिये जिससे उसकी आत्मिक उन्नति में कोई बाधा पहुँचे । इसका एक प्रमुख और आवश्यक अंग है साधक का अपनी निगाहों पर नियन्त्रण कि वो व्यर्थ ही इधर-उधर न ताँके क्योंकि संस्कारों के बनने में दृष्टी का विशेष महत्व और योगदान होता है । अत: सूफ़ी संत साधकों को चलते समय अपने कदमों पर निगाह रखने को कहते हैं । जैसे-जैसे साधक का मन साफ़ होता जाता है, उस पर बुरे संस्कारों का प्रभाव पड़ने का खतरा भी बढ़ता जाता है । सफ़ेद और स्वच्छ चादर पर कोई भी दाग तुरंत दिखाई दे जाता है । प्रथम दृष्टी अर्थात अनजाने में पड़ी निगाह निर्दोष होती है, उससे संस्कार नहीं बनता लेकिन

उसकी पुनरावृति अर्थात चेष्टापूर्वक दोबारा देखने पर मन पर प्रभाव पड़ना निश्चित है । अत: साधक को प्रत्येक कदम परमात्मा का स्मरण करते हुए उठाना चाहिये ।

हजरत शमशुद्दीन हबीबुल्ला (रहम.) (हजरत मिर्ज़ा जानजाना) जो नक्शबंदी सूफ़ी-संतों की स्वर्णिम श्रृंखला की एक महत्वपूर्ण कड़ी हैं, अपने पीर शैख़ नूर मुहम्मद (रहम.) के विषय में कहा करते थे कि वे नजर की बजाय दिल की निगाहों से देख लिया करते थे । एक दफ़ा एक व्यक्ति उनके दर्शन हेतु आ रहा था कि रास्ते में उसकी निगाह एक स्त्री पर पड़ गयी । जैसे ही वह शैख़ नूर मुहम्मद (रहम.) के समक्ष पहुंचा, उन्होंने फ़रमाया कि वे उसमे व्यभिचार के अवशेष देख रहे हैं और आइन्दा से उसे अपनी निगाहों को दूषित होने से बचाना चाहिये । एक बार एक व्यक्ति की निगाह एक शराबी पर पड़ गयी । शैख़ नूर मुहम्मद (रहम.) के समक्ष पहुंचने पर आपने तुरंत उस व्यक्ति को आगे से सावधान रहने के लिये कहा । इसी प्रकार परमसंत ठाकुर रामसिंह जी साहब (नक्शबंदी सूफ़ी-संतों की स्वर्णिम श्रृंखला की सैंतीसवीं पीढ़ी) के पास एक युवक मिलने आया । रास्ते में उसने एक लड़की की तरफ़ मुड़कर देखा । सतसंग के दौरान ठाकुर रामसिंह जी साहब ने फ़रमाया कि कुछ लोग मुड़कर औरों को देखते हैं' । इन शब्दों का युवक पर गहरा प्रभाव पड़ा और यह आदत जाती रही ।

कहा जाता है कि महात्मा गौतम बुद्ध धीमी गति से चलते थे और प्रत्येक कदम पूरी चैतन्यता के साथ उठाते थे । हजरत पैगम्बर मुहम्मद (सल्ल.) भी चलते समय दायें-बायें न देखकर दृष्टी अपने कदमों की तरफ़ रखते थे । निगाहों का झुकाए रखना विनम्रता की भी निशानी है । जिनके पास अधिकार है या अहंकार से भरे हैं, वे नीचे नहीं देखते । नज़रें पैरों की तरफ़ रखने से एकाग्र होने में भी मदद मिलती है और व्यक्ति गंतव्य की तरफ़ जल्दी और सुरक्षित पहुँच जाता है । महान सूफ़ी संत हजरत शैख़ अहमद फारूकी (रहम.) (नक्शबंदी सूफ़ी-संतों की स्वर्णिम श्रृंखला की पच्चीसवीं पीढ़ी) ने भी अपने एक पत्र में लिखा है कि कदम से पहले निगाहें पड़ती हैं और कदम निगाह का अनुसरण करते हैं । जब कदम उस जगह पहुँच जाते हैं तो निगाह आगे जाती है और कदम उसका पीछा करते हैं और वहाँ पहुँच जाते हैं । इसका आंतरिक तात्पर्य यह है कि साधक को हर समय अपना ध्येय, अपना लक्ष्य निगाह में रखना चाहिये और यदि वह ऐसा करता है तो निश्चय ही अपनी मंजिल को पा लेगा ।

3. सफ़र दर वतन: सफ़र दर वतन का तात्पर्य है कि साधक को इस नश्वर संसार को पीछे छोड़कर एक दिन अपने वास्तविक घर अर्थात परमात्मा की तरफ़ लौटना होगा । मानवीय दुर्गुणों को छोड़कर दैवीय गुणों की ओर बढना साधक का सफर दर वतन है । इसे ध्यान में रखकर उसे अपने दिल को, दुनियावी ख्यालों को त्यागकर, परमात्मा की तरफ़ लगाना चाहिये । नक्शबंदी सूफ़ी परम्परा में इस यात्रा को दो भागों में बांटा गया है, पहला सतगुरु प्राप्ति की इच्छा और खोज । नक्शबंदी सूफ़ी रुहानियत की तालीम हासिल करने के लिये जगह-जगह का सफर करते रहे हैं और जब वे किसी सतगुरु की खिदमत में पहुँच गये

तो वहीँ ठहर गये । और अगर अपने ही मुल्क में कोई महापुरुष मिल गया तो सफर छोड़कर उनकी सेवा में शीघ्रता से हाजिर होते रहे हैं और उनके बताये जप-तप और साधना के अभ्यास में लग जाते हैं । इसका दूसरा भाग है ह्रदय को पवित्र कर सतगुरु की कृपा से अपने असली ध्येय की प्राप्ति की ओर उन्मुख होना । हजरत ख्वाजा उबेदुल्लाह अल-अहरार (रहम.) का फ़रमाना था कि जब जिज्ञासु किसी सतगुरु की सेवा में पहुँच जाये तो उनकी सेवा में बैठना चाहिये और सिफत तमकीन (स्थिरता, पायदारी) हासिल करना चाहिये और उनकी निस्बत पूर्णतया हासिल करनी चाहिये । इसके बाद अगर साधक कहीं और जाता है तो कोई रुकावट नहीं । साधक के दिल से जब सांसारिक माया-मोह दूर हो जाते हैं तो ईश्वरीय नूर उसमें प्रवेश पा जाता है और ख्वाहिशों का अन्धकार दूर हो जाता है तब ईश्वर का तेज और प्रताप ह्रदय में प्रवेश पा जाते हैं, जिसकी वजह से अब वह सैर और सफर का मुहताज नहीं रहता, दिल की सफाई होने के बाद सफर की इच्छा न रह गयी ।

4. खिलवत दर अंजुमन: खिलवत का अर्थ है एकांत, बाहरी खिलवत अर्थात दुनिया से भौतिक दूरी और भीतरी खिलवत अर्थात मन का दुनिया से हटना । इस प्रकार खिलवत से तात्पर्य है लोगों से बचकर एकांतवास करना और परमात्मा के स्मरण में अपने मन को लगाना । इस अभ्यास से साधक को मन व इन्द्रियों पर नियन्त्रण प्राप्त होता है और वह भीतरी खिलवत के लिये पात्रता पा जाता है । भीतरी खिलवत का अर्थ है किसी भी अवस्था में, चलते-फिरते, सोते-खाते या भीड़-भाड़ में, हर वक्त ह्रदय में परमात्मा की याद बनाये रखना । उच्च स्थिति प्राप्त साधकों के ह्रदय में परमात्मा का सामीप्य बना रहता है । दुनियावी तमाशा इसमें व्यवधान उपस्थित नहीं करता । शैख़ फारुक अहमदी (रहम.) का कथन है “कमाल चमत्कारिक शक्तियों के प्रदर्शन में नहीं है, बल्कि इस बात में है कि लोगों के साथ समयानुकूल व्यवहार करते हुए, परिवार का लालन-पोषण और गृहस्थ धर्म का निर्वाह करते हुए भी एक क्षण भी परमात्मा की याद से खाली न जाये ।”

5. याद कर्द: याद कर्द का शाब्दिक अर्थ है ‘स्मरण का सार’ और स्मरण का सार यह है कि हर वक्त ह्रदय में परमात्मा का ख्याल बना रहे । स्मरण का अर्थ है लगातार ख्याल बना रहना, जबान से या ह्रदय में ख्याल से जाप को दोहराते रहना । लेकिन याद कर्द में याद का स्थूल रूप अर्थात जाप को दोहराने से मुराद नहीं है, बल्कि उस याद को सूक्ष्म रूप से ह्रदय में इस कदर बैठा लेना की हर वक्त उसका ख्याल बना रहे । ह्रदय हमेशा प्रेम व आदर के साथ परमात्मा या सतगुरु के हुज़ूर में हाज़िर रहे, यही याद कर्द का असली तात्पर्य है ।

6. बाज गश्त: बाज गश्त का शाब्दिक अर्थ है अपने उद्‌गम की तरफ़ वापस लौटना । अध्यात्मिक क्षेत्र में इसका उद्धेश्य साधक को चेताना है । साधना के दौरान साधक को तरह-तरह के अनुभव होते रहते हैं और वह कई विशेष अवस्थाओं से गुजरता है, कभी-कभी साधना में कुछ चमत्कारी सिद्धियाँ और विशेष तरह की अनुभूतियाँ जैसे प्रकाश दिखना, भविष्य की बातें जानना आदि भी हासिल हो जाती है । साधक का उनमें अटक जाने का भय

बना रहता है और वह अपने वास्तविक उद्धेश्य से भटक सकता है । साधना का वास्तविक उद्धेश्य परमात्मा या सतगुरु में पूर्णतया लीन होना, उससे एकाकार होना है । इसलिए साधक को लगातार दीनतापूर्वक प्रार्थना करते रहना चाहिये कि हे परमात्मा ! तू ही मेरा एकमात्र और वास्तविक लक्ष्य है, कृपा कर मुझे अपना प्रेम प्रदान कर । इस प्रकार साधक अहंकारवश साधना पथ से विचलित होने से बच जाता है ।

7. निगाह दश्त: निगाह दश्त का शाब्दिक अर्थ है अपनी आंतरिक स्थिति पर निगाह रखना । साधक को सदा अपनी आंतरिक स्थिति पर नजर रखनी चाहिये कि उसका मन कहीं कोई ताना-बाना तो नहीं बुन रहा । यदि कोई विकार या गैर ख्याल (सूफ़ी भाषा में 'खतरा') हृदय में उत्पन्न हो तो उसमे उलझने, भटकने से बचना । जब कोई विचार हृदय में बस जाये और जड़े जमा ले तो उसे उखाड़ फेकना मुश्किल हो जाता है, उसके लिये बहुत प्रयास करना पड़ता है । अत: साधक को हर वक्त सावधान रहना चाहिये कि वह कोई षड्यंत्र तो नहीं रच रहा । सूफ़ी साधना का सार हृदय को खतरों यानि बुरे विचारों और दुनियावी प्रलोभनों से बचाना है ।

8. याद दश्त: याद दश्त का तात्पर्य है परमात्मा की याद को हृदय में इस कदर गहराई से बैठा लेना कि स्वत: ही परमात्मा की याद हृदय में बनी रहे । हजरत ख्वाजा उबेदुल्लाह अल-अहरार (रहम.) याद कर्द, बाज गश्त, निगाह दश्त और याद दश्त को इस प्रकार समझाते हैं कि ईश्वर के जिक्र (जाप) का अत्यधिक अभ्यास याद कर्द है, बाज गश्त का आशय हृदय को ईश्वर की ओर आकृष्ट करने से है, इस तरह कि हर बार ईश्वर की याद स्वत: हो आये और दिल में परमात्मा ही एक मात्र ध्येय रह जाये, निगाह दश्त से तात्पर्य है मन को इस प्रकार ईश्वर की ओर आकृष्ट करने की स्वत: प्रवृति और याद दश्त से तात्पर्य है इस प्रवृति में निपुणता हासिल करना ।

हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) द्वारा प्रतिपादित इन सिद्धांतों का सूक्ष्म विश्लेष्ण करने से जो एक मुख्य: बात सामने आती है वह है हृदय की गहराइयों में परमात्मा की निरंतर याद बने रहना । यही वह रहस्य है जो परमात्मा ने उनके हृदय में उतारा था ।

इन आठ सिद्धांतों में बाद में हजरत शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने तीन और सिद्धांत जोड़े, जो निम्न हैं:

9. वकूफ जमानी: वकूफ का शाब्दिक अर्थ है बोध होना या सचेतता और जमानी का अर्थ है समय । अत: वकूफ जमानी से तात्पर्य है समय का सचेत होकर उपयोग करना । साधक को सचेत रहना चाहिये कि उसका समय व्यर्थ गुजरा या परमात्मा के स्मरण में । जो समय परमात्मा की याद या ख्याल में न गुजरे वह व्यर्थ गुजरा समझना चाहिये । साधक की निगाह हर वक्त अपनी आत्मिक उन्नति पर होनी चाहिये । साधक को अपने द्वारा किये गये कर्मों पर विचार करना चाहिये और अपनी गलतियों और अपराधों के लिये परमात्मा से

क्षमा-प्रार्थना करनी चाहिये । हजरत शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) का फ़रमाना है कि साधक को अपनी आंतरिक स्थिति का पता रहना चाहिये और यह मालूम होना चाहिये कि उसे परमात्मा का शुक्रिया अदा करना चाहिये या तौबा (क्षमा-प्रार्थना) करनी चाहिये । हजरत याकूब चरखी पुरजिया (रहम.) ने इसका खुलासा इस प्रकार किया है कि यदि साधक को लगे कि वह ध्यान एकाग्र नहीं कर पा रहा है और उसका हृदय पूर्ण तल्लीनता के साथ साधना में नहीं लगता तो उसे तौबा करनी चाहिये और जब उसे अभ्यास में आनन्द आये और हृदय में भक्ति-भाव उमड़े तो उसे परमात्मा को धन्यवाद देना चाहिये । संक्षिप्त में वकूफ जमानी का अर्थ है आत्म-निरीक्षण करना और आंतरिक स्थिति के अनुसार आत्मिक उन्नति के लिये प्रयास करना ।

10. वकूफ अददी: वकूफ अददी से तात्पर्य है संख्या की सचेतता । नक्शबंदी सूफ़ी परम्परा में 'ला इलाहा इलाल्ल्लाह' (या इसका सार) का जाप प्राणायाम और चैतन्यता के साथ विशेष महत्वपूर्ण माना गया है और पूर्ववर्ती सूफ़ी संत इसका दृढ़ता से पालन करते थे । इस सूत्र के अनुसार परमात्मा का नाम स्मरण विषम संख्या यथा 1,3,5,7,9,11,21..आदि में करना चाहिये । लेकिन इसका असल तात्पर्य यह समझ में आता है कि साधक को परमात्मा का स्मरण चैतन्यता के साथ करना चाहिये न कि बेख्याली में मात्र एक रटन की तरह । सचेत रहने से यहाँ यह तात्पर्य है कि परमात्मा के स्मरण में साधक को वास्तविकता अर्थात परमात्मा की सारभूतता का बोध रहना चाहिये । इसका गुह्य अर्थ यह भी समझ आता है कि परमात्मा एक है और उसे इकाई अर्थात एकत्व ही पसंद है ।

11. वकूफ कल्बी: वकूफ कल्बी का अर्थ है साधक को अपने हृदय के प्रति सचेत रहना । इसका वास्तविक तात्पर्य है कि साधक को अपने दिल पर निगाह रखनी चाहिये कि उसका ध्यान हर पल परमात्मा की नजदीकी पर रहे अर्थात साधक हर वक्त परमात्मा के हुज़ूर में हाजिर रहे । दुसरे शब्दों में दिल परमात्मा की याद में डूबा रहे । साधक अपने मन से अहं भाव, बुरे विचार और दैवीय विचार भी मिटाकर मन को एकमात्र परमात्मा के ख्याल के साथ परिपूर्ण रखना ।

शैख़ मुहम्मद पारसा जो शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) के मित्र व उनकी जीवनी के लेखक भी थे, ने अपनी पुस्तक 'फसलुल किताब' में लिखा है कि हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) की इस गुप्त जाप प्रक्रिया एवं उनके द्वारा प्रतिपादित उपरोक्त आठ सिद्धांत सभी सूफ़ी तरीकतों ने स्वीकार व अंगीकार कर लिये । इस उपलब्धि से वे अपने समय के सर्वोच्च संत के रूप में जाने गये । आपने 12 रबि उल-अव्वल 575 हिजरी में इस नश्वर संसार का त्याग किया । आपकी समाधि बुखारा के समीप गजदेवान में स्थित है जहाँ दर्शनार्थियों की भीड़ लगी रहती है ।

हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) के चार मुख्य: खलीफ़ा थे। पहले बुखारा के ही शैख़ अहमद अस-सिद्दीक (कु. सि), दूसरे कबीर अल-औलिया शैख़ आरिफ औलिया अल-कबीर (कु. सि) और ये भी बुखारा से ही थे और सांसारिक एवं अध्यात्मिक विद्या दोनों ही में परिपूर्ण, तीसरे शैख़ सुलेमान अल-किरमानी (कु. सि) एवं चौथे हजरत आरिफ अर-रिवाकरी (कु. सि), जिन्हें हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) का नक्शबंदी सूफ़ी की स्वर्णिम श्रृंखला का आत्मिक उत्तराधिकार मिला।

हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी की समाधि (गजदेवान, उजबेकिस्तान)

हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी की दरगाह पर इमाम सयैद असरोर के साथ (गजदेवान, उजबेकिस्तान)

हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी की समाधि पर इमाम सयैद असरोर के साथ (गजदेवान, उजबेकिस्तान)

ख्वाजा आरिफ रिवाकरी (रहम.)

'या इलाही कामिल उल इमां बना दे तू मुझे,
ख्वाजा आरिफ रिवाकरी मर्दे ख़ुदा के वास्ते'
(परिपक्व कर मझे ईमान में तू, हे परमात्मा !,
ईश्वर-भक्त ख्वाजा आरिफ रिवाकरी के नाम पर)

हजरत ख्वाजा आरिफ रिवाकरी (रहम.) हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) के चार मुख्य: खलीफ़ाओं में से एक थे। वे अपने जीवन काल में बराबर हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) के हुज़ूर में हाजिर होते रहे और उनसे परिपूर्ण अध्यात्मिक ज्ञान हासिल किया। वे अपने वक्त के महान सूफ़ी संत थे जो लोगों को सांसारिक शिक्षा के अलावा इल्म बातिन अर्थात रूहानी शिक्षा भी दिया करते थे। हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) के प्रथम खलीफ़ा हजरत ख्वाजा अहमद सिद्दीक (रहम.) ने अपने शरीर छोड़ने के कुछ समय पूर्व सभी मुरीदों को हजरत ख्वाजा आरिफ रिवाकरी (रहम.) की शरण में भेज दिया और वे (हजरत रिवाकरी) नक्शबंदी सूफ़ियों की स्वर्णिम श्रृंखला में हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) के आत्मिक उत्तराधिकारी बने।

हजरत ख्वाजा आरिफ रिवाकरी (रहम.) का जन्म बुखारा से करीब तीस कि. मी. दूर, रिवाकर नामक गाँव में 27 रज्जब 551 हिजरी (15 सितम्बर 1156) को हुआ था। हजरत ख्वाजा आरिफ रिवाकरी (रहम.) की लिखी एक पुस्तक 'अरिफनामा' की एक पाण्डुलिपि पाकिस्तान में खानकाह मूसा जाई शरीफ के पुस्तकालय में उपलब्ध है। आपने हजरत ख्वाजा महमूद फगनवी (रहम.) को अपना आत्मिक उत्तराधिकारी नियुक्त किया और इस नश्वर संसार से 616 (या 636) हिजरी में शव्वाल महीनें की पहली तारीख अर्थात दिसम्बर 1219 (या 1239) में महाप्रयाण किया। आपकी समाधि बुखारा के करीब 45 कि. मी. उत्तर में रिवाकर, जो अब सफिरकोन नाम से जाना जाता है में स्थित है। बहुत से लोग आपका आशीर्वाद पाने वहाँ आते रहते हैं।

शैख़ नजीमुद्दीन कुबरा (कु. सि.) जिन्होंने 617 हिजरी में शरीर त्यागा और जो कुबर्वी सूफ़ी सिलसिले के प्रवर्तक थे, शैख़ शहाबुद्दीन सुहरावर्दी जिन्होंने 632 हिजरी में शरीर त्यागा और जो सुहरावर्दी सूफ़ी सिलसिले के प्रवर्तक थे और बगदाद में रहते थे एवं शैख़ मुइनुद्दीन चिश्ती (कु. सि.) जिन्होंने 633 हिजरी में शरीर त्यागा और जो चिश्ती सूफ़ी सिलसिले के प्रवर्तक थे, उनके समकालीन थे।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

ईश्वर जब तक तुम्हें शिष्यवत स्वीकार न कर ले, अपने विशवास को दृढ़ रखो । मृत्यु की याद को अपना साथी बना लो ।

भविष्य से बहुत आशा रखने वालों के दिल पर परमार्थ की राह में अच्छाइयों से पर्दा पड़ जाता है ।

जो भी दिन में दस दफ़ा यह दुआ मांगता है कि हजरत पैगम्बर मुहम्मद (सल्ल.) की कौम को सही राह दिखा, उन पर अपनी बख्शीश कर और उनकी तक्लीफ़ो को दूर कर, उसका नाम निश्चय ही उन संतों में लिखा जायेगा जिन्हें प्रतिनिधि या परिवर्तित संत कहते हैं ।

जो भी बिना अच्छे कर्म किये जन्नत की तमन्ना करता है, उसका यह कृत्य पापों का पाप में लिखा जायेगा और जो बिना कारण मध्यस्थता (संतों द्वारा ईश्वर से बख्शने की सिफ़ारिश) की प्रतीक्षा करता है, यह उसका अहंकार दर्शाता है ।

यह आश्चर्यजनक है कि सही मार्ग पर चलने वाले तो बहुत दीखते हैं लेकिन परमात्मा में विशवास रखने वाले (अर्थात मोमिन) बहुत कम ।

तक्लीफ़ से छुटकारा पाने के लिये उसे दूसरों से छिपाकर रखना ठीक है । वे न ही तो तुम्हारी कोई मदद कर सकते हैं न उसे तुम्हारे पास आने से रोक सकते हैं । अर्थात ईश्वर ही एक मात्र सहारा है, वही दुःख-दर्द दूर करने वाला है ।

दिल तीन तरह के होते हैं । पहाड़ जैसे, जिसे कुछ भी नहीं हिला सकता, ताड़ वृक्ष जैसे, जिनकी जड़े तो मजबूत होती हैं पर शाखाएं हिलती रहती हैं और पंख जैसे, जिन्हें हवा दायें से बाएं झुलाती रहती है ।

जो धर्म की रक्षा करने की उम्मीद रखता है, उसे लोगों से दूर रहना चाहिये ।

ओ परमात्मा ! तू मुझे जो भी दण्ड देना चाहे दे, लेकिन मुझे अपने हुज़ूर से दूर मत कर ।

हजरत ख्वाजा आरिफ रिवाकरी का समाधि परिसर (रिवाकर, बुखारा के नजदीक)

हजरत ख्वाजा आरिफ रिवाकरी की समाधि (रिवाकर, बुखारा के नजदीक)

हजरत ख्वाजा आरिफ रिवाकरी की समाधि (रिवाकर, बुखारा के नजदीक)

ख्वाजा महमूद इन्जीर फगनवी (रहम.)

'या इलाही दूर कर जिस्मी अलालत और रूहानी मेरी,
ख्वाजाऐ महमूद मुर्शिद बाज़िया के वास्ते'
(दूर कर जिस्मी और रूहानी रुग्णता मेरी, हे परमात्मा !,
रूहानी प्रकाश युक्त सतगुरु ख्वाजा महमूद के नाम पर)

हजरत ख्वाजा महमूद इन्जीर फगनवी (रहम.) हजरत ख्वाजा आरिफ रिवाकरी (रहम.) के श्रेष्ठ और पूर्ण आत्मिक उत्तराधिकारी थे। जब हजरत ख्वाजा आरिफ रिवाकरी (रहम.) का अंतिम वक्त आया तो आपने इनको अपना खलीफ़ा बनाया और दावते खल्क (लोगों को रूहानी शिक्षा देने) की इजाज़त दी। आपका जन्म 18 शव्वल 628 हिजरी (18/19 अगस्त 1231) में बुखारा से करीब पांच कि. मी. दूर इन्जिर फगना नामक गाँव में हुआ। अपनी युवावस्था में वे निर्माण-कार्य करते थे। आपने अपने जीवन को लोगों को परमात्मा के हुज़ूर में हाज़िर करने में लगा दिया। आप ख्वाजगान संतों में प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने जिक्र-जहर (जबान से आवाज़ द्वारा) को अपनाया। इसके पहले हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) के वक्त से ख्वाजगान संतों ने गुप्त-जाप (हृदय में जिक्र-अनहद नाद) को अपना लिया था। आपने ऐसा उस वक्त की जरूरत और लोगों की रूचि देखकर किया।

एक दफ़ा हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) के सुपुत्र और खलीफ़ा हजरत ख्वाजा कबीर (कु. सि.) ने हजरत ख्वाजा महमूद इन्जीर फगनवी (रहम.) के जिक्र-जहर पर एतराज किया कि आपने सिलसिले के पीराने कबार (पूर्ववर्ती संत-सतगुरु) के तरीका के खिलाफ़ जिक्र-जहर क्यों इख्तियार किया ? उन्होंने जवाब दिया कि मुझको हजरत पीर अर्थात हजरत ख्वाजा आरिफ रिवाकरी (रहम.) ने अपने आखरी वक्त फ़रमाया था कि जिक्र-जहर करो। 'हालात मशायख नक्शबंदिया मुजद्दिदिया' के लेखक हजरत मौलाना मुहम्मद हसन साहब का इस विषय में विचार है कि 'आखिर वक्त में हजरत ख्वाजा आरिफ रिवाकरी (रहम.) का जिक्र-जहर फ़रमाना ऐसा रहा होगा जैसा दम-आखिर पर मरीज के पास बुलंद आवाज़ के साथ जिक्र कलमा याद दिलाने के वास्ते कहा करते हैं। इसे हजरत ख्वाजा फगनवी (रहम.) ने शायद इजाज़त जिक्र-जहर समझ लिया।'

एक दफ़ा विद्वानों की एक सभा में जहाँ आप हाजिर थे शैख़ शम्स अल-हलवानी ने शैख़ हाफिज़द्दीन से, जो इल्म-जाहिर (सांसारिक विद्याओं) के विद्वान थे, उनसे पूछने के लिये कहा कि वे जिक्र-जहर क्यों करते हैं ? हजरत ख्वाजा फगनवी (रहम.) ने फ़रमाया:

"ओ अल्लाह ! मेरा मकसूद केवल तू है । तेरी राजी में रजा, अपना प्रेम और मुआफ़ी अता फ़रमा । सोते लोगों और ला-परवाह लोगों के दिलों को जगाने के लिये जिक्र-जहर सर्वोत्तम है और अगर तुम्हारा इरादा सही है तो जिक्र-जहर करने का उचित प्रमाण तुम्हें मिल जायेगा ।"

और यह पूछने पर कि किन लोगों के लिये जिक्र-जहर करना उचित है, आपने फ़रमाया जिन लोगों में झूठ, औरों की निंदा करना, शक या हराम का सामान रखना और पाखंड न हो और अल्लाह के आलावा अन्य बातों से दूरी रखते हों उनके लिये जिक्र-जहर श्रेष्ठ है । इससे उनका हृदय अहंकार और प्रसिद्धि के लिये चाहत से शुद्ध होता है ।

कहा जाता है कि हजरत अली अर-रमितानी (रहम.) को एक बार हजरत खिज्र (अलैहि.) के दर्शन हुए । आपने उनसे पूछा कि इस ज़माने में ऐसे कौन से पीर हैं जिनका अनुसरण किया जाये तो उन्होंने हजरत ख्वाजा फगनवी (रहम.) का नाम लिया ।

कहा जाता है कि हजरत ख्वाजा फगनवी (रहम.) ने परमात्मा के ज्ञान के मुकाम पर पहुंचने में हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के पद-चिन्हों का अनुसरण किया और परमात्मा के शब्द के मुकाम पर पहुंचने में (परमात्मा से बात करने वाले का मुकाम) हजरत मूसा (सल्ल.) के पद-चिन्हों का अनुसरण किया । बुखारा के नजदीक वाबिक्नी में उन्होंने अपनी मस्जिद बनवाई जहाँ वे लोगों को तालीम दिया करते थे ।

कहा जाता है कि हजरत ख्वाजा दहकान कल्बी (रहम.) जो हजरत ख्वाजा औलिया कबीर (रहम.) (हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) के खलीफ़ा) के खलीफ़ा थे, ने जब उनका आखरी वक्त नजदीक था यह दुआ की कि 'या अल्लाह ! मेरी मदद को कोई अपना दोस्त भेजना कि उसकी बरकत से ईमान साबूत ले जाऊं ।' उनकी इस दुआ के जवाब में हजरत ख्वाजा फगनवी (रहम.) की रूह मुबारक हजरत ख्वाजा दहकान कल्बी (रहम.) के आखरी वक्त पर पहुंची और लौटते वक्त वे एक बड़े सफ़ेद पक्षी के रूप में प्रेम व कृपावश हजरत अली अर-रमितानी (रहम.) (हजरत ख्वाजा फगनवी (रहम.) के आत्मिक उत्तराधिकारी) के सर के उपर से यह कहते गुजरे, 'ओ अली ! मर्द की तरह रहना मत छोड़ना और बहादुर बन कर रहना ।' उनका दर्शन और आभास हजरत अली अर-रमितानी (रहम.) को और उनके साथ बैठे अन्य लोगों को भी हुआ । कुछ देर तक वे लोग होशो-हवास में न रहे, जब संभले तो हजरत अली अर-रमितानी (रहम.) ने पूछने पर फ़रमाया कि अल्लाह तआला ने हजरत ख्वाजा फगनवी (रहम.) को यह कुव्वत बख्शी थी कि जिस प्राणी का चाहें रूप ले लें ।

उन्होंने अपना शरीर बुखारा के नजदीक कीलित में 717 हिजरी (1317 ई.) में 17 रबी उल-अव्वल (29/30 मई 1317) को त्यागा । आपकी समाधि रिवाकर (बुखारा) के नजदीक फगना में स्थित है ।

ख्वाजा महमूद फगनवी का समाधि परिसर (फगना, रिवाकर)

ख्वाजा महमूद फगनवी की समाधि (फगना, रिवाकर)

ख्वाजा अली अर-रमितानी (रहम.)

‘या इलाही दूर कर दुनिया व दीं के दर्द-दुःख,
हजरते ख्वाजा अजीजाँ बादशाह के वास्ते’
(दूर कर इहलोक और परलोक के दर्द-दुःख, हे परमात्मा !,
संतों के बादशाह हजरत ख्वाजा अजीजाँ के नाम पर)

हजरत अली अर-रमितानी (रहम.) हजरत ख्वाजा फगनवी (रहम.) के आत्मिक उत्तराधिकारी थे और हजरत खिज़्र के कहने पर आप उनकी शरण में हाजिर हुए थे। आपका जन्म बुखारा से करीब 7 कि. मी. दूर रमितान में 585 हिजरी में हुआ था। हालाँकि उनका नाम अली रमितानी था लेकिन उन्हें ख्वाजा अजीजाँ के नाम से जाना जाता था क्योंकि वे स्वयं को ‘अजीजाँ’ कहा करते थे। ख्वारज्म के लोग उन्हें ख्वाजा अली बावर्दी कहते थे। कहा जाता है कि आपने मौलाना जलालुद्दीन रूमी की सुहबत का लाभ भी उठाया था। रमितान से आप बावर्द नामक शहर में चले गया थे और बाद में वहाँ से वे ख्वारज्म चले आये, जहाँ वे अंत तक रहे।

रमितान में आपने धर्मशास्त्रों, क़ुरआन मजीद, हदीस और न्यायशास्त्रों का अध्ययन किया और बहुत प्रसिद्धि भी पाई। जब आप हजरत ख्वाजा फगनवी (रहम.) से अध्यात्मिक तालीम के लिये मिले, आपकी न्यायिक विषयों में गहरी पैठ थी और लोग आपका सन्दर्भ दिया करते थे। हजरत ख्वाजा फगनवी (रहम.) के सान्निध्य में आपने अध्यात्मिक उचाईयों को प्राप्त किया और आप अजीजाँ नाम से विख्यात हो गये, जिसका प्रयोग फ़ारसी भाषा में ‘उच्च अवस्था’ को दर्शाने के लिये होता है।

क़ुरआन मजीद की गहरी समझ और आपके ज्ञान की गहराई इस घटना से पता चलती है कि एक दफ़ा शैख़ फखरुद्दीन अन-नूरी ने आपसे पूछा कि “अल्लाह ने पवित्र क़ुरआन में ‘वादे के दिन’ पूछा ‘क्या मैं तुम्हारा परवरदिगार नहीं हूँ ? और उन्होंने कहा ‘क्यों नहीं, हम गवाह हैं कि तू हमारा परवरदिगार है।’ (7:172) जबकि क़ियामत के दिन वह पूछेगा ‘आज किस की बादशाही है? और कोई उत्तर न देगा।’ (40:16) ऐसा क्यों कि पहली दफ़ा उन्होंने उत्तर दिया लेकिन दूसरी दफ़ा नहीं।”

हजरत अजीजाँ (रहम.) ने इन शब्दों में समझाया “पहला प्रश्न ‘क्या मैं तुम्हारा परवरदिगार नहीं हूँ ?’ आदमजात से उस दिन पूछा गया था जिस दिन अल्लाह ने पवित्र कानून का पालन करना सबके लिये अनिवार्य किया था और इसमें शामिल था पूछे जाने पर उत्तर देने की अनिवार्यता। लेकिन क़ियामत के दिन सभी अनिवार्यताओं का अंत हो चुका होता है और उस दिन अध्यात्मिक जगत और ‘सत्य’ (परमात्मा) की जागरूकता शुरु होती है। अध्यात्मिक जगत में ख़ामोशी से बेहतर कोई आवाज़ नहीं होती क्योंकि आध्यात्मिकता

हृदय से हृदय की ओर प्रवाह है जिसका जबान से कोई नाता नहीं । इसीलिए दूसरे प्रश्न का उत्तर देने की जरूरत नहीं रहती । अल्लाह तआला स्वयं उत्तर देता है 'ख़ुदा की जो अकेला (और) ग़ालिब है ।'"

आप शुरु में कपड़े बुनने का काम किया करते थे और इसलिए नस्साज (कपड़ा बुनने वाला) कहलाया करते थे । आपसे किसी ने पूछा कि ईमान किसे कहते हैं तो आपने अपने पेशे के अनुरूप फ़रमाया 'तोड़ने और जोड़ने को' अर्थात दुनिया से मन हटाकर परमात्मा से जोड़ना । कहा जाता है कि किसी शख्स ने आपकी आलोचना करते हुए कहा कि आप 'बाजारी' हैं क्योंकि आप सूत खरीदने के लिये बाज़ार जाया करते थे । आपने सुनकर फ़रमाया कि 'यार अजीजाँ रहमतुल्लाहु ज़ारी (विलाप) चाहता है तो क्यों न बाजारी हूँ' अर्थात यदि परमात्मा को हृदय का द्रवित होना पसंद है तो ऐसा क्यों न करूं ।

एक बार एक मेहमान हजरत अजीजाँ (रहम.) के घर आया । इतेफाक से उस वक्त उस मेहमान को परोसने के लिये आपके घर में कोई चीज न थी । एकाएक आपका एक खास मुरीद जो नानबाई का काम करता था, अर्थात रोटियां बेचा करता था, वह रोटियों से भरी एक टोकरी लाया और आपको पेश की । आप बहुत खुश हुए और फ़रमाया 'तूने इस वक्त बहुत बड़ी खिदमत की, जो तेरी मुराद हो मांग ले ।' उसने कहा मैं चाहता हूँ कि आप जैसा बन जाऊं । आपने फ़रमाया कि यह बहुत कठिन काम है और तू इसे सहन नही कर सकेगा । वह नहीं माना तो आप उसे हाथ पकड़कर घर के एक कोने में ले गये और तवज्जोह दी । जब कुछ देर बाद वे दोनों बाहर आये तो वे बाहरी और भीतरी दोनों तरह से एकरूप हो चुके थे । इसके बाद वह मुरीद चालीस दिन जीवित रहा और उसके बाद आपने उसके परिवार की देखभाल की ।

दैवीय प्रेरणा से जब आप ख्वारज्म गये तो आप शहर के बाहर दरवाजे पर ही रूक गये और अपने एक दरवेश को बादशाह के पास यह कहलाकर भेजा कि एक गरीब जुलाहा तुम्हारे शहर के दरवाजे पर आया है, अगर तुम्हारी इज़ाज़त हो तो वह शहर में दाखिल हो, वरना यहीं से वापस हो जाये । आपने यह भी फ़रमाया कि अगर बादशाह इज़ाज़त दे तो इजाज़तनामा लिखवाकर और बादशाह की मुहर और दस्तखत करवा कर लाना । जब वह बादशाह के दरबार में गया और बादशाह को हजरत अजीजाँ (रहम.) ने जो फ़रमाया था बतलाया तो बादशाह हंसने लगा और बोला कि फ़क़ीर लोग भी कैसे नादान और सादा तबियत लोग होते हैं और मजाक के तौर पर एक इजाज़तनामा दस्तखत व मुहर के साथ उसे दे दिया । इजाज़तनामा लेकर हजरत अजीजाँ (रहम.) ने शहर में प्रवेश किया और लोगों को नक्शबंदी सिलसिले की तालीम देने लगे । लोग उनसे प्रभावित होकर बड़ी संख्या में उनके पास आने लगे । आप मजदूरों को भी सतसंग में शामिल होने के लिये प्रोत्साहित करते और सतसंग में शामिल होने की एवज में आप उन्हें दिन की मजदूरी भी देते । उनकी सुहबत का लोगों पर खासा असर पड़ता और लोग हाजिर हुए बिना न रह पाते । लोगों का हुजूम बढने लगा तो बादशाह के कान भी खड़े हो गये कि बड़ी संख्या में लोग एक फ़क़ीर के मुरीद होते

जा रहे हैं और यह किसी अशांति या झगड़े की वजह न बन जाये । बादशाह ने आपको शहर से बाहर चले जाने का हुक्म दे दिया । आपने अपने उसी दरवेश के हाथों वह लिखित इजाज़तनामा बादशाह के पास यह कहते हुए भिजवा दिया कि हम तो आपकी इजाज़त से ही यहाँ ठहरे हुए हैं, अगर वादा-खिलाफी हो तो लौट जाएँ । बादशाह अपने आदेश पर बहुत शर्मिंदा हुआ और हजरत अजीजाँ (रहम.) की दूरदर्शिता से बहुत प्रभावित भी हुआ और अपने दरबारियों और साथियों सहित आकर आपका मुरीद हुआ ।

कहा जाता है कि हजरत सैय्यद अता (रहम.) जो आपके समकालीन थे और इसी नक्शबंदी सिलसिले के एक बुज़ुर्ग हुए हैं, शुरु में हजरत अजीजाँ (रहम.) से कुछ नाखुश रहते थे । उनसे एक दफ़ा हजरत अजीजाँ (रहम.) की शान में एक बेअदबी ऐसी हुई कि उसी वक्त उनके सुपुत्र को तुर्कों का एक गिरोह क़ैद कर ले गया । हजरत सैय्यद अता (रहम.) अपनी गलती समझ गये और आपने तुरंत दावत का खाना तैयार करवाया और हजरत अजीजाँ (रहम.) से बड़ी विनम्रता और आजिजी के साथ दावत में शामिल होने के लिये निवेदन किया । हजरत अजीजाँ (रहम.) ने दावत में शामिल होना स्वीकार कर लिया । दावत में और भी महानुभव शामिल हुए । हजरत अजीजाँ (रहम.) बहुत प्रसन्नचित और भावावेश में थे । सेवक नमक लाया और दस्तरख्वान बिछा दिया गया लेकिन हजरत अजीजाँ (रहम.) ने अपने लिये फ़रमाया 'अली (वे स्वयं) तब तक नमक न छूएगा और खाने की तरफ़ हाथ न बढ़ाएगा जब तक सैय्यद अता का बेटा इस दस्तरख्वान पर मौजूद न होगा । यह फरमाकर आप थोड़ी देर खामोश रहे । वहाँ उपस्थित सभी लोग प्रतीक्षा कर ही रहे थे की एक कोलाहल के बीच हजरत सैय्यद अता (रहम.) का बेटा घर के अंदर आ पहुंचा । लोग अचंभित थे और उन्होंने लड़के से पूछा कि वो वहाँ कैसे आया तो उसने कहा कि वह इसके अलावा कुछ नहीं जानता की कुछ देर पहले वह तुर्कों की क़ैद में था और अब यहाँ उन सबी लोगों के बीच । लोग इस घटना से इतने प्रभावित हुए कि वहीं हजरत अजीजाँ (रहम.) के कदमों पर झुककर उनके मुरीद हो गये ।

आपके दो सुपुत्र थे । बड़े ख्वाजा मुहम्मद और छोटे ख्वाजा इब्राहीम । जब आपकी वफ़ात करीब हुई तो आपने छोटे बेटे ख्वाजा इब्राहीम को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया और पूछने पर कि उन्होंने ऐसा क्यों किया तो फ़रमाया कि बड़े बेटे ख्वाजा मुहम्मद की मेरे बाद जल्द ही उम्र खत्म हो जाएगी । हुआ भी ऐसा ही और ख्वाजा मुहम्मद हजरत अजीजाँ (रहम.) के देहांत के उन्नीस दिन बाद ही इस दुनिया से चले गये । आपने अपना आत्मिक उत्तराधिकारी शैख़ मुहम्मद बाबा समासी को बनाया ।

हजरत अजीजाँ (रहम.) 130 वर्ष जीवित रहे और 715 हिजरी (25/26 दिसम्बर 1315) में आपने अपना शरीर त्यागा । कुछ लोगों का मानना है कि आपने 721 हिजरी (20/21 अक्टूबर 1321) में अपना शरीर त्यागा । आपकी समाधि बुखारा के नजदीक रमितान में स्थित है ।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

करो पर गिनो मत ।

अपनी कमियों को स्वीकारो और काम करते रहो । खाते और बात करते वक्त परमात्मा की हाजिरी में रहो ।

अल्लाह तआला ने क़ुरआन शरीफ में तौबा को महत्व दिया है, और क्योंकि अल्लाह तआला ने तौबा को महत्व दिया है, वह सच्ची तौबा अवश्य क़ुबूलेगा ।

मुस्लिम विद्वान सदियों से शरीरान्त के समय ऊँची आवाज में 'ला इलाहा इलाल्लाह' के जाप की पैरवी करते आये हैं । न जाने कौन सी घड़ी मौत आ जाये, इसलिए हर क्षण ऊँची आवाज में 'ला इलाहा इलाल्लाह' का जाप करना उचित है ।

शुरूआती अभ्यासी के लिये 'ला इलाहा इलाल्लाह' का जाप जबान से और निपुण के लिये दिल से करना उचित है । शुरूआती अभ्यासी को परमात्मा को याद करने के लिये कठिन प्रयास करना पड़ता है क्योंकि उसका दिल इधर-उधर भटकता रहता है लेकिन निपुण अभ्यासी का दिल साफ़ हो चुका होता है और आसानी से जिक्र में लग जाता है । उसके बाहरी और भीतरी तमाम अंग परमात्मा को याद करने वाले बन जाते हैं अत: उसका समस्त शरीर परमात्मा की याद में शामिल हो जाता है । इसीलिए निपुण अभ्यासी का एक दिन का जाप शुरूआती अभ्यासी के एक वर्ष के समान है ।

यदि मन्सूर (हलाज) को सूली पर चढ़ाये जाते वक्त हजरत गजदेवानी (रहम.) का कोई भी अनुयायी वहाँ मौजूद होता तो उसे कभी सूली पर न चढ़ाया जाता क्योंकि उसे उन अनभिज्ञों के आरोपों से बचाने वाला कोई तो होता ।

मुर्शिद को प्रत्येक मुरीद को उसकी क्षमता और संस्कार के अनुसार तालीम देनी चाहिये । दुआ ऐसी जबान से की जाये जिसने गुनाह न किया हो यानि अल्लाह तआला के दोस्तों (संतों) के सामने आजिजी करो ताकि वे तुम्हारे वास्ते दुआ करें ।

अमल (अभ्यास) करना चाहिये लेकिन उसे न किया हुआ जानना चाहिये (अर्थात यह मानना चाहिये कि मैंने कुछ नहीं किया) और अपने आप को त्रुटी (भूल) करने वाला जानना चाहिये और फिर अमल शुरु करना चाहिये ।

यदि किसी व्यक्ति के पास बैठने से अल्लाह तआला की विस्मृति हो तो उसे इन्सान के वेश में शैतान समझना चाहिये जो शैतान से ज्यादा बदतर है क्योंकि शैतान खुल्लम-खुल्ला व्यवधान डालता है और ऐसा व्यक्ति गुप्त रूप से ।

अच्छा दोस्त अच्छे काम से बेहतर है क्योंकि अच्छा काम अहंकार पैदा कर सकता है लेकिन अच्छा दोस्त नेक सलाह देगा ।

दिल से हाजिर होना शरीर से हाजिर होने से बेहतर है ।

बंदगी यह है कि बंदा ख़ुदा से ख़ुदा के सिवाय कुछ न चाहे ।

अगर किसी के पास कुछ न हो पर दिल में ख्वाहिश हो, यह आंतरिक निस्पृहता नहीं है । सब कुछ होते हुए दिल में उस सबसे मुहब्बत न हो, यह आंतरिक निस्पृहता है ।

साधक को चाहिये कि अपने सदाचरण और सेवा से किसी साहिबे-दिल (संत-सतगुरु) के दिल में जगह बना ले । उनका दिल ईश्वर की कृपा-दृष्टी पड़ने की जगह है और उनके दिल में होने से उसे भी उसका हिस्सा मिलेगा ।

हजरत अली अर-रमितानी (अजीजाँ) का समाधि परिसर (रमितान-बुखारा)

हजरत अली अर-रमितानी (अजीजाँ) की समाधि (रमितान-बुखारा)

ख्वाजा मोहम्मद बाबा समासी (रहम.)

'या इलाही शरअ: पर जब तक जिऊँ साबित रहूँ,
हजरते ख्वाजा मुहम्मद बाअता के वास्ते'
(हे परमात्मा ! जीवन भर धर्मशास्त्र का करूं पालन,
आपके कृपापात्र हजरत ख्वाजा मुहम्मद के नाम पर)

हजरत ख्वाजा मुहम्मद (रहम.) हजरत अजीजाँ (रहम.) के पूर्ण समर्थ आत्मिक उत्तराधिकारी थे । कहा जाता है कि जब हजरत अजीजाँ (रहम.) का अंतिम समय निकट आया तो आपने हजरत ख्वाजा मुहम्मद (रहम.) (बाबा समासी) को अपना खलीफ़ा नियुक्त किया और अपने सभी अनुयायियों को उनके हवाले कर दिया । आपका जन्म बुखारा से करीब 5 कि. मी. दूर समास में 25 रजब 591 हिजरी (5/6 जुलाई 1195) में हुआ था । आप इल्म जाहिर और इल्म बातिन (सांसारिक और अध्यात्मिक) दोनों विद्याओं में पारंगत थे । दूर-दूर से लोग आपके सतसंग का लाभ उठाने आते थे । आपने क़ुरआन मजीद, हदीसों और न्यायशास्त्र का बड़ा गहन अध्ययन किया था, और क़ुरआन मजीद तो आपको कंठस्थ था, जिसने आपकी आत्मिक तरक्की में भी बहुत योगदान दिया । परमात्मा की याद में आप कभी-कभी आत्म-विस्मृति की स्थिति में पहुँच जाते थे । आपका एक बागीचा था जिसमें अंगूर की डालियाँ काटते हुए आत्म-विस्मृति की स्थिति में आपके हाथ से आरी छूट कर नीचे गिर जाती थी ।

ख्वाजा बाबा समासी (रहम.) ने अपने एक विचित्र अनुभव का वर्णन इस प्रकार किया है । एक बार वे अपने पूज्य गुरुदेव हजरत अजीजाँ (रहम.) के हुज़ूर में हाज़िर हुए । जब वे उनके समक्ष हाजिर हुए तो हजरत अजीजाँ (रहम.) ने फ़रमाया प्रिय बेटे मैं तुम्हारे हृदय में ईश्वर दर्शन की तीव्र उत्कंठा देख रहा हूँ । उनके यह फरमाते ही ख्वाजा बाबा समासी (रहम.) को अहसास होने लगा कि वे दिन-रात चलकर डॉम की मस्जिद, मस्जिद अल-अक्सा के लिये सफर कर रहे हैं । जब वे मस्जिद अल-अक्सा पहुँचे तो पाया कि मस्जिद के भीतर एक व्यक्ति, जिसने हरे रंग के वस्त्र धारण कर रखे थे, उनकी लम्बे समय से प्रतीक्षा कर रहा था । उसने ख्वाजा बाबा समासी (रहम.) का स्वागत किया और उससे समय पूछने पर ख्वाजा बाबा समासी (रहम.) को ज्ञात हुआ कि वहाँ तक पहुँचने में उन्हें तीन माह का समय लग गया था । फिर उसने कहा कि मस्जिद के भीतर आपके शैख़ हजरत अली अर रमितानी (रहम.) आपका इंतज़ार कर रहे हैं । मस्जिद के अन्दर जाकर ख्वाजा बाबा समासी (रहम.) ने अपने पूज्य गुरुदेव के साथ नमाज़ अदा की । नमाज़ अदा करने के पश्चात हजरत अली अर रमितानी (रहम.) ने फ़रमाया कि उन्हें हजरत पैगम्बर (सल्ल.) की तरफ़ से यह हिदायत मिली है कि वे उन्हें (बाबा समासी को) सिद्रातुल मुन्तहा [वह जगह जहाँ हजरत पैगम्बर

(सल्ल.) पहुँचे थे] लेकर जाऊं। तुरंत उस हरे वस्त्रधारी व्यक्ति ने दो विचित्र प्राणी पेश किये जिन पर वे दोनों सवार हो गये और वे विचित्र प्राणी उन्हें लिये ऊपर उठने लगे। जैसे-जैसे वे ऊपर उठ रहे थे, उन्हें (बाबा समासी को) उन स्थानों का जो पृथ्वी और जन्नत के बीच थे, उनका ज्ञान स्वत: हासिल होता जा रहा था। इसे शब्दों में बयान नहीं किया जा सकता क्योंकि जो चीज हृदय से सम्बंध रखती है उसको सिर्फ अनुभव से ही जाना जा सकता है। ऊपर उठते-उठते उन्हें हजरत पैगम्बर (सल्ल.) की हक़ीकी स्थिति जो कि परमात्मा के समक्ष है, का साक्षात्कार हुआ, जहाँ पहुंच कर सभी दुनियावी चीजों का उस हक़ीक़त में विलय हो जाता है। वहां पहुँच कर बाबा समासी (रहम.) और उनके पूज्य गुरुदेव हजरत अजीजाँ (रहम.) भी उस हक़ीक़त में विलीन हो गये। उन्हें अनुभव हुआ कि वहाँ हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के सिवाय सिर्फ परमात्मा का ही अस्तित्व कायम है और यह रास्ता केवल उन कृपापात्रों के लिये है जिन्हें मानवता की सेवा के लिये चुना गया है। जब वे उस स्थिति से लौटे तो उन्होंने पाया कि वे अपने पूज्य गुरुदेव हजरत अजीजाँ (रहम.) के समक्ष खड़े हैं। उन्हें यह विदित हुआ कि यह उनका परम सौभाग्य है कि वे ऐसे गुरुदेव की शरण में हैं जो उन्हें परमात्मा का सामीप्य प्रदान करा सकते हैं।

आपने 10 जुमादा अल-आखिर 755 हिजरी (2/3 जुलाई 1354) मे 150 वर्ष से अधिक उम्र में शरीर छोड़ा। आपकी समाधि बुखारा के नजदीक समास में स्थित है।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

साधक को सदा परमात्मा की आज्ञा का पालन करना चाहिये। उसे हमेशा पाक-साफ़ रहना चाहिये और दिल में हमेशा परमात्मा की याद बनाये रखना चाहिये। फिर अपने अन्तर को पाक-साफ़ रखना चाहिये जो कभी दूसरों के सामने नहीं आता और यह सत्य का आभास करने से होता है। सीने की शुद्धता उसकी (परमात्मा की) आशा और उसकी इच्छा पर संतुष्टि रखने में निहित है। रूह की पवित्रता विनम्रता और श्रद्धा में निहित है। पेट की शुद्धता नेक कमाई का खाने और सयंम में निहित है। इसके बाद शरीर की पवित्रता जो इच्छाओं के त्याग में निहित है। इसके बाद हाथों की पवित्रता जो दया और श्रम में निहित है। इसके बाद आती है गुनाहों से शुद्धता जो पिछले गुनाहों से तौबा और हृदय के रुदन में निहित है। इसके बाद जबान की पवित्रता जो जिक्र (जाप) और क्षमायाचना में निहित है। सबसे अंत में स्वयं की पूर्ण शुद्धता जो (परमात्मा को याद करने में) लापरवाही और सुस्ती को दूर करने और परलोक में क्या अंजाम होगा इसके भय में निहित है।

हमेशा सद्बुद्धि की कामना करनी चाहिये और अपने आचरण में सावधान रहना चाहिये, भले और महापुरुषों के आचरण का अनुसरण और उनके सदुपदेशों का पालन करना चाहिये, मन को भटकने से बचाना चाहिये।

तुम्हारे शैख़ का आदेश, बनिस्बत किताबों के, तुम्हारे लिये सर्वोपरि है क्योंकि वो तुम्हारा मर्ज और उसका इलाज जानता है ।

संत-महात्माओं के सतसंग का लाभ उठाना चाहिये और उनकी संगत में मन को इधर-उधर की घडंत से रोकना चाहिये, ऊँची आवाज में न बोलना चाहिये बल्कि चुप रहना चाहिये, उनकी हाजिरी में उनसे ध्यान हटाकर मन को न तो प्रार्थना में लगाना चाहिये न अपनी ओर से कोई और साधन-अभ्यास । जब वे बोल रह हों तो शांत रहो और एकाग्रचित्त होकर सुनो । उनके घर में मत झांको की उनके पास क्या है, विशेषकर उनके कक्ष और रसोई में ।

अन्य किसी शैख़ की ओर मत देखो (उससे उम्मीद मत करो), बल्कि विशवास रखो तुम्हारा शैख़ तुम्हारी मदद करेगा । और कभी अपना दिल किसी और शैख़ से मत जोड़ो, उससे तुम्हें नुक्सान हो सकता है ।

अपने शैख़ को हृदय में रखते हुए परमात्मा और उसके नाम के सिवाय कुछ और नहीं होना चाहिये ।

ख्वाजा मुहम्मद बाबा समासी का समाधि परिसर (समास, बुखारा)

ख्वाजा मुहम्मद बाबा समासी की समाधि (समास, बुखारा)

हजरत सैय्यद अमीर कुलाल (रहम.)

'या इलाही हिफ्जे ईमां वक्ते मुर्दन कीजियो,
हजरते मीरे कुलाले पार्सा के वास्ते'
(कायम रहूँ ईमान पर मरने तक मैं, हे परमात्मा !
सयंमी हजरत सैय्यद अमीर कुलाल के नाम पर)

हजरत सैय्यद अमीर कुलाल (रहम.) इब्न सैय्यद सैफुद्दीन हमजा हजरत ख्वाजा मुहम्मद बाबा समासी (रहम.) के चार खलीफाओं में से सबसे प्रमुख और उनके आत्मिक उत्तराधिकारी थे। आपके पिता सैय्यद सैफुद्दीन हमजा सूफ़ी विद्वान थे और कुलाल (मिट्टी के बर्तन बनाने का कार्य करने वाले) कबीले के प्रमुख थे जिसके कारण आप 'अमीर' की उपाधि से जाने जाते थे और आप पूर्णरूपेण सैय्यद अर्थात हजरत पैगम्बर मुहम्मद (सल्ल.) के वंशज थे। वे हुसैन इब्न अली [हजरत पैगम्बर मुहम्मद (सल्ल.) के नाती] के वंश से थे। हजरत सैय्यद अमीर कुलाल (रहम.) का जन्म बुखारा के नजदीक (करीब 3 कि. मी.) 676 हिजरी (1277/1278 ई.) में एक गाँव सुखर में हुआ था। आपके पिता की मृत्यु के बाद आप अमीर कहलाने लगे और लोग आपको 'सैय्यद अमीर कुलाल' नाम से जानने लगे।

आपकी पूज्य माताजी फ़रमाया करती थीं कि जब हजरत सैय्यद अमीर कुलाल (रहम.) उनके पेट में थे, उस वक्त अगर वे कोई शुबहा का लुक्मा (जो हलाल की कमाई का न हो और परमात्मा की याद में न बनाया गया हो) अपने मुँह में रखने का प्रयास करतीं या खा लेतीं तो उनके पेट में दर्द होना शुरु हो जाता और जब तक वे कै न कर लेतीं उन्हें आराम न आता। कुछ दफ़ा ऐसा होने पर वे समझ गयीं कि उनके पेट में कोई विशिष्ट बच्चा है और फिर वे खाने में एहतियात बरतने लगीं।

आपका बचपन का नाम शमसुद्दीन था और आपकी शिक्षा वाब्केंत नामक जगह पर हुयी जहाँ युवावस्था में ही आपने मदरसे के प्रमुख का काम संभाल लिया। एक विद्वान और धार्मिक व्यक्ति के रूप में हजरत सैय्यद अमीर कुलाल (रहम.) की प्रसिद्धि दूर-दूर तक फ़ैल गयी थी और बहुत से लोग आपके पास तालीम हासिल करने के लिये आया करते थे। हजरत शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.), तुर्घई (तैमुर के पिता) और अमीर तैमुर (मंगोल का बादशाह) आपके प्रसिद्द मुरीदों में से हैं। 1357 में तैमुर ने हजरत अमीर कुलाल (रहम.) के परामर्श पर अमल कर उज़बेकिस्तान पर आक्रमण किया था।

कुलाल कबीले के लोग अच्छे कुश्ती लड़ने वालों में जाने जाते थे और हजरत अमीर कुलाल (रहम.) भी एक अच्छे ख्याति प्राप्त पहलवान थे और आपको कुश्ती लड़ने का शौक

था। एक दिन एक व्यक्ति ने उन्हें कुश्ती लड़ते हुए देख सोचा कि क्या ऐसा व्यक्ति जो हजरत पैगम्बर मोहम्मद (सल्ल.) का वंशज हो और इतना विद्वान और धार्मिक हो, कुश्ती जैसे खेल में अपना समय जाया कर सकता है ? अभी उसके मन में यह विचार आया ही था कि उसे लगा जैसे क़ियामत का दिन आ गया हो और वह पानी में डूब रहा हो। तभी उसे लगा जैसे हजरत अमीर कुलाल (रहम.) ने आकर उसे डूबने से बचा लिया और पानी से बाहर निकाल दिया। जब उसे कुछ होश आया तो उसने देखा कि हजरत अमीर कुलाल (रहम.) उसकी ओर देखकर मुस्कुरा रहे थे।

एक बार जब वे अखाड़े में कुश्ती लड़ रहे थे, हजरत बाबा समासी (रहम.) का उधर से गुजरना हुआ और आप हजरत अमीर कुलाल (रहम.) को कुश्ती लड़ते देख वहीँ रूक गये। इस पर उनके शिष्यों को बहुत आश्चर्य हुआ और वे उनसे उनके वहां रूकने के बारे में पूछने लगे। हजरत बाबा समासी (रहम.) ने शिष्यों की तरफ़ देखकर फ़रमाया कि वे वहां हजरत अमीर कुलाल (रहम.) के लिये ही रुके हैं जो अपने समय के विज्ञ पुरुष और लोगों को अपनी ओर आकर्षित करने वाले ओर उनमें ईश्वरीय प्रेम पैदा करने वाले होंगे। जैसे ही हजरत अमीर कुलाल (रहम.) की नजर उनसे मिली वे हजरत बाबा समासी (रहम.) की तरफ़ खिंचने लगे। उन्होंने कुश्ती वहीँ बीच में छोड़ दी और हजरत बाबा समासी (रहम.) के पीछे चलते-चलते उनके घर पहुँच गये। हजरत बाबा समासी (रहम.) ने उन्हें तुरंत दीक्षित कर अपना लिया और फ़रमाया अब से तुम मेरे पुत्र हो।

कहा जाता है कि हजरत शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) बुखारा में कजान खान इब्न यसौर के राज में उसके एक मुलाजिम थे। एक बार कजान खान को नाराज़ करने के कारण हजरत शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) को किसी व्यक्ति को फांसी देने का हुक्म दिया गया। लेकिन फांसी के ठीक पहले उसने हजरत अमीर कुलाल (रहम.) को अपना आचार्य कहते हुए पुकारा। हजरत अमीर कुलाल (रहम.) के बीच में आ जाने से कुछ ऐसा हुआ कि उस शख्स की जान बख्श दी गयी। इस घटना से प्रभावित होकर हजरत शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) उनके मुरीद बन गये और कालांतर में उनके प्रमुख खलीफ़ा और आत्मिक उत्तराधिकारी भी बने, जिनके नाम पर इस सिलसिले का नाम सिलसिला-ऐ-आलिया नक्शबंदी पड़ा।

हजरत अमीर कुलाल (रहम.) का फ़रमाना था कि हमारे ख्वाजगान की निस्बत चार वजह से है, एक हजरत ख्वाजा खिज़्र (अलैहि.), दूसरे हजरत जुन्नैद बगदादी (रहम.), तीसरे बयाजिद बिस्तामी (रहम.) से जो इनको हजरत अली (रजि.) के जरिये से पहुंची और चोथे जो उनको हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) से मिली और इसी वजह से इनकी निस्बत को नमक (लावण्य, रौनक) मशायख कहते हैं। हमारा रोजा ईश्वर के अलावा किसी और को न मानना और नमाज़, जैसे अल्लाह को देख रहे हों, है।

हजरत अमीर कुलाल (रहम.) ने अपना शरीर बुधवार 2 जुमादा अल-ठानी 772 हिजरी (21/22 दिसम्बर 1370) को त्यागा। आपकी समाधि बुखारा के नजदीक सुखर में स्थित है।

हजरत अमीर कुलाल का समाधि परिसर (बुखारा)

हजरत अमीर कुलाल की समाधि (बुखारा)

ख्वाजा शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.)

'या इलाही मुझसे आमाले शनीअ: को छुड़ा,
शाह बहाउद्दीन अक्मल बासफा के वास्ते'
(छुड़ा दे मुझसे मेरे सब दुष्कर्म, हे परमात्मा !
पवित्र और पूर्ण कामिल शाह बहाउद्दीन के नाम पर)

हजरत शाह मुहम्मद बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) का जन्म बुखारा के नजदीक कस्र-अल-हिन्दुवान नामक एक गाँव में (जो बाद में कस्र-अल-अरिफान नाम से जाना गया) 717 हिजरी (1317 ई.) (या 14 मुहर्रम 718 हिजरी 18 मार्च 1318) में हुआ था। आपके जन्म से पहले से ही हजरत बाबा समासी (रहम.) जब कस्र-अल-अरिफान से गुजरा करते तो फ़रमाया करते थे कि मुझे इस गाँव से एक मर्द (महापुरुष) की खुशबू आ रही है जिसके नाम से इस सिलसिले का नाम प्रचलित होगा। कुछ समय बाद जब वे वहाँ से गुजर रहे थे तो फ़रमाया कि मुझे इतनी तीव्र खुशबू आ रही है कि लगता है उसका जन्म हो गया। इसके तीन दिन बाद एक बुज़ुर्ग व्यक्ति अपने पोते को लेकर हजरत बाबा समासी (रहम.) के पास आया। हजरत बाबा समासी (रहम.) ने बच्चे की तरफ़ देखा और अपने शिष्यों से बोले यही वह बच्चा है जिसके बारे में मैं कह रहा था। यह बच्चा लोगों को सतपथ की राह दिखायेगा और इसकी उच्च अध्यात्मिक स्थिति से सभी साधकों को लाभ मिलेगा। इसके रूहानी इल्म का प्रकाश मध्य एशिया के घर-घर में उजाला फैला देगा। इसके हृदय में परमात्मा का नाम नक्श होगा और इसके नाम से इस सिलसिले का नाम (नक्शबंदी) प्रचलित होगा। वक्त आने पर बाबा समासी (रहम.) ने बच्चे के दादा को उसे अपने पास लाने को कहा।

अट्ठारह वर्ष की आयु में शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) बाबा समासी (रहम.) के पास हाजिर हुए। इस समय तक बाबा समासी काफ़ी वृद्ध, लगभग 130 वर्ष के हो चले थे। शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) बाबा समासी (रहम.) की कृपादृष्टि में पहले से ही थे उन्होंने उन्हें अपने अध्यात्मिक बेटे के रूप में स्वीकारा और अपने खलीफ़ा हजरत अमीर कुलाल के सुपुर्द कर उनको उनका रूहानी पालन-पोषण करने को कहा और फ़रमाया कि वे (हजरत अमीर कुलाल) उनका (शाह बहाउद्दीन नक्शबंद) की तरबियत (शिक्षा-दीक्षा) में ढिलाई न बरतें वरना मैं तुम्हें मुआफ़ नहीं करूंगा।

कहा जाता है कि प्रारम्भ में शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) किसी की तरफ़ आकृष्ट थे। एक दिन जब आप उससे बड़ी तल्लीनता से एकान्त में बात कर रहे थे कि यकायक आपके कान में आवाज आई कि ऐ बहाउद्दीन ! क्या अभी वो वक्त नहीं आया कि सबकी तरफ़ से

मुँह फेरकर तू अकेला हमारी तरफ़ रुजूअ हो (हमारी तरफ़ ध्यान लगाये) ? यह सुनकर आपकी हालत बदल गयी और आप बेचैन हो गये और वहाँ से चल दिए । अँधेरी रात में एक नदी में कूदकर अपने पापों के लिये प्रायश्चित स्वरूप स्नान किया और व्यथित हृदय से नमाज़ पढ़ी ऐसे जैसे कि वे परमात्मा की हाजिरी में नमाज़ पढ़ रहे हों । उनके हृदय के पट परमात्मा के लिये खुल गये और उस पर पड़ा पर्दा हट गया । इस सबका आपके हृदय पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा और उन्हें लगा कि सारी दुनिया उनसे ओझल हो गयी है और वे परमात्मा के समक्ष प्रार्थना में लीन हैं ।

बाबा समासी (रहम.) के सान्निध्य में गुजारे हुए समय के बारे में शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) बताया करते थे कि वे फ़ज्र की नमाज़ (सुबह की नमाज़) के तीन घंटे पहले उठ जाया करते थे और फिर वुज़ू कर परमात्मा से प्रार्थना करते थे कि 'हे परमात्मा ! मुझे अपने प्रेम की वेदना सहन करने की शक्ति दे ।' एक दिन बाबा समासी (रहम.) ने उनकी तरफ़ देखा और फ़रमाया कि परमात्मा से इस प्रकार प्रार्थना करना ठीक नहीं । वह अपने बन्दों को दुःख-दर्द नहीं देना चाहता, हालाँकि कभी-कभी उन्हें तक्लीफ़ सहन करनी पड़ती है लेकिन परमात्मा से इस तरह प्रार्थना करना उसके प्रति बेअदबी है । परमात्मा से तो यही प्रार्थना करनी चाहिये कि गुलाम उसकी रजा में राज़ी रहे ।

कहा जाता है कि शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) की तीव्र उत्कंठा थी कि उन्हें ऐसा मार्ग मिले कि जिसका अनुसरण करने से साधक को परमात्मा का साक्षात्कार हो जाये । दैवीय प्रेरणा के रूप में ईश्वर की ओर से यह प्रश्न हुआ कि तूने जो इस रास्ते में कदम रखा है, किस लिये ? शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने कहा 'कि जो कुछ मैं कहूं या चाहूं वह हो ।' उत्तर मिला नहीं, जो कुछ हम कहते हैं या चाहते हैं वही होगा । शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने कहा "मैं ऐसा नहीं कर सकता । मुझे जो मैं कहूं या चाहूं, करने की इज़ाज़त होनी चाहिये वर्ना मुझे यह तरीकत (राह या सिलसिला) स्वीकार नहीं । मुझे फिर उत्तर मिला कि नहीं जो कुछ हम कहते हैं या चाहते हैं, वही होगा । मैंने पुन: कहा जो मैं कहूं या चाहूं, वह हो । तब मुझे पंद्रह दिन अकेला छोड़ दिया गया और मैं गहरे अवसाद से घिर गया । अंत में मुझे सुनाई दिया 'ओ बहाउद्दीन ! जो तुम चाहते हो, तुम्हें दिया जायेगा ।' मैं बहुत प्रसन्न था, मैंने कहा, मुझे ऐसा रास्ता चाहिये जिस पर चलने वाला सीधा परमात्मा के हुज़ूर में हाजिर हो जाये । मुझे मुशाहद: (दिव्य दर्शन) हुआ और आवाज सुनाई दी कि जो तुम्हे चाहिये वो दिया गया ।"

शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) का कहना है कि 'एक दफ़ा मेरी ऐसी स्थिति हो गयी कि पूजा-आराधना में मन नहीं लगता (रूहानी कब्ज़) और यह स्थिति लगातार छ: महीने तक बनी रही । मुझको यकीन हो गया कि रूहानी विद्या मेरी किस्मत में नहीं है । लाचार होकर सोचा कि कोई दुनियावी पेशा अपना लूं कि रास्ते में एक मस्जिद के दरवाजे पर यह शेर लिखा हुआ नजर पड़ा, जिसे पढ़ते ही मेरी हालत बदल गयी और पुरानी हालत लौट आई ।

'ऐ दोस्त बेया कि मा सुराएम, बेगाना मशौ कि आशनाएम'

(हम तेरे दोस्त हैं, ऐ दोस्त, पास आजा मेरे,
गैरियत न बरत हमसे कि हम आशनां हैं तेरे)

शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) का फ़रमाना है कि एक बार परमात्मा की चाह में वे अपने होशो-हवाश गवाएं बहुत समय से इधर-उधर भटक रहे थे। इस दशा में उन्हें इल्हाम (अंत:प्रेरणा) हुआ कि वे अपने शैख़ हजरत अमीर कुलाल (रहम.) के पास उनके घर जाएँ। चलते-चलते उनके पाँव लहू-लुहान हो गये और घुप्प अँधेरी रात में वे उनके घर पहुँचे। उस समय हजरत अमीर कुलाल (रहम.) कुछ लोगों के साथ बैठे हुए थे। शाह नक्शबंद को अपने दरवाजे पर देख हजरत अमीर कुलाल (रहम.) ने अपने शिष्यों से कहा कि वे उन्हें वहाँ से चले जाने के लिये कह दें क्योंकि वे नही चाहते थे कि शाह नक्शबंद घर के अंदर आएं। उन लोगों ने शाह नक्शबंद को घर के बाहर कर दिया। वह एक ठंडी और अँधेरी रात थी और शाह नक्शबंद के शरीर पर एक पुराने वस्त्र के सिवाय और कुछ न था। शाह नक्शबंद का अहंकार इस तिरस्कार पर उन्हें अपने शैख़ पर विशवास से डिगाने लगा लेकिन परमात्मा की असीम दया व कृपा से उन्होंने अपने अहंकार पर काबू पाया। थकान और निराशा से चूर शाह नक्शबंद ने अपने अहंकार को अपने शैख़ के चरणों में समर्पित कर दिया। उन्होंने अपना सिर अपने शैख़ की दहलीज पर रख दिया और रात भर उन सर्द हवाओं में ठिठुरते काँपते वहीँ पड़े रहे इस प्रण के साथ कि जब तक उनके पूज्य शैख़ उन्हें पुन: स्वीकार नहीं कर लेते, वे अपना सर उनकी दहलीज से नहीं हटायेंगे। सर्द हवाओं और बर्फ ने उनके शरीर को जमा दिया लेकिन उनका हृदय परमात्मा और अपने शैख़ के प्रेम से भर रहा था। सुबह होने पर हजरत अमीर कुलाल (रहम.) अपने घर से बाहर तशरीफ़ लाये और अनजाने में ही उनका पाँव शाह नक्शबंद के सर पर जा पड़ा जो अब तक उनकी दहलीज पर ही टिका हुआ था। हजरत अमीर कुलाल (रहम.) का हृदय दया और करूणा से भर आया और तुरंत ही उन्होंने शाह नक्शबंद को घर के भीतर ले लिया और अपनी कृपादृष्टि से एक ही क्षण में परमात्मा के प्रेम से परिपूर्ण कर दिया। फिर बड़ी ही कोमलता से हजरत अमीर कुलाल (रहम.) ने स्वयं अपने हाथों से शाह नक्शबंद के पाँवों के कांटे निकले और उनके जख्मों को साफ़ किया। अपनी कृपा से मालामाल कर हजरत अमीर कुलाल (रहम.) ने पल भर में ही शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) को अपनी तमाम रूहानी दौलत बख्श दी।

शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) को अपनी तालीम के शुरूआती दिनों में एक बार यह प्रेरणा हुयी कि वे शैख़ अहमद अल-अजफ़रनुई की समाधि पर हाजिर हों। जब वे वहाँ पहुँचे तो उन्होंने देखा कि दो अजनबी व्यक्ति एक घोड़े को अपने साथ लिये उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्होंने शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) को उस घोड़े पर सवार किया और उन्हें शैख़ मजदाकिन की समाधि की ओर रवाना कर दिया। वहाँ पहुँच कर शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने अपना हृदय शैख़ मजदाकिन के हृदय की ओर उन्मुख किया और मुराक़ब: (ध्यान)

में बैठ गये । थोड़ी ही देर में उन्हें आभास हुआ कि एक बहुत बड़े सिंहासन पर एक दिव्य महापुरुष विराजमान हैं जो हर ओर दृष्टिगोचर हो रहे थे (छाये हुए थे) और वे (शाह बहाउद्दीन नक्शबंद) उन महापुरुष को जानते थे । उन दिव्य महापुरुष को कई अन्य महापुरुषों ने घेरा हुआ था जिनमें शैख़ बाबा समासी (रहम.) और शैख़ अमीर कुलाल (रहम.) भी शामिल थे । शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) यह दृश्य देखकर अत्यंत चकित थे । उनका हृदय उन दिव्य महापुरुष की ओर खिंचा जा रहा था और साथ-साथ ही उन्हें कुछ भय भी लग रहा था । उन पर तब ये जाहिर हुआ कि वे महापुरुष हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) हैं जो उनकी आत्मा को तब से सिंचित कर रहे थे जब उनकी आत्मा परमात्मा के समक्ष एक अणु के रूप में विद्यमान थी । उन्हें यह भी ज्ञात हुआ कि उस संत-समूह में, जो हजरत गज्देवानी (रहम.) को घेरे हुए था, सिलसिले के अन्य बुज़ुर्ग संत-शैख़ अहमद, शैख़ कबीर अल-औलिया, हजरत आरिफ रिवाकरी एवं उनके शैख़ के शैख़ मुहम्मद बाबा समासी उपस्थित थे, जिन्होंने उन्हें इसी जन्म में हजरत अजीजाँ का चोगा दिया था ।

शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) पर यह भी जाहिर हुआ कि शैख़ मुहम्मद बाबा समासी ने हजरत अजीजाँ (रहम.) का जो चोगा उन्हें काफ़ी समय पहले दिया था और अभी भी उनके घर में रखा हुआ था, उसने उन्हें बहुत सी मुसीबतों से बचाया था । उन्हें यह चोगा अपने गुरुदेव शैख़ अमीर कुलाल (रहम.) को सौंप देने का आदेश हुआ । इसके बाद हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) ने उन्हें सुलूक के बारे में बताया और कहा कि अभी उन्हें (शाह बहाउद्दीन नक्शबंद) को अपने भीतर और सामंजस्य पैदा करना होगा ताकि उस अलक्ष्य के प्रकाश को उनके भीतर भरा जा सके और वे उसके रास्तों से परिचित हो सकें ।

अगले दिन शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने अपने घर में उस चोगे के बारे में पूछताछ की और उस चोगे को देखकर उनका हृदय द्रवित हो आया । वे उस चोगे को लेकर शैख़ अमीर कुलाल (रहम.) के पास हाजिर हुए । शैख़ अमीर कुलाल (रहम.) ने कुछ देर शांत रहकर फ़रमाया कि 'मुझे कल रात्रि में ज्ञात हो गया था कि यह चोगा जो हजरत अजीजाँ (रहम.) का है, तुम उसे लेकर मेरे पास आ रहे हो । मुझे आदेश हुआ है कि इस चोगे को सात अलग-अलग तहों में लपेट कर रखूँ ।' फिर वे शाह नक्शबंद को अपने साथ अपने पूजा कक्ष में ले गये और उन्हें 'अनहद नाद' की बख्शीश दी ।

अनहद नाद की बख्शीश पाकर शाह नक्शबंद (रहम.) उसके अभ्यास में, जो कि सभी अभ्यासों में सर्वोत्तम माना गया है, तल्लीन हो गये । इसके अलावा वे विद्वानों से शरअ: और हदीस का ज्ञान प्राप्त करने लगे और हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के साहबाओं के चरित्रों के बारे में जानकारी ने उनके अंदर एक खासा परिवर्तन पैदा कर दिया ।

'अल-बाहजत अस-सनैय्या' नामक पुस्तक में कहा गया है कि हजरत ख्वाजा महमूद इन्जीर फगनवी (रहम.) के वक्त से लेकर हजरत अमीर कुलाल (रहम.) के समय तक वे संत

जब एकत्र होते तो जिक्र जहर अर्थात ऊँची आवाज़ में जाप किया करते थे और एकाकी होने पर मन में परमात्मा की याद किया करते थे । शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ऐसे मौकों पर जब हजरत अमीर कुलाल (रहम.) और उनके शिष्यगण एकत्र होकर जिक्र जहर करते तो वे वहाँ से हट जाते और एकांत में बैठकर अनहद नाद का अभ्यास करते । उनके अन्य गुरु-भाई इस बात पर उनसे नाखुश रहते थे लेकिन हजरत अमीर कुलाल (रहम.) का फ़रमाना था कि परमात्मा ने शाह बहाउद्दीन नक्शबंद पर वह इनायत बख्शी है जिसका इल्म औरों को नहीं है और वे जो शाह नक्शबंद के इस आचरण से नाखुश हैं, हक़ीक़त नहीं जानते और गलत हैं । फिर उन्होंने यह भी फ़रमाया कि उन्होंने अपने गुरुदेव हजरत बाबा समासी (रहम.) की आज्ञानुसार शाह नक्शबंद को अपनी तरफ़ से सम्पूर्ण आत्मिक ज्ञान का भण्डार सौंप दिया है और अब शाह नक्शबंद अन्य महापुरुषों से और ज्ञान प्राप्त करने के लिये स्वतंत्र हैं ।

शाह नक्शबंद (रहम.) ने कहा कि एक बार वे एक ईश्वर-प्रेमी संत से मिले जिन्होंने उनसे कहा कि तुम अपने अहं की परीक्षा लो । यदि एक सप्ताह भूखे रहने पर तुम्हारा मन तुमसे विद्रोह करे तो तुम इसे नियंत्रण में रख सकते हो या नहीं ? उन्होंने शाह नक्शबंद से जरुरतमंदों की सहायता करने, कमजोरों की सेवा करने, दुखी हृदय वालों को प्रोत्साहित करने और विनम्रता व सहनशीलता अपनाने के लिये कहा । शाह नक्शबंद (रहम.) ने कई दिन तक इसका अभ्यास किया जिसके बाद उन्हें पशुओं की सहायता करने, रुग्ण पशुओं की सेवा करने और उनका भोजन ढूँढने में उनकी मदद करने के लिये कहा । शाह नक्शबंद (रहम.) ने इस आज्ञा का पालन किया एवं वे इस हद तक पहुँच गये कि यदि सामने से किसी पशु को आते देखते तो उसके लिये रास्ता छोड़कर एक तरफ़ हट जाते ।

शाह नक्शबंद (रहम.) को इसके बाद इस सिलसिले के कुत्तों की देखभाल करने और उनसे सहायता करने की प्रार्थना करने के लिये कहा गया क्योंकि उनमें से एक के द्वारा शाह नक्शबंद (रहम.) को एक अनोखा अनुभव मिलने वाला था । शाह नक्शबंद (रहम.) ने इस आदेश का पालन किया । एक दिन जब वे उनमें से एक के साथ थे, उन्हें भावावेश और आनंदातिरेक की स्थिति का आभास हुआ । शाह नक्शबंद (रहम.) उस कुत्ते के सामने क्रन्दन करने लगे । वह कुत्ता अपनी पीठ के बल लेटकर आकाश की ओर अपने पंजों को उठाकर एक विचित्र आवाज़ करने लगा । शाह नक्शबंद (रहम.) हाथ उठाकर परमात्मा से दुआ मांगने लगे और उस कुत्ते के लिये 'आमीन' कहने लगे, जब तक कि वह शांत नहीं हो गया । इस अनुभव ने शाह नक्शबंद (रहम.) को महसूस कराया कि वे प्रत्येक मानव और प्रत्येक प्राणी का एक हिस्सा हैं ।

शाह नक्शबंद (रहम.) अपने भोजन के विषय में बहुत सावधानी बरतते थे । वे अपने लिये स्वयं जौं उगाते, पीसते व स्वयं आटा गूथ कर रोटियां सेकते । साधक और विद्वान सभी उनके हाथों का बना खाना प्राप्त करना अपना सौभाग्य समझते । वे गरीबों के लिये अपने हाथों से भोजन तैयार करते और फिर बड़े प्रेम से आग्रह सहित उन्हें खाने के लिये निमंत्रित

करते और उनसे कहते कि वे परमात्मा की याद में उस खाने को खाएं । शाह नक्शबंद (रहम.) का कहना था कि परमात्मा को पाने के लिये उसकी याद में खाना ग्रहण करना एक मुख्य आवश्यकता है । भोजन से शरीर को उर्जा मिलती है और जागरूक होकर भोजन ग्रहण करने से पवित्रता हासिल होती है । उन्हें गरीबों और असहायों से अत्यंत प्रेम था और वे अपने शिष्यों को इमानदारी से कमाने और उस कमाई को गरीबों और असहायों पर खर्च करने को कहते । वे स्वयं अक्सर निराहार रहते और यदि कोई अथिति आ जाये तो उसका स्वागत-सत्कार करते और उसी के साथ अपना उपवास खत्म करते । इस विषय में वे हजरत अबुल हसन खिरकानी (रहम.) का अनुसरण करते जिन्होंने अपनी पुस्तक में लिखा है कि अपने मित्रों और परिजनों के साथ सामंजस्य रखना चाहिये लेकिन उनके दुष्कृत्यों में नहीं । यदि तुम उपवास कर रहे हो और कोई आ जाये तो तुम्हे उसके साथ बैठकर भोजन में उसका साथ देना चाहिये । इस सिद्धांत के पीछे रहस्य यह है कि व्यक्ति को अपनी पूजा, उपासना एवं व्रत-उपवास को गुप्त रखना चाहिये । यदि कोई इन्हें उजागर करता है यह कहकर कि मैं व्रत-उपवास कर रहा हूँ तो उसे इस बात का अहंकार हो सकता है जिससे उसका सुफल नष्ट हो जायेगा ।

शाह नक्शबंद (रहम.) को एक बार एक मछली भेंट की गयी, जिसे उन्होंने गरीबों में बाँट दिया । उनमें एक बहुत ही पवित्र आचरण वाला लड़का भी था । शाह नक्शबंद (रहम.) ने उस लड़के को भी उन लोगों के साथ भोजन करने को कहा । परन्तु उस लड़के ने बहुत आग्रह करने पर भी शाह नक्शबंद (रहम.) का निमन्त्रण स्वीकार नहीं किया । लड़के को मनाने के लिये शाह नक्शबंद (रहम.) ने बदले में उसे अपने सारे रोजों का फल देने की बात कही लेकिन वह फिर भी नहीं माना । लड़के का हाल देखकर शाह नक्शबंद (रहम.) ने फ़रमाया कि हजरत बयाजिद बिस्तामी (रहम.) के साथ भी ऐसी ही एक घटना पेश आई थी । उसके कुछ समय बाद लोगों ने देखा कि वह लड़का दुनियावी माया जाल में उलझ कर रह गया ।

शाह नक्शबंद (रहम.) ने जिस घटना का जिक्र किया वह हजरत बयाजिद बिस्तामी (रहम.) के एक सेवक और शैख़ अबू तुरब अन-नक्शाबी से सम्बंधित है । शैख़ अबू तुरब अन-नक्शाबी ने उस सेवक को अपने साथ बैठकर भोजन के लिये आमंत्रित किया पर उसने कहा कि वह उपवास कर रहा है । शैख़ अबू तुरब अन-नक्शाबी ने सेवक को बदले में दो साल के रोजों का फल देने की बात कही लेकिन उसने भोजन करने से मना कर दिया । इस पर हजरत बयाजिद बिस्तामी (रहम.) ने शैख़ अबू तुरब से कहा कि वे उसे अपने हाल पर छोड़ दें क्योंकि परमात्मा ने उसे अपनी कृपा योग्य नहीं समझा है । बाद में वह व्यक्ति अपने मार्ग से भटक कर चोरी करने लगा ।

साधना किस ऊँचाई तक ले जा सकती है इस बारे में शाह नक्शबंद (रहम.) ने मुहम्मद जाहिद और अपने से सम्बंधित एक घटना बताई । वे दोनों एक बार रेगिस्तान में मिट्टी खोदने के लिये गये । वहाँ वे दोनों अध्यात्मिक चर्चा में इस कदर खो गये की मिट्टी खोदने

की बात तो भूल ही गये और उस चर्चा में ही तल्लीन हो गये । मुहम्मद जाहिद के यह पूछने पर कि पूजा साधक को किस ऊंचाई तक ले जा सकती है, शाह नक्शबंद (रहम.) ने उत्तर दिया कि पूजा मनुष्य को उस ऊंचाई तक ले जा सकती है कि यदि वह किसी की तरफ़ देखकर मृत्यु का इशारा करे तो वह व्यक्ति तुरंत मर जायेगा । यह कहते-कहते अनजाने में शाह नक्शबंद (रहम.) का हाथ मुहम्मद जाहिद की ओर उठ गया । तुरंत मुहम्मद जाहिद निष्प्राण होकर नीचे गिर गये । शाह नक्शबंद (रहम.) बहुत चिंतित हो उठे क्योंकि रेगिस्तान की गर्मी के कारण मुहम्मद जाहिद का निष्प्राण शरीर शीघ्रता से ख़राब होने लगा था । तभी उनके हृदय में प्रेरणा हुयी कि वे कहें, 'ओ मुहम्मद जाहिद ! पुन: जीवित हो जाओ ।' शाह नक्शबंद (रहम.) ने तीन बार यह दोहराया और धीरे-धीरे मुहम्मद जाहिद के शरीर में आत्मा का पुन: प्रवेश होने लगा और उनके शरीर में जीवन के चिन्ह लक्षित होने लगे । जब शाह नक्शबंद (रहम.) ने इस घटना का जिक्र अपने गुरुदेव से किया तो उन्होंने फ़रमाया कि परमात्मा ने तुम पर अपना एक नया रहस्योद्घाटन किया है ।

शैख़ अल्लाउद्दीन अत्तार (रहम.) जो शाह नक्शबंद (रहम.) के खलीफ़ा थे, उनके बारे में बताते थे कि एक बार शाह नक्शबंद (रहम.) एक गाँव के निकट एक पहाड़ की चोटी पर बैठे हुए थे कि तभी उनके हृदय में ख्याल आया कि बादशाहों को संतों के चरणों में शीश झुकाना चाहिये क्योंकि संत उस सर्वोपरि परमात्मा के प्रियजन होते हैं । उनके दिल से अभी यह ख्याल गुजरा ही था कि सुल्तान अब्दुल्ला काजघन जो ट्रांसओक्सीआना का बादशाह था और उधर शिकार के लिये आया हुआ था, शाह नक्शबंद (रहम.) के समक्ष हाजिर हुआ और उसने बड़ी विनम्रता से शाह नक्शबंद (रहम.) के चरणों में झुककर यह कहते हुए प्रणाम किया कि वह एक विशेष खुशबू सूंघते हुए और उसका पीछा करते हुए शाह नक्शबंद (रहम.) के समक्ष आ पहुंचा जो एक शक्तिशाली प्रकाश पुंज से घिरे बैठे थे ।

एक बार उनके एक अनुयायी को खबर मिली कि उसका भाई शमशुद्दीन मर गया है । जब उसने यह बात शाह नक्शबंद (रहम.) के समक्ष कही तो वे बोले यह सम्भव नहीं है क्योंकि वे उसे जीवित देख रहे हैं और वहाँ उसकी हाजिरी को महसूस कर रहे हैं । उन्होंने अभी यह वाक्य बोला ही था कि शमशुद्दीन शाह नक्शबंद (रहम.) के सामने आ खड़ा हुआ ।

सैय्यद महमूद ने जो शाह नक्शबंद (रहम.) के शिष्य थे अपनी दीक्षा किस प्रकार हुयी इस बारे में बताया कि एक रात्रि में उन्होंने हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के स्वप्न में दर्शन किये । हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के साथ एक भव्य पुरुष विराजमान थे । सैय्यद महमूद ने हजरत पैगम्बर (सल्ल.) से विनती की कि यह उसके भाग्य में नहीं था कि वह हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के वक्त उनके सान्निध्य में रह पाता, लेकिन उस सौभाग्य की बराबरी करने के लिये अब वह क्या कर सकता है ? हजरत पैगम्बर (सल्ल.) ने उससे फ़रमाया कि वह उनके पास बैठे शाह नक्शबंद (रहम.) का अनुसरण करे और उनका सान्निध्य प्राप्त करे । सैय्यद महमूद ने शाह नक्शबंद (रहम.) को पहले कभी नहीं देखा था । सुबह उठने पर उसने शाह

नक्शबंद (रहम.) का नाम और उनकी आकृति का विवरण लिखकर अपने पुस्तकालय में एक किताब में रख दिया । लम्बे समय के बाद जब वह एक दूकान पर खड़ा था उसने एक भव्य और दैदीप्यमान व्यक्ति को वहाँ आकर कुर्सी पर बैठते देखा । तुरंत सैय्यद महमूद को अपना स्वप्न याद हो आया और उसने उनसे पूछा कि क्या वे उसके घर आकर उसका आतिथ्य स्वीकार करेंगें ? उन्होंने निमन्त्रण स्वीकार कर लिया और तुरंत स्वयं आगे बढ़कर सैय्यद महमूद के घर की ओर चलने लगे । सैय्यद महमूद उनके व्यक्तित्व से बेहद विस्मित था । वे सैय्यद महमूद के घर पहुंचकर घर के अंदर चले आये और पुस्तकालय में रखी सैकड़ों पुस्तकों में से उन्होंने एक पुस्तक निकाली । यह वही पुस्तक थी जिसमें सैय्यद महमूद ने शाह नक्शबंद (रहम.) का नाम और उनकी आकृति का विवरण लिखकर रख छोड़ा था । उसके साथ ही सैय्यद महमूद को लगा जैसे एक अनोखे प्रकाश वलय ने उसे घेर लिया हो । शाह नक्शबंद (रहम.) ने तब सैय्यद महमूद को स्वीकार कर दीक्षित किया ।

एक बार एक व्यक्ति ने शाह नक्शबंद (रहम.) से अपनी आत्मिक उन्नति हेतु पथ-प्रदर्शन के लिये विनती की । शाह नक्शबंद (रहम.) का उत्तर बहुत विचित्र था । उन्होंने उस व्यक्ति को कोई भी धार्मिक ग्रन्थ पढ़ने से मना किया और वहाँ से तुरंत चले जाने को कहा । एक अन्य व्यक्ति जो यह सब देख रहा था और उनके इस व्यवहार से बहुत क्षुब्ध था, उसने अपनी नाराजगी उन पर व्यक्त की । शाह नक्शबंद (रहम.) की इच्छा हुयी कि वे उसको अपने इस व्यवहार का औचित्य प्रदर्शित कर समझाएं । तुरंत उस कमरे में जहाँ वे बैठे थे, एक चिड़िया उड़ती हुयी अंदर आ गयी । वापस बाहर निकलने का रास्ता न पाकर वह कमरे में इधर-उधर चक्कर लगाने लगी । शाह नक्शबंद (रहम.) यह सब देख रहे थे और जैसे ही वह चिड़िया उस कमरे की एकमात्र खुली खिड़की के पास जाकर बैठी, शाह नक्शबंद (रहम.) ने जोर से ताली बजाई । इस आकस्मिक आवाज से भोचक्क हो वह चिड़िया उस खुली खिड़की से तुरंत बाहर को खुले आसमान की तरफ़ उड़ गयी । शाह नक्शबंद (रहम.) ने फ़रमाया, 'ताली की आवाज ने चिड़िया को निश्चित ही चौंकाया ही नहीं बल्कि डरा भी दिया होगा, और वही उसकी आजादी का रास्ता बना, क्या तुम इससे सहमत नहीं हो ?'

बुखारा के सुलतान से मिलने एक राजदूत आ रहा था । उन्होंने शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) को सलाह मश्विरा के लिये आमंत्रित किया लेकिन शाह नक्शबंद (रहम.) ने यह कहकर माना कर दिया कि वे उस वक्त कस्र अल-अरिफान की हवा पर निर्भर हैं और उस हवा को वे अपने साथ सुलतान के पास नहीं ला सकते । सुलतान इस उत्तर से नाखुश तो हुआ लेकिन कुछ कारण से उस राजदूत का आना टल गया और मामला आया-गया हो गया । कुछ महीनों बाद जब सुलतान अपने दरबार में बैठा था, एक व्यक्ति उस पर कातिलाना हमला करने उछला । तत्काल शाह नक्शबंद (रहम.) दरबार में उपस्थित हुए और उन्होंने लपककर उस व्यक्ति से हथियार छीन लिया । सुलतान ने अपनी कृतज्ञता व्यक्त करते हुए कहा, "तुम्हारी बेअदबी (राजदूत के आने के वक्त सुलतान का आमन्त्रण अस्वीकार करने के

कारण) के बावजूद मैं तुम्हारा ऋणी हूँ ।" शाह नक्शबंद (रहम.) ने जवाब दिया, "जो जानते हैं, उनकी विनम्रता आवश्यकता होने पर उपस्थित होने में है, न कि उनके इंतज़ार में समय बिताने में जो आने वाले नहीं हैं ।"

शाह नक्शबंद (रहम.) ने अपने जीवन में दो बार हज यात्रा की । आपने 1389 में अपना शरीर त्यागा । आपकी समाधि बुखारा में स्थित है एवं बहुत ही भव्य है जहाँ हजारों लोग रोज आपकी कृपा व आशीर्वाद पाने के लिये हाजिर होते हैं ।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

शिष्य को अपने शैख़ का पूर्ण अदब रखना चाहिये । यदि शिष्य को शैख़ की किसी बात पर भ्रम होता है तो उसे तसल्ली रखनी चाहिये और संदेह नहीं करना चाहिये । यदि वह अपने शुरूआती दौर में है तो सम्भव है कि वह अपने गुरुदेव से पूछ ले, लेकिन एक परिपक्व शिष्य को यह हक नहीं है कि वह अपने गुरुदेव से कुछ पूछे या इस बात पर भ्रमित हो जो अभी उसकी समझ से परे है ।

इस मार्ग में गुरु और शिष्य के बीच भौतिक दूरी कोई मायने नहीं रखती क्योंकि जो व्यक्ति अपने गुरु के बताये मार्ग का अनुसरण करता है और गुरु से प्रेम करता है उसका उस प्रेम की धारा से निरंतर सिंचन होता है और उसे अपने नित्य जीवन में गुरु द्वारा प्रकाश प्राप्त होता रहता है ।

नाद-अभ्यास की अनुमति सिद्धहस्त महापुरुष द्वारा दी जानी चाहिये । इसका पूर्ण लाभ तभी मिल सकता है क्योंकि एक सिद्धहस्त द्वारा फैंका गया तीर ही निशाने पर लगता है ।

ख्वाजा शाह बहाउद्दीन नक्शबंद का समाधि परिसर (बुखारा)

ख्वाजा शाह बहाउद्दीन नक्शबंद के समाधि परिसर में 1000 वर्ष पुराना शहतूत का पेड़ (बुखारा)

ख्वाजा शाह बहाउद्दीन नक्शबंद की समाधि (बुखारा)

ख्वाजा शाह बहाउद्दीन नक्शबंद की समाधि (बुखारा)

शैख़ अल्लाउद्दीन अल-अत्तार (रहम.)

'या इलाही मुझपे होए नूरे वहदत आश्कार,
शाह अल्लाउद्दीन मुर्शिद रहनुमा के वास्ते'
(अद्वैतता का प्रकाश हो प्रकट मुझ पर, हे परमात्मा !
पथ प्रदर्शक सतगुरु शाह अल्लाउद्दीन के नाम पर)

शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) के प्रिय शिष्य और प्रमुख खलीफ़ा ख्वाजा अल्लाउद्दीन अत्तार (रहम.) का जन्म आठवीं सदी हिजरी में हुआ । बचपन से ही आपका रुझान अध्यात्म की ओर था । अपने पिता की मृत्यु के बाद आपने उनकी सम्पत्ति का उत्तराधिकारी बनना स्वीकार नहीं किया और सारी सम्पत्ति अपने दो भाइयों में बाँट दी । इसके बाद वे अनासक्त भाव से पवित्र एवं सयंमित जीवन व्यतीत करते बुखारा के एक मदरसे में विद्याध्ययन में लगे रहे । अभी आप किशोर ही थे कि शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने आपकी पूज्य माताजी से कहा कि जब अल्लाउद्दीन बालिग हों (युवावस्था को प्राप्त हों) तो मुझे खबर करना । कुछ ही समय में शैख़ अल्लाउद्दीन (रहम.) सभी विद्याओं में पारंगत हो गये, विशेषकर इस्लाम के सम्पूर्ण ज्ञान में ।

जब शैख़ अल्लाउद्दीन (रहम.) बालिग हुए उन्होंने शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) की सुपुत्री से विवाह करने का प्रस्ताव किया । एक रोज शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) कस्र आरिफान से बुखारा तशरीफ़ लाये और उस मदरसे में गये जहाँ शैख़ अल्लाउद्दीन (रहम.) विद्याध्ययन कर रहे थे । वहां आपने देखा कि शैख़ अल्लाउद्दीन (रहम.) के आलावा सब लोग सो रहे थे केवल शैख़ अल्लाउद्दीन (रहम.) एक कोने में फटे हुए बोरिया पर ईंट का सिराहना लगाये क़ुरआन शरीफ पढ़ने में खोये हुए थे । शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने अपनी अन्तर्दृष्टि से देखने पर पाया कि शैख़ अल्लाउद्दीन (रहम.) परमात्मा के हुज़ूर में हाजिर हैं । उन्होंने उसी स्तर पर शैख़ अल्लाउद्दीन (रहम.) को आवाज़ दी व कहा कि उन्हें स्वप्न में ज्ञात हुआ है कि हजरत पैगम्बर (सल्ल.) ने शैख़ अल्लाउद्दीन (रहम.) के प्रस्ताव को मंजूरी दे दी है । शैख़ अल्लाउद्दीन (रहम.) ने उत्तर दिया कि वे अत्यंत गरीब हैं एवं उनके पास अपने लिये या होने वाली पत्नी के लिये कुछ भी नहीं है क्योंकि वे अपनी सारी सम्पत्ति पहले ही अपने भाइयों को दे चुके हैं । शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने फ़रमाया, 'प्रिय बेटे चिंता न करो । परमात्मा ने जो तुम्हारे भाग्य में लिखा है वह तुम्हें हर हाल में मिलेगा और वो ही तुम्हारी देखभाल करेगा ।

शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) की सुपुत्री के साथ विवाह के बाद शैख़ अल्लाउद्दीन (रहम.) अध्यात्म विद्या हासिल करने के लिये उनके पास जाने लगे और शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) भी उन पर विशेष तवज्जोह देने लगे और थोड़े ही समय में उन्हें अध्यात्मिक साधना में हर तरह से पारंगत कर पूर्ण समर्थ सतगुरु की स्थिति तक पहुंचा दिया और अपने सभी तालिबों (जिज्ञासुओं-साधकों) को उनके सुपुर्द कर दिया । शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) फ़रमाया करते थे कि अल्लाउद्दीन ने मुझे तालिबों को अध्यात्म की शिक्षा दीक्षा देने के भार से मुक्त कर दिया है ।

शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) शैख़ अल्लाउद्दीन (रहम.) को हमेशा अपने पास बैठाया करते और उन पर विशेष निगाह रखते थे । किसी ने उनसे इसका कारण पूछा तो आपने फ़रमाया कि मैं उसको अपने पास बिठलाता हूँ ताकि नफ्स (मन-इच्छायें) का भेड़िया उसको न खाए । उसके नफ्स का भेड़िया उसके घात में है, इसलिए हर क्षण उसकी आंतरिक स्थिति की देखभाल करता हूँ । मेरी हार्दिक अभिलाषा है कि अल्लाउद्दीन ख़ुदा के नूर का मजहर (अक्स) हो जाये ।

एक बार शैख़ अल्लाउद्दीन (रहम.) शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) के पास खड़े थे और किसी बात पर दिल की कैफियत के बारे में बात निकल आई । शैख़ अल्लाउद्दीन (रहम.) फरमाते हैं कि “उन्होंने मेरे एक पैर पर अपना एक पैर रखा । तत्काल मेरी एक विचित्र स्थिति हो गयी । मुझे अपने हृदय में समस्त ब्रह्माण्ड दिखलाई देने लगा । जब वह स्थिति समाप्त हुयी, आपने फ़रमाया दिल की कैफियत यह है । तू दिल की दशा का बोध कब कर सकता है । दिल की महानता वर्णन से परे है । इस हदीस का भेद कि ‘जो कुछ जमीन आसमान में नहीं समा सकता, वह दिल में समा सकता है’ कुछ और सूक्ष्म बातों से सम्बंध रखता है । जो दिल को पहचाने सो पहचाने ।”

कहा जाता है कि एक बार बुखारा के विद्वानों में इस बात पर बहस छिड़ गयी कि क्या इस जगत में परमात्मा को देखना संभव है ? उनमें से कुछ विद्वान इसे संभव (ख्यत हक़) और कुछ असंभव (अदम ख्यत हक़) कह रहे थे । ख्यत हक़ अर्थात ईश्वर का साक्षात्कार और अदम ख्यत हक़ अर्थात ईश्वर का साक्षात्कार नहीं किया जा सकता, और मनुष्य जो करता है स्वयं करता है, ईश्वर कुछ नहीं करता । अदम ख्यत हक़ के मानने वाले ‘मोतज़ला’ सम्प्रदाय के अनुयायी कहे जाते हैं । दोनों समूह के विद्वानों ने आपस में विचार कर इस मसले का हल शैख़ अल्लाउद्दीन (रहम.) से करवाने का निर्णय किया । अत: वे इस विवाद के समाधान के लिये शैख़ अल्लाउद्दीन (रहम.) के समक्ष उपस्थित हुए और उनसे प्रार्थना करने लगे कि वे उन्हें हक़ीक़त को जानने में सहायता करें । शैख़ अल्लाउद्दीन (रहम.) ने उन लोगों को जिनका मानना था कि ईश्वर का साक्षात्कार नहीं किया जा सकता, अपने पास तीन दिन रूकने को कहा और कहा कि इन तीन दिन वे पवित्रतापूर्वक मौन रखें और उनके सतसंग में हाजिर रहें । इस दौरान शैख़ अल्लाउद्दीन (रहम.) ने अपनी तवज्जोह (आत्मिक उर्जा का

प्रसार) उन पर दी जिसके परिणामस्वरूप तीसरे दिन वे लोग एक दिव्य आनंद में मग्न हो बेखुद हो गये । जब वे अपनी स्वभाविक स्थिति में लौटे तो शैख़ अल्लाउद्दीन (रहम.) के चरणों में क्रंदन करे लौटने लगे व कहने लगे कि हम मानते हैं कि आपका यह कथन पूर्णतया सत्य है कि परमात्मा को इस जीवन में अनुभव किया जा सकता है । उन्होंने एक कविता भी रची जिसका भावार्थ है:

दृष्टिहीन, हम नहीं जानते,
कैसे पायें उस परमपिता को,
पवित्रता का दिया जला तो जाना,
संभव है देख पाना उस अलक्षित को ।

आपने बीस रजब 802 हिजरी (सन 1400) में अपना शरीर त्यागा और आपकी समाधि जगनयाँ, बुखारा में स्थित है । आपके एक मुरीद ने ख्वाब में देखा कि आपने फ़रमाया कि 'अल्लाह तआला ने मुझ पर तरह-तरह की मेहरबानियाँ फरमायी, जिनमें से एक यह है कि जो कोई मेरी कब्र से चालीस फरसंग (एक फरसंग-सवा दो मील के लगभग) की दूरी तक दफन होगा वह बख्शा जायेगा ।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

किसी को भी सूफ़ी-संतों का हृदय नहीं दुखाना चाहिये । यह जानना आवश्यक है कि उनके समक्ष कैसे आचरण किया जाये, क्योंकि उनकी राह अत्यंत बारीक़ होती है । आचरण की शुद्धता इस मार्ग की पहली आवश्यकता है । लेकिन कोई सोचे कि उसका आचरण ठीक है तो यह भी उचित नहीं क्योंकि ऐसा सोचना मन में अहंकार पैदा कर सकता है ।

शिष्य के हृदय में गुरु के प्रति प्रेम उसमें दिव्य ज्ञान को प्राप्त करने की पवित्रता पैदा करता है । इस दिव्य ज्ञान का न तो प्रारम्भ है न अंत । शिष्य को अपने गुरु से कुछ नहीं छिपाना चाहिये, उसे अपनी मंजिल गुरु की संतुष्टि व प्रेम के बिना नहीं मिल सकती । अत: हर हाल में उसे अपने गुरु की संतुष्टि व प्रेम पाने की कोशिश करनी चाहिये । शिष्य के लिये एकमात्र मार्ग उसका गुरु ही है । उसे अपना अहं भाव अपने गुरु के श्रीचरणों में त्याग देना चाहिये । गुरु कृपा सर्वोत्तम ज्ञान या किसी भी अन्य उपलब्धी से भी अधिक महत्वपूर्ण है । गुरु के श्रीचरणों में सम्पूर्ण समर्पण शिष्य के जीवन में प्रकाश भर देता है और उसे आत्म साक्षात्कार के योग्य बना देता है ।

रियाजत (साधना, अभ्यास) का लक्ष्य यह है कि समस्त स्थूल क्रियाओं में कर्तापन की भावना एवं आसक्ति से अपने को मुक्त करना और परमात्मा की ओर अपने चित्त को पूर्ण एकाग्रता के साथ उन्मुख करना ।

साधक अपने सभी कर्मों और क्रिया-कलापों को स्वेच्छा से पूर्ण संकल्प के साथ तठस्थ भाव से दृष्टा की तरह देखता रहे । हमारे सभी कर्मों में आसक्ति एवं कर्तापन का भाव ही भक्ति में अवरोध उत्पन्न करता है । इन वृतियों के क्षणिक ठहराव से अवरोध उत्पन्न नही होता लेकिन इन वृतियों का ठहराव और प्रभाव दिखे तो साधक को तुरंत तौबा करते हुए इन वृतियों से मुक्ति पाने के लिये प्रार्थना करनी चाहिये ।

'तौफीक सई के साथ है'-अर्थात ईश्वर कृपा या वांछित सफलता प्रयत्न करने से प्राप्त होती है । सतगुरु की अध्यात्मिक शिक्षा साधक के प्रयत्न अनुसार फल देती है और यह प्रयत्न भी सतगुरु द्वारा बतलाये तरीके से होना चाहिये । बगैर प्रयत्न के साधना में स्थिरता नहीं आ पाती ।

साधक या शिष्य जब अपने हृदय को बाकी सब चीजों से खाली कर देता है जो सतगुरु के प्रेम में रुकावट डालती है तब सतगुरु का निवास शिष्य के हृदय में स्थायी होता है । वास्तव में ईश्वर कृपा में कोई कमी नहीं है, हम ही उसे अवरोधों के कारण रोके रहते हैं । इन रुकावटों के दूर होने पर सतगुरु की रुहानियत के प्रभाव से साधक को ऐसे ऐसे अनुभव होते है जिसका वर्णन असंभव है ।

हर दशा में पूर्ण समर्पण की भावना सर्वोपरि आंतरिक अध्यात्मिक स्थिति है ।

खामोश रहना चाहिये जिससे आंतरिक स्थिति पर निगाह बनी रहे ।

जो भी साधक इस सिलसिले की साधना पद्धति अपनायेगा, नि:संदेह परम लक्ष्य को पहुँचेगा ।

आस-पास के लोगों के स्तर के अनुसार ही अपने आप को ढाल कर व्यवहार करना चाहिये और अपनी वास्तविक स्थिति को छिपा लेना चाहिये । हजरत पैगम्बर (सल्ल.) का फ़रमाना है, "मुझे आदेश हुआ है कि मैं लोगों से उसी अनुसार बोलूं, जो उनका हृदय ग्रहण कर सके ।"

संतों की समाधि के दर्शन का लाभ उनके बारे में जानकारी के अनुरूप ही मिलता है । उनकी समाधि के दर्शन का पुण्य प्रताप तो होता ही है लेकिन यह बेहतर है कि अपना ध्यान उनकी रूह की ओर उन्मुख किया जाये । इसका ज्यादा अध्यात्मिक लाभ होता है । हजरत पैगम्बर (सल्ल.) का फ़रमाना है कि जहाँ भी हो मेरे लिये दुआ करो । इसका मतलब है तुम कहीं भी हो, हजरत पैगम्बर (सल्ल.) तक पहुँच सकते हो । यही उनके संतों पर भी लागू होता है क्योंकि वे अपनी शक्ति हजरत पैगम्बर (सल्ल.) से पाते हैं । उनकी समाधि के दर्शन का सही तरीका यह है कि अपना ध्यान परमात्मा में लगाओ और इन संतों की पुण्यात्माओं को इसका जरिया बनाओ । उनके रूप में परमात्मा का ख्याल करना उचित है ।

तवज्जोह और मुराक़ब: (ध्यान) में गैबत (बेख़ुदी, बेहोशी) से ज्यादा श्रेष्ठ विवेक, होश और सचेतन अवस्था है ।

लक्ष्य को पाने का निकटतम मार्ग है परमात्मा की अद्‌वैतता का सारभूत ज्ञान । उसकी अद्‌वैतता का सार प्रत्येक प्राणी में विद्‌यमान है । अपना स्व: सम्पूर्ण रूप से मिटाकर उस परमात्मा की एकता में एक हो जाना ।

हजरत शाह अल्लाउद्दीन अत्तार की हथेली मुबारक

हजरत शाह अल्लाउद्दीन अत्तार की समाधि (जगनयाँ, बुखारा)

हजरत याकूब अल-चर्खी (रहम.)

‘या इलाही दे अमाँ मिन कुल्लि दाइन औ बला,
हजरते याकूब चर्खी पुरजिया के वास्ते’
(बीमारी और मुसीबतों से बचा ले मुझे, हे परमात्मा,
हजरत याकूब चरखी पूरजिया के नाम पर)

हजरत मौलाना याकूब अल-चर्खी का जन्म 762 हिजरी (1360/1361) में काबुल और कंधार के बीच गर्निन के एक गाँव चरख में हुआ था। आरम्भ में आपने हिरात में और उसके बाद मिश्र में विद्या ग्रहण की। शिहाबुद्दीन अश-शिरवानी जो अपने वक्त में ज्ञान के भण्डार समझे जाते थे, उनके शिक्षकों में से थे। शीघ्र ही वे सांसारिक विद्याओं में पारंगत हो गये और स्वतंत्र रूप से निर्णय देने का अधिकार उन्हें मिल गया। उन्हें शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) और शैख़ अल्लाउद्दीन अत्तार दोनों की कृपा पाने का सौभाग्य मिला। आपको गुरु पदवी का अधिकार हजरत शाह मुहम्मद बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) से प्राप्त हुआ था लेकिन आपकी तक्मील (पूर्णता) शैख़ अल्लाउद्दीन अत्तार द्वारा हुयी इसलिए आप उनके खलीफाओं में गिने जाते हैं।

शैख़ याकूब अल-चर्खी (रहम.) ने शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) के बारे में सुना और उनके प्रति आकृष्ट हो गये। उनसे मुलाकात से करीब एक माह पूर्व उन्हें स्वप्न में आदेश हुआ कि वे हजरत अजीजाँ (रहम.) के शिष्य बन जाएँ। उस वक्त तक उन्हें हजरत अजीजाँ (रहम.) के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। जब वे पहली बार शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) से मिले तो उन्होंने फ़रमाया, “मैं हजरत अजीजाँ (रहम.) का आत्मिक उत्तराधिकारी हूँ।” इसे सुनकर शैख़ याकूब अल-चर्खी (रहम.) को लगा जैसे शाह नक्शबंद (रहम.) को उनके स्वप्न के बारे में मालूम था। शाह नक्शबंद (रहम.) ने फिर कहा, “तुम अभी जा सकते हो, लेकिन जाने से पहले यह मेरी पगड़ी भेंट स्वरूप लेते जाओ। जब तुम इसे इस्तमाल करोगे या देखोगे तो तुम्हे मेरा स्मरण हो आएगा और जब तुम मेरा स्मरण करोगे मुझे मौजूद पाओगे और जब तुम्हे यह अहसास होगा, तुम्हें मालिक की राह मिल जाएगी।“

शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने उन्हें आगाह किया कि लौटते हुए जब वे मौलाना ताजुद्दीन अल-कावलकी से मिलें तो खुद से ही बातचीत में न खो जाएँ। उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ कि शाह नक्शबंद (रहम.) ऐसा क्यों फ़रमा रहे थे, जबकि वे वापसी में हिरात के लिये बल्ख होकर जा रहे थे न कि कावलक होकर जहाँ मौलाना ताजुद्दीन अल-कावलकी का निवास था। लेकिन रास्ते में कुछ ऐसा हुआ कि शैख़ याकूब अल-चर्खी (रहम.) को कारवां के साथ कावलक होकर गुजरना पड़ा। जब वे कावलक पहुँचे तो वहाँ उन्हें एक व्यक्ति मिला जिसने

बताया कि उसे शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने उन्हें मौलाना ताजुद्दीन के पास ले जाने के लिये भेजा है। रास्ते में उन्हें एक वृद्ध व्यक्ति मिला जिसने कहा कि यह रास्ता रहस्यों से भरा है। हर एक साधक के लिये इसे समझना संभव नहीं है और सच्चे साधक को अपनी बुद्धि को सर्वोपरि नहीं समझ लेना चाहिये। उसके बाद वे मौलाना ताजुद्दीन के समक्ष हाजिर हुए और उनकी विशेष कृपा प्राप्त की।

अपने वतन लौटने के बाद वे समय-समय पर शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) के दर्शनों के लिये बुखारा जाते रहे। बुखारा में एक ईश्वर प्रेमी संत (अवधूत) रहते थे जिनके पास लोग उनका आशीर्वाद प्राप्त करने हेतु आते रहते थे। एक दिन जब शैख़ याकूब अल-चर्खी (रहम.) शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) के दर्शनों के लिये जा रहे थे तो उन्होंने उन संत की तरफ़ से जाने का सोचा की देखें वे क्या कहते हैं ? उन्होंने कहा, “ऐ याकूब ! जल्द-जल्द कदम उठा और रुकना नहीं। तुम्हारा निर्णय उत्तम है। वह वक्त आ गया की तू मक़बूलो (परमात्मा द्वार स्वीकृत-प्रिय) में से हुआ।” और इसके साथ ही वे जमीन में कुछ रेखाएं खीचने लगे। शैख़ याकूब अल-चर्खी (रहम.) ने मन में ख्याल किया कि इन रेखाओं की संख्या विषम (दो से न कटने वाली) होगी तो उनका उद्धेश्य पूरा हो जायेगा। उन्होंने गिना तो रेखाओं की संख्या विषम निकली। वे प्रसन्न मन से शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) के पास दीक्षित होने के लिये चले।

शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) के समक्ष हाजिर होकर आपने अपना ईरादा उन्हें बतलाया। शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने फ़रमाया, ‘हम तो मामूर (आज्ञा पालन करने वाले) हैं, स्वयं कोई काम नहीं करते। आज रात को मालूम करेंगे और जैसा आदेश होगा वैसा ही करेंगे।’ शैख़ याकूब अल-चर्खी (रहम.) फरमाते थे कि वह उनकी जिन्दगी की सबसे कठिन रात थी। उन्हें भय था की वे उन्हें अपनी शरण में लेते हैं या नहीं। सुबह होने पर उन्होंने सुबह की नमाज़ शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) के साथ पढ़ी। नमाज़ के बाद शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने फ़रमाया, “मुबारक हो”, जिससे वे समझ गये कि शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) उन्हें अपनी शरण में ले लेंगे।

जब शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने उनके हृदय पर दृष्टी डाली तो उनके हृदय में शाह नक्शबंद (रहम.) के सिवाय अन्य सभी विचार लुप्त हो गये। उन्होंने शाह नक्शबंद (रहम.) की आवाज सुनी ‘परमात्मा तुम पर कृपा करें। वह तुम्हे स्वीकार करते हैं और मैं तुम्हे स्वीकार करता हूँ।’ इसके बाद शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने सिलसिले के बुज़ुर्ग महापुरुषों के नाम लेना शुरु किया-हजरत पैगम्बर (सल्ल.) और उनके बाद हजरत अबू बक्र, हजरत सलमान फ़ारसी, हजरत कासिम, हजरत जाफ़र, हजरत तैफूर (बयाजिद बिस्तामी), हजरत अबुल हसन, हजरत अबू अली, हजरत युसूफ, हजरत अबुल अब्बास एवं हजरत अब्दुल खालिक। सभी महापुरुष जिनका वे आहवान कर रहे थे, कृपापूर्वक प्रकट हो कर अपनी रहमत बरसा रहे थे। जब उन्होंने हजरत अब्दुल खालिक गजदेवानी (रहम.) का आहवान किया तो शैख़ याकूब चर्खी ने भी उनके दर्शन किये। इसके बाद शाह नक्शबंद

(रहम.) ने अन्य बुजुर्गों का आह्वान करना जारी रक्खा-हजरत आरिफ रिवाकरी, हजरत महमूद फगनवी, हजरत अली रमितानी, हजरत बाबा समासी एवं सैय्यद अमीर कुलाल। सभी बुजुर्गों ने कृपापूर्वक दर्शन देकर शैख़ याकूब अल-चर्खी को दीक्षित किया।

शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने उन्हें 'वकूफ अददी' की तालीम दी और फ़रमाया जहाँ तक संभव हो ताक (विषम) संख्या का हमेशा ध्यान रखना। आप हमेशा अपने पूज्य गुरुदेव शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) की सेवा में उनके दरवाजे पर हाजिर रहते। कुछ समय बाद शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने आपको गुरु पदवी का अधिकार दे दिया। इसके बाद शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने उन्हें यात्रा करने का आदेश दिया और यह भी फ़रमाया कि जो कुछ उन्हें मिला है ईश्वर-भक्तों को पहुंचाएं और तीन बार फ़रमाया, 'तुझको ख़ुदा के सुपुर्द किया' और उन्हें शैख़ अल्लाउद्दीन अत्तार (रहम.) की आज्ञापालन करने का ईशारा किया।

शैख़ याकूब अल-चर्खी (रहम.) यात्रा करते जब कैश पहुँचे उन्हें सूचना मिली कि शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने शरीर त्याग दिया है। वे बहुत चिंतित हुए कि कहीं ऐसा न हो कि उनका दिल दुनियावी कामों में लग जाये और वे ब्रह्म-विद्या के मार्ग से भटक जाएँ और उनमें ईश्वर-भक्ति की चाह और लगन ही न रहे। इसी सोच में उन्होंने चरख जाकर लोगों को अध्यात्म की शिक्षा देने का विचार बनाया ही था की शैख़ अल्लाउद्दीन अत्तार (रहम.) का पत्र मिला, जिसमें उन्होंने शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) द्वारा जो ईशारा उन्हें किया गया था जिसमें उन्हें शैख़ अल्लाउद्दीन अत्तार (रहम.) का अनुकरण करने के लिये कहा था उसका स्मरण दिलाया। वे तुरंत शैख़ अल्लाउद्दीन अत्तार (रहम.) की सेवा में उपस्थित हुए और उनके शरीर त्यागने तक उनके सतसंग से फैजयाब होते रहे। उस वक्त उनके दिल में ख्याल आया कि शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) की आज्ञा कि 'जो कुछ उन्हें मिला है ईश्वर-भक्तों को पहुंचाएं' का पालन किया जाये। आपका कहना था कि यद्दपि मैं अपने आप को इस योग्य नहीं समझता था पर यह ख्याल कर कि शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) का फ़रमाना हिक्मत (विवेक, बुद्धिमता) से खाली न होगा, उनकी प्रेरणा से जिज्ञासुओं और साधकों को इल्म-बातिन (ब्रह्म-विद्या) देने में लग गया।

आपने 5 सफ़र 851 हिजरी (21/22 अप्रैल 1447) में इस नश्वर संसार का त्याग किया। आपकी समाधि दुशाम्बे, तजाकिस्तान में (बलगनौर में) स्थित है।

शैख़ याकूब अल-चर्खी की समाधि (दुशाम्बे, तजाकिस्तान)
(श्री योगेश चतुर्वेदीजी, कनाडा, के सौजन्य से)

शैख़ याकूब अल-चर्खी की समाधि (दुशाम्बे, तजाकिस्तान)
(श्री योगेश चतुर्वेदीजी, कनाडा, के सौजन्य से)

ख्वाजा उबैदुल्लाह अल-अहरार (रहम.)

'या इलाही पुल पै और महशर में हो पीरों का साथ,
ख्वाजाऐ अहरार रासुल अत्किया के वास्ते'
(क़ियामत के दिन और सिरात के पुल पर, पीरों का हो साथ,
सयंमियों में अग्रणी ख्वाजा अहरार के नाम पर, हे नाथ !)

हजरत ख्वाजा उबैदुल्लाह अल-अहरार (रहम.) का जन्म 806 हिजरी (1404) में रमजान महीने में ताशकंद के बागिस्तान में (शाश नामक गाँव में) हुआ था । ऐसा कहा जाता है कि उनके जन्म के पूर्व उनके पिता एक विचित्र अवस्था का प्रदर्शन करने लगे थे । उन्हें सांसारिक वस्तुओं से वैराग्य हो गया, यहाँ तक कि उन्हें अपने खाने और सोने की भी सुध न रहती । वे इस तरीकत के आचराणानुसार अभ्यास में खोये रहते । उनकी यह स्थिति शैख़ उबैदुल्लाह के गर्भ में प्रवेश करने तक रही । उसके बाद वे पुन: साधारण व्यवहार करने लगे । जन्म के चालीस दिन (अशुद्धता के दिनों में) तक आपने अपनी माँ का दूध ग्रहण नहीं किया । चालीस दिन बाद जब वे स्नान आदि कर पवित्र हो गयीं तब आपने उनका दूध पीना शुरु किया । आपके दादा हजरत शहाबुद्दीन (रहम.) जो एक महात्मा थे अपने अंतिम वक्त में ख्वाजा उबैदुल्लाह अल-अहरार जो उस समय छोटी उम्र के ही थे, के सम्मान में उठ खड़े हुए । आपका कहना था कि हजरत पैगम्बर (सल्ल.) ने उन्हें शुभ सूचना दी थी कि ख्वाजा उबैदुल्लाह अल-अहरार पीर आलमगीर (ऐसा महात्मा जिसका सारी दुनिया में नाम हो) होगा और उनसे तरीकत (अध्यात्म मार्ग) और शरीअत (धर्मशास्त्र) को प्रकाश मिलेगा ।

वे अपने वक्त के महान सूफ़ी आचर्य थे । वे कहा करते थे कि उन्हें अपने बाल्यकाल की सभी बातें याद हैं । तीन वर्ष की उम्र से वे परमात्मा के सामीप्य में रहने लगे थे । जब वे कुरआन का अध्ययन करते तो उनका हृदय परमात्मा के हुज़ूर में हाजिर रहता और वे सोचते थे कि सभी लोगों के साथ ऐसा ही होता होगा । एक बार वर्षा के वक्त वे घर से बाहर निकल गये और उनके पाँव गीली मिट्टी में फंस गये । बाहर बहुत ठंड थी । अपने पाँव बाहर निकालने के प्रयास में कुछ देर उनका ध्यान परमात्मा से हट गया । तुरंत वे परमात्मा से क्षमा-प्रार्थना करने लगे ।

ख्वाजा उबैदुल्लाह अल-अहरार (रहम.) एक व्यापारी से हजरत याक़ूब चर्ख़ी (रहम.) के बारे में सुनकर उनकी तरफ़ आकृष्ट हुए । जब वे उनसे मिलने जा रहे थे, रास्ते में बीस दिन तक बीमार पड़े रहे और इस दौरान कुछ लोगों ने उनके सामने हजरत याक़ूब चर्ख़ी (रहम.) की चुगली और बुराई की । फिर भी यह सोचकर कि इतनी दूर आये हैं तो मिलने में क्या हर्ज़ है, वे हजरत याक़ूब चर्ख़ी (रहम.) से मिलने चले गये । हजरत याक़ूब चर्ख़ी (रहम.) बड़े ही

आक्रोश और गुस्से से पेश आये। ख्वाजा उबैदुल्लाह (रहम.) के दिल में ये ख्याल आया कि यह व्यवहार उनकी चुगली और बुराई सुनने के कारण है। थोड़ी ही देर में वे शांत हो गये और बड़े प्रेम और प्रसन्नता से पेश आने लगे। बातचीत के दौरान उन्होंने वे किस तरह ख्वाजा बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) से मिले थे बतलाया और फिर अपना हाथ ख्वाजा उबैदुल्लाह (रहम.) की तरफ़ उन्हें बैअत करने के इरादे से बढ़ाया लेकिन ख्वाजा उबैदुल्लाह (रहम.) के मन में उनके (हजरत याकूब चर्खी (रहम.) के) माथे पर एक सफ़ेद दाग देख वितृष्णा हो आई। हजरत याकूब चर्खी (रहम.) ने उनके मन की यह बात पढ़ ली और तुरंत अपना हाथ पीछे खींच लिया और उसी क्षण अपनी आत्मिक शक्ति से ऐसे मनमोहक रूप में प्रकट हुए कि ख्वाजा उबैदुल्लाह (रहम.) का मन उनकी ओर आकर्षित हो गया। उन्होंने फिर अपना हाथ बढ़ाया और फ़रमाया कि हजरत शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) ने मेरा हाथ पकडकर फ़रमाया था कि तेरा हाथ मेरा हाथ है, जिसने यह हाथ पकड़ा गोया ख्वाजा बहाउद्दीन नक्शबंद का हाथ पकड़ा। ख्वाजा उबैदुल्लाह (रहम.) हजरत याकूब चर्खी (रहम.) के हाथों बैअत हुए और उन्होंने उन्हें वकूफ अददी के अभ्यास में लगाकर फ़रमाया कि 'हजरत शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) से जो कुछ मुझे पहुँचा वह यही है। अगर तुम बतरीक जज्बा (प्रेम द्वारा) जिज्ञासुओं और साधकों की तरबियत करो (अध्यात्म की शिक्षा दो) तो इसका तुम्हे अधिकार है।'

इतनी शीघ्रता से लोगों को तालीम देने का अधिकार दिए जाने से हजरत याकूब चर्खी (रहम.) के कुछ शिष्यों को बुरा लगा। हजरत याकूब चर्खी (रहम.) ने फ़रमाया कि 'ख्वाजा उबैदुल्लाह अहरार में कुव्वत (सामर्थ्य) व तसर्रुफ़ (स्थूल या सूक्ष्म जगत में अपनी आत्मिक शक्ति द्वारा मनचाहा परिवर्तन पैदा कर देना; रिद्धि-सिद्धि) सब मौजूद है। तालिब को इस तरह पीर के पास आना चाहिये जैसे कि उबैदुल्लाह आया है कि तेल-बत्ती दुरुस्त है, बस प्रज्जवलित करने की देर है।'

ख्वाजा उबैदुल्लाह (रहम.) ने फ़रमाया कि जब मैंने हजरत याकूब चर्खी (रहम.) से रुखसत के लिये इज़ाज़त चाही तो उन्होंने हजरत ख्वाजगान के साधना के सभी ढंग बयान किये और जब 'तरीक राब्ता' (लगाव या प्रेम का मार्ग) पर पहुँचे, फ़रमाया कि तुम इसकी तालीम देने में संकोच मत करना। रूहानी निस्बत को मजबूत बनाने के कई तरीकों में एक 'तसव्वुरे शैख़' अर्थात सतगुरु का ध्यान है। और फ़रमाया कि सुपात्रों को यह तरीका बतला देना। फिर फ़रमाया कि अगर तुमको ख्वाजा बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) की सोहबत से रूहानी निस्बत हासिल हो और किसी अन्य बुज़ुर्ग के पास जाने से निस्बत हासिल हो तो उसे ख्वाजा बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) की तरफ़ से ही ख्याल करना।

ख्वाजा उबैदुल्लाह (रहम.) के दिल में बचपन से ही विनम्रता और दीनता की भावना कूट-कूट कर भरी हुयी थी। जो कोई उनके पास आता, छोटा-बड़ा, गरीब-अमीर, वे सब के चरणों में सर रखकर उससे अपने कल्याण के लिये प्रार्थना करने को कहते। स्वयं निर्धन होते हुए भी अपना सब कुछ दूसरों की सेवा में लगा देना आपका स्वभाव था। आपने पूरी जिन्दगी

कभी किसी से कोई भेंट न ली बल्कि भेंट पेश करने वाले को अपनी तरफ़ से ही कुछ न कुछ दिया। आप हमेशा लोगों की सेवा में लगे रहते, विशेषकर बीमार और असहाय लोगों की। रोगियों के कपड़े और बिस्तर साफ करते और साधू-संतों के स्नान इत्यादि के लिये पानी भरकर रखते और किसी को मालूम न चलने देते। आप फरमाते थे कि नक्शबंदी सिलसिले की पद्धति में इस बात का ख़याल रखा जाता है कि तन और मन दोनों उस वक्त की जरुरत के अनुसार काम में लगे रहें। जिक्र और ध्यान उस समय नहीं करना चाहिये जब किसी को हमारी आवश्यकता हो। जरुरत के वक्त किसी की सेवा सभी साधनाओं से श्रेष्ठतर है। हजरत शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) और उनके अनुयायी आसानी से किसी की खिदमत कुबूल न फरमाते क्योंकि ऐसा करने से उसके अहसान के कारण उसके प्रति आसक्ति पैदा हो जाती है। लेकिन उसकी सेवा अगर उसकी रूहानी तरक्की में सहायक हो तो सेवा स्वीकार भी कर लेते। आप फरमाते थे कि सेवा इंसान को ईश्वरत्व तक ले जाती है। आपका दिल अपार दया और करुणा से भरा रहता, हमेशा अपने सेवकों, मुलाजिमों और सतसंगी भाइयों के आराम और सुख-सुविधा का व्यक्तिगत रूप से विशेष ध्यान रखते थे। आपके एक शिष्य हजरत मीर अब्दुल अव्वल (रहम.) ने एक जगह लिखा है कि एक बार हजरत ख्वाजा उबैदुल्लाह (रहम.) अपने सेवकों और मुलाजिमों के साथ कुश नगर के लिये जा रहे थे कि रास्ते में शाम होने से एक पहाड़ के नीचे रुक गये। सेवकों ने खेमा खड़ा किया और मग़्रिब की नमाज़ के बाद पानी बरसने लगा। आपने फ़रमाया यह खेमा मुझे अपवित्र मालूम देता है, मैं इसमें नहीं रुकूंगा। मेरे साथी और अन्य सेवक इसमें रुकें। उस खेमे के अलावा दूसरा कोई खेमा नहीं था अत: वे सब आपकी आज्ञानुसार उसी खेमे में रुके। उस रात बराबर तेज पानी बरसता रहा। जब सुबह हुयी आपने फ़ज्र की नमाज़ पढ़ी और उसके बाद अपने कुछ साथियों से फ़रमाया कि हमको शर्म आती थी कि हम खेमे में रहें और बाकी लोग खुले में और खेमे की अपवित्रता की बात उन्होंने इसी वजह से कही थी, वह एक बहाना मात्र था। इसी तरह तेज हवाओं और गर्मियों में एक दूसरे वक्त आप अपने एकमात्र खेमे को अपने साथियों के लिये छोड़ घोड़े पर सवार हो वीरान भूमि में घूमते रहे। जितने दिन आप वहाँ रहे आप ऐसा ही करते रहे।

आप फरमाते थे कि “मिर्ज़ा शाहरुख़ के जमाने में हिरात में रहता था और उस जमाने में मेरे पास कोई धन-दौलत न थी। तब मैं सैय्यद कासिम तबरेज़ी की सेवा में बहुत बार हाजिर होता था और आप मुझे फलों के रस जो वे पिया करते थे, बचा हुआ पीने के लिये दे दिया करते और फरमाते थे कि ‘ऐ तुर्किस्तान के शैखजादा (शैख़ या सतगुरु की संतान)! जिस तरह मेरे पास यह फलों का ढेर इकट्ठा है, इसी तरह तेरे पास धन-दौलत इकट्ठा होगी।’ उस वक्त मैं गरीबी, त्याग और सयंम का जीवन व्यतीत करने का अभ्यास कर रहा था। जब मैं बाईस वर्ष का हुआ तो मेरे मामा ख्वाजा इब्राहीम (रहम.) मुझे सांसारिक विद्याओं के अध्ययन के लिये ताशकंद से समरकंद ले गये लेकिन ब्रह्मविद्या में की साधना का इतना प्रभाव रहता कि सांसारिक विद्याओं का अध्ययन न कर पाता। तब मैंने समरकंद छोड़ दिया

और मावराउलनहर (शाखरीसब्ज, उजबेकिस्तान) शहर में वहाँ के संत-महात्माओं के सतसंग में दो वर्ष व्यतीत किये। 24 से 29 वर्ष तक मैं हिरात के संत-महात्माओं के सान्निध्य में रहा और 29 वर्ष की उम्र में अपनी जन्मभूमि ताशकंद वापस आ गया। वहाँ एक काश्तकार के साथ एक जोड़ी बैल के साथ साझे में खेती शुरु की। ईश्वर की ऐसी कृपा हुयी कि थोड़े ही समय में खेती में बहुत बढ़ोत्तरी हो गयी।" आपके पास हजारों की संख्या में खेत हो गये। 'रशाहानुल हयात' नामक पुस्तक में इन खेतों की संख्या 1300 बताई है और वे और भी खेत खरीदने की बात कर रहे थे। उनके पास करीब 3000 लोग काम करते थे और वे करीब 80000 मन गल्ला कारगुजारी के रूप में मिर्ज़ा शाहरुख़ को देते थे। गल्ले का वजन अच्छे-अच्छे जानकारों के अंदाज से कहीं ज्यादा उतरता और आपके अनाज के भण्डार भरे रहते। आप फ़रमाया करते थे कि हमारा माल फ़क़ीरों के वास्ते है और इसीलिए परमात्मा ने उसमें बेहद बरकत बख्शी है।

इतना सब कुछ होते हुए भी आप पूर्ण रूप से अध्यात्म को समर्पित थे और क़ुरआन शरीफ की आयत 'ऐ मुहम्मद तुझे कौसर (स्वर्ग का एक कुंड) दिया' का हवाला देते हुए फ़रमाया करते थे कि जो शख्स अध्यात्म की इस स्थिति में हो कि उसे जर्रे-जर्रे में परमात्मा का वैभव दिखलाई दे, उसे सांसारिक धन-दौलत किस प्रकार राह से भटका सकती है ? इस विषय में हजरत अब्दुर्रहमान जामी (कु. सि.) ने अपने ग्रन्थ 'तोहफुतल अहरार' में लिखा है कि 'फ़क़ीर उबैदुल्लाह (रहम.) की फ़ौज ने संसार में अपना डंका बजाया है, लेकिन सांसारिक यश उनकी आध्यात्मिकता के आगे नत-मस्तक है। उनकी नजर में सारी सांसारिक धन-दौलत की कीमत नाखून के टुकड़े के समान है। उनके हृदय रुपी समुद्र में अद्वैतता का कोलाहल (नाद) होता रहता है। उनके ये अनेक रूप उस अथाह समुद्र के किनारे पड़ी सीपियों के समान हैं। उनके हृदय रुपी समुद्र की थाह, जिसमें परम-ब्रह्म का नाद गूंजता रहता है, कौन पा सकता है जिसकी तुलना में आकाश की नौपरतों का गुम्बद (नौ रूहानी चक्र) एक बुलबुले के समान है ?'

कहा जाता है कि एक आलिम आपकी प्रशंसा सुनकर आपसे मिलने के लिये आया। जब वह शहर के द्वार पर पहुंचा तो देखा बहुत सा गल्ला (अनाज) शहर के अंदर जा रहा है। पूछने पर मालूम चला की वह गल्ला हजरत उबैदुल्लाह (रहम.) का है। उसे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि इतने बड़े संत और यह सब दुनियादारी और उसने लौटने का सोचा। फिर सोचा कि इतनी दूर आयें हैं तो मिलते ही चलें। जब वह खानकाह में दाखिल हुआ तो हजरत उबैदुल्लाह (रहम.) घर में अंदर थे। वह वहीं बैठ गया और बैठे-बैठे ही उसे झपकी लग गयी। क्या देखता है कि क़ियामत बरपा हो गयी है और एक शख्स जिससे उस आलिम ने कुछ कर्जा लिया था और चुका नहीं पाया था, चाहता था कि उसे खींचकर अपने साथ दोजख में ले जाए। तभी वहाँ हजरत उबैदुल्लाह (रहम.) आये और उस शख्स का कर्जा अपने पास से चुकता कर दिया और उस आलिम की मुक्ति कराई। उस आलिम की आँख खुल गयी और देखता है कि हजरत उबैदुल्लाह (रहम.) घर के अंदर से मुस्कुराते हुए पधार रहे हैं

। आपने फ़रमाया कि मैं इसीलिए माल रखता हूँ कि तुम जैसे आदमी को कर्ज से मुक्ति दिला सकूं।

इसी तरह एक दफ़ा दो दरवेश बड़ी दूर से आपके दर्शन हेतु आये। जब वे खानकाह पहुँचे तो मालूम चला कि आप बादशाह से मिलने उसके दरबार में गये हैं। वे दोनों सोचने लगे कि यह कैसे फ़क़ीर हैं कि बादशाह के पास जाते हैं, जबकि फ़क़ीरों का अमीरों के दरवाजे पर जाना ठीक नहीं समझा जाता। कुछ ऐसा हुआ कि उसी समय दो चोर जो पकड़ से छूटकर भाग आये थे, सिपाही उन्हें खोजते-खोजते आये और उन दोनों दरवेशों को चोर समझकर पकड़ ले गये। वे दोनों बादशाह के सामने पेश किये गये और शरीअत के अनुसार बादशाह ने उनके दोनों हाथ काट देने का हुक्म दे दिया। हजरत उबैदुल्लाह (रहम.) बादशाह के पास बैठे हुए थे बोले ये दोनों दरवेश मुझसे मिलने आये थे और बादशाह से कहकर उन्हें छुड़ा लिया और उन्हें अपने साथ लिवा लाये। मकान पर पहुँचकर आपने फ़रमाया कि मैं इसीलिए बादशाह के पास गया था कि तुम्हारे हाथ कटने से बचा सकूं।

ख्वाजा उबैदुल्लाह अहरार का समाधि परिसर (समरकंद)

ख्वाजा उबैदुल्लाह अहरार के समाधि परिसर में इमाम साहब के साथ (समरकंद)

फ़क़ीरों का अमीरों के दरवाजे पर जाना ठीक नहीं समझा जाता लेकिन हजरत उबैदुल्लाह (रहम.) को ऐसा करने की ईश्वरीय प्रेरणा हुयी थी कि वे बादशाहों से मेलजोल पैदा करें ताकि उनमें भी धार्मिक एवं अध्यात्मिक भावनाओं का संचार हो । वे एक सरदार के माध्यम से उस वक्त के समरकंद के बादशाह मिर्ज़ा अब्दुल्ला बिन मिर्ज़ा इब्राहीम बिन मिर्ज़ा शाहरुख़ से मिलने गये लेकिन उस सरदार ने उन्हें अशिष्टता से जवाब दिया और कहा कि बादशाह एक बेपरवाह युवक है, उससे मुलाकात होना मुश्किल है और इसके अलावा फ़क़ीरों को इन सबकी क्या आवश्यकता है । आपको उस सरदार को यह बात बुरी लगी और फ़रमाया मैं अपने-आप से नहीं बल्कि परमात्मा के हुक्म से आया हूँ, यह बादशाह परवाह नहीं करेगा तो कोई और मिर्ज़ा आएगा जो परवाह करेगा । जब वह सरदार बाहर चला गया तो आपने उसका नाम लिखकर मिटा दिया और फ़रमाया इस बादशाह से हमारा काम निकलता नही मालूम देता और ताशकंद लौट आये । एक सप्ताह बाद वह सरदार मर गया और एक महीने बाद बादशाह मिर्ज़ा अब्दुल्ला पर तुर्किस्तान के बादशाह मिर्ज़ा अबुसईद ने हमला किया और उसको कत्ल कर दिया ।

कहा जाता है कि इसके पूर्व मिर्ज़ा अबुसईद ने आपको स्वप्न में देखा था और लोगों से दरयाफ्त कर आपकी शरण में पहुँचा था और आपका आशीर्वाद चाहा था कि समरकंद पर

विजय प्राप्त करे । आपने उस पर विशेष कृपा की और अपनी रूहानी निस्बत की ओर आकर्षित किया । आपने उससे पूछा कि तुम्हारा समरकंद पर विजय प्राप्त करने का क्या उद्धेश्य है तो उसने जवाब दिया कि मैं तन, मन धन से शरीअत का पृष्ठपोषण करूंगा । आपने उसे विजय का आशीर्वाद दिया ।

कहा जाता है कि मिर्ज़ा बाबर एक लाख सैनिक लेकर समरकंद पर चढ़ाई करने निकला । मिर्ज़ा अबुसईद ने हजरत उबैदुल्लाह (रहम.) से निवेदन किया कि बाबर से मुकाबला करने की सामर्थ्य उसमें नहीं है तो आपने फ़रमाया, 'तुम्हारी लड़ाई मैंने अपने ऊपर ली ।' कुछ ऐसा हुआ कि बाबर की सेना पर ऐसी विपत्ति आई की उसने स्वयं समझौते का हाथ आगे बढ़ाया और जान बचाकर वापस हो गया ।

आपका फ़रमाना था कि ईश्वर ने मुझे ऐसी शक्ति बख्शी है कि जिसे चाहूं वह बादशाह मेरे पास हाजिर होकर मेरे हुक्म का ताबेदार हो, लेकिन मैं ईश्वर की आज्ञा के बिना कुछ नहीं करता और अदब भी यही है कि अपनी इच्छा को ईश्वर इच्छा के आधीन कर दिया जाये ।

कहा जाता है कि एक बार आप अपनी मित्र मंडली के साथ किसी दूसरे शहर को जा रहे थे, रास्ता खतरनाक था, दूरी बहुत थी और शाम ढलने को हो आई । आपके मित्र चिंतित थे कि क्या होगा पर आपने उन्हें निश्चिन्त रहने के लिये कहा और फ़रमाया कि हम लोग सूर्यास्त से पहले ही शहर पहुँच जायेंगे । हुआ भी ऐसा ही । जब तक वे लोग शहर के भीतर दाखिल नहीं हुए सूर्य अस्त नहीं हुआ और जैसे ही वे शहर के भीतर पहुँचे सूर्य एकदम अस्त हो गया । आपका फ़रमाना था कि यह भी तरीकत के चमत्कारों में से एक है ।

कहा जाता है कि सुलतान मिर्ज़ा अबू सईद को आपके सामने तौबा करने के बाद कई बार शराब पीने की तीव्र इच्छा हुई । उसने अपने नौकर से रात को कोठे की दीवार के नीचे शराब मंगा कर उस शराब के कूजे को अपनी पगड़ी से ऊपर खींचने की सोची । जब वह ऐसा करने लगा, कूजा दीवार से टकराकर टूट गया । इससे मिर्ज़ा को बहुत दुःख हुआ । सुबह वह आपकी सेवा में हाजिर हुआ तो आपने उससे पहली बात यही कही कि रात मैंने तुम्हारे शराब के कूजे की टूटने की आवाज सुनी । अगर वह कूजा न टूटता तो मेरा दिल तुमसे टूट जाता और फिर हमारी तुम्हारी मुलाकात न होती ।

आपने 29 रबी अल-अव्वल 895 हिजरी (19/20 फरवरी 1490) को अपना शरीर त्यागा । कहा जाता है कि उस वक्त उनके पास बहुत से दीपक जल रहे थे कि यकायक एक तीव्र प्रकाश आपकी भोहों के बीच से निकला जिसके सामने उन सब दीपकों की रोशनी फीकी पड़ गयी । आपकी समाधि समरकंद में (कामानगरोन) में स्थित है । आपने बहुत सी पुस्तकें लिखी जिनमें 'अनस अस-सलिकीं फ़ी-त-तसव्वुफ़' और 'अल-उर्वातु-ल-वुथ्का ली अर्बबा-ल-इतिकाद' शामिल हैं । उन्होंने एक बड़ा विद्यालय और मस्जिद भी बनवाई जो अभी भी कार्यरत हैं । आपकी मृत्यु से बादशाह सहित सारा समरकंद शोक संतप्त हो गया था ।

बादशाह सुलतान अहमद अपनी फ़ौज के साथ आपके जनाजे में शामिल हुआ और आपको कन्धा दिया ।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

जीवन उस व्यक्ति का सार्थक है जिसका दिल दुनिया से हटकर ईश्वर की ओर फिर गया ।

मुरीद वह है जिसकी तमाम इच्छाएं सतगुरु के प्रति आस्था के प्रभाव से जल गयी हों और कोई इच्छा न रही हो और अपन ध्यान सब ओर से हटाकर केवल सतगुरु की तरफ़ रखे । 'जो आ गया अपने महबूब के सराय में, क्या उसके लिये बगीचा या लालाज़ार में ।'

फ़क़ीरों की सुहबत में अपने आप को अत्यंत दीन भाव से पेश करना चाहिये ताकि उनका दिल पसीज जाये और उन्हें दया आ जाये ।

यदि दीवार पर भी किसी महापुरुष का चित्र बना हो तो उसके नीचे भी अदब से गुजरना चाहिये ।

व्यवहार और आचरण का प्रभाव जड़ पदार्थों पर भी पड़ता है । यही कारण है कि काबा या अन्य पवित्र जगह पर पढ़ी नमाज़ का असर कई गुना ज्यादा होता है ।

अबू तालिब मक्की (कु. सि.) का कथन है कि अगर यह बात हासिल हो गयी कि दिल में परमात्मा के सिवाय और कुछ न हो तो काम पूरा हो गया चाहे फिर कोई अहवाल (अध्यात्मिक स्थिति), भावावेश, कश्फ़ (गुप्त बातें जानना) इत्यादि हो न हो ।

सच्चा सादिक वह है कि फ़रिश्ते के लिखने से पहले गुनाह का प्रायश्चित कर ले और भविष्य में न करने की प्रतिज्ञा कर ले ।

शरीअत, तरीकत और हकीक़त को इस मिसाल से समझा जा सकता है कि कोई शख्स झूट तो न बोले पर दिल में ख्वाहिश रहे तो यह शरीअत है, यदि झूठ का दिल में भी ख्याल न रहे तो यह तरीकत है और इच्छा से या अनिच्छा से भी झूठ जुबान और दिल दोनों से निकल जाये, ख्याल भी न रहे, यह हकीक़त है ।

परमात्मा को ही अपने सभी सद्गुणों, उपलब्धियों और सद्कर्मों का करता समझना पूर्णरूपेण फ़ना है । यही सच्ची दरवेशी है ।

हिम्मत इसको कहते हैं कि जिस काम को करने का ईरादा करे, उसके विरुद्ध कोई ख्याल ही दिल में न आये । यदि कोई नास्तिक भी उसी काम के लिये हमेशा दिल एकाग्र किये रहे तो वह हो जाता है ।

दुनियादारों से परहेज अध्यात्म की तरफ़ बढने की सीढी है ।

दरवेशी का सार यह है कि लोगों की मुसीबत में काम आये और दूसरों के कष्ट दूर करने में सदैव तत्पर रहे । दूसरों पर जाहिरी या आंतरिक किसी तरह अपना भार न रखे ।

दिल में निस्बत (अध्यात्मिक सान्निध्य की अनुभूति) बनी रहने का संकल्प दृढ़ता से बना रहे । मंजिल-दर-मंजिल यह संकल्प दृढ़ता से बना रहे, यहाँ तक कि यह निरंतर हो जाये ।

अगर इंसान करतापन या अहंकार के भाव से मुक्त हो गया हो तो जो कुछ करे बे-मानी है, अर्थात आत्मिक प्रगति में बाधक नही है लेकिन करतापन या अहंकार का भाव रहने से उसके कर्म या व्यवहार के लिये वो दण्डनीय है ।

शैख़ एस होना चाहिये कि बातिन मुरीद (मुरीद के हृदय) में वांछित परिवर्तन कर सके और उसके बुरे अखलाक (आचरण) को समाप्त कर सके और उसके स्थान पर श्रेष्ठ आचरण कायम कर सके और उसको हुज़ूर और आगाही (सामीप्य और सचेतता) के दर्जे पर पहुँचा सके ।

जिक्र उस वसूले की तरह है जो खतरों रुपी काँटों को दूर कर देता है ।

ख्वाजा उबैदुल्लाह अहरार की समाधि (समरकंद)

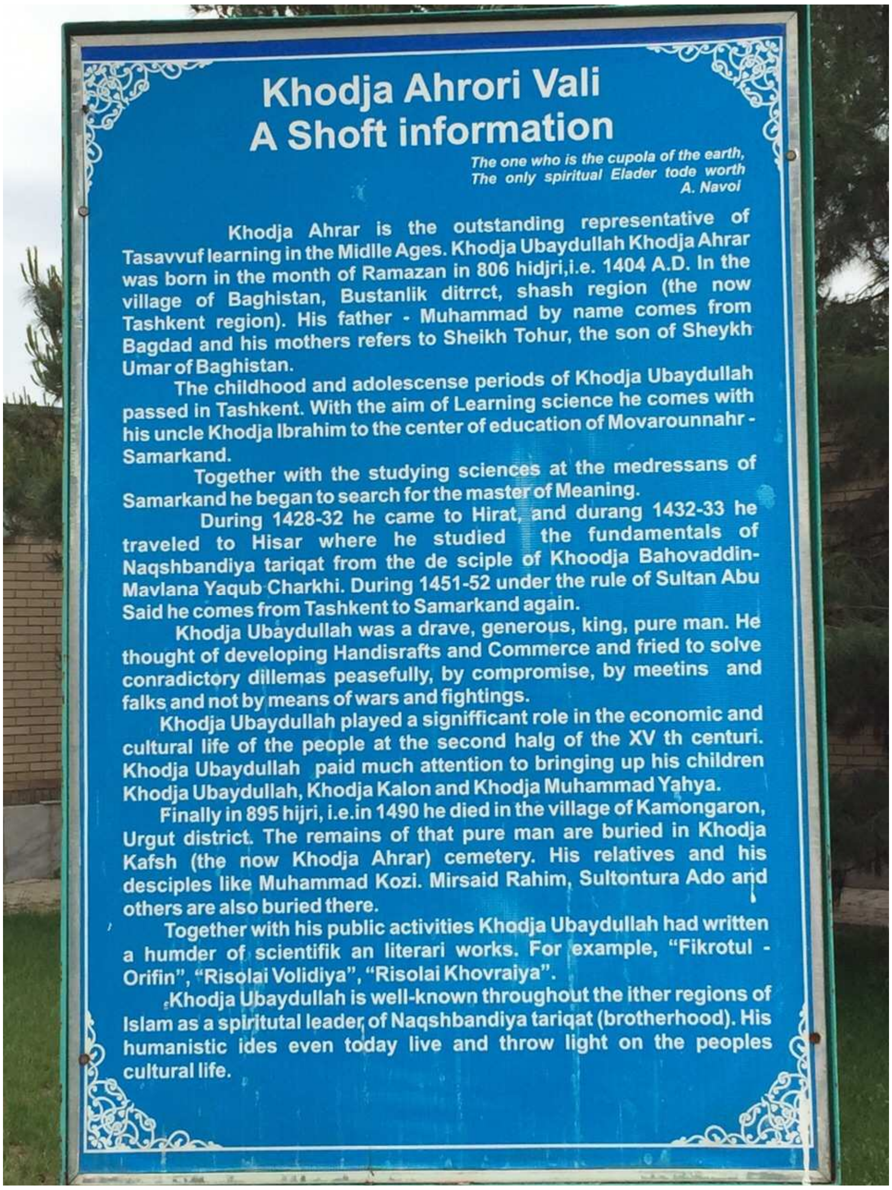

ख्वाजा उबैदुल्लाह अहरार की समाधि पर स्मारक चिन्ह (समरकंद)

ख्वाजा मुहम्मद ज़ाहिद (रहम.)

'या इलाही जुहदो तक्वा और मुहब्बत अपनी दे,
हजरते ख्वाजा मुहम्मद पारसा के वास्ते'
(सयंम, परहेजगारी और मुहब्बत अपनी दे, हे परमात्मा !
हजरत ख्वाजा मुहम्मद जाहिद सयंमी के नाम पर)

हजरत ख्वाजा मुहम्मद जाहिद (रहम.) हजरत उबैदुल्लाह अल-अहरार (रहम.) के प्रिय शिष्य एवं आत्मिक उत्तराधिकारी थे । आप हजरत याकूब चरखी पुरजिया (रहम.) के नवासे थे और उनके ही किसी शिष्य से आपने 'जिक्र' की तालीम ली थी और एकान्त में उसकी साधना और अभ्यास करते थे । आपका जन्म 14 शव्वल 852 हिजरी (11/12 दिसम्बर 1448) को हुआ था । आपने किसी से सुना कि हजरत उबैदुल्लाह अल-अहरार (रहम.) एक उच्च कोटि के संत तथा पूर्ण समर्थ सतगुरु हैं तो वे उनके दर्शन के लिये उत्सुक हो गये ।

ख्वाजा मुहम्मद जाहिद (रहम.) ने अपने शैख़ हजरत उबैदुल्लाह अल-अहरार (रहम.) पर एक पुस्तक 'सिलसिलात अल-आरिफिन व तधकिरात अस-सिद्दिकीन' लिखी जिसमें आपने लिखा है कि "मैं हिजरी सन 883 से 895 तक अपने गुरुदेव के शरीर छोड़ने तक उनकी सेवा में बारह वर्ष रहा । यह तब शुरु हुआ जब मैं अपने एक साथी शैख़ निमातुल्लाह के साथ समरकंद से हिरात उच्च शिक्षा के लिये गया । तेज गर्मी के कारण हम शादिमान नामक एक गाँव में रुक गये । शैख़ उबैदुल्लाह अल-अहरार (रहम.) वहाँ पधारे तो हम उनके दर्शनों के लिये चले गये । उन्होंने मुझसे पूछा कि मैं कहाँ से हूँ तो मैंने बताया समरकंद से । वे बहुत ही मधुरता से बातें कर रहे थे और मेरे बिना कहे ही मेरे दिल की सब बातें उन्हें मालूम थीं । यह इतना अद्भुत था की मेरा दिल उनसे जुड़ गया । उन्होंने कहा कि अगर तुम्हारा उद्धेश्य उच्च शिक्षा पाना है तो तुम्हे और कहीं जाने की आवश्यकता नहीं है । लेकिन मैं फिर भी हिरात जाना चाहता था ।

इसके कुछ समय बाद मैं पुन: उनके दर्शन के लिये हाजिर हुआ तो उन्होंने मेरा वास्तविक उद्धेश्य पूछा । वे बोले क्या तुम उच्च शिक्षा के लिये वहां जाना चाहते हो या आत्मिक ज्ञान का मार्ग ढूँढने ? मेरे मित्र ने मेरा उत्तर दिया और बोला 'उच्च शिक्षा के बहाने आत्मिक ज्ञान प्राप्त करने ।' वे बोले ऐसा है तो ठीक है । फिर वे मुझे अपने निजी बगीचे में ले गये । उन्होंने मेरा हाथ अपने हाथ में ले लिया और मैं तुरंत बहुत देर के लिये आत्म-विस्मृति (फ़ना) की स्थिति में पहुँच गया । मैं समझ गया कि वे मुझे अपने शैख़ और उनके द्वारा बुज़ुर्गाने सिलसिला को और इस क्रम में अंत में वे मुझे परमात्मा को पेश कर रहे थे ।

इसके बाद उन्होंने मुझे अपने लिखे लेख दिए और कहा कि तुम इन्हें समझ पाओगे। इनमें आज्ञापालन, पवित्रता और विनम्रता द्वारा साधना का लक्ष्य पाने का सार है। इन लेखों द्वारा तुम्हे परमात्मा का मुशाहदा (दिव्य दर्शन) होगा। यह मार्ग प्रेम का मार्ग है जो हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के चरण-चिन्हों का अनुसरण करने से प्राप्त होता है और उसका आधार है सुन्नत का पालन। हजरत पैगम्बर (सल्ल.) का फ़रमाना है कि तुम्हे मेरा और मेरे बाद मेरे खलीफाओं का रास्ता अपनाना होगा। इसके लिये तुम्हे सच्चे विद्वान् और महापुरुषों का अनुसरण करना होगा। दार्शनिकों के झूठे तर्कों से कुछ नहीं बनने वाला। जिन्हें कुछ नहीं आता लेकिन सूफीज्म के नाम पर बड़ी-बड़ी बातें करते हैं उनसे बचना होगा। और अंत में उन्होंने मुझे अपना आशीर्वाद दिया।

उन्होंने मेरे लिये सुर: फातिहा पढ़ा और मुझे हिरात जाने की इज़ाज़त देकर चले गये। मैं बुखारा की तरफ़ के लिये चल दिया। उन्होंने मेरे पीछे शैख़ कल्लन के नाम पत्र देकर एक दूत को भेजा जिसमें लिखा था कि 'तुम्हें मेरे बेटे का जो यह पत्र लेकर आ रहा है ध्यान रखना है और उसे अनुचित विद्वानों की संगत से बचाना है।' उनके इस कृत्य ने मेरे दिल को उनके प्रति प्रेम से भर दिया लेकिन मैंने अपनी यात्रा जारी रक्खी।

बुखारा की ओर यात्रा में बहुत समय लग रहा था क्योंकि मेरी सवारी कमजोर थी और प्रत्येक मील-दो मील पर मुझे रुकना पड़ रहा था। बुखारा पहुँचकर मेर आँखें दुखनी आ गयी और फिर जब मैंने हिरात की तरफ़ बढने का इरादा किया तेज बुखार ने मुझे पकड़ लिया। यहाँ तक कि मेरे दिल में यह बात घर कर गयी कि यदि मैं हिरात के लिये निकला तो कहीं रास्ते में ही मेरा अंत न हो जाये ? मैंने हिरात जाने का ईरादा छोड़ दिया और मन में अपने शैख़ हजरत उबैदुल्लाह अल-अहरार (रहम.) की सेवा में हाजिर होने का निश्चय कर लिया।

ताशकंद पहुँचकर मेरे दिल में शैख़ इल्यास से मिलने का विचार आया। मैंने अपनी सवारी और सारा सामान किसी के हवाले किया। जैसे ही मैं अपने एक गुरुभाई के साथ शैख़ इल्यास से मिलने के लिये जाने लगा, मुझे कोई आवाज सुनाई दी कि मेरी सवारी और सारा सामान नष्ट हो गया है। मैं समझ गया की हजरत उबैदुल्लाह अल-अहरार (रहम.) मेरी शैख़ इल्यास से मिलने की बात से खुश नहीं थे। मैंने तुरंत अपना ईरादा बदल लिया और हजरत उबैदुल्लाह अल-अहरार (रहम.) की सेवा में हाजिर होने का निश्चय कर लिया। जैसे ही मैंने यह निश्चय किया किसी ने आकर बताया कि तुम्हारी सवारी और सारा सामान मिल गया है। मैं उस व्यक्ति के पास गया जिसके पास मैंने अपनी सवारी और सारा सामान छोड़ा था। उसने बताया कि, 'मैंने तुम्हारी सवारी को यहाँ बाँधा था, लेकिन जब मैंने देखा तो वह सब गायब था। मैंने सब जगह खोजा लेकिन लगता था जैसे उसे जमीन निगल गयी हो। और जब मैंने वापस आकर देखा तो सब कुछ वहीँ था, जहाँ मैंने उसे बाँधा था।' मैंने अपने सवारी और सामान लिया और समरकंद की ओर निकल पड़ा। हजरत उबैदुल्लाह अल-अहरार (रहम.) ने मेरा स्वागत किया और उसके बाद उनके मरते दम तक मैं उनकी सेवा में वहीँ रहा।"

ख्वाजा मुहम्मद जाहिद (रहम.) का अपने शैख़ पर दृढ़ विशवास था और उनकी कही बात उनके लिये पत्थर की लकीर थी, जिसके विरुद्ध उनके मन में कभी कोई विचार नहीं आया। हजरत उबैदुल्लाह अल-अहरार (रहम.) का फ़रमाना था कि इस कारण वे इस मार्ग के गुप्त रहस्यों को जानने के उचित हक़दार थे।

ख्वाजा मुहम्मद जाहिद (रहम.) हजरत उबैदुल्लाह अल-अहरार (रहम.) के बारे में एक किस्सा बताते थे कि एक बार हजरत उबैदुल्लाह अल-अहरार (रहम.) बीमार पड़ गये। उन्होंने ख्वाजा मुहम्मद जाहिद (रहम.) को हिरात से किसी हकीम को लिवा लाने के लिये भेजा। उनके एक अन्य शिष्य मौलाना कासिम ने, जो वहाँ उपस्थित थे, उनसे हकीम को जल्द से जल्द लाने को कहा क्योंकि वे अपने गुरु हजरत उबैदुल्लाह अल-अहरार (रहम.) को तक्लीफ़ में नहीं देख सकते थे। ख्वाजा मुहम्मद जाहिद (रहम.) को हकीम ले आने में पैंतीस दिन लगे। लौटने पर उन्होंने पाया कि हजरत उबैदुल्लाह अल-अहरार (रहम.) तो स्वस्थ हो गये थे लेकिन मौलाना कासिम का देहांत हो चुका था। उन्होंने आश्चर्यचकित हो हजरत उबैदुल्लाह अल-अहरार (रहम.) से उस युवावस्था में मौलाना कासिम की आकस्मिक मृत्यु के बारे में पूछा तो उन्होंने बताया कि "तुम्हारे जाने के बाद मौलाना कासिम मेरे पास आया और कहा कि मैं आपके बदले अपना जीवन दे रहा हूँ। मैंने उसे ऐसा न करने के लिये समझया लेकिन उसने कहा कि, 'पूज्य गुरुदेव ! मैं आपकी सहमति लेने नहीं आया हूँ। मैंने निर्णय कर लिया है और परमात्मा ने इसे स्वीकार कर लिया है।' मैं उसके निर्णय को बदल नहीं पाया। अगले दिन मौलाना कासिम मेरी बीमारी से पीड़ित हो गया जो उसने अपने ऊपर ले ली थी और उसकी मृत्यु हो गयी और मैं बिना किसी हकीम की दवा के ठीक हो गया।"

ख्वाजा मुहम्मद जाहिद (रहम.) ने 12 रबी अल-अव्वल 936 हिजरी (3/4 नवम्बर 1529) को समरकंद में अपना शरीर त्यागा। आपकी समाधि वख्श (हसार) ताजिकिस्तान में स्थित है।

ख्वाजा मुहम्मद जाहिद की समाधि, वख्श (हसार, तजिकिस्तान)
(श्री योगेश चतुर्वेदीजी, कनाडा के सौजन्य से)

ख्वाजा मुहम्मद जाहिद की समाधि, वख्श (हसार, तजिकिस्तान)

हजरत शाह दरवेश मुहम्मद (रहम.)

‘या इलाही सारे इस्यान और नस्यान कर मुआफ़,
शाह दर्वेशे मुहम्मद मुर्तजा के वास्ते’
(सारे पाप और भूलें मेरी क्षमा कर, हे परमात्मा !
तेरे पसंदीदा शाह दरवेश मुहम्मद के नाम पर)

हजरत शाह दरवेश मुहम्मद अस-समरकंदी (रहम.) हजरत ख्वाजा मुहम्मद जाहिद (रहम.) के भतीजे और प्रिय शिष्य एवं आत्मिक उत्तराधिकारी थे। आपका जन्म 16 शव्वल 846 हिजरी (17/18 फ़रवरी 1443) को हुआ था। कहा जाता है कि बैअत होने के पंद्रह वर्ष पूर्व से आप साधन-अभ्यास में तल्लीन रहते थे। जंगलों में इन्द्रिय निग्रह एवं एकांतवास करते बिना खाए और सोये अपना जीवन व्यतीत करते। एक बार भूख से व्याकुल हो आपने आसमान की ओर मुँह उठाया तो हजरत खिज्र (अलैहि.) प्रकट हुए और फ़रमाया कि अगर तेरा उद्धेश्य संतोष और धैर्य प्राप्त करना है तो ख्वाजा मुहम्मद जाहिद (रहम.) की सेवा में जा वे तुझे तवक्कुल (ईश्वर पर पूर्ण भरोसा) सिखलायेंगे। आप तुरंत अपने मामा हजरत ख्वाजा मुहम्मद जाहिद (रहम.) की सेवा में हाजिर हो उनसे बैअत हुये।

बैअत होने के बाद एक बार ख्वाजा मुहम्मद जाहिद (रहम.) ने आपको एक पहाड़ पर जाकर वहाँ उनका इन्तजार करने को कहा और फ़रमाया कि वे वहां बाद में आयेंगे। शाह दरवेश मुहम्मद (रहम.) बहुत आज्ञाकारी थे। वे बिना ये पूछे कि वहाँ कैसे जायेंगे, क्या करेंगे या क्या खायेंगे, तुरंत उस पहाड़ की ओर रवाना हो गये। उन्होंने अपना स्व सम्पूर्ण रूप से अपने गुरुदेव के चरणों में समर्पित कर दिया था। उनका आचरण पूर्णरूपेन दोषरहित था। वे वहाँ पहुँचकर अपने गुरुदेव की प्रतीक्षा करने लगे। उन्होंने पहाड़ पर ही दोपहर की नमाज़ अदा की और फिर सूर्यास्त हुआ लेकिन उनके गुरुदेव वहाँ नहीं आये। उनका अहं कह रहा था कि तुम्हारे शैख़ नहीं आने वाले, तुम्हें वापस जाना होगा। हो सकता है कि वे इस बात को भूल गये हों। लेकिन उनका अटल विशवास उन्हें अपने गुरु के आदेश पर डटे रहने के लिये प्रेरित कर रहा था। उन्हें केवल वहाँ अपने गुरुदेव की प्रतीक्षा करनी थी।

शाह दरवेश के हृदय ने उनके अहं की बात सुनने से इन्कार कर दिया। उन्हें आध्यात्मिकता के पथ पर आगे बढ़ाया जा रहा था। उनका विशवास और दृढ़ हो रहा था। वे अपने गुरुदेव का इन्तजार करने लगे। रात में कड़ाके की ठंड पड़ने लगी, जिसने उन्हें अपनी जकड़ में ले लिया। ठंड के कारण वे पूरी रात जगे रहे। उनके पास उष्णता का एकमात्र स्रोत उनके हृदय में परमात्मा की याद था। उस सघन और ठंडी रात के बाद सुबह आई लेकिन उनके गुरुदेव का आगमन अभी दूर था।

शाह दरवेश को भूख लगी थी पर खाने के लिये कुछ नहीं था। फलों के कुछ वृक्ष दिखे तो उन्होंने फल खाकर अपनी भूख मिटायी और अपने गुरुदेव की प्रतीक्षा करने लगे। वह दिन भी प्रतीक्षा करते गुजरा और फिर अगला दिन भी। उनके अहं और विशवास में द्वन्द जारी था लेकिन उनका विशवास उनके अहं पर विजयी हुआ, उनका अपने गुरुदेव पर दृढ़ विश्वास था। उनकी धारणा और दृढ़ होने लगी कि मेरे गुरुदेव जानते हैं कि वे क्या कर रहे हैं।

समय इसी तरह गुजरता रहा। एक सप्ताह गुजरा और फिर एक माह। शैख़ मुहम्मद जाहिद (रहम.) नहीं आये। शाह दरवेश प्रतीक्षा करते रहे और अपना समय प्रार्थना करने और गुप्त-जाप करने में गुजारते रहे। उनकी तपस्या रंग लायी। जंगल के पशु उनके पास आकर शांति से उन्हें घेरकर बैठ जाते। उन्हें अहसास होने लगा कि यह चमत्कारिक शक्ति उन्हें उनके गुरुदेव की देन है।

प्रतीक्षा करते-करते सर्दियाँ आ गयी और पहाड़ पर बर्फ गिरने लगी। बहुत ज्यादा ठंड बढ़ने से पेड़ों से फल-फूल भी खत्म हो गये और शाह दरवेश बचे-खुचे पत्तों, जड़ों व पेड़ों की छालों की नमी से अपना गुजर करने लगे। उनके पास हिरणों के झुण्ड आने लगे और हिरणीयां उनके पास आकर निश्चल खड़ी हो जाती और वे उन्हें दुहकर उनके दूध से अपनी भूख मिटाते। यह भी एक चमत्कार था और वे जान रहे थे कि इन सबके द्वारा उनके गुरुदेव उन्हें अध्यात्मिक ज्ञान प्रेषित कर रहे थे और वे उस पथ पर ऊपर और ऊपर उठ रहे थे।

साल दर साल यूँ ही गुजर गये। शैख़ मुहम्मद जाहिद (रहम.) अभी अपने वादे के अनुसार वहाँ नहीं आये थे लेकिन शाह दरवेश मुहम्मद (रहम.) उनकी निरंतर याद में सब्र की इंतिहा की सीढियाँ पार कर रहे थे। उन्हें एक नया ज्ञान प्राप्त हो रहा था और उनके हृदय में विश्वास दृढ़तर हो रहा था कि उनके गुरुदेव को इसकी खबर है। उनका हृदय अपने गुरुदेव के प्रति आलौकिक प्रेम से सराबोर हो रहा था। अंत में सात वर्ष बीत जाने पर उन्हें वातावरण में अपने पूज्य गुरुदेव की खुशबू का अहसास होने लगा। शैख़ मुहम्मद जाहिद (रहम.) सातवें वर्ष के अंत में वहाँ पहुँचे। जब शाह दरवेश मुहम्मद (रहम.) ने उन्हें देखा तो उनका हृदय अपार आनंद से भर आया। उनके हृदय में प्रेम का ज्वार फूट आया और वे उनकी अगवानी के लिये दौड़ पड़े उनका तमाम शरीर बालों से ढक गया था। उनके साथ-साथ उनके पशु मित्र भी शैख़ मुहम्मद जाहिद (रहम.) के स्वागत के लिये दौड़ पड़े।

शैख़ मुहम्मद जाहिद (रहम.) ने उन्हें देखकर पूछा कि वे वहाँ क्या कर रहे हैं और पहाड़ से वापस लौटकर क्यों नहीं आये ? शाह दरवेश मुहम्मद (रहम.) ने उत्तर दिया कि वे वहाँ उनकी आज्ञानुसार उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। शैख़ मुहम्मद जाहिद (रहम.) ने पूछा कि अगर मैं भूल जाता या मेरी मृत्यु हो जाती तो ? शाह दरवेश मुहम्मद (रहम.) ने निवेदन किया, 'मेरे पूज्य गुरुदेव यह कैसे भूल सकते हैं क्योंकि वे परमात्मा के प्रतिनिधि हैं। शैख़ मुहम्मद जाहिद (रहम.) ने फिर कहा अगर तुम्हें कुछ हो जाता तो क्या होता ? इस पर शाह दरवेश मुहम्मद (रहम.) ने निवेदन किया, 'हे मेरे पूज्य गुरुदेव ! यदि मैं यहाँ रूककर आपकी प्रतीक्षा

न करता और आपकी आज्ञा का पालन न करता तो आप हजरत पैगम्बर (सल्ल.) की आज्ञानुसार यहाँ कभी न आते। उन्हें यह ज्ञात हो गया था कि शैख़ मुहम्मद जाहिद (रहम.) वहाँ हजरत पैगम्बर (सल्ल.) की आज्ञानुसार पधारे हैं।

शैख़ मुहम्मद जाहिद (रहम.) मुस्कुराये और बोले, आओ मेरे साथ चलो और तत्क्षण उन्होंने शाह दरवेश मुहम्मद (रहम.) के हृदय को अपने सम्पूर्ण ज्ञान और प्रेम से परिपूर्ण कर नक्शबंदी सिलसिले की सभी बख्शीशों से मालामाल कर दिया। उन्हें पूर्ण आचार्य पदवी प्रदान कर औरों को दीक्षित करने का आदेश दिया और अपना खलीफ़ा नियुक्त किया।

शाह दरवेश मुहम्मद (रहम.) अपनी रूहानी निस्बत की रक्षा करने में अद्‌वितीय थे और अपनी अध्यात्मिक स्थिति को गुप्त रखना अपने लिये विशेष रूप से अनिवार्य समझते थे और इसीलिए लोगों को क़ुरआन शरीफ पढ़ाया करते थे जिससे कि लोगों को उनकी अध्यात्मिक स्थिति की जानकारी न हो।

कहा जाता है कि एक बार वहाँ तुर्किस्तान से किसी शैख़ का आगमन हुआ। उसने शाह दरवेश मुहम्मद (रहम.) की तरफ़ ईशारा करते हुए कहा कि यहाँ किसी मर्द (संत-सतगुरु) की बू आ रही है। ख्वाजा इमकनकी (रहम.) जो आपके सुपुत्र थे, कहा करते थे कि “मेरे पिता शाह दरवेश मुहम्मद (रहम.) का अध्यात्मिक क्षेत्र में यश फैलने का कारण यह हुआ कि एक दरवेश ने उनके सामने शैख़ नूरुद्दीन ख्वानी (रहम.) की प्रशंसा करते हुए फ़रमाया कि वे बहुत बड़े बुज़ुर्ग हैं अगर इस तरफ़ उनका आना हो तो जरूर मिलियेगा। थोड़े समय बाद ही शैख़ नूरुद्दीन ख्वानी (रहम.) का उधर आना हुआ तो मेरे पिताजी जैसे थे वैसे ही साधारण से मैले-कुचैले वस्त्रों में कुछ भेंट लेकर उनसे मिलने चल दिये। वे शैख़ मेरे पिताजी से बड़े प्रेम से गले मिले और दोनों का बड़ी देर सतसंग और मुराक़ब: में बैठना हुआ। जब मेरे पिताजी चलने लगे तो उन शैख़ ने उन्हें आदर सहित कुछ दूर साथ चलकर विदा किया। इसके बाद उन शैख़ ने वहाँ उपस्थित लोगों से पूछा कि ईश्वर भक्त और जिज्ञासु मेरे पिताजी की खिदमत में हाजिर होते होंगे ? लोगों ने कहा ये शैख़ नहीं हैं बल्कि क़ुरआन शरीफ पढ़ाया करते हैं। शैख़ नूरुद्दीन ख्वानी (रहम.) ने फ़रमाया, ‘सुबहान अल्लाह ! यहाँ के लोग भी अजीब अंधे और मुर्दा हैं कि ऐसे कामिल शैख़ से भी लाभान्वित नहीं होते और न उनसे रूहानी फैज़ हासिल करते हैं ?’ यह बात तमाम लोगों में फ़ैल गयी और लोगों ने उनके पास आना शुरु कर दिया और उनसे रूहानियत की तालीम लेने लगे व फैजयाब होने लगे। लेकिन क्योंकि उन्हें एकांत पसंद था, मेरे पिताजी का दिल इससे कुछ परेशान रहता।”

इसी तरह शैख़ ख्वारजी करुई (कु. सि.) की आदत थी कि जहाँ जाते वहाँ लोगों की निस्बत सल्ब कर लेते (लोगों से उनके शैख़ के साथ रूहानी सम्बन्ध को समाप्त कर उनकी आत्मिक शक्ति को खींच लेते) थे। जब वे वहाँ आये तो शाह दरवेश मुहम्मद (रहम.) ने फ़रमाया कि हमको भी उनसे मिलने जाना चाहिये और हृदय से उनकी निस्बत सल्ब कर ली। शैख़ ख्वारजी करुई (कु. सि.) ने अपने को खाली पाया और बहुत हैरान परेशान हुए। जब शाह दरवेश मुहम्मद (रहम.) उनसे मुलाकात के लिये सवार हुये तो शैख़ ख्वारजी करुई (कु.

सि.) को अपनी निस्बत की बू आई और उसका पीछा करते-करते शाह दरवेश मुहम्मद (रहम.) के पास जा पहुँचे और बड़ी दीनता से निवेदन किया कि मुझे नहीं मालूम था की यह क्षेत्र आपसे सम्बन्धित है, मैं अभी लौट जाता हूँ। शाह दरवेश मुहम्मद (रहम.) को उनकी विनम्रता और दीनता पर बड़ी दया आई और उनकी निस्बत को वापस कर दिया और वे शैख़ साहब उसी समय लौट गये।

आपने 19 मुहर्रम 970 हिजरी (18/19 सितम्बर 1562) को अपना शरीर त्यागा। आपकी समाधि शाखरीसब्ज़ (उजबेकिस्तान) में शाखरीसब्ज़ से किताब की तरफ़ करीब 30 कि. मी. दूर अस्क़रार में स्थित है।

हजरत शाह दरवेश मुहम्मद की समाधि (शाखरीसब्ज़, उजबेकिस्तान

हजरत शाह दरवेश मुहम्मद की समाधि (शाखरीसब्ज़, उजबेकिस्तान

हजरत शाह दरवेश मुहम्मद की समाधि (शाखरीसब्ज़, उजबेकिस्तान

हजरत शाह दरवेश मुहम्मद के समाधि परिसर में उनके वंशज के साथ (शाखरीसब्ज़, उजबेकिस्तान)

ख्वाजा मुहम्मद इमकिनकी (रहम.)

'या इलाही दोस्त मेरे होएं हरदम शादमान,
ख्वाजा इमकिनकी मुहम्मद बादशाह के वास्ते'
(खुश रहें दोस्त मेरे सदा-सदा, हे परमात्मा !,
ख्वाजा इमकिनकी मुहम्मद बादशाह के नाम पर)

हजरत ख्वाजा इमकिनकी मुहम्मद बादशाह (रहम.) हजरत शाह दरवेश मुहम्मद (रहम.) के सुपुत्र और आत्मिक उत्तराधिकारी थे । आपका जन्म इमकान (बुखारा) में 918 हिजरी (1512/1513) में हुआ था । आपको अपने पूज्य पिता शाह दरवेश मुहम्मद (रहम.) से रूहानी निस्बत प्राप्त हुयी और उन्ही की अध्यात्मिक शिक्षा से वे पूर्ण समर्थ संत एवं सतगुरु की पदवी पर पहुँचे और तीस साल तक अपने पूज्य पिता की गुरु-पदवी पर सुशोभित रहे । वे इतने पहुँचे हुये संत थे कि ब्रहमाण्ड का प्रत्येक अणु, चाहे वह मानव हो या पशु-पक्षी या पेड़-पौधे या निर्जीव, सभी उनकी आध्यात्मिकता का सहारा लिये हुये था ।

यद्यपि आप बहुत ही वृद्ध हो गये थे और आपके हाथ काँपते थे लेकिन मेहमानों के लिये आप स्वयं अपने हाथों खाना लाते थे और प्राय: उनके नौकरों और सवारियों की देखभाल आप स्वयं करते थे । आप नक्शबंदी सिलसिले की साधना पद्धति का विशेष ख्याल रखते थे और नाम जप तथा आंतरिक अभ्यास के जो नये तरीके प्रचलित हो गये थे उनसे परहेज करते थे । आपके अध्यात्मिक चमत्कार व हृदय का प्रकाश सूर्य के प्रकाश से अधिक रौशन और प्रसिद्द थे और आप अपने वक्त के साधकों और जिज्ञासुओं के आकर्षण का केंद्र थे । उनकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैली हुयी थी और लोग उनकी कृपादृष्टि पाने के लिये उन्हें घेरे रहते थे । बादशाह तक उनकी चौखट की धूल अपने मस्तक पर लगाना अपना सौभाग्य समझते थे ।

कहा जाता है कि तूरान के बादशाह अब्दुल्ला खान ने स्वप्न में देखा कि एक बहुत सुन्दर सजे दरबार में हजरत रसूलल्लाह (सल्ल.) विराजमान हैं जिसके प्रवेशद्वार पर एक बुज़ुर्ग डंडा हाथ में लिये खड़े हैं । वे लोगों की मनोकामनायें और फ़रियाद हजरत रसूलल्लाह (सल्ल.) के पास ले जा रहे हैं और उनका जवाब ला रहे हैं । हजरत रसूलल्लाह (सल्ल.) ने एक तलवार अब्दुल्ला खान के लिये भेजी जो उन बुज़ुर्ग ने लाकर अब्दुल्ला खान की कमर में बाँध दी । जब सुबह बादशाह अब्दुल्ला खान जगा तो उसने उन बुज़ुर्ग का हुलिया बयान कर लोगों से उनके बारे में पूछा । किसी ने उन्हें बताया कि यह हुलिया ख्वाजा इमकिनकी (रहम.) का है तो वह उनके लिये कुछ भेंट लेकर उनसे मिलने चला । उनसे मिलकर बड़ा प्रसन्न हुआ और भेंट स्वीकार करने की विनती की लेकिन आपने इन्कार कर दिया और फ़रमाया कि फ़क़ीरी

की मिठास नामुरादी और कनाअत (संतोष) से है । इस पर अब्दुल्ला खान ने उन्हें क़ुरआन शरीफ का हवाला दिया कि रसूल की फरमाबरदारी करो और अपने हाकिम की, तो आपने मजबूर होकर भेंट स्वीकार कर ली । उसके बाद बादशाह प्रतिदिन प्रात:काल उनकी सेवा में उपस्थित होने लगा ।

इसी तरह समरकंद के बादशाह बाकी मुहम्मद खान ने यह जानकर कि बादशाह मीर मुहम्मद खान ने उस पर पचास हजार सैनिकों के साथ चढ़ाई कर दी है, आपके पास जाकर उसके हक़ में दुआ करने की प्रार्थना की । आप बादशाह मीर मुहम्मद खान के पास गये और उसे युद्ध न करने के लिये कहा पर वह न माना और आक्रमण कर दिया । आप अपने कुछ अनुयायियों के साथ एक पुरानी मस्जिद में काबा शरीफ की तरफ़ उन्मुख हो मुराक़ब: में बैठ गये और थोड़ी-थोड़ी देर में युद्ध का हाल दरियाफ्त करने लगे और तभी उठे जब बादशाह बाकी मुहम्मद खान की जीत की खबर आ गयी ।

एक बार तीन लड़के आपके पास आये, उनमें से दो ने कुछ खाने की चीज की इच्छा की, लेकिन तीसरे ने कुछ शरीअत के विरुद्ध । आपने पहले दोनों लडकों की उनके बिना बताये ही इच्छा पूरी कर दी और तीसरे से फ़रमाया कि दरवेशों से जो चमत्कार प्रकट होते हैं, शरीअत के अनुसार होते हैं, उनसे कोई व्यवहार या आचरण शरीअत के विरुद्ध नहीं प्रकट होता । फिर तीनों की ओर मुखातिब होकर फ़रमाया कि दरवेशों के पास दुनियावी उचित कार्यों के लिये भी नहीं जाना चाहिये, क्योंकि उनकी अन्त:करण की दशा ऐसी होती है कि प्राय: वे उन पर ध्यान नहीं देते और ऐसी हालत में उस व्यक्ति को नुक्सान ही होता है और वे उनके रूहानी फैज़ से वंचित रह जाते हैं । दरवेशों के पास खालिस परमात्मा के लिये जाना चाहिये जिससे कि उनके बातिन (हृदय) से हिस्सा मिले ।

अपने शरीरान्त से कुछ समय पहले आपने अपने प्रिय शिष्य और खलीफ़ा हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) को पत्र लिखा जिसमें आपने लिखा था कि हर वक्त मुझे मौत याद आती है । अब तक मुझे विशवास नहीं कि मेरे सामने क्या आने वाला है ? ख़ुदा से मेरी रीदू न हो जाये और जो कुछ मेरे सामने आये उसका मैं मुस्तहक़ (उसी के लायक) हूँ । इस पत्र लिखने के कुछ दिनों बाद ही 22 शाबान 1008 (8/9 मार्च 1600) को आपका शरीरान्त हो गया । आपकी समाधि शाखरीसब्ज़ (उजबेकिस्तान) में शाखरीसब्ज़ से किताब की तरफ़ करीब 30 कि. मी. दूर स्थित है ।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

जिज्ञासु को हर वक्त अपने हृदय में अपने गुरुदेव की उपस्थिति का अहसास होना चाहिये जिससे कि उनके प्रेम की उष्णता से उसका हृदय पूर्णरूप से भर जाये । इसी प्रेम की उष्णता को साधक को कण-कण में महसूस करना चाहिये । साधक को अपने हृदय की तमाम शक्ति को परमात्मा की हक़ीक़त की ओर लगाना चाहिये जिसने इस समस्त ब्रह्माण्ड को अपने अंदर समाहित कर रक्खा है । उसके हृदय में कोई संशय नहीं होना चाहिये कि सभी ओर

परमात्मा का ही वैभव प्रकट हो रहा है और उसके अलावा अन्य किसी चीज का कोई अस्तित्व नहीं है ।

इस सिलसिले में फ़ना की अवस्था प्रथम अवस्था है । 'फ़ना' की स्थिति में पहुँचने के बाद साधक को तत्व दर्शन की पात्रता प्राप्त हो जाती है । इस स्थिति में अन्य किसी चीज का कोई अस्तित्व नहीं रहता, यहाँ तक कि एक हक़ीक़त के सिवाय परमात्मा के नामों और वैभव का अस्तित्व भी समाप्त हो जाता है, अर्थात साधक परमात्मा की हक़ीक़त के सामने रूबरू हो जाता है और सभी तरह की उपाधियों से पूर्णतया मुक्त हो जाता है । परमात्मा की कैवल्यता को प्राप्त करना (एकमात्र परमात्मा की ही अनुभूति-अनन्य भाव का प्राप्त होना), अन्य सभी स्थितियों से श्रेष्ठतर है ।

ख्वाजा इमकिनकी की समाधि (शाखरीसब्ज़, उजबेकिस्तान)

ख्वाजा इमकिनकी की समाधि (शाखरीसब्ज़, उजबेकिस्तान)

ख्वाजा इमकिनकी की समाधि (शाखरीसब्ज़, उजबेकिस्तान)

ख्वाजा इमकिनकी के वंशज के साथ हजार वर्ष पुराने शहतूत के पेड़ के पास (शाखरीसब्ज़, उजबेकिस्तान)

ख्वाजा मुहम्मद बाकी बिल्लाह (रहम.)

'या इलाही एक तू बाकी रहे, और सबको जाऊं भूल,
ख्वाजा अब्दुल बाकी मुर्शिद रहनुमा के वास्ते'
(भूल जाऊं तेरे सिवा सब, बस एक तू बाकी रहे,
ख्वाजा अब्दुल बाकी बिल्लाह सतगुरु के नाम पर)

हजरत ख्वाजा मुहम्मद बाकी बिल्लाह बेरंग (रहम.) हजरत ख्वाजा इमकिनकी मुहम्मद (रहम.) के आत्मिक उत्तराधिकारी थे । आपका जन्म 5 धू अल-हिज्जाह 972 हिजरी (3 जुलाई 1562) को काबुल (अफगानिस्तान) में आजम नामक जगह पर हुआ था जो उस समय सुलताने हिन्द की एक कॉलोनी थी (भारत की सल्तनत के आधीन थी) । भारत में नक्शबंदी सूफ़ी सिलसिले को लाने का श्रेय आपको है । इस सिलसिले के आप पहले संत हैं जो भारत आये और दिल्ली को अपना कर्मक्षेत्र चुनकर यहीं बस गये ।

वे लौकिक और पारलौकिक दोनों विद्याओं में सिद्धहस्त और गुह्य (अध्यात्मिक) विद्या के भण्डार थे, 'फ़ना' और 'बका' की हद को पार किये मुशाहदा (ईश्वरीय अहसास) की उच्चतम अवस्था पर आरूढ़ थे । उनके विषय में उनके प्रिय शिष्य एवं खलीफ़ा शैख़ अहमद फारूकी (रहम.) का कहना था कि उनके गुरुदेव (हजरत बाकी बिल्लाह) को विलायत (परमात्मा से निकटता-सामीप्य) की उच्चतम अवस्था प्राप्त थी एवं वे अपने वक्त के क़ुतुब (सर्वोपरि संत) थे जिनसे संसार का हर प्राणी रूहानी पोषण पाता था ।

बचपन से ही आपके चेहरे पर एक तपस्वी एवं इन्द्रिय-निग्रही महात्मा के लक्षण दिखलायी पड़ते थे । वे परमात्मा के प्रेम में खोये एक दिव्यात्मा पुरुष थे जो अपना ज्यादातर समय एकान्त में व्यतीत करते थे । आपके पिता एक न्यायाधीश थे और आपने अपनी सांसारिक विद्या उस समय के प्रकाण्ड विद्वान मौलाना मुहम्मद सादिक हवाई (रहम.) से पायी और थोड़े ही समय में अपनी तीव्र बुद्धि के कारण आप अपने सहपाठियों से आगे बढ़ गये । आपने अभी अपनी सांसारिक विद्या पूर्ण रूप से समाप्त नहीं की थी कि इसी बीच आपने ईश्वर भक्ति के मार्ग में कदम रखा और मावराउलनहर (शाखरीसब्ज, उजबेकिस्तान) के बहुत से संत-महात्माओं की सेवा में हाजिर हुए परन्तु कहीं भी उन्हें साधना में स्थिरता प्राप्त नहीं हुयी । एक रोज जब आप सूफ़ी संतमत की कोई पुस्तक पढ़ रहे थे तो एक आत्मिक प्रकाश ने आपको बेचैन कर दिया और उस समय हजरत शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) की पवित्र आत्मा ने आपके अन्त:करण में नाम-जप करने का जज्बा भर दिया ।

वे पहली बार एक व्यापारिक कार्य के सिलसिले में भारत आये और यहाँ उनके अध्यात्मिक रुझान ने और जोर पकड़ा और वे सब कुछ छोड़कर अध्यात्मिक ज्ञान हासिल

करने में जुट गये। वे संतों-महात्माओं के सान्निध्य में अपना समय व्यतीत करने लगे और बहुत जल्दी आत्मिक ज्ञान के भण्डार बन गये। आप किसी कामिल सतगुरु की तलाश में रहते और इस तलाश में अथक परिश्रम करते और बहुत ही व्याकुल रहते। आपकी पूज्य माता को उनकी यह व्याकुलता सहन न होती और वे अपने पुत्र की इच्छापूर्ति के लिये ईश्वर से प्रार्थना करतीं। हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) फ़रमाया करते थे कि मुझे अध्यात्म मार्ग में जो भी कुछ मिला अपनी पूज्य माताजी की दिली दुआ से मिला।

कहा जाता है कि जिस ज़माने में आप लाहौर में थे वहाँ एक अवधूत रहा करता था जिसके पास आप जाया करते थे। वो कभी आपको पत्थर मरता, कभी गालियां देता और कभी आपसे दूर भाग जाता, लेकिन आप उसके पीछे लगे रहे और अंत में उसे आप पर दया आ गयी और उसने आपके हक़ में दुआ की। इसी दौरान आप सतगुरु की तलाश में मौलाना शेरगानी के पास पहुँचे और वहाँ से समरकंद पहुँचे। रास्ते में आपने हिंदुस्तान में अपने कुछ मित्रों को एक ख़त लिखा, जिसमें आपने लिखा:

“देख रह था मैं, मुहब्बत की दरिया से यह निशानियाँ,
कि पड़ी हैं किनारों पर, मुहब्बत करने वालों की हड्डियाँ”

इसी यात्रा में आपको आत्मिक प्रेरणा से यह ज्ञात हुआ की हजरत ख्वाजा उबैदुल्लाह अहरार (रहम.) फरमाते हैं कि हजरत ख्वाजा इमकिनकी मुहम्मद (रहम.) के पास जाओ और एक रात हजरत ख्वाजा इमकिनकी मुहम्मद (रहम.) ने स्वप्न में दर्शन देकर फ़रमाया कि, “ऐ फरजन्द ! मेरी आँख तेरी तरफ़ लगी हुयी है।” बाकी बिल्लाह साहब यह देखकर बहुत खुश हुए और आपके मुँह से यह शेर निकल पड़ा:

“चला जा रहा था दुखी होकर मैं, कि राह में,
खींच लिया मुझको एक क्रांतिकारी निगाह ने”

लगातार यात्रा कर हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) समरकंद पहुँचे जहाँ आपको अपने पूज्य गुरुदेव हजरत ख्वाजा इमकिनकी (रहम.) के दर्शन प्राप्त हुए। आपने कृपापूर्वक हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) को अपनी शरण में लेकर कुछ ही समय में रूहानी दौलत से मालामाल कर दिया। हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) को हजरत उबैदुल्लाह अहरार (रहम.) की कृपा भी प्राप्त हुयी जिससे शीघ्र ही वे आध्यात्मिकता के शिखर पर पहुँच गये और हर ओर उनकी तारीफ़ होने लगी। हजरत ख्वाजा इमकिनकी (रहम.) ने उन्हें अपना आत्मिक उत्तराधिकारी नियुक्त कर पूर्ण आचार्य पदवी प्रदान की एवं हिन्दुस्तान जाने का आदेश दिया और कहा कि वहाँ उनके द्वारा यह नया सिलसिला प्रचारित होगा व उनके पास आनेवाला एक अनुयायी सूर्य के समान प्रखर होगा।

अपने गुरुदेव की आज्ञानुसार हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) सौलहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में दिल्ली आये। मार्ग में वे एक साल लाहौर में रुके। दिल्ली में आप किला फिरोजी में रुके और वहीँ रहने लगे। आपके आगमन से भारतीय उपमहाद्वीप में नक्शबंदी सूफ़ी तरीकत का प्रचार एवं प्रसार बड़ी तेजी से होने लगा। लोग आपके ज्ञान, आलौकिक शक्तियों और दिव्य

आचरण से बहुत प्रभावित होते । सच्चे साधक आपकी आँखों में झाँकने मात्र से या आपके सान्निध्य में जाप करने मात्र से 'फ़ना' (लय) की अवस्था में पहुँच जाते । इस सब के बावजूद आप अपने आपको बहुत गुप्त रखते और किसी पर अपनी असलियत जाहिर न होने देते । अपने दुर्गुणों को ही देखने की प्रवृति और अमानी भाव आप में पूर्ण रूप से समाहित था । अगर कोई शख्स आपसे बैअत होने के लिये हाजिर होता तो आप उसे कुछ विवशता बतलाकर वापस कर देते और कहते 'भाई ! मैं इस लायक नहीं हूँ । तुम्हें किसी का पता लगे तो मुझे भी बतलाना, मैं भी उनकी खिदमत में हाजिर होऊंगा ।' लेकिन किसी में सच्ची जिज्ञासा देखते तो तत्काल उसे अपनी शरण में ले लेते ।

कहा जाता है कि एक व्यक्ति सतगुरु की खोज में था और वो हजरत ख्वाजा बख्तियार काकी (रहम.) की मजार पर उनकी रूह से इसके लिये प्रार्थना किया करता था । जब हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) दिल्ली पहुँचे तो हजरत ख्वाजा बख्तियार काकी (रहम.) की ओर से उस व्यक्ति को आत्मिक प्रेरणा हुयी कि नक्शबंदी सिलसिले के एक बुज़ुर्ग शहर में आये हुए हैं, तुम्हें उनकी सेवा में जाना चाहिये । वह शख्स आपकी सेवा में पहुँचा तो हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) ने फ़रमाया कि मैं इस लायक नहीं हूँ और उससे इतनी विवशता, दीनता व विनम्रता प्रकट की कि वह आपकी बात को मान गया और वापस चला गया । रात में उसने फिर स्वप्न में देखा कि हजरत ख्वाजा बख्तियार काकी (रहम.) ने फ़रमाया कि ये वही बुज़ुर्ग हैं, जिनका मैंने ईशारा किया था । वह अगली सुबह फिर हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) के पास हाजिर हुआ और रात का स्वप्न कह सुनाया । आपने फ़रमाया कि नहीं वह कोई और होंगे, मैं बिलकुल वैसा नहीं हूँ । तुम जाकर दूसरी जगह तलाश करो और किसी का पता चले तो मुझे भी बताना । मैं भी उनकी खिदमत में हाजिर होऊंगा । वह फिर वापस चला आया और फिर रात में हजरत ख्वाजा बख्तियार काकी (रहम.) को देखा जो फ़रमा रहे थे कि ये वही हैं, तुन उन्हीं के पास जाओ । इस बार वह शख्स बड़ी व्याकुलता और विनम्रता के साथ हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) के पास हाजिर हुआ और अर्ज किया कि अब मैं आपकी चौखट छोड़कर और कहीं नहीं जाऊंगा । तब आपने उसे स्वीकार कर लिया और उसे विशेष आग्रह के साथ आदेश दिया कि वह किसी को नहीं बताएगा कि वह कहाँ जाता है ।

ऐसा ही वाक्या आपके खलीफ़ा हजरत हसमुद्दीन अहमद (रहम.) के साथ घटित हुआ और उनसे आपने फ़रमाया कि मैं इस लायक नहीं हूँ और वे भी आपकी बात मानकर किसी और पीर की तलाश में आगरा चले गये । हजरत हसमुद्दीन अहमद (रहम.) बहुत हैरान परेशान थे कि क्या करें कि तभी आपके कानों में किसी की गाने की आवाज सुनाई दी:

"चाहे झाड़ो आस्तीन तुम या खीचों दामन अपना,
हलवाई की दूकान से असंभव है मक्खी का हटना"

यह सुनकर आप वापस आ गये और सारी घटना हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) को कह सुनाई । हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) ने कृपा कर उन्हें अपनी सेवा में स्वीकार कर दीक्षित किया । आप साधकों को उनकी पात्रता के अनुसार साधन-अभ्यास बताते । जिसमें प्रेम का

जज्बा ज्यादा देखते उसे 'तरीका राबिता' (सतगुरु के प्रेम को हृदयंगम करना) बताते, किसी को जिक्र-कल्बी तो किसी को ला-इलाहा-इलाल्लाह और किसी को 'इस्म-जात' (ईश्वर का जाती नाम) जप करने को फरमाते । आप तालीम हिम्मत व तवज्जोह फरमाते थे और साधक के हृदय को विशेषताओं से परिपूर्ण कर देते थे और उन्हें तरह-तरह की अनुभूतियाँ होने लगती थीं ।

आप हमेशा भावावेश में रहते और जिस पर आपकी कृपादृष्टी पड़ जाती वह कृतार्थ हो जाता । कुछ लोग तो आपकी मुखाकृति देखकर ही अवधूत अवस्था को प्राप्त हो गये । एक बार आपकी दृष्टी अपने प्रिय शिष्य एवं खलीफ़ा शैख़ अहमद फारूकी (रहम.) के नौकर पर पड़ गयी जिससे वह अवधूत अवस्था में पहुँच गया । जब वह इस हालत में शैख़ अहमद फारूकी (रहम.) के सामने पहुँचा तो उनका कहना था, 'यह बेचारा हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) के सामने पड़ गया जिससे उस सूर्य का प्रकाश इस कण से प्रस्फुटित हो रहा है ।' इसी तरह एक बार एक फौजी आपसे मिलने आया और अपना घोड़ा सईस के पास बाहर छोड़ आया । आप वुजू के लिये मस्जिद से बाहर तशरीफ़ ले गये और संयोग से आपकी नजर उस सईस पर पड़ गयी । इधर आप भीतर तशरीफ़ लाये उधर उस सईस पर भावावेश और बेख़ुदी का तेज असर हुआ और वह किसी ओर को चल दिया । फिर किसी को मालूम नहीं चला कि वह कहां गया । इसी तरह एक बार मिंबर पर चढ़े खतीब (धर्मोपदेश करने वाला) पर आपकी निगाह पड़ गयी और वो तड़प कर नीचे गिर पड़ा ।

इस सबके साथ ही हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) बहुत ही दयालु भी थे । सफर में यदि किसी बूढ़े व्यक्ति को पैदल चलते देखते तो अपनी सवारी पर उसे सवार कर देते और आप स्वयं पैदल चलने लगते । जब शहर निकट आता तो आप फिर अपनी सवारी पर विराजमान हो जाते ताकि आपके इस पुण्य कार्य की किसी को भनक न पड़े । एक बार तहज्जुद की नमाज़ अदा करने के बाद (आधी रात के बाद) जब आप आये तो देखा कि आपके लिहाफ़ में एक बिल्ली बैठी हुयी है । आप सुबह होने तक सर्दी में कष्ट उठाते रहे पर उस बिल्ली को लिहाफ़ से नहीं हटाया ।

कहा जाता है कि एक बार लाहौर में आपके सामने भीषण दुर्भिक्ष पड़ा । उस वक्त आपके सामने खाना लाया जाता तो आप उसको न खाते और फरमाते कि हम खाना खाएं और गली में लोग भूखे मरें, यह नहीं हो सकता और वह खाना उन लोगों के बीच भिजवा देते ।

आपका समस्त जीवन इन्द्रिय-निग्रहता, परमात्मा पर भरोसा, संतोष व दीनता का उदाहरण था । भोजन व कपड़ों का आपको होश भी न रहता । सांसारिक धन-दौलत से आपको कोई लगाव न था । वे अपने या अपने दरवेशों, किसी के वास्ते कुछ सामान एकत्रित कर न रखते । अपने व अपने मुरीदों के लिये वे फ़क्र (निर्धनता) व फाका (निराहार रहना), कनाअत (संतोष) व जुहद (इन्द्रिय-निग्रह) व मस्कनत (विनम्रता) के सिवाय कुछ न चाहते । फरमाते थे यदि किसी को मुझसे माली मदद पहुँचे तो समझ ले कि उससे मेरी दीनी मुहब्बत में कमी हो जाएगी । हाँ, गैर लोगों की मदद में वे हमेशा तत्पर रहते ।

कहा जाता है कि आपका एक पड़ोसी तरह-तरह की शरारत करता रहता और आप सब सहन करते रहते। आपके एक मुरीद ने उसे कोतवाली में बंद करवा दिया। आपने उस मुरीद से नाराज हो पूछा तो उसने कहा कि हुज़ूर वह बहुत शरारती है, इस पर आपने फ़रमाया, 'हाँ तुम अपने को नेक व सदाचारी समझते हो, तुमको दुसरे लोग शैतान व शरारती नजर आते हैं। हम क्या करें, हमें वह किसी तरह हमसे बुरा नहीं मालूम होता।' यह सुनकर उस मुरीद ने उस व्यक्ति को रिहा करा दिया।

इसी तरह एक बार जब आप हजरत ख्वाजा बख्तियार काकी (रहम.) की मजार पर हाजिर हुए तो एक क्रोधी स्वभाव के फ़क़ीर ने आपको बहुत भला-बुरा कहा। आपके चेहरे पर शिकन तक न आई बल्कि आपने उसे कुछ पैसे दिए और उसका पसीना अपनी बाँह से पोंछा और कहा मेरी कमबख्ती की वजह से तुम अपना दिमाग क्यों खाली करते हो ?

यदि आपके किसी शिष्य से कोई गलती हो जाती तो कहते यह मेरे ही दुर्गुणों के कारण है, अगर यह दुर्गुण मुझमें न होता तो इसमें प्रतिबिम्बित नहीं होता। अगर कोई शख्स आपके सामने किसी मुसलमान (ईश्वर भक्त) की बुराई करता, आप उसकी तारीफ़ शुरु कर देते। अपने अनुयायियों को हमेशा संसार और अपने जीवन को क्षणभंगुर समझने तथा अपने ही दुर्गुणों को देखने पर बल देते।

कहा जाता है कि एक बार हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) का इरादा हज यात्रा पर जाने का हुआ। खानखां ने एक लाख रुपया राह खर्च व सवारी के लिये आपकी सेवा में भेजा लेकिन आपने स्वीकार न किया और फ़रमाया कि मेरा हृदय स्वीकार नहीं करता कि किसी और का इतना धन अपने खर्च में प्रयोग करूं।

यद्धपि आप बहुत कमजोर हो गये थे लेकिन नाम जप और ईश आराधना में अत्यंत रुचि के साथ तल्लीन रहते। रात की (ईशा की) नमाज़ के बाद अपनी कोठरी में जाते और मुराक़ब: करते। जब कमजोरी मालूम देती उठकर वुजू करते और फिर नमाज़ पढ़कर ध्यान में बैठ जाते और इसी तरह पूरी-पूरी रात बिता देते। आप भोजन में अत्यंत सावधानी बरतते, यहाँ तक कि अपने और अपने दरवेशों के लिये अपनी पत्नी से कर्जा लेकर भोजन पकवाते और वह कर्जा फतूह (ईश्वर प्रदत्त लौकिक एवं पारलौकिक उपलब्धियां) में से चुकाते।

आपका विशेष निर्देश था कि भोजन पकाते और करते समय पवित्रता का विशेष ध्यान रखना चाहिये। जो खाना गैरख्याली में पकता है उसके खाने से एक धुंआ उठता है जो ईश्वर कृपा के उतरने के मार्ग को बंद कर देता है और पवित्र आत्माएं जो ईश्वर कृपा के उतरने के साधन हैं, उनके समक्ष नहीं आती। इसी कारण आपकी पूज्य माताजी, नौकरों के होते हुए भी सभी के लिये स्वयं रोटियां बनाती थीं।

आप पूरी एकाग्रता एवं दृढ़ संकल्प के साथ साधना एवं ईश-अराधना में लगे रहते थे। आप संगीत व जिक्र-जहर (आवाज के साथ नाम जप) अपने सतसंग में पसंद नहीं करते थे। एक बार आपके सतसंग में किसी के मुँह से 'अल्लाह' शब्द निकल गया। आपने फ़रमाया

कि साधना गुप्त रहनी चाहिये व शिष्टाचार का ध्यान रखना चाहिये । आपका फ़रमाना था कि ख़ुदा के रास्ते में पूरे अदब से लगे रहना चाहिये । जीवन भर ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने में लगे रहना चाहिये और उसकी प्यास बनी रहनी चाहिये चाहे कितना ही कुछ प्राप्त क्यों न हो जाये क्योंकि ब्रह्मज्ञान अथाह सागर है, जिसकी थाह कोई नहीं पा सकता ।

आपके एक पड़ोसी को एक अफसर पकड़ कर ले गया और उसने उन पर बहुत जुल्म किये । मजबूर होकर उस पड़ोसी ने आपको मन में याद कर आपसे सहायता मांगी । तुरंत आप पर यह घटना आपके अन्त:करण में प्रकट हो गयी । आपने अपने खलीफ़ा से फ़रमाया कि उस अफसर को जाकर उस बेजा फंसाये पड़ोसी को छोड़ देने के लिये कहें और यह भी कहें कि अगर न छोड़ोगे तो जान लो हमारे ख्वाज्गान (इस सिलसिले के बुज़ुर्ग संतजन) बहुत गयूर (स्वाभिमानी) हैं और इस जुल्म और इन्कार के बदले तुम्हें और तुम्हारे घरवालों को भारी कीमत चुकानी पड़ेगी । वह अफसर न माना । अभी शाम भी नही हुयी थी कि बादशाह की तरफ़ से उसपर कईं आरोप लगाकर उसे उसके घर के कईं नौजवानों के साथ कत्ल कर दिया गया और इस प्रकार उस पड़ोसी को उस अफसर से निजात मिली ।

एक बार एक शख्स आपकी परीक्षा लेने के लिए हजार रूपये लेकर आपके पास हाजिर हुआ और उनसे रूपये रखने का बहुत इसरार करने लगा, लेकिन आपने रूपये स्वीकार न किये । फ़रमाया 'फ़क़ीरों को धन-दौलत से क्या मतलब ? जो ख़ुदा तुम्हें देता है वही हमें भी देता है ।' जितना आप इन्कार करते उतना ही वह हठ करता । अंत में हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) ने अपनी चटाई का कोना उठाकर फ़रमाया "देख, इसके नीचे क्या है ?" उसने देखा कि सोने-चांदी की नदियाँ बह रही हैं । वह यह देखकर आश्चर्यचकित रस गया और उनके चरणों पर गिरकर क्षमा मांगी और भविष्य में संतों की परीक्षा लेने का विचार बिलकुल त्याग दिया और अपना मन ईश्वर भक्ति में लगा दिया ।

एक बार तीन-चार साल का एक बच्चा ऊँची दीवार से पक्के फर्श पर गिरकर गंभीर रूप से चोटिल हो गया, उसकी जान पर बन आई । कानों से खून बहने लगा और लग रहा था कि अब प्राण गये । कोई वैद्य-हकीम हाथ लगाने को तैयार न था । उसकी व्याकुल और बेहाल माँ रोती-पीटती हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) के पास हाजिर हुयी और बच्चे को उनके चरणों में डाल रो-रोकर उनसे दया, कृपा की विनती करने लगी और बोली कि अगर बच्चा नहीं बचा तो वो भी मर जाएगी । आपको उस पर रहम आगया और अपने सेवक से बोले कि अमुक किताब उठा लाओ । हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) अपनी आत्मिक शक्ति को किसी पर प्रकट न करते । आपने किताब देखकर फ़रमाया कि मैंने किताब में बच्चे के हाल के बारे में देख लिया है, तुम्हारा बच्चा मरेगा नहीं, इंशा अल्लाह वह बहुत जल्द अच्छा हो जायेगा । आपका यह फ़रमाना था कि बच्चे की हालत में सुधार होने लगा । थोड़ी ही देर में वह बिलकुल ठीक हो गया और उसकी माँ खुश-खुश बच्चे को लेकर घर चली गयी ।

हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) ने कुल चालीस वर्ष की उम्र पायी लेकिन बहुत अल्प समय में ही आपकी ख्याति चारों और फ़ैल गयी और दूर-दूर से लोग आपके पास हाजिर होने लगे ।

उस समय के बहुत से संत-सतगुरु भी पीरी छोड़कर आपकी सेवा में हाजिर हुए और आपकी रूहानी निस्बत से फैजयाब हुए। दिल्ली में जब आपकी ख्याति चारों और फैलने लगी तो कुछ ईर्ष्यालू मशायखों ने आपको नुक्सान पहुँचाने के लिये तरह-तरह के उपाय, जादू-टोना, साधनायें इत्यादि कीं पर सब निष्फल रहा और उलटे उन्हें ही इन सबसे नुक्सान हुआ और अन्त में वे थक-हारकर हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) की शरण में उपस्थित होकर उनके मुरीद हुए।

आपका अपने गुरुदेव के प्रति प्रेम और समर्पण इस घटना से मालूम चलता है कि एक बार भरी मजलिस में जब सब लोग ध्यानमग्न थे, आप अचानक खड़े हो गये। आपका पूरा शरीर रोमांचित था और भावावेश की स्थिति में आपकी आँखों से आंसू निकल रहे थे। ऐसा लग रहा था कि कहीं आप गिर न जायें। एक बुज़ुर्ग ने बड़े अदब से जब इसका सबब पूछा तो आपने फ़रमाया कि "जब आप सब लोग ध्यान में मग्न थे, मेरी आँख जरा खुल गयी थी। क्या देखा कि एक कुत्ता दरवाजे के आगे से गुजरा। इस कुत्ते की शक्ल उस कुत्ते से मिलती-जुलती थी जो इस पतित गुलाम के सतगुरुदेव के खानकाह (आश्रम) में आया करता था और मेरे हजरत पीरो-मुर्शिद खाना खाने के बाद अपना कुछ बचा हुआ खाना उस कुत्ते को दे दिया करते थे। यह नालायक गुलाम उस कुत्ते पर बड़ा रश्क (ईर्ष्या) करता था और उसे अपने से कहीं बेहतर व भाग्यशाली मानता था। इस कुत्ते को देखकर उस भाग्यशाली कुत्ते और अपने पीरो-मुर्शिद की याद आ गयी और दिल में ऐसा जज्बा उमड़ा कि अपने को संभाल न सका। वह बुजुर्गवार जिन्होंने यह सवाल पूछा था, यह सुनकर स्वयं एक जज्बी हालत में आ गये और फ़रमाया, 'हजरत ख्वाजा साहब, सचमुच शैख़ आप ही हो सकते हैं' और यह कहकर उन्होंने अल्लाहो-अकबर का एक मार्मिक नारा लगाया और प्रेम व भक्ति के उस जज्बे में अपने प्राण त्याग दिए।

हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) सिर्फ चालीस वर्ष तक जीवित रहे। आपने अपनी पत्नी को पहले ही बता दिया था कि चालीस वर्ष की अवस्था में आपके जीवन में एक महत्वपूर्ण घटना घटेगी, और यह घटना थी इस नश्वर संसार को छोड़ परमात्मा के साथ हमेशा कि ऐक्यता। आपने मृत्यु के समय फ़रमाया कि मृत्यु अगर ऐसी ही है तो बड़ी देन है और ऐसी स्थिति से निकलने का दिल नहीं चाहता।

हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) का जब अन्त समय नजदीक था एक मौलवी साहब आपकी सेवा में उपस्थित हुए और आपसे "बाकी बिल्लाह" का अर्थ पूछा। आपने फ़रमाया इसका अर्थ उन्हें उनकी मृत्यु के बाद पता चलेगा। अभी कुछ समय ही बीता था कि हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) बीमार पड़ गये। मौलवी साहब फिर आपके पास आये और अपना सवाल दोहराया। आपने फ़रमाया कि जो शख्स मेरे जनाजे की नमाज़ पढ़ायेगा वो ही "बाकी बिल्लाह" का अर्थ बतलायेगा। कुछ दिनों बाद आपने शरीर त्याग दिया और आपके शरीर को आखिरी स्नान कराकर कफन दिया जा चुका था और वसीयत के मुताबिक नमाज़ के लिये इमाम का इंतज़ार हो रहा था। इसी बीच लोगों ने देखा कि एक शख्स अपने को चादर से

लपेटे दूर से चला आ रहा था। उसने वहाँ आकर नमाज़-ऐ-जनाजा पढ़ी और जिस रास्ते से आया था उसी से वापस होने लगा। मौलवी साहब तैयार थे वे उसके पीछे लग गये और उससे "बाकी बिल्लाह" का अर्थ पूछने लगे। उन इमाम साहब ने अपने चेहरे से चादर हटायी तो मौलवी साहब ने देखा कि वे हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) स्वयं थे। मौलवी साहब अचम्भित थे कि तभी हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) वहीँ पेड़ों के सायों में गायब हो गये। "बाकी बिल्लाह" का अर्थ है जो अल्लाह के साथ निरंतर एकीभाव से स्थित हो, अर्थात अल्लाह के साथ बका हो। इस घटना से आपने समझाया कि उनके पार्थिव शरीर कि मृत्यु के उपरान्त उनकी रूह निरंतर परमात्मा में लीन और उसके साथ मौजूद हैं और उसका नाश नहीं हुआ। अपनी इस अनश्वरता का प्रमाण आपने इस रूप में दिया कि अपना स्थूल शरीर त्यागने के बाद भी आपने स्वयं अपनी आत्मिक शक्ति से स्थूल शरीर धारण कर अपने जनाजे की नमाज़ अदा कराई।

आपने 25 जुमादा अल-सानी 1012 हिजरी (29/30 नवम्बर 1603) को अपना शरीर त्यागा। आपकी समाधि दिल्ली में नई दिल्ली रेलवे स्टेशन से करीब दो कि. मी. दूर कुतुब रोड पर नबी करीम में ईदगाह के पास स्थित है। देश-विदेश से लोग यहाँ जियारत के लिये आते रहते हैं। कहा जाता है कि एक बार आप अपने कुछ शिष्यों के साथ इस जगह पधारे थे और यहाँ दो रकअत नमाज़ पढ़ी थी। यहाँ की कुछ मिट्टी आपके दामन पर लग गयी थी तो आपने फ़रमाया था कि यहाँ की मिट्टी दामनगीर (दामन पकड़ कर रोकने वाली) होती है।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

आप अपने पूज्य गुरुदेव के हवाले से कहा करते थे कि उनका फ़रमाना था कि अगर तुमको अपनी प्रशंसा और निंदा में अंतर मालूम हो अर्थात प्रशंसा से प्रसन्नता और निंदा से तक्लीफ़ मालूम हो और दोनों दशाओं में मन:स्थिति एक सी न रहे तो तुम प्रतीक्षा करो कि तुमको कोई अदब सिखाएगा।

तवक्कुल का अर्थ है सांसारिक साधनों से भरोसा हटाकर ईश्वर पर पूर्ण भरोसा होना और कमाल तवक्कुल (ईश्वर पर भरोसे कि इंतिहा) यह है कि सभी साधनों के भोक्ता इस शरीर पर, जो उस परमब्रह्म के प्रकटीकरण का एक अंश है, उस पर भी भरोसा न करे। लेकिन तवक्कुल का अर्थ यह नहीं है कि जीवकोपार्जन के आवश्यक कर्म त्याग दे। ऐसा करना बेअदबी है। अगर कोई दरवाजा बंद कर दीवार पर से गुजरना चाहे तो यह बेअदबी है। जीवकोपार्जन के लिये कोई उचित कार्य करते रहना चाहिये।

'याद कर्द' के मायने हैं जबान से याद करना। 'बाज गश्त' का मतलब है ईश्वर प्राप्ति को ही अपना उद्धेश्य जानना। 'याददाश्त' से आशय है परमात्मा कि सर्व-व्यापकता और उपस्थिति की अनुभूति में दृढ़ता होना।

'तौबा' का अर्थ है गुनाह से निकलना और अज्ञानता का पर्दा गुनाह है । तौबा की इंतिहा अपने में गहरे घुसकर मन को खंगालने में है ।

'जुहद' (सयंम) से आशय है इच्छा, चाह से निकलना और इसकी इंतिहा सांसारिक इच्छाओं से पूर्णतया विरक्ति है । जब दुनिया से सम्बन्ध (आसक्ति) तोड़ दोगे तो ईश्वर से मिलन हो जायेगा ।

'कनाअत' (संतोष) से आशय है भाग्यानुसार जो मिल जाये उस पर संतोष व फिज़ूलखर्ची छोड़कर केवल अपनी आवश्यकता अनुसार खर्च करना और इसकी इंतिहा यह है कि केवल ईश्वर प्रेम और अस्तित्व को अपने लिये पर्याप्त समझे और उसी में आनंद एवं विश्राम का अनुभव करे ।

'उज्लत' (एकांत वास) संसार कि घनिष्ठता से बाहर आने को कहते हैं और इसकी इंतिहा है सांसारिक चिंताओं और विचारों से पूर्णतया बाहर आना ।

'जिक्र'-ईश्वर के आलावा अन्य कोई जिक्र न हो और इसकी पराकाष्ठा है कि खुद जिक्र से बाहर आ जाये और जुहूर सिर्र हो (उस परमात्मा के परम रहस्य को प्रकट करने वाला हो) । जो जिक्र करने वाला है वह वही है जिसका जिक्र किया जा रहा है ।

'तवज्जोह' का अर्थ है ध्यान की एकाग्रता, विचारों के भटकाव से बाहर आना और पूर्ण रूप से ईश्वर की और ध्यान आकृष्ट होना ।

'मुराक़ब:' से आशय है अपने सत्कर्मों व सामर्थ्य के अहंकार से बाहर आना और ईश्वर कि दया, कृपा का आकांक्षी होना ।

'सब्र' से तात्पर्य है जो लोग और चीजें हमें प्रिय हो उससे बाहर आना ।

'समर्पण' से तात्पर्य है मन कि प्रसन्नता से बाहर आना और ईश्वर कि प्रसन्नता में प्रसन्न रहना और ईश्वरीय आदेशों का पालन करना ।

'सफ़र दर वतन'-उपरोक्त बातों के पालन को सफ़र दर वतन या ईश्वर की ओर यात्रा कहते हैं । उपरोक्त बातों का न होने का अर्थ है कि अभी साधना-पथ में कदम नही रखा गया ।

इस साधना पद्धति में जिक्र से जज्ब (ब्रह्मलीनता की भावानुभूति) पैदा होती है और जज्ब की मदद से सभी अध्यात्मिक स्थितियां सरलता और दृढ़ता से हासिल हो जाती हैं ।

'तसव्वुरे शैख़' से तात्पर्य है सतगुरु की अनुपस्थिति में उनकी सूरत सामने लाकर उसका ध्यान करना । यह उनके लिये अधिक उपयोगी है जिन्हें अपने सतगुरु से ऐसी मुहब्बत हो जाये कि उनकी अनुपस्थिति में उनकी सूरत हाजिर रहती हो ।

शिष्य को चाहिये कि अपनी इच्छा को दिल से निकालकर सतगुरु की इच्छा पर कायम रहे ।

इस सिलसिले की साधना गुरु और शिष्य दोनों पर निर्भर करती है । जिस प्रकार रुई आतिशी शीशे के सामने होने से सूर्य की गर्मी हासिल करती है उसी तरह साधक का हृदय सतगुरु कि तवज्जोह से परमात्मा के साक्षात्कार रुपी गर्मी को प्राप्त करता है ।

यह साधना पद्धति (नक्शबंदी सिलसिला) हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रहम.) से शुरु हुआ है क्योंकि उन्हें हजरत पैगम्बर (रसूल.) से निस्बत हुब्बी (प्रेम का लगाव) बदर्जे कमाल हासिल था और इसी राह से उन्होंने फैज़ हासिल किया । इस सिलसिले में मुहब्बत का रुख सिर्फ परमात्मा की तरफ़ है, रिद्दी-सिद्धियों की तरफ़ नहीं । आकर्षण और मुहब्बत हर इंसान में है मगर पोशीदा । इस सिलसिले में तालीम द्वारा इसे ही उभारा और दृढ़ किया जाता है ।

ध्यान की नित्यता बड़ी चीज है इससे दिलों में कुबूलियत पैदा होती है, अर्थात मुराक़ब: करने वाले साधक से लोग प्रेम करते हैं और वह लोगों से प्रेम करता है । दिलों में सर्वप्रियता पैदा होना परमात्मा की कुबूलियत की निशानी है ।

सतगुरुजन तीन कारणों से लोगों को अध्यात्मिक शिक्षा देते हैं; ईश्वरीय प्रेरणा, गुरु आज्ञा या लोगों की दशा देख दया और करुणा वश । दया और करुणा वश तालीम की शर्त यह है कि अपने धर्म का पालन करे और लोगों का धर्म का उपदेश दे और अपने व्यवहारिक जीवन में उसे उतारता रहे । ईश्वर साक्षात्कार कराने वाले संतों में दया शर्त नहीं है । इसी उद्धेश्य की पूर्ती के लिये अवतारों का धरती पर आगमन होता है ।

शिष्य को अपने आप को गुरु के हाथ में इस तरह सौप देना चाहिये जैसे मुर्दे को गुसल (नहलाने) कराने वाले के हाथों में । शिष्य को यह हक नहीं कि वह गुरु से सवाल करे कि मुझे इस तरह तालीम दी जाये । ऐसा कहना गुरुदेव के प्रति बेअदबी है ।

मुसलमान (ईश्वर भक्त) वही है जिसकी दृष्टी का केंद्र बिंदु दोनों जहान में सिर्फ परमात्मा की हस्ती हो और जो अपने आप को उसके आदेशों के आगे झुका दे ।

तलब हक़ीकी (ईश्वर की चाह) ईश्वर की अहेतुकी दया-कृपा से ही पैदा होती है किसी अन्य साधन से नहीं । हजरत पीरजाम (रहम.) का क्या खूब फ़रमाना है कि दोनों जहाँ

की इज्ज़त व सम्मान उन लोगों के हाथ है जो सारी उम्र ऐशो-आराम से (गफलत में) जिये लेकिन अंतिम समय में ईश्वर ने उन्हें तौबा की सामर्थ्य देकर अपनी तरफ़ उन्मुख कर लिया। ईश्वर की और उन्मुख होने की यह सामर्थ्य उसी की तरफ़ से ही मिलती है।

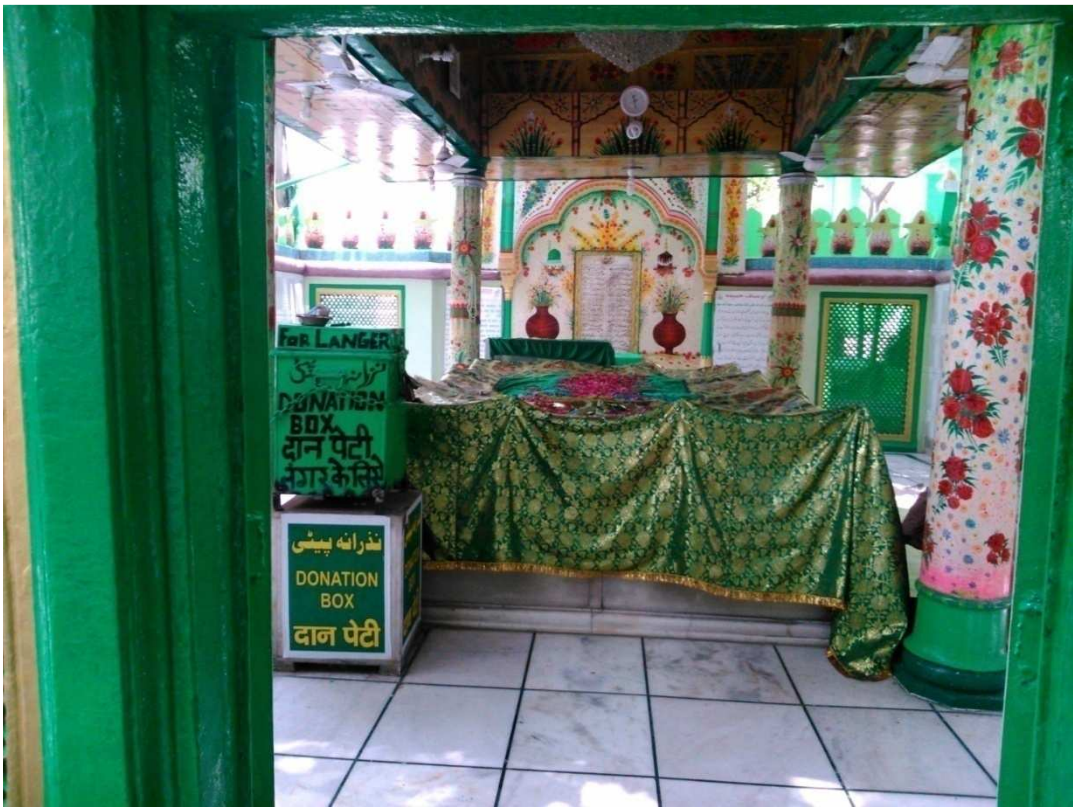

हजरत बाकी बिल्लाह की समाधि (दिल्ली)

हजरत इमाम रब्बानी मुजद्दिद अल्फ़सानी शैख़ अहमद अल-फारुकी अस-सरहिंदी ((रहम.)

'या इलाही या करीब कुर्ब कर अपना अता,
गौसुले आजम शैख़ अहमद पेशवा के वास्ते'
(बख्शीश कर अपनी निकटता तू मुझे, हे परमात्मा !
संत शिरोमणियों में अग्रणी, शैख़ अहमद के नाम पर)

हजरत इमाम रब्बानी मुजद्दिद अल्फ़सानी शैख़ अहमद अल-फारुकी अस-सरहिंदी (रहम.) हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) के आत्मिक उत्तराधिकारी और प्रमुख खलीफ़ा थे। आपका जन्म 14 शव्वल 971 हिजरी (25/26 मई 1564) को सिहर-निदबासिन (सरहिंद, पंजाब) में हुआ था। हजरत ख्वाजा इमकिनकी (रहम.) ने हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) को हिन्दुस्तान जाने का आदेश देते वक्त कहा था कि वहाँ उनके द्वारा यह नया सिलसिला प्रचारित होगा व उनके पास आनेवाला एक अनुयायी सूर्य के समान प्रखर होगा। हजरत शैख़ अहमद (रहम.) ही वे सूर्य के समान तेजस्वी महापुरुष थे, जिनके बारे में हजरत ख्वाजा इमकिनकी (रहम.) ने यह ईर्शाद फ़रमाया था।

हजरत शैख़ अहमद (रहम.) हजरत उमर फारुक (रजि.) के वंशज थे। 'रौज़तुल्कय्युमिया' नामक ग्रंथ के अनुसार आपके पूज्य पिताजी हजरत मखदूम (रहम.) ने आपके जन्म के पूर्व एक स्वप्न देखा था कि सारे संसार में अन्धकार छा गया है और सुअर, बन्दर व रीछ लोगो को मार रहे हैं। इतने में ही उनके सीने से एक नूर प्रकट हुआ जिसमें एक सिंहासन पर एक तेजस्वी पुरुष बैठा हुआ है जिसके सामने तमाम अत्याचारियों और नास्तिकों का वध किया जा रहा है और कोई व्यक्ति ऊँची आवाज में कह रहा है कि 'कह दो कि हक (सत्य) आ गया है और बातिल (झूठ) मिट गया है और झूठ मिट जानेवाली चीज है।' आपने इस स्वप्न का आशय हजरत शाह कमाल खतैली (रहम.) से पूछा तो उन्होंने फ़रमाया कि तुम्हारे यहाँ पुत्र पैदा होगा जो अज्ञानता रुपी अन्धकार, नास्तिकता और बिदअत (धर्म में नयी बात) दूर करेगा।

हजरत शैख़ अहमद (रहम.) एक बार बचपन में बहुत गंभीर रूप से बीमार हो गये। बचने की आशा न रही तो आपके पूज्य पिताजी ने हजरत शाह कमाल खतैली (रहम.) को झाड़-फूंक के लिये बुलाया। उन्होंने अपनी जबान उनके मुँह में दे दी जिसे हजरत शैख़ अहमद (रहम.) बहुत देर तक चूसते रहे। हजरत शाह कमाल खतैली (रहम.) ने फ़रमाया कि चिंता

मत करो, यह लड़का बहुत दीर्घायु, विद्वान और ब्रह्मज्ञानी होगा । आप फ़रमाया करते थे कि यद्दपि यह घटना बचपन की है लेकिन मुझे अच्छी तरह याद है ।

आप बहुत ही कुशाग्र बुद्धि थे और बचपन में थोड़े ही समय में आपने क़ुरआन शरीफ को कंठस्थ कर लिया था । इसके बाद आपकी अधिकांश शिक्षा आपके पूज्य पिताजी द्वारा हुयी । आपने स्यालकोट जाकर वहाँ मौलाना कमाल काश्मीरी जो उस समय के उच्चकोटि के विद्वानों में से थे, उनसे भी शिक्षा ग्रहण की । इसके पश्चात हदीसों के सभी मुख्य ग्रंथ एवं क़ुरआन मजीद की व्याख्याएं कई विद्वानों से पढ़ी । सत्रह वर्ष की अल्पायु में ही आप विद्याध्ययन समाप्त कर बड़े ही मेहनत और लगन से अध्यापन के कार्य में लग गये ।

इसी दौरान आपका आगरा, जो उस समय देश की राजधानी था, जाना हुआ और वहाँ आपकी मुलाकात प्रसिद्ध विद्वान अबुल फजल से भी हुयी लेकिन उनके धर्म में अविश्वास के कारण यह मुलाक़ात कुछ रंग न लायी और आप वापस सरहिंद लौट आये । रूहानियत में आपको सुहरावर्दी, कादरिया और चिश्ती सिलसिले की तालीम और इज़ाज़त अपने पिताजी से मिली लकिन उन्होंने चिश्ती सिलसिले के संगीत व वज्द (हाल, संगीत या कव्वाली द्वारा भावावेश कि स्थिति में पहुँचना) की रस्म को पसंद नहीं किया ।

इसी दौरान आप सख्त बीमार पड़ गये । आपकी धर्मपत्नी ने रो-रोकर आदर भाव से बहुत प्रार्थना की और इसी हालत में आपकी आँख लग गयी तो उन्हें ऐसा लगा कि कोई दिव्य वाणी कह रही थी कि परेशान न हो, अभी हमें इनसे बहुत काम लेना है । इसके बाद हजरत शैख़ अहमद (रहम.) जल्दी ही स्वस्थ हो गये ।

सन 1007 हिजरी में आपके पूज्य पिताजी ने वफ़ात पाई । इसके अगले वर्ष सन 1008 हिजरी में आप जब हज और हजरत पैगम्बर (सल्ल.) की समाधि के दर्शन हेतु निकले तो दिल्ली में आपकी मुलाकात अपने मित्र मौलाना हसन काश्मीरी से हुयी, जिन्होंने आपके हृदय में हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) के दर्शनों की इच्छा जगा दी और आप उनकी खिदमत में हाजिर हुए । अपने स्वभाव के विपरीत हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) ने आपको तुरंत अपना लिया और एक ही सप्ताह में सिलसिला नक्शबंदी की निस्बत का रंग आप पर पूरी तरह चढ़ गया । आपने अपना हाल हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) पर जाहिर किया तो उन्होंने तत्काल उन्हें दाखिल तरीका किया और एकांत में ले जाकर तवज्जोह शुरु की । उसी वक्त हजरत शैख़ अहमद (रहम.) का हृदय जाकिर हो गया (हृदय चक्र जागृत हो गया) । वे करीब दो माह हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) के पास रुके और इस दौरान उन्हें नक्शबंदी सिलसिले का सम्पूर्ण आत्मिक ज्ञान एवं पूर्ण आचार्य पदवी हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) से मिली । हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) ने उन्हें अपने पीरों-मुर्शिद का हिन्दुस्तान आने का आदेश और अन्य बहुत सी बातें बतलाई जिनसे मालूम चलता था कि यह सब घटनाक्रम इसी सन्दर्भ में घट रहा था ।

कहा जाता है कि हजरत पैगम्बर (सल्ल.) ने अपनी एक हदीस में उनके बारे में जिक्र किया है । शैख़ हुसामुद्दीन (कु. सि.) ने भी उनके बारे में कहा था, “मैंने अपने एक स्वप्न में

हजरत पैगम्बर (सल्ल.) को शैख़ अहमद सरहिंदी की प्रशंसा करते देखा है ।" शैख़ अहमद अल-जामी भी उनके बारे में भविष्यवाणी करने वालों में थे । उन्होंने कहा था कि 'मेरे बाद सत्रह प्रेमी भक्त जन्म लेंगे जिन सभी का नाम अहमद होगा, और उनमें से अंतिम सहस्त्राब्दी के अन्त में जन्म लेगा । वह सबमे सर्वश्रेष्ठ होगा और धर्म का पुन: संचारण करने वाला होगा । उनके बारे में भविष्यवाणी करने वालों में सबसे प्रमुख और निकट हजरत ख्वाजा इमकिनकी (रहम.) थे जिन्होंने अपने खलीफ़ा हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) को उनके आत्मिक पोषण के लिये भारत भेजा था । हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) फरमाते थे कि "यही कारण था जिसके लिये मैं बुखारा से हिन्दुस्तान आया था ।" जब वे पहली बार मिले, हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) ने फ़रमाया कि "तुम वही हो जिसके बारे में हजरत ख्वाजा इमकिनकी (रहम.) ने भविष्यवाणी की थी । ज्योहिं मैंने तुम्हें देखा मुझे अहसास हो गया कि तुम अपने वक्त के कुतुब (संत-शिरोमणि) होंगे । जब मैंने सरहिंद इलाके में प्रवेश किया तो मैंने एक प्रकाश-पुंज देखा जो अत्यंत विशाल एवं उज्जवल था और जिसका प्रकाश आकाश छू रहा था । सभी उस पुंज से प्रकाश प्राप्त कर रहे थे । तुम ही वो प्रकाश-पुंज हो ।"

कहा जाता है कि कादरी सिलसिले के शैख़ अब्दुल आद (रहम.) जो शैख़ अहमद सरहिंदी के पिता के गुरु थे, को कादरी सम्प्रदाय के प्रवर्तक हजरत अब्दुल कादिर जिलानी (रहम.) का एक चोगा दिया गया था । हजरत अब्दुल कादिर जिलानी (रहम.) ने यह आज्ञा दी थी कि "इसे उसके वास्ते संभाल कर रख लेना जो इस सहस्त्राब्दी के अन्त में जन्म लेगा और जिसका नाम अहमद होगा ।"

शैख़ अहमद सरहिंदी के जन्म के साथ एक और रोचक घटना जुड़ी हुयी है जो हजरत याह्या साहब (शैख़ अहमद सरहिंदी के वंशज व सज्जादानशिन) ने बतलाई थी । सरहिंद पंजाब उन दिनों एक घना जंगले हुआ करत था । उनके जन्म के पूर्व दिल्ली के बादशाह की एक सैन्य टुकड़ी जंगल से गुजर रही थी कि उस टुकड़ी के सरदार ने आसमान से उतरती रोशनी की एक किरण को देखा । वह एक गुणी एवं ईश्वरभक्त व्यक्ति था । उसने जब विचार किया तो प्रेरणा हुयी कि उस जगह पर एक महान व्यक्ति को जन्म लेना है । उसने तब सोचा कि बादशाह को वहाँ एक नगर बसाने के लिये कहा जाये । दिल्ली पहुँचकर उसने इस घटना का जिक्र बादशाह से किया । बादशाह ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर तुरंत कुछ कारीगर वहाँ के लिये भेज दिये और उन्होंने वहाँ एक नया शहर बनाने का काम शुरु कर दिया । लेकिन वे जो कुछ भी काम दिन भर में करते वह सुबह ढहा हुआ मिलता । बहुत जांच-पड़ताल के बाद यह क्यों हो रहा था और कौन कर रहा था पता न चल सका । करीब पन्द्रह दिन यही क्रम चलता रहा और बादशाह तक भी इसकी खबर जा पहुँची । लोग इसे किसी आलौकिक शक्ति का कार्य समझ रहे थे ।

उस सरदार के बड़े भाई एक वली (संत पुरुष) थे और बादशाह यह बात जानता था । इस परिस्थिति से निपटने के लिये बादशाह ने उन्हें वहाँ भेजा । जब वे वली साहब वहाँ पहुँचे तो देखा कि काम करने वाले मजदूरों में से एक के सर पर रखा बोझ हवा में ऊपर उठा हुआ था

। वे समझ गये कि वह कोई साधारण व्यक्ति न था । उन दिनों किसी भी व्यक्ति को पकड़कर इस तरह के काम में लगा लिया जाता था और बादशाह की सेवा से कोई इन्कार भी नहीं कर सकता था । यह व्यक्ति भी ऐसे ही जबरन काम पर लगा लिया गया था और वह कादरी सम्प्रदाय (जिस परम्परा में बाद में पंजाब में हजरत बुल्लेशाह हुये) से था । वली साहब ने आगे बढ़कर उनका इस्तकबाल किया तो वे बोले इस सब घटना का मकसद जो वहाँ हो रही थी उन्हें (वली साहब को) वहाँ बुलाना ही था क्योंकि उन्हीं के वंश में कुछ ही समय में एक महान आत्मा-हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी का अवतरण होने वाला था । उन्होंने वली साहब को वहीं सरहिंद में बस जाने को कहा और कालान्तर में उन्हीं के परिवार में उस दिव्य आत्मा, हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) ने जन्म लिया ।

हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) अपने शिष्य हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) के बारे में फरमाते थे कि वह एक प्रखर सूर्य की मानिंद है जिसकी रोशनी में उन जैसे (स्वयं हजरत बाकी बिल्लाह जैसे) सितारे ओझल हो गये हैं । अपने शिष्य के बारे में इस तरह के उदगार शायद ही किसी गुरु ने व्यक्त किये हों । उधर शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) का यह हाल था कि वे अपने पुज्य गुरुदेव का अत्यधिक आदर व विशवास रखते थे । एक बार आपके गुरुदेव हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) ने आपको किसी साधारण से काम के लिये याद फ़रमाया तो सुनकर आपके चेहरे का रंग बदल गया व तमाम शरीर में कम्पन पैदा हो गया व आप सकते कि हालत में आ गये ।

हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) ने 'मुद्दाए उलमाद' नामक रिसाला (पत्रिका) में लिखा है कि 'मेरा तो यह विशवास था ऐसी सुहबत, तरबियत व इर्शाद (सतसंग, तालीम एवं उपदेश) बाद जमाना हजरत मुहम्मद रसूल अल्लाह (सल्ल.) के हरगिज पैदा नहीं हुयी और ख़ुदा का शुक्र अदा किया करता था कि यद्दपि हजरत मुहम्मद रसूल अल्लाह (सल्ल.) की इस्लाम की सुहबत से मैं मुशर्रफ (सम्मानित) नहीं हुआ, पर ख़ुदा का हजार बार शुक्र है कि इस सौभाग्य से मैं वंचित नहीं रहा (अर्थात हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) की कृपा से वैसा ही सब मुझे प्राप्त हो रहा है) ।'

हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) ने उन्हें 'मुराद' अर्थात ऐसे शिष्य की श्रेणी में रखा जिसमें गुरुदेव स्वयं लय हो गये हों । हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) तीन दफ़ा अपने पूज्य गुरुदेव के पास दिल्ली हाजिर हुए और तीसरी दफ़ा वे हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) की वफ़ात से कुछ पहले हाजिर हुए थे जब हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) ने अपने दोनों पुत्रों ख्वाजा उबैदुल्लाह और ख्वाजा अब्दुल्लाह व परिवार की रूहानी परवरिश आपके द्वारा करवाई । शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) ने अपने पूज्य गुरुदेव के शरीर त्यागने के बाद शेष जीवन अत्यंत विरह में व्यतीत किया ।

हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) ने इज़ाज़त एवं खिलाफत मिलने के बाद सरहिंद को ही अपना कर्मक्षेत्र चुना पर वे सरहिंद से लाहौर गये जहाँ तमाम छोटे, बड़े, बूढ़े व बड़े-बड़े विद्वान व ज्ञानी आपकी शरण में आये और सिलसिला नक्शबंदी में दाखिल हुए और हजरत

शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) का प्रभाव बड़ी तेजी से फैलने लगा। इसी समय आपको अपने पूज्य गुरुदेव के शरीरान्त का समाचार मिला। आप अत्यंत व्याकुल होकर दिल्ली पधारे और सभी को सांत्वना दी। सभी लोग अब आपके सतसंग में हाजिर होने लगे और थोड़े ही समय में हजरत ख्वाजा बाकी बिल्लाह (रहम.) के वक्त जो ताजगी और सरगर्मी थी आपकी तवज्जोह से पुन: पैदा हो गयी। इसी कारण कुछ लोग आपसे ईर्ष्या भी करने लगे व तरह-तरह से आपका बुरा चाहने लगे पर किसी से कुछ न हुआ। हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) फिर सरहिंद तशरीफ़ ले गये और वहीं रहे। जो लोग आपका बुरा चाहते थे उन्हें भी अपनी गलती का अहसास हो गया और उन सब लोगों ने आपसे मुआफ़ी मांगी। आपने सबको मुआफ़ कर दिया और उसके बाद वे हजरत ख्वाजा बाकी बिल्लाह (रहम.) के सालाना उर्स में दिल्ली तशरीफ़ लाने लगे।

हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) ने अपनी पुस्तक में अपने एक विशिष्ट अनुभव का वर्णन किया है व उसे विराट रूप दर्शन (दायरा गजब इलाही) का नाम दिया है। इसमें आपने परमात्मा के विभिन्न रूपों का, रौद्र रूप एवं अनेक मनमोहक सुन्दर रूपों का वर्णन किया है, जो श्रीमद्भगवत गीता में वर्णित भगवन श्री कृष्ण के विश्व रूप दर्शन से मिलता है। फिर इसके ऊपर की यात्रा के बारे में आपने विस्तार से लिखा है कि "सबसे ऊंचे मुकाम की सैर हुई जिसके लिये ख़ुदा का लाख-लाख शुक्र है और यह वर्णन से परे है।"

हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) ने वर्णन किया है कि दिव्य आत्माओं ने उनकी समय एवं स्थान की सीमाओं को पार करने में सहायता की। उन्हें अनुभव हुआ कि परमात्मा ही सभी द्रव्यों का सारभूत है एवं परमात्मा ही बिना शरीर धारण किये ही सब जगह विद्यमान है। इसके बाद उन्होंने परमात्मा को सभी द्रव्यों के साथ, सभी वस्तुओं से आगे और फिर उन सभी के पीछे देखा। अन्त में वे उस स्थिति में पहुँच गये जहाँ उन्हें एकमात्र परमात्मा ही लक्षित हो रहे थे और अन्य किसी चीज का कोई अस्तित्व नहीं था। इसे उन्होंने परमात्मा की कैवल्यता कि साक्षी (अनन्यता) कहा, जो कि फ़ना कि स्थिति है। हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) ने वर्णन किया है कि इस स्थिति में उन्होंने अनुभव किया कि समस्त सृष्टि का एकमात्र सारभूत परमात्मा है और परमात्मा का सारभूत स्वयं का सारभूत है। उन्हें पहले 'फ़ना' फिर 'बका' की स्थिति तक उठाया गया, और फिर वापस साधारण मनुष्यों की स्थिति के अनुरूप अवस्था में लाया गया। इसे उन्होंने लोगो की आत्मिक उन्नति में सहायता करने की सर्वोपरि अवस्था बताया।

हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) ने फ़रमाया कि उनके सतगुरु हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) की असीम कृपा से उन्हें एक ऐसी शक्ति प्राप्त हुयी जिससे वे सृष्टि के किसी भी मनुष्य तक पहुँच सकते हैं। उन्होंने उस स्थिति में पहुँचने का जिक्र भी किया जिसमें आदि और अन्त का समन्वय था तथा बीजरूप और परिपक्वता का भी समन्वय था। बुज़ुर्गाने सिलसिला (इस सिलसिले के पूर्ववर्ती महापुरुषों) की कृपा से फिर वे अन्य ऊंचे मुकामों पर ले जाये गये, सर्वोच्च महापुरुषों की स्थिति तक। उसके उपरान्त परमात्मा की परम कृपा से वे

इससे भी परे, विशेष उद्‌गम अवस्था तक ले जाये गये। वहाँ पर शैख़ अब्दुल कादिर जिलानी (रहम.) की सहायता से उन्हें उद्‌गमों के उद्‌गम की स्थिति में ले जाया गया। यहाँ से उन्हें वापसी का आदेश मिला और वे नक्शबंदी एवं कादरी सिलसिले को छोड़कर सूफीमत के अन्य 39 तरीकतों से गुजरे। इन तरीकतों के बुजुर्गों ने उन पर अपनी रूहानी दौलत की वर्षा की जिससे उन पर से उन सभी रहस्यों से पर्दा हट गया जिनकी जानकारी उस वक्त तक किसी अन्य व्यक्ति को नहीं थी।

अध्यात्मिक पथ पर प्रगति के बारे में उनका फ़रमाना है कि अध्यात्मिक प्रगति की विभिन्न अवस्थाओं में साधक पहले परमात्मा की तरफ़ अग्रसर होता है जिसके लिये वह समय और स्थान की सीमा पार कर उर्ध्वगति से ऊपर उठता है। यहाँ सभी अवस्थाएं विगलित होकर 'परमात्मा का हक़ीकी ज्ञान' में परिणीत हो जाती हैं, जिसे 'फ़ना' की स्थिति भी कहा जाता है। इसके आगे की स्थिति है परमात्मा में विचरण। यह अवस्था परमात्मा के नाम और गुणों से ऊपर है और विवरण से परे है। इसे 'परमात्मा में स्थित होना' या 'बका' की स्थिति कहा जाता है। इसके बाद साधक परमात्मा से 'कारण व प्रभाव' के लोक की तरफ़ बढ़ता है। यहाँ वह सर्वोच्च स्थिति, ज्ञान की पराकाष्ठा पार कर, सामान्य लोगों की समझ के अनुकूल अवस्था की तरफ़ बढ़ता है। यह वह अवस्था है जहाँ परमात्मा से दूरी और निकटता दोनों बनी रहती हैं क्योंकि यहाँ साधक का हर कार्य परमात्मा के द्‌वारा और परमात्मा के लिये संपन्न होता है।

मार्गदर्शन की अवस्था, जो कि संत, महात्मा और पैगम्बरों की स्थिति होती है, इसमें उन्हें सृष्टि के अन्दर विचरण का व सभी तत्वों का और हालात का ज्ञान होता है। वे दिव्य ज्ञान को सृष्टि के लोगों में उनके कल्याण व उनकी उन्नति के लिये बाँटते रहते हैं। हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) ने इस प्रक्रिया को सूई में धागा पिरोने सरीका फ़रमाया जिसमें धागा, सूई और उसके छिद्र को पारकर अपने दुसरे सिरे से जा मिलता है और वहाँ गाँठ लगा दी जाती है। धागा, सुई और छिद्र तीनों मिलकर एक ऐसी पूर्णता को अंजाम देते हैं जो पथ में आने वाली किसी भी वस्तु को पिरोकर एकता रुपी वस्त्र में सी देते हैं।

नक्शबंदी सिलसिले के आलावा अन्य सभी तरीकतों में साधक को नीचे की स्थिति से ऊपर की और ले जाया जाता है, लेकिन नक्शबंदी सिलसिले में साधक को 'परमात्मा से' यानि उच्चतम स्थिति से साधारण स्थिति की तरफ़ लाया जाता है। यही कारण है कि नक्शबंदी सिलसिले के आचार्य अपने अनुयायियों के रूहानी अनुभवों पर से साधारण पर्दों को केवल अन्त में ही हटाते हैं।

एक बार रमजान के वक्त उन्हें दस व्यक्तियों ने अपने साथ रोजा खोलने का निमंत्रण दिया। रोजा खोलने के वक्त वे उन सभी के साथ उपस्थित होकर एक ही वक्त में उन सब की दावत में शरीक हो रहे थे।

हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) ने बहुत सी पुस्तकें लिखी जिनमें 'मक्तुबात' बहुत प्रमुख है। आपके पत्रों के संकलन से निम्नलिखित मुख्य: बातें सामने आती हैं:

आपकी प्रकृति व स्वभाव का सार तत्व (तीनत) उसी मिट्टी से बना कि जो हजरत मुहम्मद रसूल अल्लाह (सल्ल.) कि पूर्णता के बाद शेष रही थी । इसमें कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिये क्योंकि हजरत मुहम्मद रसूल अल्लाह (सल्ल.) ने स्वयं फ़रमाया है कि 'मैं, अबू बकर (रजि.) और उमर (रजि.) एक ही तीनत से पैदा हुए हैं और उबैदुल्लाद बिन जफ़र को भी फ़रमाया कि तू मेरी तीनत से पैदा हुआ है और तेरा बाप फरिश्तों के साथ आसमान में उड़ता था ।'

अल्लाह तआला ने आपको 'क़य्युमत' कि महान पदवी से नवाजा । कय्यूम ईश्वर का एक नाम है, जिसका तात्पर्य है तमाम चीजों को कायम रखने वाला । सभी चीजों का अस्तित्व परमात्मा से ही है और परमात्मा ही सभी चीजों का सारभूत है । आपने बताया कि एक रोज मैं ज़ुहर की नमाज़ (दोपहर की नमाज़) के बाद मुराक़ब: में बैठा था और हाफिज कुरआन पढ़ रहा था कि यकायक मैंने अपने ऊपर एक अत्यंत प्रकाशवान खिलअत (शाल, सम्मान में दिया गया वस्त्र) पाया । ऐसा मालूम हुआ कि यह खिलअत क़य्युमियत तमाम मुम्किनात है (अर्थात जिनका अस्तित्व सम्भव हो, उन सभी का कय्यूम होने का उपहाररुपी वस्त्र) जो हजरत मुहम्मद रसूल अल्लाह (सल्ल.) के उत्तराधिकारी व आज्ञाकारिता के रूप में मुझे प्राप्त हुआ है । इतने ही में हजरत मुहम्मद रसूल अल्लाह (सल्ल.) तशरीफ़ लाये और अपने हाथों से मेरे सर पर पगड़ी बाँधी और क़य्युमियत की महान पदवी पाने के लिये बधाई दी ।

हजरत मुहम्मद रसूल अल्लाह (सल्ल.) के एक हजार वर्ष बाद आपका आविर्भाव हुआ और आपने उन सभी रूहानी विद्याओं को नवीनता से उद्घोषित किया, इसलिए आप मुजद्दिद (नवीन करने वाला) अल्फ्सानी (दूसरा हजार) कहलाये । सौ साल के बाद होने वाले मुजद्दिद और हजार साल बाद होने वाले मुजद्दिद में उतना ही फ़र्क़ है जितना सौ और हजार में । मुजद्दिद वह है कि उस ज़माने में जो कुछ भी फैज उसके जरिये किसी उम्मत (समुदाय-पंथ) को पहुँचे, चाहे वे बड़े औलिया, संत-महात्मा ही क्यों न हों, उस फैज को उम्मत वालों तक पहुँचा दे ।

एक रोज ध्यान के वक्त आपको दीद कुसूर ग़ालिब हुई (अपना कोई अपराध या गलती दिखाई दी) । उसी समय ईश्वरीय प्रेरणा हुई कि 'बख्शा, तुझे और जिस शख्स ने सीधे या किसी माध्यम से क़यामत तक तेरे नाम का वास्ता दिया ।' आपने यह भी फ़रमाया कि क़यामत तक जो लोग सीधे या कैसे भी इस सिलसिले में दाखिल होंगे उन्हें मेरे सामने पेश किया गया, चाहूं तो उनका नाम, वंश, जन्म स्थान, घर, सब बतला दूं ।

एक बार आपको काबा जाने की बड़ी तीव्र इच्छा हुई । क्या देखते हैं कि सारा संसार, जिन्न व इंसान नमाज़ पढ़ते हैं और सिज्दा आपकी तरफ़ करते हैं । कश्फ़ (आत्म शक्ति द्वारा गुप्त बातों का जानना) द्वारा मालूम चला कि काबा शरीफ आपकी मुलाकात के वास्ते आया है और आपको घेर रखा है । इसीलिए सब लोग आपको सिज्दा कर रहे थे । तभी ईश्वरीय प्रेरणा हुई कि तू काबा जाना चाहता था, हमने काबा को ही तेरे पास भेज दिया ।

कहा जाता है कि एक बार जब आप सतसंग में विराजमान थे, शाह सिकंदर (रहम.) और शाह खतैली (कु. सि.) आये और एक खिर्का (संत-महात्माओं द्वारा पहना गया वस्त्र) आपके कंधो पर डाल दिया । आप शाह सिकंदर (रहम.) के सम्मान में उठकर उनसे गले मिले । शाह सिकंदर (रहम.) ने फ़रमाया यह हजरत अब्दुल कादिर जिलानी (रहम.) का खिर्का हमारे यहाँ पुश्तों से रखा आ रहा है । मेरे दादा (रहम.) ने फ़रमाया था कि जिसे मैं कहूँगा यह उसे दे देना । उन्होंने इसे तुम्हें देने के लिये कहा पर मैं इस प्रसाद-उपहार को अपने से अलग नहीं कर पा रहा था । मगर इस बार उन्होंने सख्ती से मुझे आदेश दिया है अत: विवश होकर यह खिर्का लाया हूँ । आप वह खिर्का धारण कर एकांत में चले गये । वहाँ आपके दिल में एक खतरा (दुर्विचार) गुजरा कि मशायख के भी अजीब दस्तूर हैं कि जिसे खिर्का पहनाया, खलीफ़ा बना दिया, वर्ना यह चाहिये कि पहले अपनी रूहानी दौलत से मालामाल करें । तत्काल हजरत अब्दुल कादिर जिलानी (रहम.) अपने सभी खलीफ़ाओं के साथ तशरीफ़ लाये और अपने सिलसिले की खास निस्बत के प्रकाश से उन्हें भर दिया । उस वक्त आपके दिल में यह ख्याल पैदा हुआ कि मेरी रूहानी परवरिश नक्शबंदी सिलसिले से हुयी है । यह ख्याल आते ही हजरत अब्दुल खालिक गज्देवानी (रहम.) से लेकर हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) तक सभी बुज़ुर्ग तशरीफ़ लाये और हजरत अब्दुल कादिर जिलानी (रहम.) के बराबर बैठे । उन्होंने फ़रमाया कि शैख़ अहमद हमारी रूहानी तालीम से कमाल व तकमील (पूर्णता) तक पहुँचे हैं, आपका इनसे क्या सम्बन्ध है ? कादरी सिलसिले के सतगुरुओं ने फ़रमाया कि इन्होने सबसे पहले चाशनी हमारे सिलसिले से खाई है (बचपन में हजरत शैख़ अहमद (रहम.) के बीमार होने पर शाह कमाल खतैली (रहम.) ने अपनी जबान मुबारक उनके मुँह में दी थी जिसे वे बहुत देर तक चूसते रहे थे) और अब खिर्का भी हमारा पहना है । इस बहस में हजरत चिश्तिया और सुहरावर्दी भी तशरीफ़ लाये और वे भी आप पर अपना हक ज़माने लगे क्योंकि हजरत शैख़ अहमद (रहम.) को उन सिलसिलों की इजाज़त भी सत्रह वर्ष की उम्र में मिल चुकी थी । हजरत शैख़ अहमद (रहम.) के खलीफ़ा मौलाना बदरुद्दीन सरहिंदी (रहम.) ने अपनी पुस्तक 'हजरातुल कुद्स' में लिखा है कि हजरत शैख़ अहमद (रहम.) से सुना है कि उस वक्त संत-महात्माओं की महान आत्माओं की भीड़ से पूरा गली-मोहल्ला भर गया था और इस बहस के चलते सुबह से दोपहर का वक्त हो आया । तब हजरत मुहम्मद रसूल अल्लाह (सल्ल.) तशरीफ़ लाये और अपनी महान दया व कृपा से सबको दिलासा देकर फ़रमाया कि क्योंकि शैख़ अहमद की तकमील तरीका नक्शबंदी से हुई है इस वास्ते यह इसी सिलसिले की तालीम की तरवीज (प्रचार) करें और बाकी दुसरे सिलसिलों की रूहानी निस्बत भी दिल में रखें कि इनका हक भी साबित है और इस बात पर फातिहा खैर पढ़ा गया और सब विदा हुये ।

एक बार कुरआन शरीफ पढ़ते आपके दिल में वसवसा (बुरा विचार) पैदा हुआ और उसी वक्त कुरआन शरीफ की आयत अनुसार 'शैतान के वसवसों से पनाह मांगता हूँ' से आपके

दिल से एक विचित्र पक्षी रुपी शैतान को बहार निकाल कर इससे हमेशा के लिये निजात दिला दी गयी । उसके बाद आपको रूहानी फैज में महान विस्तार और बढ़ोतरी हुयी ।

एक बार आपको स्वप्न में हजरत मुहम्मद रसूल अल्लाह (सल्ल.) की मौजूदगी में यमराज द्वारा इज़ाज़तनामा दिया गया, जिसमें कुछ कमी थी जिसे हजरत मुहम्मद रसूल अल्लाह (सल्ल.) ने स्वयं अपने हाथों मुहर लगा संसोधित कर आपको बख्शा जिसके द्वारा आपको यह अपूर्व सामर्थ्य प्राप्त हुआ कि वह क़यामत के समय जिस किसी की ईश्वर से मुक्ति की प्रार्थना करेंगे उसको मुक्ति प्रदान की जाएगी । आपने हजरत खदीजा (रजि.) के पुत्रवत दर्शन किये और उस इज़ाज़तनामा के अनुसार काम करने का आशीर्वाद पाया ।

एक बार उन्हें इल्हाम हुआ कि शैख़ ताहिर लाहौरी (रहम.) का नाम नेक लोगों की सूची से निकाल कर कठोर हृदय वालों की सूची में शामिल कर लिया गया है । आप बेचैन हो उठे क्योंकि 'लौह महफ़ूज' (भाग्य की तख्ती) में किसी अपराध का दंड (क़ज़ा) अटल और अकाट्य है । आपको हजरत अब्दुल कादिर जिलानी (रहम.) की यह बात स्मरण हो आई कि उन्हें यह विशेष सामर्थ्य दी गयी है, और तुरंत आप प्रार्थना करने लगे कि हे ईश्वर ! तूने अपने एक बन्दे को विशेष दया व कृपा से फैजयाब किया है, अगर इस आजिज को भी ऐसी सामर्थ्य बख्शे तो तेरे इस अकिंचन सेवक पर असीम कृपा होगी । उसी वक्त शैख़ ताहिर लाहौरी (रहम.) को ईश्वर की अहेतुकी कृपा से उस अपराध से नजात हो गयी ।

इसी तरह एक शख्स को जो आपसे कादरिया सिलसिले में दीक्षित हुआ, उसकी प्रार्थना पर हजरत अब्दुल कादिर जिलानी (रहम.) के दर्शन कराये जो ध्रुव तारे से एक तीर की तरह निकलकर आये और उसे दर्शन दिए ।

हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) मृत लोगों को भी सिलसिले में दाखिल कर लेते थे । एक व्यक्ति की वसीयत के मुताबिक उसके मृत शरीर को हजरत के पास हाजिर किया गया और अगले दिन उसे सतसंग में बैठे जिक्र करते देखा गया ।

तत्कालीन बादशाह की प्रिय बेगम नूरजहाँ के कारण शियाओं का प्रभाव बहुत बढ़ गया था । हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) ने उनकी भ्रांत धारणाओं और विशवास के खिलाफ़ लिखा । इसके अलावा हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) की प्रसिद्धि बहुत दूर-दूर तक फैली हुयी थी । उनकी इस प्रसिद्दी के कारण भी कुछ विद्वानों को उनसे ईर्ष्या होने लगी एवं उन्होंने तत्कालीन बादशाह जहाँगीर के कान उनके विरुद्ध भरकर बादशाह को मजबूर कर दिया कि वह उन्हें कारागार में डाल दे । उन्होंने बादशाह से कहा कि शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) अपने को हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रजि.) से श्रेष्ठ समझता है और इस सन्दर्भ में उनका लिखा एक पत्र दिखलाया जिसमें 'उरूज बातिन' (अध्यात्मिक चढ़ाई) की बात लिखी थी । आपने बादशाह को समझाया कि अगर बादशाह किसी व्यक्ति को बुलाकर उसके कान में कुछ कह दे तो क्या वह वापस लौटते हुए दरबार में बैठे सब व्यक्तियों से श्रेष्ठ समझा जायेगा । वही हाल उस 'उरूज बातिन' का है । बादशाह इस उत्तर से संतुष्ट हुआ तो लोगों ने हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) को बादशाह के आगे सिज्दा करने को कहा और

उनके इन्कार करने पर नाराज हो बादशाह ने उन्हें ग्वालियर के किले में क़ैद रखा। शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) के सुपुत्र हजरत मासूम रज़ा (रहम.) ने इस बारे में लिखा है कि कारागार में शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) पर बड़ा कड़ा पहरा रखा जाता लेकिन वे हर जुम्मे के दिन बड़ी मस्जिद में नमाज़ अदा करते दिखाई देते। उन पर पहरा और भी सख्त किये जाने के बावजूद वे कारागार से गायब हो जाते और मस्जिद में नमाज़ अदा करते पाये जाते। उनका बहुत सा समय क़ैद में गुजरा और वहाँ के लोगों को आपसे जो फायदा पहुंचना था पहुँचा। आपने बादशाह के लिये कोई बददुआ न की न ही अपने किसी अनुयायी को ऐसा करने दिया। अपने प्रयत्नों में विफल हो बादशाह को समझ आ गया कि वह हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) पर पाबन्दी लगाने में असमर्थ है। लज्जित हो कर बादशाह ने आपको बुलवाकर आपसे माफ़ी मांगी और आपको कारागार से मुक्त कर दिया।

अपने अंतिम दिनों में वे बादशाह जहाँगीर की शाही फ़ौज के साथ अजमेर शरीफ में तशरीफ़ रखते थे। जब उन्हें अपने शरीरान्त का समय नजदीक मालूम होने लगा तो आपने अपने सुपुत्रों को पत्र लिखकर बुलवाया। आपने यह कहते हुए कि 'मनसब क़य्यूमत' तुमको अता हो, और अशिया (दुनिया की चीजें और लोग) तुम्हारी क़य्यूमत पर बनिस्बत मेरे ज्यादा राज़ी हैं' हजरत मासूम रजा (रहम.) को क़य्यूमत की पदवी बख्शी। यह सुनकर हजरत मासूम रजा अत्यंत व्याकुल हो गये तो आपने फ़रमाया कि अभी थोड़े समय के लिये मुझे छोड़ दिया गया है और इस दौरान अशिया का कयाम तुम पर और तुम्हारा कयाम मुझ पर है। अब आपकी इच्छा एकांत में रहने की हुयी तो आपको शाही फ़ौज से मुक्त कर दिया गया और आप सरहिंद लौट आये। तालीम का सब काम आपने हजरत मासूम रजा (रहम.) के सुपुर्द कर दिया।

हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) ने सन 1624 में पहले से ही बता दिया था कि वे अब चालीस से पचास दिन के भीतर इस दुनिया से चले जायेंगे। जब चालीस दिन गुज़र गये तो फ़रमाया, देखिये अब इन पांच-सात दिनों में क्या होता है और उसी दौरान एक दिन नमाज़ के बाद आपने फ़रमाया कि यह मेरी आखिरी नमाज़ थी। इसके कुछ समय बाद आपने 28 सफ़र 1034 हिजरी (9/10 दिसम्बर 1624) को अपना शरीर त्याग दिया। आपकी समाधि सरहिंद में गुरुद्वारा फतेहगढ़ साहब के नजदीक स्थित है। दूर-दूर से लोग यहाँ जियारत के लिये आते रहते हैं।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

किसी जिज्ञासु को तालीम शुरु करने से पहले शैख़ को चाहिये कि तीन से सात इस्तिखारा कर ले (शगुन विचार ले या अध्यात्मिक शक्ति से पता लगा ले कि ईश्वर इच्छा से इसमें सफलता मिलेगी या नहीं)। फिर उससे तौबा करने को कहे लेकिन इस बात का ध्यान रखे कि इससे जिज्ञासु अकारण विचलित न हो जाये। फिर उसकी पात्रता के अनुसार उसे तालीम दे। उस पर दया करे और रास्ते के तरीके और आदाब सिखाये। क़ुरआन शरीफ एवं सुन्नते-

रसूल और गुजरे हुए नेक लोगों के रास्ते पर चलना और फरमाबरदारी सिखाये । साधक अपने पापों की अल्लाह से क्षमा मांगे और विशवास के दुरुस्त होने की प्रार्थना करे ।

साधक को चाहिये कि ईश्वर के जरुरी आदेशों को जाने और उन पर अमल करे । ये दोनों बातें आगे बढ़ने के लिये आवश्यक हैं । हराम और शक की चीजों से एहतियात रखे ।

तालिब जो रास्ते की सैर करते (जानकारी हासिल करते) आगे बढे (ब्रह्मज्ञानी) या जो बिना इधर-उधर देखे (अज्ञानी) सीधे मंजिल तक पहुँचे, दोनों में से किसी को किसी पर बड़ाई हासिल नहीं है । तासीर (प्रभाव) का कम होना काबलियत के कम होने की निशानी नहीं है । प्राय: जो साधना के क्षेत्र में अधिक उन्नतिशील होते हैं, वे इसके अहंकार में फंस जाते हैं ।

"तुम जान लो कि आदाबे सुहबत" (सतसंग में बैठने का तरीका या शिष्टाचार) का लिहाज और शरायत (शर्तों) का ख्याल करना इस राह की जरुरी चीजों में है । इसी तरीके से सीखने और सिखाने का रास्ता खुलता है और इसके बिना सतगुरु के साथ बैठंने-उठने से कुछ न होगा ।"

ये जरूरी शर्ते हैं: सतगुरु के सान्निध्य में सारा ध्यान उनकी ही ओर रहे, किसी और साधना या प्रार्थना में न लगा रहे । अगर बादशाह के सामने वजीर अपने कपड़े ठीक करता है तो क्या यह बादशाह के प्रति बेअदबी नहीं है ? जहाँ तक हो सके शैख़ की परछाई पर पैर न पड़े, न उसके प्रार्थना के नमदे पर । उसके वुज़ू करने की जगह वुज़ू न करे, न उसके सामने कुछ खाये-पिये । पीर कि गैरहाजिरी में भी उसके बैठने की तरफ़ न पाँव करे न थूके । पीर जो कहे उसमे विशवास रखे क्योंकि पीर इह्लाम (ईश्वरीय प्रेरणा) से कहता है और अल्लाह कि इज़ाज़त से कहता है । छोटी-बड़ी सब बातों में पीर का अनुसरण करना चाहिये ।

"जिस शख्स की सराय में बैठक हो खुद महबूब की,
क्यों करे ख्वाहिश वो बागों और फूलों को देखने की"

पीर की हरकतों पर कोई एतराज न करे, चाहे वह रत्ती भर ही क्यों न हो, एतराज करने से दुर्भाग्य के सिवा कुछ न मिलेगा । उनसे किसी चमत्कार या करामात कि इच्छा न करे । चमत्कार दुश्मन को पराजित करने के लिये किये जाते हैं, ये ईमान का सबब नहीं होते । चमत्कार दिल को ईश्वर की ओर से फेर देते हैं ।

अगर मन में कोई शक उपजे तो पीर के सामने कह दे और समाधान हो जाय तो ठीक वरना अपनी अज्ञानता समझे । अपने ख्वाब की ताबीर पीर से कराये । अपनी अक्ल को ऊपर न समझे । अपने पीर की किसी से तुलना न करे । कहीं से भी जो भी फैज़ मिले अपने पीर का ही समझे । अपने पीर की मुहब्बत में साबित कदम रहे । कोई बेअदब ख़ुदा तक नहीं पहुँचता । बेबस हो तो मुआफ़ी है, लेकिन अपनी कोताही स्वीकार करना जरूरी है ।

पीर ही जिन्दा करता या मारता है । यहाँ मुराद रूह से है न कि शरीर से । जिन्दा करने से मुराद फ़ना व बका की मंजिल तक पहुँचाना जो पीर के हाथ में है । शिष्य आत्मिक लगाव की वजह से पीर की तरफ़ खिंचता है और जो उनके पीछे-पीछे चलता है अपना पूरा हिस्सा पा लेता है ।

इंसान होने के नाते संत-महात्मा भी साधारण लोगों कि तरह दुनियावी जरूरतों के मोहताज होते हैं । आम लोगों की तरह उन्हें भी गुस्सा आता है । इसी तरह खाने-पीने और बच्चों से मुहब्बत के बारे में है । परमात्मा ने फ़रमाया है कि 'हमने उनका ऐसा जिस्म नहीं बनाया कि खाना न खायें ।'

फ़क़ीरों के लिये यह लाजिम है कि हमेशा अपने को कमतर या छोटा समझना, विनीत रहना और अल्लाह की बन्दगी करना । धर्मशास्त्र और पैगम्बर कि सुन्नत की हिफाजत करना । नेकी करने में नियत को दुरुस्त रखना और हृदय को शुद्ध रखना । अपने ऐबों को देखते वक्त और गुनाह करते वक्त अल्लाह की सजा से डरना । अपनी नेकियों को कम समझना और शोहरत से डरना । अपनी अध्यात्मिक स्थितियों और जानकारियों पर, चाहे वे सही भी हों, उन पर भरोसा न करना । लोगों को ईश्वर की ओर उन्मुख करने को भी कम नेकी समझना चाहिये क्योंकि यह काम बदकार लोग भी करते हैं । अध्यात्मिक तालीम के लिये आये मुरीद को शेर-बबर समझे और डरना चाहिये कि कहीं ऐसा न हो कि इस तरह वह बर्बाद हो जाये और ख़ुदा के प्रकोप के नजदीक । जितनी मुरीद के आने से ख़ुशी या अहंकार महसूस करे, उसे कुफ्र और शिर्क समझे और उसका इलाज तौबा और पापों की क्षमा याचना से करे ताकि उस ख़ुशी का प्रभाव न हो । मुरीद से कुछ भी दुनियावी उम्मीद न रखे क्योंकि इससे मुरीद और पीर दोनों खराब होंगे । ईश्वर के लिये सिर्फ और सिर्फ परमार्थ चाहिये । यहाँ किसी अन्य चीज के लिये कोई गुंजाइश नहीं । दिल पर जमा मैल और अन्धकार सिर्फ तौबा और पापों की क्षमा याचना से सम्भव है लेकिन दुनिया की मुहब्बत से पैदा अन्धकार छटना मुश्किल है । हजरत पैगम्बर (सल्ल.) का कहना है कि दुनिया की मुहब्बत तमाम गुनाहों की शुरुआत है । हम सबको परमात्मा दुनिया की मुहब्बत और दुनिया वालों की मुहब्बत और उनकी सुहबत से छुटकारा दिलाये क्योंकि यह विष के समान है और प्राणघातक बीमारी है ।

शैख़ अहमद सरहिंदी की समाधि (सरहिंद, पंजाब)-सबसे बायीं ओर

शैख़ अहमद सरहिंदी का समाधि परिसर (सरहिंद, पंजाब)

ख्वाजा मुहम्मद मासूम रजा (रहम.)

‘या इलाही हुब्बे पीराने तरीकत मुझको दे,
हजरते मासूम रासुल अत्किया के वास्ते’
(बुजुर्गों के प्रेम से नवाज मुझे, हे परमात्मा !
सयंमियों में अग्रणी, हजरत मासूम के नाम पर)

हजरत ख्वाजा मुहम्मद मासूम रजा (रहम.) हजरत इमाम रब्बानी मुजद्दिद अल्फ़सानी शैख़ अहमद अल-फारुकी अस-सरहिंदी (रहम.) के सुपुत्र, आत्मिक उत्तराधिकारी और प्रमुख खलीफ़ा थे। आपके पूज्य पिताजी ने अपने अंतिम दिनों में आपको पत्र लिखकर बुलवाया और यह कहते हुए कि ‘मनसब क़य्यूमत’ तुमको अता हो, और अशिया (दुनिया की चीजें और लोग) तुम्हारी क़य्यूमत पर बनिस्बत मेरे ज्यादा राज़ी हैं’ हजरत मासूम रजा को क़य्यूमत की पदवी बख्शी। यह सुनकर हजरत मासूम रजा अत्यंत व्याकुल हो गये तो आपने फ़रमाया कि अभी थोड़े समय के लिये मुझे छोड़ दिया गया है और इस दौरान अशिया का कयाम तुम पर और तुम्हारा कयाम मुझ पर है। अपने जीवित रहते हुये ही हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) ने तालीम का सब काम हजरत मासूम रजा के सुपुर्द कर दिया था।

आपका जन्म 1007 हिजरी (1598 ई.) में सरहिंद, पंजाब में हुआ था। वे हजरत शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) के तीसरे सुपुत्र थे। वे बचपन से ही संत के रूप में जन्मे थे और रमजान के दिनों में कुछ भी ग्रहण न करते। तीन वर्ष की अल्पायु में ही उन्होंने परमात्मा से एकता का परिचय यह कहकर दिया कि “मैं ही पृथ्वी हूँ, मैं ही आकाश हूँ और मैं ही परमात्मा हूँ आदि।” छः वर्ष की अल्पायु में ही आपने तीन महीने में कुरआन शरीफ को कंठस्थ कर लिया था। ऐसा इसलिये कि उन्होंने यह ज्ञान हृदय से ग्रहण किया और वे ज्ञान की पराकाष्ठा को शीघ्र ही पा गये। मात्र चौदह वर्ष की आयु में आपके पूज्य पिताजी ने आपकी रूहानी तालीम पूरी कर अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया था।

एक बार आपने अपने पूज्य पिताजी शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) से कहा कि उन्होंने स्वयं को एक ऐसी प्राणशक्ति के रूप में देखा जो इस ब्रह्माण्ड के प्रत्येक परमाणु में विचरण कर रही है और वे सब उनसे उसी तरह प्रकाश प्राप्त कर रहे थे जिस तरह पृथ्वी सूर्य से प्रकाश ग्रहण करती है। इस बात से शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) यह जान गये कि हजरत मुहम्मद मासूम रजा (रहम.) अपने वक्त के क़ुतुब (संत-शिरोमणि) होने वाले हैं।

शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) आपको महबूब-ऐ-ख़ुदा (अर्थात परमात्मा के प्रिय) कहते थे। आपके लिये उन्होंने अपने एक पत्र में लिखा था कि “मुहम्मद मासूम की सुपात्रता के बारे में क्या लिखूं ? वह स्वयं इस दौलत के काबिल हैं और खास विलायत मुहम्मदिया हासिल किये

हुए हैं ।” एक बार जब आप सो रहे थे और शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) साहब पधारे तो नौकर ने चाहा कि हजरत मासूम रजा (रहम.) को जगाये पर उन्होंने रोक दिया और फ़रमाया “अल्लाह का दोस्त आराम कर रहा है, खौफ़ लगता है, उसे तक्लीफ़ न पहुँचे ।” जब आप चौदह वर्ष के हुए तो शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) ने फ़रमाया, ‘तुम कुतुबे वक्त (अपने वक्त के संत शिरोमणि) होंगे और इस बशारत (भविष्यवाणी) को याद रखना । यह भविष्यवाणी सच व सार्थक हुयी और संसार आपकी अध्यात्मिक उपलब्धियों से पुरनूर (प्रकाशमान) हो गया । आपके द्वारा लाखों लोगों की दीक्षा हुयी और उनमें से हजारों को आपने सतगुरु पद तक पहुँचाया ।

आपका कश्फ़ (आत्मिक शक्ति द्वारा गुप्त रहस्यों का जानना, त्रिकालज्ञता) परम विशेस था और आप क़ज़ा (मृत्यु) को तब्दील करने की क्षमता रखते थे और कहकर भाग्य बदल देते थे । इस सबके बावजूद आप सिद्धांतों के पक्के थे । जब आपके पास आपके स्वयं के दामाद की व्यभिचार की खबर पहुँची तो आपने फ़रमाया कि वह मर जायेगा । आपकी सुपुत्रियों ने जीवन बख्शने की प्रार्थना की तो आपने फ़रमाया, ‘जो होना था हो गया, अब ईमान (धर्म) पर कायम रहने की प्रार्थना करो ।’ इसके तीन-चार दिन बाद ही दामाद का शरीरान्त हो गया ।

तत्कालीन सम्राट भी आपके सतसंग में हाजिर होता और जहाँ जगह मिलती बैठ जाता । जो भी अर्ज करना होता लिखकर सेवा में पेश करता ।

हजरत मासूम रजा (रहम.) के साथ बहुत सी चमत्कारिक घटनायें जुड़ी हुई हैं । एक बार उनके एक अनुयायी ख्वाजा मुहम्मद सिद्दीकी घोड़े पर यात्रा कर रहे थे । उनका संतुलन बिगड़ गया और वे रकाब से लटक कर घोड़े के साथ-साथ घिसटने लगे । उन्हें लगा कि मृत्यु नजदीक है कि तभी उन्हें हजरत मासूम रजा (रहम.) का ख्याल आगया और उन्होंने उनसे स्वयं को बचाने की प्रार्थना की । तुरंत हजरत मासूम रजा (रहम.) ने वहाँ प्रकट होकर घोड़े की लगाम थाम कर उसे रोक लिया और ख्वाजा मुहम्मद सिद्दीकी की जान बचा ली ।

एक बार वे अपनी खानकाह में लोगों के साथ बैठे थे कि यकायक उनके हाथों और बाँहों से पानी टपकता नजर आने लगा । आस पास उपस्थित लोगों ने इसका कारण जानना चाहा तो हजरत मासूम रजा (रहम.) ने फ़रमाया कि ‘अभी-अभी मेरे एक मुरीद ने जिसका जहाज पानी में डूब रहा था, मुझे पुकारा और मैंने हाथ बढाकर उसे डूबने से बचा लिया ।’ उन लोगों ने वह दिन और समय लिखकर रख लिया । कुछ माह बाद जब वह शख्स वहाँ लौटकर आया और उन्होंने उससे पूछा तो उसने बताया, ‘हाँ, उस समय हजरत मासूम रजा (रहम.) ने प्रकट होकर मेरी जान बचई थी ।’

इसी तरह एक बार आपने वुजू करते वक्त हाथ का लोटा जोर से दीवार पर दे मारा, लोटा टूट गया । बाद में मालूम चला कि उनके एक मुरीद का शेर से सामना हो गया था और उसी वक्त आपने प्रकट होकर शेर पर जोर से लोटा दे मारा, जिससे डर कर शेर भाग गया ।

आपके एक मुरीद का बेटा एक स्त्री के प्रेमजाल में उलझकर दीवाना सा हो गया था । वे उसे हजरत के पास लेकर आये । आप उसे समझाने लगे तो उसने एक शेर पढ़ा जिसका भावार्थ था कि:

"गुजरने न दिया गया हमें, नेकनामी की गली से,

गर तुझे पसंद नहीं तो, मेरे भाग्य को बदल दे'

यह सुनकर आपने फ़रमाया कि हमने तेरी क़ज़ा (तकदीर) बदल दी । उसने तत्काल तौबा की और उसी वक्त से उसके दिल से इश्क का भूत उतर गया ।

कहा जाता है कि एक जादूगर बहुत ऊँची आग तैयार कर उसमें प्रवेश कर जाता था, लेकिन उससे जलता नहीं था । इस आश्चर्यजनक करिश्मे से बहुत से लोग भ्रमित हो रहे थे । लोगों का भ्रम दूर करने के लिये हजरत मासूम रजा (रहम.) ने एक जगह बहुत ऊँची और विशाल अग्नि को प्रज्ज्वलित किया और उस जादूगर को उसमें प्रवेश करने के लिये ललकारा । वह उसमें प्रवेश करने की हिम्मत न कर सका । तब हजरत मासूम रजा (रहम.) ने अपने एक अनुयायी को "ला इलाहा इलाल्लाह" कहते हुए उस आग में दाखिल होने के लिये कहा । वह उस अग्नि से गुजरकर सकुशल बहार निकल आया, मानो वह अग्नि न होकर उसके लिये शांत फुहार हो । जादूगर के पास इसका कोई उत्तर नहीं था । निरुत्तर होकर उसने वह खेल दिखाना बंद कर दिया ।

शैख़ अब्दुल रहमान अल-तिरामिधि (कु. सि.) ने लिखा है कि एक बार वे अपने भाई के साथ हजरत मासूम रजा (रहम.) के पास हाजिर हुए । हजरत मासूम रजा (रहम.) ने उन्हें छोड़कर अन्य सभी को कुछ न कुछ वस्तु उपहार स्वरुप दी । वे कोई उपहार न मिलने से कुछ निराश थे । इसके कुछ समय बाद हजरत मासूम रजा (रहम.) उनके शहर की यात्रा पर आये । वे उनके स्वागत के लिये और लोगों के साथ हजरत मासूम रजा (रहम.) से मिलने पहुँचे । हजरत मासूम रजा (रहम.) ने उनकी ओर देखकर कहा, "अब्दुल रहमान उदास मत होओ । मैंने तुम्हारी परीक्षा ली थी और तुम्हारे लिये मैंने विशेष रूप से अपना चोगा बचाकर रखा है, जिसे मैंने अपने पिता शैख़ अहमद सरहिंदी (रहम.) से विरासत में पाया था ।" शैख़ अब्दुल रहमान (कु. सि.) ने उस चोगे को आदर सहित स्वीकार किया और जब उन्होंने उसे पहना तो उनकी नजरों से सभी सांसारिक चीजें अदृश्य हो गयीं । सब ओर उन्हें हजरत मासूम रजा (रहम.) दृष्टिगोचर होने लगे, यहाँ तक कि कण-कण में उन्हें उन्हीं का दर्शन हो रहा था । उनके आनंद की सीमा न थी कि इस आलौकिक भेंट ने उन्हें इस दिव्य दर्शन के योग्य बना दिया था ।

एक बार हजरत मासूम रजा (रहम.) ने फ़रमाया कि जब वे हज यात्रा पर थे तो उन्होंने देखा कि "काबा" उन्हें बहुत ही करुणा और भावावेश में अपने आलिंगन में लेकर चूम रहा है । उन्होंने देखा कि उनसे नूर और कृपा का विकिरण हो रहा है, जो फैलकर चारों दिशाओं को भर रहा है और सृष्टि के प्रत्येक कण-कण में समा रहा है । इसके बाद वे सभी अणु-परमाणु काबा के सारतत्व में प्रेमवश खिंचकर समाहित होते हुए दिखे । उन्होंने आगे बताया कि "मैंने

उसमे बहुत सी सिद्ध आत्माएं देखीं, जिनमें देवदूत और संत-महात्मा भी शामिल थे और वे सब मेरे सम्मान में इस तरह खड़े थे जैसे मैं उनका सुलतान हूँ । इसके बाद एक देवदूत द्वारा मुझे एक लिखित पत्र दिया गया जिसमें लिखा था 'स्वर्ग, ब्रह्माण्ड एवं समस्त सृष्टि के ईश्वर की तरफ़ से, मैं तुम्हारी हज यात्रा कुबूल करता हूँ ।'"

इसके बाद भी हजरत मासूम रजा (रहम.) ने अपनी यात्रा जारी रखी और वे हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के शहर मदिनात अल-मुनव्वराह पहुँचे । उन्होंने बताया कि जब वे हजरत पैगम्बर (सल्ल.) के पवित्र मकबरे पर पहुँचे और उन्होंने अपना चेहरा उनकी ओर किया तो उन्होंने देखा कि हजरत पैगम्बर (सल्ल.) बाहर पधारे और उन्हें अपने आगोश में लेकर चूमा । हजरत मासूम रजा (रहम.) के शब्दों में "इसके बाद मैंने अपने आप को ऐसी अवस्था में देखा मानो मेरा हृदय उनके हृदय से जुड़ गया हो, मेरी जुबान उनकी जुबान से और कान कान से । यहाँ तक कि मैं अदृश्य हो गया और केवल हजरत पैगम्बर (सल्ल.) ही दिखाई देने लगे और जब मैं हजरत पैगम्बर (सल्ल.) को देखने की कोशिश करने लगा तो उनकी जगह स्वयं अपने आप को देख रहा था ।"

ऐसा कहा जाता है कि हजरत मासूम रजा (रहम.) ने 900,000 लोगों को दीक्षित किया और 7000 लोगों को सतगुरु की पदवी बख्शी । आपके एक सप्ताह के सतसंग से सद्पात्रों को फ़ना की स्थिति एवं एक माह में बका की स्थिति प्राप्त हो जाती थी । ऐसा भी कहा जाता है कि वे अपनी कृपादृष्टि से लोगों को एक ही बार में परमात्मा का सामीप्य प्राप्त करा देते थे ।

हजरत मासूम रजा (रहम.) ने भी अपनी मृत्यु के बारे में पहले से ही फ़रमा दिया था । आपने 9 रबी अल-अव्वल 1079 हिजरी (13/14 जनवरी 1688) को इस संसार से विदा ली । आपकी समाधि भी अपने पूज्य पिताजी की समाधि के पास सरहिंद में गुरुद्वारा फतेहगढ़ साहब के नजदीक स्थित है ।

ख्वाजा मुहम्मद मासूम रजा की समाधि (सरहिंद, पंजाब)

शैख़ सैफुद्दीन (रहम.)

'या इलाही शिर्को, कुफ्रो व मासियत से दूर रख,
शैख़ सैफुद्दीन मुर्शिद रहनुमा के वास्ते'
(शिर्क, कुफ्र और नाफरमानी से दूर रख, हे परमात्मा !
पथ प्रदर्शक सतगुरु शैख़ सैफुद्दीन के नाम पर)

हजरत शैख़ मुहम्मद सैफुद्दीन (रहम.) हजरत ख्वाजा मुहम्मद मासूम (रहम.) के सुपुत्र, आत्मिक उत्तराधिकारी और प्रमुख खलीफ़ा थे। आपका जन्म 1049 हिजरी (1640 ई.) में सरहिंद, पंजाब में हुआ था। वे हजरत ख्वाजा मुहम्मद मासूम (रहम.) के पाँचवे सुपुत्र थे। आपने बचपन में ही थोड़े ही समय में कुरआन को कंठस्थ कर लिया था और उसके बाद सब उपयुक्त और महत्वपूर्ण ग्रन्थ भी पढ़ डाले। विद्यार्थी जीवन में ही आपने आध्यात्मिकता के क्षेत्र में अभूतपूर्व उपलब्धियां हासिल कर ली थीं। ग्यारह वर्ष की अल्पायु में ही आपके पूज्य पिताजी ने आपको 'फनाए क़ल्ब' की बशारत अता फरमाई और आपकी महान अध्यात्मिक क्षमता को देखते हुए वे हर क्षण आपकी अध्यात्मिक प्रगति का ध्यान रखने लगे।

तत्कालीन बादशाह औरंगजेब ने एक अवसर पर हजरत ख्वाजा मुहम्मद मासूम (रहम.) से अपने किसी शिष्य को उनका (बादशाह का) मार्गदर्शन एवं तवज्जोह के लिये भेजने का निवेदन किया। उन्होंने इस कार्य के लिये हजरत शैख़ सैफुद्दीन (रहम.) को भेजा। कहा जाता है कि जब आप दिल्ली पहुँचे और किले में दाखिल होने लगे तो दरवाजे पर हाथियों के चित्र बने देखकर रुक गये और फ़रमाया कि मैं इस किले में दाखिल नहीं हूँगा क्योंकि जिस घर में तस्वीर होती है वहाँ रहमत का फरिश्ता नहीं आता। अत: वे चित्र मिटा दिए गये। इसी तरह आपने शाही बाग में सोने की मछलियां जिनकी आखों में हीरे जड़े थे को भी स्वीकारोक्ति नहीं दी और बादशाह को उन्हें भी हटवाना पड़ा।

बादशाह औरंगजेब आपसे तवज्जोह लिया करता था और उसे अनेक अनुभूतियाँ भी हासिल हुयी। पूरी राजधानी में आपके उपदेशों की बहुत कद्र थी। बादशाह औरंगजेब ने अपने पुत्रों, मंत्रियों और अन्य पदाधिकारियों के साथ नक्शबंदी-मुजद्दिदी सिलसिले को स्वीकार किया। आपके सतसंग में बहुत अधिक लोग उपस्थित होते और लाभान्वित होते। अप कुछ समय दिल्ली रूककर वापस लौट आये। आपका फ़रमाना था कि पूर्णता के लिये हृदय कि चौकसी की निरंतरता और सतगुरु का सतसंग ही काफ़ी है। तपस्या और अत्यंत कठिन इन्द्रिय निग्रह से अध्यात्मिक चमत्कार तथा रिद्धि-सिद्दियाँ प्राप्त होती हैं, जिनकी इस सिलसिले में आवश्यकता नहीं है। आप सतसंग में शामिल होने वाले प्रत्येक व्यक्ति का हाल भलीभांति जानते थे और जैसी जिसकी आवश्यकता होती उसको पूरी करते थे। आप फ़रमाया करते थे

कि मैं क्या ईश्वर से दोस्ती का दम भरूं, मैं उसकी गली के दीन भिखारियों में सबसे गया बीता हूँ । आप बहुत गुप्त संत थे और अपने पिता और पितामह की सम्पूर्ण उपलाब्धियों को प्राप्त किये हुए थे ।

कहा जाता है कि आप प्राय: आधी रात की अंतिम बेला में हजरत मुजद्दिद अल्फ़सानी (रहम.) की मजार पर हाजिर हो उसकी परिक्रमा किया करते थे और फरमाते थे कि मैं हजरत की दरगाह का कुत्ता हूँ ।

कहा जाता है कि एक बार आपके सेवकों में से कोई शख्स काबुल से ईरान को जा रहा था । रास्ते में एक राफ़जी (शिया) घोड़े पर चढ़ा उसके आगे-आगे जा रहा था कि उसके मुँह से नक्शबंदी सिलसिले के बुजुर्गों के खिलाफ़ कुछ बेअदबी की बातें निकली । उस सेवक ने तत्काल उसका सर तलवार से काट डाला । इसके बाद उसे खौफ़ हुआ कि कहीं उसके साथी उसे नुक्सान न पहुंचाए कि क्या देखता है कि एक नकाबपोश वहाँ प्रकट हुआ । उस नकाबपोश ने एक डंडा उस शख्स की मृतक देह पर मारा और फ़रमाया कि हमने इसे गधे की शक्ल में बदल दिया है । सेवक के विनती करने पर नकाबपोश ने नकाब हटाया तो उसने देखा वे हजरत शैख़ सैफुद्दीन (रहम.) थे । उसी समय उसके साथी भी आ गये और उसका घोड़ा खाली पाया और पास ही गधे की लाश पड़ी थी । शर्मिंदा हुए और कुछ न पूछा और चुपचाप वहाँ से चले गये ।

आपने अपनी मृत्यु के बारे में पहले से ही संकेत दे दिया था । आपने 47 वर्ष की उम्र में 26 जमादिउल अव्वल 1096 हिजरी (1686 ई.) को अपना शरीर त्यागा । जब लोग जनाजे को दफन करने चले तो जनाजा लोगों के हाथों से ऊपर उठकर हवा में चला जाता । बहुत लोग चाहते थे कि कन्धा दें मगर यह संभव नहीं हो पा रहा था । समाधि स्थल पर पहुँच कर जनाजा स्वत: ही नीचे उतर कर रखा गया । आपकी समाधि भी आपके पूज्य पिता व पितामह की समाधि परिसर में उन्हीं के पास सरहिंद में गुरुद्वारा फतेहगढ़ साहब के नजदीक स्थित है । आपकी मृत्यु के पचास वर्ष बाद आपकी समाधि वर्षा में बैठ गई, उसमें हूबहू वैसी ही सुगंध आ रही थी जैसी आपके पार्थिव शरीर को दफ़नाने के समय लगाई गयी थी और शरीर भी ठीक वैसा ही था जैसा पहले दिन था ।

शैख़ मुहम्मद सैफुद्दीन की समाधि बाहर से (सरहिंद)

शैख़ मुहम्मद सैफुद्दीन की समाधि (सरहिंद)

हजरत नूर मुहम्मद बदायूनी (रहम.)

'या इलाही गैर का मुहताज मत कर मेरे रब,
सैय्यदे नूरे मुहम्मद मुक्तदा के वास्ते'
(गैर का मुहताज मत करना मुझे, हे परमात्मा !
कृपापात्रों में अग्रणी सैय्यद नूर मुहम्मद के नाम पर)

हजरत नूर मुहम्मद बदायूनी (रहम.) शैख़ सैफुद्दीन (रहम.) के आत्मिक उत्तराधिकारी और प्रमुख खलीफ़ा थे। आपका जन्म 1075 हिजरी (1664 ई.) में बदायूं में एक पवित्र सय्यद परिवार में (हजरत पैगम्बर के वंश में) हुआ था। आप अत्यंत मेधावी और उच्च कोटि के विद्वान थे। आपने हजरत शैख़ सैफुद्दीन (रहम.) से इल्म बातिन (अध्यात्मिक शिक्षा) प्राप्त कर सभी रूहानी मुकामात और साधना की सर्वोच्च स्थितियों को हासिल किया। आप शुरु के पंद्रह वर्ष लगातार साधना में तल्लीन रहते थे। आपकी तल्लीनता सिर्फ नमाज़ के वक्त टूटती और नमाज़ व नित्यकर्म के बाद आप फिर तन्मयता की स्थिति में चले जाते। यह सिलसिला जो पंद्रह वर्ष चला, उसका प्रभाव आपके शरीर पर यह पड़ा कि आपकी रीढ़ की हड्डी टेढ़ी हो गयी और आपकी कमर झुक गयी।

आपको भोजन के स्वाद से कोई लगाव न था, जो मिल गया प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण कर लेते। अमीरों का खाना वे कभी न खाते क्योंकि उसमे संदेह की गुंजाइश हमेशा बनी रहती है। किसी दुनियादार की किताब भी तीन दिन तक रखकर ही उसके बाद पढ़ते। फरमाते कि 'दुनियादारों की सुहबत से किताब तक पर तमस की तह लिपट गई है।' आपका यह भी फ़रमाना था कि बुरे लोगों की मुलाकात से रूहानी तरक्की अवरुद्ध हो जाती है। वे गाढे पसीने की कमाई का ही खाना खाते, स्वयं खाना पकाते और बहुत धीरे-धीरे छोटे-छोटे टुकड़े कर खाते। वे कहा करते थे कि पिछले कई वर्षों से यह ख्याल कभी मेरे दिल में नहीं आया कि मेरा गुजर कैसे होगा या आवश्यक सामान का प्रबंध कैसे होगा। जब भूख महसूस हुई, जो मिला सो खा लिया।

आपको अपने पूज्य गुरुदेव की सेवा में लम्बे समय तक रहने का सौभाग्य मिला। वे शैख़ मुहम्मद मोहसिन (कु.सि.), जो शैख़ मुहम्मद मासूम रजा (रहम.) के खलीफाओं में से एक शैख़ अब्दुल हक (कु. सि.) के सुपुत्र थे, की सेवा में भी रहे। शैख़ मुहम्मद मोहसिन (कु.सि.) अपने वक्त के हदीस के प्रसिद्द व्याख्याकार थे। उनकी सेवा से उन्हें उनकी कृपा का अपूर्व लाभ मिला जिससे वे परिपूर्णता की स्थति तक सहज ही पहुँच गये। उन्होंने अनगिनत सुन्न: को जो विस्मृत हो गयी थीं पुन: रोशन किया और बहुत सी बिदअत (धर्म में नयी बात) को दूर किया।

उनके प्रिय शिष्य और खलीफ़ा हजरत मज़हर मिर्ज़ा जानजाना (रहम.) जब उन्हें याद करते तो उनकी आखों से अश्रु प्रवाहित होने लगते । वे अपने अनुयायियों को उनके बारे में कहा करते थे कि 'तुमने उस पवित्र आत्मा को नहीं देखा । यदि तुम उस वक्त रहे होते तो तुम्हारा विशवास परमात्मा में और दृढ़ हो जाता कि वह अपनी कृपा से उन जैसे पुरुष को भी रचता है ।'

हजरत नूर मुहम्मद बदायूनी (रहम.) की अंतर्दृष्टि विलक्षण थी । हजरत मज़हर मिर्ज़ा जानजाना (रहम.) कहा करते थे कि वे अपनी आखों की जगह अपने हृदय से कहीं बेहतर देख लिया करते थे । एक बार एक व्यक्ति उनके पास आ रहा था तो मार्ग में उसकी दृष्टी एक अनजान स्त्री पर पड़ गयी । जैसे ही वह हजरत नूर मुहम्मद बदायूनी (रहम.) के सामने पहुँचा उन्होंने कहा कि वे उसमे बेवफाई के अवशेष देख रहे हैं और वह आगे से अपनी दृष्टी बचाकर रखे । इसी प्रकार एक बार उन्हें (हजरत मज़हर मिर्ज़ा जानजाना (रहम.) को) रास्ते में एक शराबी दिखाई दिया । जब वे हजरत नूर मुहम्मद बदायूनी (रहम.) के सामने हाजिर हुए तो उन्होंने कहा कि मैं तुम में शराब के अवशेष देख रहा हूँ । हजरत मज़हर मिर्ज़ा जानजाना (रहम.) को इससे अहसास हुआ कि इस जीवन में एक व्यक्ति के चरित्र का प्रभाव दूसरे पर पड़ता है और प्रत्येक चीज की छाया दुसरे में प्रतिबिंबित होती है ।

हजरत मज़हर मिर्ज़ा जानजाना (रहम.) ने अपने पुज्य गुरुदेव के विषय में एक और घटना का वर्णन किया है । एक दिन एक स्त्री ने आकर उनसे निवेदन किया कि उसकी पुत्री को एक जिन्न उठाकर ले गया है और बहुत कोशिशों के बाद भी वह अपनी पुत्री को वापस नहीं ला सकी । हजरत नूर मुहम्मद बदायूनी (रहम.) कुछ देर शांत हो ध्यानमग्न बैठे रहे और फिर बोले तुम्हारी पुत्री कल दोपहर की नमाज़ के वक्त वापस आ जाएगी । आपसे किसी ने पूछा कि आपने कुछ देर बाद क्यों फ़रमाया कि तेरी लडकी फलां वक्त घर आ जाएगी तो आपने फ़रमाया कि मैंने पहले अल्लाह तआला के दरबार में प्रार्थना की कि अगर मेरी हिम्मत में असर हो तो तेरी दया व कृपा से लड़की को जिन्नों से मुक्त कराऊँ । जब प्रेरणा हुयी कि तेरी हिम्मत में असर है तब मैंने हिम्मत की और लडकी के लौटने के बारे में कहा । अगले दिन ठीक उसी समय उस स्त्री के दरवाजे पर दस्तक हुयी और उसकी पुत्री वापस आ गयी । पूछने पर उसने बताया कि 'एक जिन्न मुझे उठाकर रेगिस्तान में ले गया था । मैं उस रेगिस्तान में भटक रही थी कि तभी एक शैख़ ने आकर मेरा हाथ पकड़कर यहाँ ला खड़ा किया ।'

कहा जाता है कि आपके पड़ोस में एक भांग बेचने वाले की दूकान थी । आपने एक दिन फ़रमाया कि इस वजह से निस्बत में क्षीणता आ रही है । आपके एक मुरीद ने अपने प्रभाव से उस दूकान को वहाँ से हटवा दिया तो आपने फ़रमाया कि अब निस्बत में और भी क्षीणता आ गयी है क्योंकि उस शख्स की दूकान शरीअत के तरीके के खिलाफ हटवाई गयी थी । पहले उसे समझाकर तौबा करवानी चाहिये थी और न मानता तो सख्ती करनी चाहिये थी । फिर आपने उसे बुलवाया और अपने मुरीदों की तरफ़ से विवशता जाहिर की, उसे कुछ रूपये

दिए और उसे समझाया कि शरीअत के खिलाफ पेशा अच्छा नहीं, कोई और अच्छा काम करने की सलाह दी। उसने तत्काल तौबा कर दूसरा कोई पेशा अपना लिया।

आपकी वफ़ात (शरीरान्त) के बहुत सालों बाद अभी हाल ही में उसी कब्रिस्तान में जहाँ आपकी समाधी स्थित है, एक शख्स जिसके खिलाफ कोई मुकदमा चल रहा था, उसने आपसे प्रार्थना की। उसने बताया कि सुनवाई के दिन उसे आप एक घोड़े पर सवार दिखलाई दिए और फ़रमाया, 'जाओ फैसला तुम्हारे हक में होगा' और ऐसा ही हुआ।

आपने 11 धू अल-किदाह 1135 हिजरी (12/13 अगस्त 1723) को अपना शरीर त्यागा। आपकी समाधि दिल्ली में हजरत निजामुद्दीन की दरगाह के पास कब्रिस्तान में स्थित है और यह जगह पंचपीर नाम से जानी जाती है।

सैय्यद नूर मुहम्मद बदायूनी की समाधि (दिल्ली)

सैय्यद नूर मुहम्मद की कब्रगाह पर लगा पत्थर जिस पर उनके सतगुरुओं का नाम लिखा है

हजरत शम्सुद्दीन मिर्ज़ा जानजाना (रहम.)

'या इलाही गैब से रोजी दे ऐ रोजी रसाँ,
शम्सुद्दीन महबूब मज़हर मिर्ज़ा के वास्ते'
(कृपाकर रोजी दे, रोजी देने वाले, हे परमात्मा !
शम्सुद्दीन महबूब मज़हर मिर्ज़ा के नाम पर)

हजरत शम्सुद्दीन हबीबुल्लाह जानजाना अल-मज़हर (मिर्ज़ा मज़हर जानजाना) (रहम.) हजरत नूर मुहम्मद बदायूनी (रहम.) के आत्मिक उत्तराधिकारी और प्रमुख खलीफ़ा थे । आपका जन्म 11 रमजान 1111 हिजरी दिन जुमा (2/3 मार्च 1700) को काला बाग नामक स्थान में हुआ था । आपके पूज्य पिताजी हजरत मिर्ज़ा जान बादशाह औरंगजेब के दरबार के एक पदाधिकारी थे । वे संसार से अत्यंत विरक्त थे और हजरत शम्सुद्दीन हबीबुल्लाह जानजाना (रहम.) के जन्म के पहले ही आपने बादशाह औरंगजेब के दरबार से त्याग पत्र दे दिया और अपने निवास आगरा के लिये निकल पड़े । जब वे मालवा प्रान्त के काला बाग नामक स्थान पर पहुँचे तो वहीँ पर हजरत मिर्ज़ा मज़हर जानजाना (रहम.) का जन्म हुआ । उस समय औरंगजेब दक्षिण गया हुआ था । उसे जब आपके जन्म का समाचार मिला तो वह बहुत प्रसन्न हुआ और उसने बच्चे का नाम जान-जान रखा क्योंकि आपके पिता का नाम जान था और पुत्र पिता की जान होता है । आप हजरत युसूफ (बाइबिल के एक नायक) की तरह बहुत सुन्दर थे और आपके चेहरे से नूर टपकता था । धीरे-धीरे लोग आपको जानजाना नाम से जानने लगे और बड़े होने पर आप 'मजहर' उपनाम से कविता करने लगे इसलिए आप मिर्ज़ा मज़हर जानजाना नाम से प्रसिद्द हो गये ।

आप जन्म से ही बड़े प्रेमी स्वभाव के थे । आप फ़रमाया करते थे कि जब मैं छः महीने का था एक सुन्दर औरत ने मुझको दाई की गोद से अपनी गोद में ले लिया । आप उसको याद कर उसकी प्रतीक्षा में रोया करते थे ।

आपके पूज्य पिताजी ने आपकी शिक्षा की अच्छी से अच्छी व्यवस्था की और स्वयं भी उनकी शिक्षा में रुचि लिया करते थे । आपके पिताजी समय की पाबन्दी और प्रत्येक काम निश्चित समय पर और निपुणता से करने पर बहुत बल दिया करते थे । आपने मिर्ज़ा मज़हर जानजाना (रहम.) को ऐसे संस्कार दिए कि वे अनेक विद्याओं-दरबारी शिष्टाचार, सैनिक शास्त्र, कला, विज्ञान और उद्योग में निष्णात हो गये । आप बहुत बहादुर और तलवार चलाने में इतने माहिर थे कि एक साथ बीस लोगों से मुकाबला कर सकते थे ।

सोलह वर्ष कि आयु में आपके पूज्य पिताजी का देहांत हो गया । कुछ लोगों ने सोचा कि आपको बादशाह के दरबार में कोई पद मिल जाये । आप बादशाह से मिलने गये पर उस रोज

बीमार होने के कारण वह दरबार में ही नहीं आया । रात में आपने स्वप्न में देखा कि एक बुज़ुर्ग संत शायद ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी (रहम.) ने मजार से निकलकर अपनी कुलाह (टोपी) आपके सर पर रख दी । आपके दिल से बादशाह के दरबार में कोई पद पाने का विचार जाता रहा और उसकी जगह दिल में बुजुर्गों (संत-महात्माओं) से मिलने के शौक ने ले ली । आप शैख़ वली मुल्लाह (रहम), मीर हाशिम जालेसरी और शाह मजफर कादरी की सेवा में हाजिर हुए । आप फरमाते थे कि एक बार जब आप शाह मजफर कादरी की सेवा में हाजिर थे किसी ने उनसे पूछा कि क्या इस जमाने में भी औताद और अब्दाल (परमात्मा के परम भक्त और पूर्ण समर्थ संत-महात्मा) होंगे तो उन्होंने आपकी तरफ़ ईशारा करते हुए कहा कि इस नौजवान को देख लो, हालाँकि तब तक आपने कोई अध्यात्मिक साधना पद्धति ग्रहण नहीं की थी ।

एक बार आपके घर पर किसी जलसे के दौरान किसी ने हजरत नूर मुहम्मद बदायूनी (रहम.) की विशेषताओं और सद्‌गुणों का जिक्र किया, जिसने आपके दिल में इतना जज्बा पैदा कर दिया कि आप उसी वक्त सब मेहमानों को छोड़ हजरत नूर मुहम्मद बदायूनी (रहम.) से मिलने चल दिए और उन्होंने भी पहली ही मुलाकात में आपको अपना लिया और स्वयं अपनी ओर से उन्हें तवज्जोह देकर उनके सभी षट्‌चक्र जाग्रत एवं स्फूर्त कर दिए । अगले दिन जब आपने हजरत नूर मुहम्मद बदायूनी (रहम.) से मिलने जाने के समय आईने में अपनी सूरत देखी तो आईने में अपनी जगह उनका चेहरा नजर आ रहा था । थोड़े ही समय में आप इस सिलसिले की निस्बत से परिपूर्ण हो गये और समर्थ संत की स्थिति में पहुँच गये ।

हजरत मिर्ज़ा मज़हर जानजाना (रहम.) का कहना था कि शिष्य का हृदय गुरु के निरंतर स्मरण मात्र से दिव्य ज्ञान और आध्यात्मिकता से आलोकित हो जाता है । वे स्वयं अपने पूज्य गुरुदेव की सेवा में निष्ठापूर्वक लगे रहे । उनकी आज्ञानुसार वे एकांतवास और जंगल व रेगिस्तान में भी रहे जहाँ उनका एकमात्र भोजन घासफूस या वृक्षों की छाल और पत्तियां ही होती थीं । पहनने के लिये मात्र उतना ही जितना कि अत्यंत आवश्यक होता । एक बार बहुत दिनों के बाद जब उन्होंने अपना चेहरा देखा तो अपनी जगह हजरत नूर मुहम्मद (रहम.) की छवि देखी ।

हजरत नूर मुहम्मद बदायूनी (रहम.) ने आपको सतगुरु की पदवी बख्शी और अपना एक वस्त्र अता फ़रमाया । कुछ समय बाद हजरत नूर मुहम्मद बदायूनी (रहम.) का शरीरान्त हो गया । आप निरंतर उनकी समाधि पर हाजिर होते रहते । शरीरान्त के बाद एक बार हजरत नूर मुहम्मद बदायूनी (रहम.) ने हजरत मिर्ज़ा मज़हर जानजाना (रहम.) को स्वप्न में दर्शन देकर फ़रमाया कि ईश्वरीय गुण और विशेषताएं अनगिनत हैं, अत: उनको हासिल करने के लिये संतों का सतसंग करना चाहिये । इस आदेश के अनुसार हजरत मिर्ज़ा मज़हर जानजाना (रहम.) ने हजरत शैख़ कलशन (कु.सि.), हजरत ख्वाजा मुहम्मद जुवैर (रहम.), शैख़ मुहम्मद अफजल (रहम.) जो शैख़ सैफुद्दीन (रहम.) के खलीफ़ा थे, शैख़ हाफिज सैय्यद अल्लाह

(रहम.) और शैख़ मुहम्मद आबिद (रहम.) के सतसंग का लाभ बीस वर्ष तक उठाया । हजरत शैख़ मुहम्मद आबिद (रहम.) के सतसंग से आपको विशेष लाभ भी मिला । उन्होंने शैख़ अब्दुल अहद (कु. सि.) से हदीसों का अध्ययन भी किया । जब वे किसी हदीस का वर्णन करते तो हजरत मिर्ज़ा मज़हर जानजाना (रहम.) फ़ना कि अवस्था में पहुँच जाते और उन्हें आभास होने लगता कि वे हजरत रसूल अल्लाह (सल्ल.) के सामने हाजिर होकर सीधे उन्हीं से हदीस को सुन रहे हैं और अगर शैख़ अब्दुल अहद (कु. सि.) के कथन में कोई त्रुटी होती तो वे उसको सुधार देते और इस प्रकार वे हदीसों के विद्वान समझे जाने लगे ।

एक रात हजरत शैख़ मुहम्मद आबिद (रहम.) पर विशेष ईश्वरीय कृपा हुयी, जिसका एक अंश हजरत मिर्ज़ा मज़हर जानजाना (रहम.) को भी प्राप्त हुआ । हजरत शैख़ मुहम्मद आबिद (रहम.) ने फ़रमाया कि तुम मेरे जिम्नी (अंशी, समान अंत:करण वाला) हो अत: जो कुछ अध्यात्मिक उपहार मुझे मिलते हैं, उनमें से तुम्हे भी हिस्सा मिलता है ।

हजरत मिर्ज़ा मज़हर जानजाना (रहम.) ने फ़रमाया कि "एक रोज मैंने हजरत शैख़ मुहम्मद आबिद (रहम.) से कादरिया सिलसिले की इज़ाज़त के वास्ते अर्ज किया । उन्होंने फ़रमाया 'आओ, तुम्हे इस सिलसिले की इज़ाज़त से हजरत रसूल अल्लाह (सल्ल.) से सम्मानित कराएँ और हजरत रसूल अल्लाह (सल्ल.) कि तरफ़ मुतवज्जोह होकर बैठ गये और मुझे भी ऐसा ही करने को फ़रमाया । मैंने देखा एक आलीशान दरबार में हजरत रसूल अल्लाह (सल्ल.) पदासीन हैं एवं हजरत गौसुल सकलीन (हजरत अब्दुल कादिर जिलानी) (रहम.) व अन्य बुज़ुर्ग संत अत्यंत प्रकाशवान स्थिति में मौजूद हैं । हजरत शैख़ मुहम्मद आबिद (रहम.) ने हजरत रसूल अल्लाह (सल्ल.) से मेरे लिये कादरिया सिलसिले की इज़ाज़त के वास्ते अर्ज किया तो आपने हजरत अब्दुल कादिर जिलानी (रहम.) से अर्ज करने को फ़रमाया । उनसे अर्ज करने पर हजरत अब्दुल कादिर जिलानी (रहम.) ने उन्हें एक खिर्का प्रदान करते हुए कादरी सिलसिले की इज़ाज़त से सम्मानित किया । उसी क्षण मुझे कादरिया सिलसिले की अध्यात्मिक अनुभूतियों और इस सिलसिले की साधना सम्बन्धी विभिन्न विशेषताओं का दिल में बखूबी अहसास हुआ ।"

आप ईश्वर के दरबार में ईश्वर के अत्यंत प्रियजनों में गिने जाते थे और उस वक़्त के संत-महात्मा आपका बहुत आदर सम्मान करते थे । वे कहा करते थे कि हालाँकि शैख़ मुहम्मद अफजल (रहम.) मुझसे उम्र में बड़े थे लेकिन मेरे आने पर वे उठकर मेरा इस्तकबाल करते थे और कहा करते थे कि ऐसा वे मेरे सिलसिले के आदर में करते थे । हजरत मिर्ज़ा मज़हर जानजाना (रहम.) को नक्शबंदी के अलावा सुहुरावार्दिया, कादरिया और चिश्तिया सिलसिलों की इज़ाज़तें भी उनके सतगुरु हजरत नूर मुहम्मद बदायूनी (रहम.) एवं अन्य संत-सतगुरुओं की कृपा से मिली और वे इन सिलसिलों के विशेष योग्यता प्राप्त आचार्य थे । वे कहा करते थे कि उनके सतगुरु हजरत नूर मुहम्मद बदायूनी (रहम.) ने उन्हें अब्राहमिक स्तर से मुहम्मदन स्तर तक ऊपर उठाया, जिससे मुझे अहसास हुआ कि वे हजरत पैगम्बर (सल्ल.) की जगह बैठे हुए हैं और हजरत पैगम्बर (सल्ल.) उनके स्थान पर

विराजमान हैं । उसके बाद उन्होंने देखा कि वे स्वयं अदृश्य हो गये हैं और दोनों ही स्थान पर हजरत पैगम्बर (सल्ल.) विराजमान हैं । उसके उपरान्त हजरत पैगम्बर (सल्ल.) अदृश्य हो गये और वे स्वयं दोनों ही स्थान पर उपस्थित हैं ।

हजरत मिर्ज़ा मज़हर जानजाना (रहम.) इल्म बातिन (रूहानी विद्या) के अथाह समुद्र के रूप में जाने जाने लगे । उनकी प्रसिद्धि दिन के प्रचंड सूर्य की रोशनी कि तरह हर और फ़ैल गयी । शैख़ मुहम्मद अफजल (रहम.) का उनके विषय में कहना था कि "शैख़ मजहर हबीबल्लाह को अपने वक्त के कुतुब का स्थान दिया गया और वे इस वक्त के सभी सूफी सिलसिलों की केन्द्रीय धुरी हैं ।" उपमहाद्वीप के सभी कोनों से लोग उनके पास खिंचे चले आते थे और जिसे जो चाहिये वो वह पाता था । उनकी उपस्थिति से भारतीय उपमहाद्वीप काबा कि तरह हो गया था जो संत-महात्माओं से घिरा हुआ था ।

हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) का फ़रमाना था कि एक बार वे शैख़ मुहम्मद हाफिज मोहसिन (कु.सि.) की समाधि पर जियारत के लिये हाजिर हुए । वे अपनी दृष्टी से ओझल हो गये और उन्होंने शैख़ मुहम्मद हाफिज मोहसिन (कु.सि.) के शरीर को दिव्य प्रेरणा से देखा जिसको कोई क्षति नहीं पहुँची थी और उनका कफन भी एकदम उज्जवल था सिवाय इसके कि उनके पाँव के पास एक जगह मिट्टी का एक धब्बा था । आपने इसकी वजह दरियाफ्त की तो शैख़ मुहम्मद मोहसिन (कु.सि.) ने फ़रमाया कि वे अपने पड़ोसी का एक पत्थर इस ख्याल से उठा लाये थे कि सुबह होते ही उसे लौटा देंगे परन्तु वे भूल गये और इसी कारण वह धब्बा रह गया ।

एक बार हजरत मुजद्दिद अल्फ़सानी (रहम.) के कोई वंशज हजरत मुजद्दिद अल्फ़सानी (रहम.) के दर्शन के लिये सरहिंद जा रहे थे तो आपने भी अपना सलाम उनकी सेवा में अर्ज करने के लिये कहा । जब वे साहब हजरत मुजद्दिद अल्फ़सानी (रहम.) की मजार पर हाजिर हुए और आपका सलाम पेश किया तो हजरत मुजद्दिद अल्फ़सानी (रहम.) ने सीना तक अपना सर मुबारक उठाकर फ़रमाया, "कौन ? मिर्ज़ा !" फिर फ़रमाया वह हमारा प्रेमी और दीवाना है और उनका सलाम स्वीकार किया और उन्हें बहुत-बहुत आशीर्वाद दिया । वे सज्जन जब सरहिंद से लौटे तो आपका बहुत आभार व्यक्त किया कि उनकी वजह से उनको भी जियारत नसीब हो गयी ।

हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) 1660 तक सात वर्ष हजरत शैख़ मुहम्मद आबिद (रहम.) की सेवा में उनके शरीरान्त तक रहे । उसके बाद वे नक्शबंदिया मुजद्दिदया सिलसिले के प्रचार प्रसार के कार्य में लग गये ।

हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) के साथ बहुत सी चमत्कारिक घटनायें जुड़ी हुयी हैं । एक महिला आपसे परोक्ष में तवज्जोह लेती थी । वह अपने घर में मुराक़ब: में बैठती और अपने नौकर के हाथ आपकी खिदमत में कहला भेजती और आप उसे तवज्जोह दिया करते । एक बार वह नौकर स्वयं अपने आप आ गया और आपसे तवज्जोह देने का निवेदन किया ।

आपने फ़रमाया कि वह तो अभी सो रही है और तुम अपने-आप आ गये हो । यह सुनकर वह नौकर बहुत हैरान व लज्जित हुआ ।

एक व्यक्ति ने आपसे अपने भाई के लिये कहा कि वह क़ैद हो गया है, उसके वास्ते दुआ कीजियेगा । आपने फ़रमाया कि वह क़ैद नहीं हुआ है, दलालों से कुछ झगड़ा हो गया है लेकिन सब खैरियत है, एक-दो दिन में ख़त आ जायेगा और ऐसा ही हुआ । एक बार एक बदचलन स्त्री की कब्र पर जाने का संयोग हो गया । आपने फ़रमाया कि कब्र में दोज़ख की आग जल रही है । आपने कृपाकर उसके कल्याण के लिये प्रार्थना की और तत्काल उसकी मुक्ति हो गयी । इसी तरह आपका एक पड़ोसी बीमार हो मरणासन्न स्थिति में पहुँच गया । आपने उसके वास्ते दुआ की कि 'ऐ ख़ुदा ! मुझमे इसके मौत का गम बर्दाश्त करने की सामर्थ्य नहीं है, इसे स्वस्थ कर दे' और आपकी दुआ कुबूल हुयी और वह व्यक्ति स्वस्थ हो गया ।

कहा जाता है कि एक स्त्री की बेटी को कोई संतान न थी । उसने आपको अपनी बेटी को संतान का आशीर्वाद देने के लिये विवश कर दिया । आप कुछ देर मौन रहे फिर फ़रमाया 'ईश्वर इच्छा से तेरी लड़की को बेटा पैदा होगा ।' परमात्मा की कृपा से ऐसा ही हुआ । जब वह लड़का जवान हुआ तो उसने चिश्तिया सिलसिले में दीक्षित होना चाहा । उसी रात उसने स्वप्न में हजरत शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) को देखा, वे फ़रमा रहे थे कि बेटे हमारे घर से कहाँ जाते हो और उस पर तवज्जोह फरमायी कि उसका दिल जाकिर हो गया । वह हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) के पास हाजिर हुआ और नक्शबंदी सिलसिले में दाखिल हुआ ।

हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) आत्म सयंम और ईश्वर पर भरोसा आदि गुणों में अद्वितीय थे । तत्कालीन नवाब आसिफ शाह ने तीस हजार रूपये आपकी सेवा में भेजे पर आपने लेने से इन्कार कर दिया । बहुत इसरार करने पर और यह कहने पर कि इन रुपयों को गरीबों में बंटवा देना, आपने फ़रमाया कि 'मैं तुम्हारा नौकर नहीं हूँ कि इन रुपयों को बंटवाता फिरूं ।'

एक बार वे अपने अनुयायियों के साथ यात्रा कर रहे थे । साथ में खाना-पीना या अन्य कोई और सामान न था । जब अनुयायियों को भूख लगती तो हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) उन्हें बुलाकर कहते, 'यह खाना तुम लोगों के लिये है' और उन लोगों के सामने विभिन्न भोजन पदार्थों से भरी मेजें प्रकट हो जाती । यात्रा के दौरान एक दिन भयंकर तूफ़ान के कारण कड़कड़ाती ठण्ड पड़ने लगी । यहाँ तक कि वे लोग ठण्ड से अकड़ने लगे और लगने लगा कि वे लोग इस ठण्ड को बर्दाश्त नहीं कर पायेंगे । यह देखकर हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) ने हाथ उठाकर प्रार्थना की और तुरंत उनके ऊपर से बादल छटने लगे । वर्षा उनसे कुछ दूर होती रही और उनके आसपास का तापमान सहन करने योग्य स्तर पर आ गया । हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) का फ़रमाना था कि दुनिया में जो कुछ भी

दिखायी पड़ता है वह हक़ीक़त की एक प्रतिछाया मात्र है क्योंकि प्राकट्य एकमात्र परमात्मा की विभूति है ।

उनका यह भी फ़रमाना था कि समस्त भौतिक सृष्टि परमात्मा के दिव्य गुणों एवं शून्य के मिश्रण से ही उत्पन्न होती है । इसीलिए भौतिक सृष्टि में दो विपरीत उद्गम समाहित रहते हैं । भौतिक सृष्टि की सघनता जिससे अंधकार, अज्ञान एवं बुराई प्रकट होते हैं, शून्य के प्रभाव के कारण लक्षित होते हैं । इसके विपरीत प्रकाश, ज्ञान एवं सद्गुण परमात्मा की विभूतियों के कारण लक्षित होते हैं । सूफी संत इसीलिये अपनी अच्छाइयों को परमात्मा के नूर कि प्रतिछाया और उसकी कृपा मानते हैं । इसके विपरीत वे स्वयं को एक सघन द्रव्य के रूप में देखते है जो दुर्गुणों और अंधकार से परिपूर्ण है एवं जिसकी प्रकृति जानवरों से भी बदतर है । यह विचार उन्हें धीरे-धीरे मोह के बंधन से मुक्त होने में सहायता और परमात्मा की तरफ़ उन्मुख होने के लिये प्रेरित करता है । जैसे ही साधक स्वयं को परमात्मा की तरफ़ उन्मुख करता है, परमात्मा कृपापूर्वक उसके हृदय को दिव्य प्रकाश एवं सामीप्य के लिये दृढ़ लगन से भर देता है ।

हिन्दू धर्म के प्रति आपकी विचारधारा कट्टरपंथियों से अलग हटकर थी । मूर्तिपूजा के कारण अधिकाँश मुस्लिम हिन्दुओं को काफ़िर समझते हैं । लेकिन आपके विचार इस बारे में बिलकुल अलग थे । आपका फ़रमाना था कि हिन्दुओं को किसी प्रकार भी काफ़िर नहीं कहा जा सकता । उनका फ़रमाना था कि "हिन्दुओं के धर्म के नियम और सिद्धांत उत्तम हैं, जिससे ज्ञात होता है कि यह धर्म नियमित रूप से प्रवर्तित हुआ है । शरीअत में यहूदी और ईसाई लोगों की धार्मिक पुस्तकों के आलावा अन्य धर्मों की पुस्तकों का उल्लेख नहीं मिलता, यद्दपि इनके अतिरिक्त अनेक धर्म निरस्त हो चुके हैं और अनेक धर्मों का अस्तित्व पूर्ण रूप से लुप्त हो चूका है । परन्तु यह बात ध्यान में रहे कि क़ुरआन के अनुसार प्रत्येक धर्म देवदूत कि परम्परा से अस्तित्व में है, अर्थात प्रत्येक मानव जाति का अपना एक रसूल होता है । भारत की भूमि पर भी नबी और रसूल (अवतार) भेजे गये हैं, जिनका उल्लेख उनके धर्मग्रंथों में मिलता है । इन उल्लेखों से ज्ञात होता है कि वे उच्चकोटि के व्यक्ति थे । परमात्मा ने अपनी असीम दया-कृपा से इस भूमि के निवासियों को कभी वंचित नहीं किया ।....इसी प्रकार क़ुरआन की एक दूसरी आयत के अनुसार 'इनमें से कुछ देवदूतों का विवरण तुम्हारे सम्मुख उपस्थित किया गया और कुछ का नहीं ।' जब हमारी शरीअत बहुत से देवदूतों के बारे में मौन है तो हमको भी भारतीय देवदूतों के बारे में मौन धारण करना उचित है । ...परन्तु यदि साम्प्रदायिक द्वेष न हो तो उनके प्रति उच्च एवं उदार विचार रखना चाहिये । उनके मूर्तिपूजन का यह रहस्य है कि कुछ देवदूत जो भगवान् की आज्ञानुसार संसार में अपना कुछ प्रभाव रखते हैं अथवा कुछ महापुरुषों की आत्मायें, जिनका प्रभुत्व मानव जीवन में घुल-मिल गया है अथवा कुछ ऐसे ऋषि-मुनि जो हजरत खिज़्र के समान शाश्वत हैं, इनकी प्रतिकृति बनाकर उनकी और आकर्षित होते हैं और इस प्रकार ईष्ट से अपना सम्बन्ध जोड़ लेते हैं । यह 'जिक्र-राब्ता' के समान है जो सूफियों में तसव्वुरे-शैख़

(सतगुरु की शक्ल का ध्यान) के रूप में प्रचिलित है और इसके द्वारा परमात्मा की अनुकम्पा प्राप्त की जाती है। हिन्दू भी विभिन्न देवी-देवताओं को देवी-देवता मानते हैं न कि परमात्मा। इनके चित्रों या पूर्तियों के आगे माथा टेकने का यह अर्थ नहीं कि वे उन्हें परमात्मा मानते हैं वरन आदर और सम्मान हेतु, जिस प्रकार वे अपने शिष्टाचार के अनुकूल अपने माता-पिता या गुरु के सामने दण्डवत करते हैं।"

हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) ने अपनी मृत्यु की तिथि की घोषणा पहले ही कर दी थी। उनके अंतिम दिनों में हजारों श्रद्धालु भक्त उन्हें हर समय उनकी कृपादृष्टि पाने के लिये घेरे रहते थे। उनका अंतिम समय अत्यंत भावपूर्ण अवस्था एवं परमात्मा के प्रति उत्कट प्रेम में बीता। उनका फ़रमाना था कि परमात्मा ने उनकी सभी अभिलाषाओं को पूरा कर उन्हें परिपूर्णता से भर दिया है। वे परमात्मा के हुज़ूर में निरंतर उपस्थित रहने एवं अपने प्रियतम से कल की बजाय आज मिलने को अत्यंत व्याकुल रहते। उनकी अंतिम इच्छा परमात्मा के पास एक साधारण मनुष्य की भांति जाने के बजाय परमार्थ की राह में एक शहीद के रूप में जाने की थी जो कि पवित्र क़ुरआन के अनुसार हमेशा के लिये जीवीत रहना है।

नियत तिथि, 1195 हिजरी (सन 1781) के मुहर्रम के सातवें दिन हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) के नौकर ने उन्हें दरवाजे पर उपस्थित तीन नौजवानों की सूचना दी जो उनसे मिलना चाहते थे। हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) ने उन्हें भीतर लिवा लाने के लिये कहा। भीतर आकर उन तीनों में से एक ने अपनी जेब से चाकू निकालकर उनकी पीठ पर वार किया। चाकू उनके गुर्दे में घुस गया। नक्शबंदी सूफी परंपरा हजरत अबु बक्र (रजि.) से शुरु मानी जाती है और उनके अनुयायी सुन्नी कहलाते हैं। हजरत अबु बक्र (रजि.) हजरत रसूल अल्लाह (सल्ल.) के बाद पहले खलीफ़ा बने थे, जबकि मुसलमानों के एक गिरोह के अनुसार, जिन्हें शिया कहा जाता है हजरत अली (रजि.) को खलीफ़ा बनना चाहिये था। कालांतर में शिया-सुन्नियों के बीच यह मतभेद बहुत उग्र रूप लेता गया। जहाँगीर-नूरजहाँ के वक्त से मुग़ल बादशाहों के शासन में शिया ज्यादा बलवान होते गये। यही मतभेद इस घटना का भी कारण था। हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) फर्श पर गिर पड़े। तत्कालीन बादशाह ने इलाज के लिये चिकित्सक को भेजा लेकिन हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) ने उसे यह कहकर लौटा दिया कि "मुझे इसकी आवश्यकता नहीं है। जिस शख्स ने मुझे चाकू मारा है, मैं उसे माफ़ करता हूँ। मुझे एक शहीद के रूप में परमात्मा के सम्मुख जाने में प्रसन्नता है और वह शख्स मेरी प्रार्थना के प्रत्युत्तर में ही भेजा गया था।"

उन्होंने 10 मुहर्रम 1195 हिजरी (शुक्रवार 5 जनवरी 1781) को अंतिम सांस लिया। आपकी समाधि दिल्ली में जामा मस्जिद के पास, चितली कब्र में स्थित है और शहीद साहब की मजार के नाम से जानी जाती है। आपके बाईस अत्यंत प्रसिद्द खलीफ़ा थे जिनमें हजरत नईमुल्लाह बहराइची (रहम.) नक्शबंदी मुजद्दिदी मजहरी रामचन्द्रिया सिलसिले के आपके

मुख्य: खलीफ़ा थे जिनकी शिष्य परंपरा से इस सिलसिले की जड़ें भारत में और भी गहराई से जमीं और यह सिलसिला हिन्दुओं में भी प्रचलित हुआ । आपके एक अन्य प्रमुख खलीफ़ा हजरत अब्दुल्लाह अद-दहलवी के द्वारा नक्शबंदी सिलसिला अपने उद्गम की तरफ (अर्थात बैज़न्तियम, इराक, खुरासान, ट्रांसओक्सिआना, सीरिया. डमास्कस और उत्तरी अफ्रीका तक में) फिर से प्रसारित हुआ ।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

इस सिलसिले का आधार है सतगुरु की सोहबत में परमात्मा का निरंतर चिंतन एवं चित्त की एकाग्रता के साथ जिक्र क़ल्बी ।

मन में कोई दुर्विचार उत्पन्न होने पर सतगुरुदेव की सूरत को ध्यान में लाकर अत्यंत दीनता के साथ ईश्वर से उसे दूर करने की प्रार्थना करनी चाहिये ।

स्वयं में विनम्रता और दीनता की भावना पैदा करनी चाहिये और दुनिया के अन्याय और इन्साफ पर धैर्य और सहिष्णुता की आदत डालनी चाहिये ।

दुनियावालों के व्यवहार को अपनी तकदीर से समझकर कहा-सुनी नहीं करनी चाहिये । सभी कष्टों को भोगना हजरत रसूल अल्लाह (सल्ल.) की विशेषताओं के अनुकूल शिष्टता एवं सदाचरण है ।

इंसान की आदतें मुश्किल से छूटती हैं । उन आदतों का रुख मोड़कर भलाई की तरफ़ फेरना चाहिये ।

खाने-पीने, सोने-जागने और साधना-आराधना कार्यों में मध्य मार्ग व संतुलन बहुत मुश्किल है । महापुरुषों का आचरण यह संतुलन प्रकट करने के लिये होता है ।

परमात्मा की तरफ़ उन्मुख करने वाले अर्थात सतगुरु की तरफ़ मुतवज्जोह (ध्यान लगाने से) होने से इस कदर बख्शिशें और रहमत उतरती है कि अन्त:करण आत्मिक अनुभूतियों और आनंद के प्रकाश पुंजों से परिपूर्ण हो जाता है ।

अपने क्रिया-कलापों पर हर वक्त नजर रखनी चाहिये और गुनाहों के लिये दिली तौबा करनी चाहिये । परमात्मा की कृपा से जो मिला है उस पर अहंकार नहीं करना चाहिये न ही उसे अपनी साधना का फल समझना चाहिये बल्कि उसे परमात्मा की अहेतुकी कृपा समझना चाहिये । परमात्मा की निस्पृहता और महानता से डरते रहना चाहिये । अत्यधिक विवशता और ईश्वर की अहेतुकी कृपा पर दृढ़ भरोसा और अपने गुनाहों के लिये दीनता से क्षमा माँगने को ईश्वर व गुरुदेव का कृपापात्र बनने का माध्यम समझना चाहिये ।

थोड़े गुनाह को बहुत समझना और ईश्वर की थोड़ी कृपा को बहुत समझना और हर हाल में ईश्वर का शुक्रिया अदा करते रहना और उसकी राजी में रजा रखनी चाहिये ।

हजरत शाह बहाउद्दीन नक्शबंद (रहम.) सांस रोककर जप करना आवश्यक नहीं समझते थे, हाँ इसे लाभदायक कहते थे । निरंतर जप करना और अपने हृदय पर निगाह रखना और

उसकी दशा से अवगत रहना और सतगुरु की ओर ध्यान लगाये रखना इस सिलसिले की साधना पद्धति का आधार-स्तम्भ है ।

मन का निषेध उचित है लेकिन इसे मारना उचित नहीं । ऐसा न हो कि तंग आकर साधना का शौक ही जाता रहे । कभी-कभी मन को खुश करना पुण्य का सबब होता है लेकिन यह काम शास्त्र या धर्म-विरुद्ध नही होना चाहिये । स्वादिष्ट भोजन को बेमजा बना लेना उचित नहीं । किसी व्यक्ति को घृणा की दृष्टी से न देखे और अपने को सबसे तुच्छ समझे । आज का काम कल पर न टाले ।

सभी साधना का सार है आचरण को सुधारना और साधुता का सार है जो सर में है (अर्थात घमंड) उसे नीचे रख दे और जो सर पर पड़े उससे गुरेज न करे अर्थात मुसीबतों से न डरे ।

हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना की समाधि (दिल्ली)

मौलवी शाह नईमुल्लाह बहराइची (रहम.)

'या इलाही दे मुझे तौफीक आमालेहसन,
हजरते ख्वाजा नईमुल्ला शाह के वास्ते'
(नेक कर्म करने की सामर्थ्य दे, हे परमात्मा !
हजरते ख्वाजा नईमुल्ला शाह के नाम पर)

हजरत मौलवी ख्वाजा नईमुल्ला शाह (रहम.) हजरत मिर्ज़ा मज़हर जानजाना (रहम.) के आत्मिक उत्तराधिकारी और प्रमुख खलीफ़ा थे । आपका जन्म बारहवीं सदी हिजरी में बहराइच में हुआ था । आप हजरत मिर्ज़ा मज़हर जानजाना (रहम.) के सर्वश्रेष्ठ शिष्यों में से थे और वे सिर्फ चार वर्ष अपने पूज्य गुरुदेव की सोहबत में रहे । आपके पूज्य गुरुदेव ने फ़रमाया था कि 'तुम्हारी चार वर्ष की सोहबत औरों की बारह वर्षों की सोहबत के समान है ।' आपने यह भी भविष्यवाणी की थी कि 'तुम्हारे आत्मिक प्रकाश और सतसंग के प्रभाव से संसार प्रकाशित होगा' और ऐसा ही हुआ ।

शैख़ नईमुल्ला शाह (रहम.) निहायत सब्र व संतोष से जीवन व्यतीत करते थे । और हर समय परमात्मा की याद में तल्लीन रहते थे । वे बहुत शांत प्रकृति के और एकांत प्रिय थे । सम्पूर्ण करामातों और विद्याओं के भण्डार होते हुए भी शैख़ नईमुल्ला शाह (रहम.) अपनी अध्यात्मिक स्थिति लोगों पर प्रकट न होने देते । आप संत-शिरोमणि, उच्च कोटि के ब्रह्मज्ञानी, अध्यात्म जगत के सूर्य और इल्म सीना-ब-सीना (हृदय से हृदय को आत्मिक प्रेषण-सतगुरु द्वारा शिष्य के हृदय में अपनी अध्यात्मिक ऊर्जा को प्रवाहित करना) में सिद्धहस्त थे । हजरत मिर्ज़ा मज़हर जानजाना (रहम.) ने आपको सतगुरु पदवी का अधिकार तथा खिलाफत प्रदान करते समय हजरत इमाम रब्बानी मुजद्दिद अल्फ़सानी (रहम.) के पत्रों का संकलन प्रदान किया और फ़रमाया कि 'जो दौलत (अर्थात वे पत्र) मैंने तुम्हे दी है वह किसी को नहीं दी । इस नेमत का शुक्र व कद्र करनी चाहिये ।'

आपने अध्यात्म पर कई किताबे भी लिखी । आपकी पुस्तक "मामूलात मजहरिया" आदाबे तरीकत में अत्यंत महत्वपूर्ण व उपयोगी है । आपकी एक हस्तलिखित पुस्तक लन्दन पुस्तकालय में पहुँच गयी जो अभी तक वहाँ मौजूद है ।

आपके वंशजों के पास वह दरी अभी भी मौजूद है जिस पर हजरत मिर्ज़ा मज़हर जानजाना (रहम.) का रक्त पड़ा था ।

आपने 5 सफर 1218 हिजरी (सन 1801) में अपना शरीर त्यागा । आपकी समाधि बहराइच (उत्तर प्रदेश) में राजकीय इन्टर कालेज के सामने एक बड़े से मैदान में ऊँचे चबूतरे

पर बनी हुयी है । आपका मकान व् “मौलसिरी वाली मस्जिद” जो आपने बनवाई थी अभी भी बहराइच में मौजूद है ।

शैख़ नईमुल्ला शाह का समाधि परिसर (बहराइच)

शैख़ नईमुल्ला शाह की समाधि (बहराइच)

हजरत शाह मुरादुल्लाह (रहम.)

'या इलाही अपनी रहमत से तू दे दिल की मुराद,
शाह मुरादुल्लाह मकबूले ख़ुदा के वास्ते'
(कृपाकर दिल की मुराद पूरी कर, हे परमात्मा !
तेरे प्यारे शाह मुरादुल्लाह के नाम पर)

हजरत शाह मुरादुल्लाह (रहम.) हजरत मौलवी ख्वाजा नईमुल्ला शाह (रहम.) के सुयोग्य शिष्य एवं आत्मिक उत्तराधिकारी थे। आपका जन्म बारहवीं सदी हिजरी में 1150-60 के दशक में थानेसर में हुआ था। आप हजरत उमर फारूकी (रजि.) के वंशज थे और आपके दादा साहब जियाउद्दीन हुसैन (रहम.) और आपके पिता मौलवी क़लन्दर बख्श (रहम.) भी हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) के मुरीद थे। शैख़ अब्दुर्रहमान जो हजरत शाह मुरादुल्लाह (रहम.) के छोटे भाई थे वे भी हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) के मुरीद थे और हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) के बहुत से घरेलू किस्म के पत्र उनके नाम हैं।

मौलवी क़लन्दर बख्श (रहम.) बचपन में ही हजरत शाह मुरादुल्लाह (रहम.) को हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) की सेवा में लेकर हाजिर हुए थे और उनकी तवज्जोह से आप लाभान्वित हुए। जब हजरत शाह मुरादुल्लाह (रहम.) सांसारिक विद्या प्राप्त कर चुके तो थानेसर में खून-खराबे की वजह से आपका परिवार लखनऊ चला आया। उन दिनों हजरत मौलवी ख्वाजा नईमुल्ला शाह (रहम.) अपने पूज्य गुरुदेव हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) की आज्ञा अनुसार लखनऊ में रुके हुए थे और लोग आपकी खिदमत में हाजिर होकर उनसे फैजयाब हो रहे थे। हजरत शाह मुरादुल्लाह (रहम.) भी आपकी सेवा में हाजिर हुए और हजरत मौलवी ख्वाजा नईमुल्ला शाह (रहम.) की दया-कृपा से नक्शबंदी सिलसिले में दाखिल हुए। आप उनकी सेवा में नियम से हाजिर होने लगे और पूरे तीन साल इसी प्रकार गुजरे।

हजरत मौलवी ख्वाजा नईमुल्ला शाह (रहम.) ने सत्ताईस वर्ष आपको अपनी तवज्जोह से फैजयाब किया और सब तरह से सक्षम कर आने वाले जिज्ञासुओं को आपके सुपुर्द करने लगे। अपने शरीरान्त से पूर्व हजरत मौलवी ख्वाजा नईमुल्ला शाह (रहम.) ने आपको पूर्ण आचार्य पदवी देकर आपको अपना खलीफ़ा नियुक्त किया। इसके साथ ही आपने हजरत मुजद्दिद (रहम.) के जिन पत्रों का संकलन आपको अपने गुरुदेव से मिला था वह भी हजरत शाह मुरादुल्लाह (रहम.) को दिया और फ़रमाया कि 'यह मैंने किसी दूसरे मुरीद को नहीं दिए।'

हजरत शाह मुरादुल्लाह (रहम.) अपने पूज्य गुरुदेव के शरीरान्त के बाद कुछ वक्त बहराइच में ही रह गये फिर मुरीदों की प्रार्थना पर लखनऊ चले आये। कुछ अवधि वे फैजाबाद भी रहे। 'शहरे औलिया' नामक पुस्तक में लिखा है कि हजरत टाट शाह के शरीरान्त के बहुत समय बाद आपने उनके हुजरे में कयाम (ठहरना) फ़रमाया। इस पुस्तक के लेखक ने अपनी एक दूसरी पुस्तक 'पारीनतुल औलिया' में लिखा है कि जिन दिनों हजरत शाह मुरादुल्लाह (रहम.) हजरत टाट शाह के हुजरे में रुके हुए थे, कुछ विरोधियों ने आपको घेर लिया। कहते हैं कि उसी समय कहीं से दो शस्त्रधारी नौजवान प्रकट हुए और उन लोगों को भगा दिया।

हजरत शाह मुरादुल्लाह (रहम.) नक्शबंदी सिलसिले के एक माने हुए महापुरुष थे। जो भी आपके पास हाजिर होता, मन चाही मुराद प्राप्त करता। आप तत्काल उसे ईश्वरीय प्रेम से मालामाल कर देते। आपके पास जब आपके खलीफ़ा हजरत अबुल हसन (रहम.) पहुँचे तो आपने उन्हें शिष्य रूप में ग्रहण कर आशीर्वाद दिया और भविष्यवाणी की कि 'तुम अपने समय के समर्थ-सतगुरु और कुतुब (संत-शिरोमणि) होंगे।' आपकी शिक्षा वेदान्त की शिक्षाओं से मिलती थी। वे महादानी थे और साथ ही ब्रह्मविद्या के अपार भण्डार।

आपने 82 वर्ष की आयु में 21 जीकाद 1248 हिजरी (सन 1830) को शरीर त्यागा। आपकी समाधि लखनऊ में पुराने रॉयल होटल के पास शाहमुरादुल्लाह लेन में स्थित है। सन 1912 में अंग्रेजों के राज में विजलर एंड कंपनी ने अन्य संपत्ति के साथ मस्जिद व आपकी दरगाह को भी अपने कब्जे में लेना चाहा और बहुत कहने-सुनने पर भी वे इस जगह को छोड़ने के लिये तैयार नहीं हुए। हार-थककर लोगों ने आपसे दुआ मांगी। विजलर एंड कंपनी के घर हादसे होने लगे और ताबड़तोड़ तीन-चार लोगों की मृत्यु हो गयी। सम्बंधित अधिकारीयों ने घबराकर अपना ईरादा बदल दिया और मस्जिद व आपकी दरगाह को कब्जे में न लेकर खरीदने का ईरादा छोड़ दिया।

आपकी समाधि पर निस्बत रखने वालों को बगैर अगर-बत्ती जले हुए खुशबू महसूस होती है। यह बात पूर्णतया सत्य है और स्वानुभूत है।

हजरत शाह मुरादुल्लाह की समाधि (लखनऊ)

हजरत अबुल हसन नसीराबदी (रहम.)

'या इलाही शाद रख अपनी मुहब्बत में मुझे,
कुतुबे आलम बुल हसन नुरुल-हुदा के वास्ते'
(प्रसन्न रख हमेशा अपनी मुहब्बत में मुझे, हे परमात्मा !
सच्चाई के प्रकाश, संत-शिरोमणि बुल हसन के नाम पर)

हजरत अबुल हसन नसीराबादी (रहम.) हजरत शाह मुरादुल्लाह (रहम.) के आत्मिक उत्तराधिकारी थे । आपका जन्म उत्तरप्रदेश के रायबरेली जिले में नसीराबाद में हुआ था । आप सैय्यद परिवार से थे और हजरत नईमुल्ला शाह (रहम.) के नवासे थे । आप अत्यंत मेघावी थे । 18 वर्ष की उम्र में ही आपने दस्तारे फ़जीलत (श्रेष्ठता की पगड़ी-अर्थात मौलाना की उपाधि) हासिल कर हजरत शाह मुरादुल्लाह (रहम.) से दीक्षा ली । आपने सौलह वर्ष अपने पीरो-मुर्शिद की सेवा में रह यह मर्तबा हासिल किया कि हजरत शाह मुरादुल्लाह (रहम.) अपने तमाम मुरीदों को आपकी सेवा में मुतवज्जहो होने का निर्देश देते थे । आप कर्मनिष्ठ, ज्ञानी, धर्मशास्त्र के अद्वितीय विद्वान, एक नजर में ऊंचे से ऊंचे अध्यात्मिक मुकाम पर पहुँचाने वाले और कुतुबे वक्त थे । अपने पीरो-मुर्शिद की जिन्दगी में ही आपने अक्सर लोगों को 'फ़ना' व 'बका' की स्थिति में पहुँचाया । आप में खास बात यह देखी गई कि जिसने भी आपको श्रद्धा से देखा वही ईश्वर साक्षात्कार को प्राप्त हुआ ।

आप दिन में पांच बार सतसंग करवाते थे व सिवाय ध्यान करवाने के कोई और काम नहीं करते थे । आपके प्रिय शिष्य एवं खलीफ़ा हजरत अहमद अली खान (रहम.) फ़रमाया करते थे कि मैंने अक्सर हजरत सैय्यद अबुल हसन साहब (रहम.) की जबान मुबारक से सुना है कि आप फरमाते थे कि हमारे एक हाथ में क़ुरआन मजीद और दद्सरे हाथ में हदीस है और हमको यही काफ़ी है और जिस व्यक्ति का आचरण और व्यवहार इनके विरुद्ध हो, उसे इस साधना पथ के योग्य नहीं समझना चाहिये ।

आप हमेशा जमाअत के साथ मस्जिद में नमाज़ अदा करते और बगैर मुरीदों के कभी अकेले भोजन न करते । दुनिया की बातें कम करते थे । शुरु में आप आवश्यकतानुसार सांसारिक विद्याओं की तालीम भी देते थे परन्तु बाद में आपने इसे बंद कर दिया और सिर्फ रूहानी तालीम (इल्म-बातिन) देने लगे । आप किसी में अगर कोई धर्म-विरुद्ध आचरण देखते तो उसे नसीहत न देते (टोकते नहीं थे) क्योंकि आपका फ़रमाना था कि अगर हमारी सोहबत ने असर न किया तो नसीहत से क्या होगा ? फ़क़ीर वही है जो मुरीद के दिल को अपने रंग में रंग ले । आपकी विशेष करामात यह थी कि जो भी आपकी शरण में आ गया उसकी जिन्दगी बदल गयी और वह तत्काल धर्मशास्त्र के अनुसार आचरण करने लग जाता । जो

आपकी सोहबत में कुछ दिन रहा, संसार में अध्यात्मिक धारा (रूहानी फैज़) फ़ैलाने में सक्षम हो गया।

आपके गुरुदेव अक्सर फरमाते थे कि मौलवी सय्यद अबुल हसन हमसे कई बातों में श्रेष्ठ हैं। एक यह कि वे हजरत इमाम हुसैन (रजि.) की संतान के वंशज हैं; दूसरे सांसारिक विद्या में ज्यादा; तीसरे इल्म बातिन में हमारे बराबर और चौथे उनसे कभी कोई बड़ा गुनाह (गुनाह कबारा) नहीं हुआ। इसके बावजूद हजरत अबुल हसन (रहम.) अपने पीरों-मुर्शिद और बुज़ुर्गों का बेहद अदब करते थे। जब कभी आप हजरत मिर्ज़ा मजहर जानजाना (रहम.) की समाधि पर हाजिर होने जाते तो बड़ी दूर से जूते निकालकर हाथ में ले लेते और फरमाते थे कि बुज़ुर्गों का अदब जैसे पहले (जीते-जी) वैसे ही बाद में (शरीरान्त के बाद) करना चाहिये।

आप एक मस्जिद बनवा रहे थे और चाहते थे कि उत्तर में एक खिड़की रखी जाए लेकिन मिस्त्री ने यह बात न मानी। आप खामोश हो गये। रात को मिस्त्री को स्वप्न में कोई बुज़ुर्ग दिखाई दिए जो उसे कह रहे थे कि 'मर्दूद ! तू अबुल हसन (रहम.) का हुक्म क्यों नहीं मानता ? सुबह उसने आपसे माफ़ी मांगी और आपके आदेश का पालन किया।

एक बार हजरत अबुल हसन (रहम.) की मौसी का बेटा मन में यह ख्याल लेकर उनके पास आया कि अगर ये वाकई संत हैं तो मुझे कुरआन शरीफ और साथ में मिठाई भी दें। जैसे ही वह आया तो आपने कहा कि भाई मेरी परीक्षा लेने आये हो, यह लो कुरआन शरीफ और मिठाई। वह बहुत लज्जित हुआ।

एक शख्स जो बड़ा बदचलन था, आपके पास दीक्षा लेने के ईरादे से आया और उसने आपको साफ़-साफ़ अपनी कमजोरी के बारे में बताया। हजरत अबुल हसन (रहम.) ने फ़रमाया कि तुमने मेरे सामने तो कोई गुनाह नहीं किया और उसे अपनी शरण में लेकर दीक्षित कर लिया। इसके बाद जब भी वह शख्स अपनी आदत से मजबूर हो उस बुरे कार्य को करने का ईरादा करता तो हजरत अबुल हसन (रहम.) को अपने सामने सशरीर हाजिर पाता। कुछ ही समय में उसने सच्ची तौबा की और उस बुरी आदत से छुटकारा पाकर सही रास्ते पर आ गया।

एक बार एक मौके पर खाना कम पड़ने की स्थिति आ खड़ी हुई। आपने अपने सेवकों को फ़रमाया कि जब देग (खाना) तैयार हो जाये बताना। सेवकों ने सूचना दी तो आपने कुछ पढ़कर अपना एक वस्त्र देकर फ़रमाया कि इसे देग पर दाल दें और खाना निकलते रहें। सब लोगों ने अच्छी तरह खाया, फिर भी आधी देग बच रही, जिसे घर में और पड़ोसियों में बांटा गया।

आपके बारे में कहा जाता है:

'आँ अबुल हसन कि ताज सरे नक्शबंद बूद,
मानिंद ऊ नयामदह साहब तरीकते।'

अर्थात-

“नक्शबंदिया खानदान के सरताज हैं अबुल हसन,

कोई दूसरा न आया उन जैसा इस सिलसिले में ।”

आपके पुज्य गुरुदेव ने आपको अपने सामने अपने पद पर सुशोभित किया पर आपने अपने गुरुदेव के नवासे हजरत वलीउल्लाह साहब जो आपके विद्यार्थी, मुरीद और खलीफ़ा थे, को उस पर बिठा दिया और अपने गुरुदेव से मिले तबर्रुक (प्रसाद रुपी उपहार) भी उन्हें भेंट में दे दिये और अर्ज किया कि “मुझे तो अपने हजरत पीर (गुरुदेव) की मुहब्बत ही काफ़ी है ।” आपको जो भेंट मिलती थी सब की सब हजरत वलीउल्लाह साहब को प्रदान कर देते थे । आपने अपने बड़े सुपुत्र हजरत हादी हसन साहब को जो आध्यात्मिकता में आपके ही समान थे हजरत वलीउल्लाह साहब से दीक्षित कराया ।

आपने दो शंबा यकुम शाबान 1272 हिजरी (1854) को अपना शरीर त्यागा । आपकी समाधि उत्तर प्रदेश के रायबरेली जिले में जायस से करीब 4-5 कि. मी. दूर नसीराबाद में पुलिस थाने के पीछे बनी है और छोटे अहाते से घिरी परन्तु कच्ची है ।

यह सत्य है कि आपके जैसा कोई दूसरा साहबे-तरीकत सिलसिले में नहीं आया लेकिन यह भी सत्य है कि आपने अपने शिष्य हजरत हाजी खलीफ़ा अहमद अली खां (रहम.) को अपने से भी बढ़ा-चढ़ाकर बनाया और अपनी समस्त अध्यात्मिक पूँजी उन्हें सौंप दी । हजरत अबुल हसन (रहम.) की समाधि पर जो आनंद की वर्षा होती है उसके बारे में हजरत अहमद अली खां (रहम.) ने लिखा है कि “मैं जब भी गुरुदेव की समाधि पर हाजिर हुआ, हजरत अपनी जीवित अवस्था की तरह मुझे अपनी विशेष दया-कृपा से फैजयाब करते ।” फिर लिखा, “दिले मन दानद व मन दानम व दानद दिले मन” अर्थात “मेरा दिल उस आनंद को जानता है और मैं जानता हूँ और मेरा दिल जानता है ।”

मौलाना अबुल हसन की समाधि (नसीराबाद)

मौलवी अहमद अली खां (रहम.)

'या इलाही रहम कर मज्रूह आसी पर सदा,
मौलवी अहमद अली खां रहनुमा के वास्ते'
(दया कर इस बिगड़े पापी पर, हे परमात्मा !
पथ प्रदर्शक मौलवी अहमद अली खां के नाम पर)

हजरत मौलवी अहमद अली खां मऊ रशीदाबादी (रहम.) हजरत अबुल हसन नसीराबादी (रहम.) के प्रिय शिष्य एवं आत्मिक उत्तराधिकारी थे । आपका जन्म उत्तरप्रदेश के मऊ रशीदाबाद (वर्तमान उत्तरप्रदेश के फर्रुखाबाद जिले की कायमगंज तहसील) में हुआ था । आपके पुज्य पिताजी एक उच्चकोटि के साधक थे और चिश्तिया सिलसिले से रूहानी निस्बत हासिल की थी (दीक्षित थे) । वे दुनिया से अत्यंत विरक्त थे और अक्सर मजदूरी करके अपना जीवन निर्वाह करते । वे अक्सर भावावेश की स्थिति में रहते और उनसे चमत्कार प्रकट होते रहते थे । आपने हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) की शिक्षा के लिये बहुत प्रयत्न किये और आखिर वक्त दुआ की कि "अल्लाह तआला तुमको पूर्णता बख्शे और नीरस व संकीर्ण हृदय वाला तपस्वी न बनाये ।" उनकी (आपके पूज्य पिताजी की) समाधि तकिया में मस्जिद के निकट स्थित है और बहुत बाफैज़ (पुर-असर) मजार है ।

हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) नाटे, दोहरे बदन के और गुदुमी रंग के थे । आपका चेहरा मय दाढ़ी के बिलकुल गोल था और आप पठान थे । आप अरबी और फारसी के प्रकाण्ड विद्वान थे और इन भाषाओं के कई ग्रन्थ आपको कंठस्थ थे । फारसी के ग्रन्थ 'गुले क़िश्ती', 'बदरचाह' और 'मसनवी हलाली' आदि को बड़े रोचक ढंग से पढ़ाया करते थे । धर्मशास्त्र और शरीअत से सम्बन्धित तथ्यों की व्याख्या करने में आपको पूर्ण दक्षता हासिल थी । क़ुरआन शरीफ को शुद्ध उच्चारण के साथ पढ़ने की कला में भी आप सिद्धहस्त थे । आपने 'मज्रूह आसी' उपनाम से दो दीवान (काव्य संग्रह) एवं एक काव्य ग्रन्थ "महारब काबुल" भी लिखा । "फतनाए अहमदी" नामक ग्रन्थ की भी आपने रचना की । आप धर्म पालन में बड़े सख्त और सुन्न: [हजरत पैगम्बर (सल्ल.) द्वारा अपनाया गया आचरण] के अनुयायी थे । आपका फ़रमाना था कि सुन्न: का अनुसरण करने से आदमी ईश्वर एवं हजरत पैगम्बर (सल्ल.) का प्रेमपात्र बन जाता है ।

हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) जो जनाब खलीफ़ा साहब के नाम से भी विख्यात थे, के स्वभाव में बेहद परदापोशी (गोपनीयता) थी । कायमगंज, जहाँ आप रहते थे, वहाँ के लोग आपको अरबी और फारसी के प्रकाण्ड विद्वान और शिक्षक के रूप में तो जानते थे और

यह भी जानते थे कि आप सज्जन और ईश्वर भक्त हैं पर यह कम ही लोगों को मालूम था कि आप इन विद्याओं के साथ-साथ अध्यात्म विद्या के भी अथाह समुद्र हैं ।

आपकी परमात्मा कि तरफ़ लगन देख एक साहब ने जो हजरत अबुल हसन (रहम.) के पास हाजिर हुआ करते थे व कायमगंज के ही रहने वाले थे आपसे कहा कि “अहमद अली अब बिना बैअत (सतगुरु द्वारा दीक्षा) हुए काम नहीं चलेगा ।' आप अभी इसके लिये तैयार न थे लेकिन उसी रात हजरत अबुल हसन (रहम.) ने आपको स्वप्न में दर्शन दिए और वही बात दोहराई । आप तत्काल हजरत अबुल हसन नसीराबादी (रहम.) के चरणों में हाजिर हुए और उनसे दीक्षा ग्रहण की । आप चार बार अपने गुरुदेव की हाजिरी में एक चिल्ला (चालीस दिन) रहे । अंत में हजरत अबुल हसन (रहम.) ने आपको सभी इजाजतें दी व आपको पूर्ण करके अपना प्रतिरूप बना दिया । अपना अंत समय निकट जानकार हजरत अबुल हसन (रहम.) ने फ़रमाया कि “हमारा अंत समय निकट आ गया है, अब तुम्हें यह काम करना है ।” यह सुनकर मौलवी अहमद अली खां (रहम.) रोने लगे और अर्ज किया कि हजरत बन्दे को मुआफ़ फरमाइयेगा तो पूज्य गुरुदेव ने कहा, “ख़ुदा आसान करेगा” और आपके वास्ते दुआ की ।

आपको अपने पुज्य गुरुदेव से उनके विसाल के बाद एक बार फिर से इज़ाज़त मिली । आप 1288 हिजरी में अपने पुज्य गुरुदेव की मजार पर हाजिर हुए थे । उन्हीं के शब्दों में, “चन्द रोज रुकने के बाद जब मैंने वापसी का इरादा किया और हजरत हादी हसन साहब [हजरत अबुल हसन नसीराबादी (रहम.) के सुपुत्र] से जिक्र किया तो हुज़ूर ने फ़रमाया कि हजरत सैय्यदना (हजरत अबुल हसन साहब) (रहम.) ने तो अभी विदा की इज़ाज़त नहीं दी है और जब तक वे इज़ाज़त नहीं देंगे हम भी तुम्हें विदा नहीं करेंगे । जब मैं मजार पर मुराक़ब: में बैठा तो हजरत सैय्यदना (रहम.) ने भी फ़रमाया कि मियां हादी हसन साहब सच कहते हैं । अभी क्या जल्दी है, दो-चार दिन और रहो । कई रोज बाद मैंने हजरत सैय्यदना (रहम.) से फिर इज़ाज़त चाही तो हजरत ने मंज़ूर फ़रमाया । जब मैंने हजरत हादी हसन साहब की खिदमत में अर्ज किया तो आपने भी फ़रमाया कि आज हमको भी हजरत सैय्यदना (रहम.) ने हुक्म दिया है और विदाई के वक्त कुलाह (टोपी) मुबारक प्रदान करके फ़रमाया कि हजरत सैय्यदना (रहम.) के इर्शाद के मुताबिक हमारी तरफ़ से भी हमारे तरीके की इज़ाज़त है और हजरत सैय्यदना (रहम.) ने तुमको दो बार इज़ाज़त तरीका दी । एक बार अपनी जिन्दगी में और एक इस वक्त । तुम्हारा नसीब खूब है । मैंने कुलाह मुबारक को चूमा और पहिना और विदा होकर मकान पर आया ।”

हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) की भी अपने पूज्य गुरुदेव के अनुरूप यह विशेषता थी कि आपकी संगति से बुराइयाँ तत्काल छूट जाती थीं और वह व्यक्ति धर्मानुसार आचरण करने लगता था ।

वे रायपुर गाँव की सीमा पर एक कच्ची झोपड़ी में रहते थे और साथ में खेती की छोटी सी जमीन थी । वे बच्चों को अरबी और फारसी भाषा पढ़ाया करते थे लेकिन जीविका के

लिये वे खेती-बाड़ी पर ही निर्भर रहते । जो समय बचता उसे परमात्मा की याद में लगाते । अक्सर उनके पास गरीब बच्चे ही पढ़ने आते ।

हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) के पास जो लड़के पढ़ने आते उनमें एक हजरत मौलाना फ़ज्ल अहमद खां (रहम.) (हुजूर महाराज) भी थे । वे बहुत ही तीव्र बुद्धि के और आज्ञाकारी स्वभाव के थे । हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) के परिवार में केवल उनकी धर्मपत्नी एवं एक सुपुत्र थे, जिनका नाम श्रीमान अब्दुल्ला था । आपके सुपुत्र श्रीमान अब्दुल्ला की किशोर अवस्था में ही मृत्यु हो गई । इस आकस्मिक वियोग से सब लोग बहुत व्यथित थे, विशेषकर इन सुपुत्र की पूज्य माँ । वे दिन-रात अपने पुत्र की याद में रोया करती थीं । एक दिन हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) ने अपनी धर्मपत्नी को समझाया कि रोने से कोई फायदा नहीं, जिस हालत में परमात्मा रखे उसमे खुश रहो । वे बोलीं, "मैं बहुत कोशिश करती हूँ, लेकिन सब्र नहीं आता, उसकी याद आ-आकर रुलाती है ।" आपने समझाया कि तुम फ़ज्लू (हुजूर महाराज) को ही अपना बेटा क्यों नहीं समझ लेती हो ? हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) की यह बात सुनते ही उनकी धर्मपत्नी के दिल में कुछ ऐसी कैफियत हो गई कि वे उसी दिन से हुजूर महाराज को अपना बेटा मानने लगीं । हुजूर महाराज भी उन्हें अपनी सगी माँ मानने लगे । यह भी संयोग कि बात थी कि श्रीमान अब्दुल्ला हुजूर महाराज के हमशक्ल थे ।

हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) अपने विसाल (शरीर छोड़ने) के वक्त अपनी धर्मपत्नी को हुजूर महाराज के ही सुपुर्द कर गये थे । वे वहीं कायमगंज में अपने नवासों के यहाँ रहने लगी थीं । यद्दपि उनके नवासों की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी थी लेकिन वे उन लोगों के साथ उनके मकान में न रहकर सामने ही एक फूस की झोपड़ी डलवाकर उसमें रहती थीं । उनके भोजन वस्त्र आदि की व्यवस्था हुजूर महाराज ही अपनी ओर से करते थे । उनके लिये सतनजा अनाज जो उन्हें पसंद था खरीद देते और छठे महीने कपड़े बनवा देते । वे इतना सादा भोजन करतीं कि उस सतनजे अनाज कि खुश्क रोटियां ही अक्सर उनका भोजन होता, साथ में न कोई सब्जी न दाल । जब तक वे जीवित रहीं, हुजूर महाराज सगे पुत्र की तरह आपकी सेवा बड़ी निष्ठा के साथ करते रहे । उन्होंने ही हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) को बाध्य किया था कि वे हुजूर महाराज को अपनी शरण में लेकर दीक्षित करें ।

हुजूर महाराज के सुपौत्र हजरत मंजूर अहमद खां साहब फरमाते थे कि हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) की मजार शरीफ शुरु में कई वर्षों तक कच्ची ही थी और सतसंगी भाइयों को इसे ढूँढने में असुविधा होती थी । उन्होंने मुअज्जम खां नामक एक मिस्त्री को मजार को पक्का बनाने के लिये नियुक्त किया । मुअज्जम खां नमाजी और शरीअत के पाबन्द व्यक्ति थे । मजार का चबूतरा बन जाने पर जब वे आगे का काम करने लगे तो उन्हें अन्दर से यह आवाज सुनाई दी, "मियां, क्या कर रहे हो ? फ़क़ीर तो गुमनाम ही रहा करते हैं ।" यह सुनकर वे हजरत मंजूर अहमद खां साहब के पास गये और बोले, "मौलाना

साहब, यह एक जिन्दा वली की मजार है । मुझे इस तरह की आवाज सुनाई दी कि 'फ़क़ीर तो गुमनाम ही रहा करते हैं ।' यह काम मेरी हिम्मत के बाहर है ।"

मियां मुअज्जम की इस बात के बाद जो हुआ वह शाह मंजूर अहमद खां साहब के स्वयं के शब्दों में, "मैंने उनको (मियां मुअज्जम को) तसल्ली देकर कहा, अब मैं हजरत से अपने मुर्शिद के वास्ते से अर्ज करता हूँ । आप भी मेरे हक में सिफ़ारिश करें । इस खादिम ने अपने पीरो-मुर्शिद हजरत मौलाना शाह अब्दुल गनी खां अफरीदी नक्शबंदी, मुजद्दिदी, मजहरी, नईमी, फ़ज्ली (रहम.) के वास्ते से यह अर्ज किया कि या हजरत ! यह सच है कि फ़क़ीर गुमनाम ही रहा करते हैं, मगर हम जैसे बन्दे गुनहगार किस तरह से आपके यहाँ हाजिरी दे सकें । आपका मजार कब्रिस्तान में है । हम उसको पहचानने में भूल जाते हैं, इसलिए सिर्फ निशाँ चाहते हैं ताकि मुझको व अन्य दीगर आने वाले भाइयों को हाजिरी देने में आसानी हो । यह मेरी दिली ख्वाहिश है । इसे आप कुबूल फरमाएं और हम सब पर निगाहें कर्म हमेशा बनाए रखें । ख़ुदा का शुक्र है कि आज वहाँ छत पड़ गई है, वरना धूप और गोखरू (कांटें) इस कदर थे कि एक कदम चलना या दस मिनट बैठकर वहाँ फातिहा पढ़ना मुश्किल था ।"

शाह मंजूर अहमद खां साहब ने हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) की उस कोठरी के बारे में भी फ़रमाया जहाँ हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) ने बरसों इबादत की थी । आपने बताया कि वहाँ पर इतना तेज जिक्र हो रहा था कि बर्दाश्त के बाहर था । अगर किसी बच्चे को रोना (चीख) लग जाये या कोई नजर का असर हो जाये तो उस कोठरी में बैठते ही ठीक हो जाता है ।

हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) से सम्बन्धित एक घटना जो हजरत मौलवी अब्दुल गनी खां (रहम.) ने 14.11.42 को कानपुर में सुनाई थी इस प्रकार है:

"एक दफ़ा हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) किसी साहब से मिलने के लिये कायमगंज से फर्रूखाबाद हुज़ूर महाराज को साथ लेकर रवाना हुए, मगर फर्रूखाबाद पहुँचने पर पता चला कि वे साहब कायमगंज गये हुए हैं । आप फ़ौरन कायमगंज के लिये लौट पड़े, जहाँ आकर मालूम चला कि वे लखनऊ गये हुए हैं । आप फ़ौरन वहाँ से लौटे और फर्रूखाबाद पहुँचे । हुज़ूर महाराज ने सोचा कि शायद यहाँ ठहर कर फिर चलेंगे, मगर वे वहाँ भी न रुके । हुज़ूर महाराज ने अर्ज किया कि साहब मैं तो समझता था कि आप कहीं ठहर जायेंगे । आपने फ़रमाया, अच्छा तुम मेरे पीछे यह दो अल्फाज़ कहते हुए चले आओ, ख़ुदा चाहेगा तो तुम्हें थकान महसूस न होगी । अत: ऐसा ही हुआ । एक मस्जिद पर पहुँचकर आपने कुएं से पानी भरा और वुज़ू वैगरह से फारिग होकर आपने हुज़ूर महाराज के वास्ते पानी भरकर रख दिया और आकर हुज़ूर महाराज के पैर दबाने बैठ गये । हुज़ूर महाराज चौंक कर उठ बैठे और मुआफ़ी मांगने लगे । हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) ने फ़रमाया, 'भाई तुम थक गये होंगे, इस वास्ते तुम्हारे पैर दबाने लगा हूँ ।' हुज़ूर महाराज ने अर्ज किया कि मैं थका नहीं हूँ । आपने फ़रमाया कि अगर थके न होते तो नमाज़ पढ़ लेते । हुज़ूर महाराज फ़ौरन

उठे और वुज़ू के वास्ते कुएं से पानी भरने चले तो आपने फ़रमाया कि मैं तुम्हारे वास्ते पानी पहले ही भरकर रख आया हूँ। हुज़ूर महाराज ने वुज़ू कर नमाज़ अदा की।"

एक बार एक प्रकाण्ड विद्वान हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) से मिलने आये। बातचीत के दौरान किसी प्रश्न के उत्तर में आपके मुँह से स्थानीय भाषा के अनुरूप मालूम नहीं कि जगह 'मलूम नहीं' निकल गया। वे विद्वान बड़े आश्चर्य से बोले कि जब आप जैसे प्रकाण्ड विद्वान 'मलूम नहीं' कहते हैं तो आम आदमी का क्या हाल होगा ? हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) ने कहा, 'भाई मैं तो कुछ जानता नहीं, हाँ, मेरे पास एक लड़का आता है, शायद वह तुम्हारे प्रश्नों का जवाब दे सके।' फिर दूसरे दिन आपने अपने शिष्य हजरत मौलवी अब्दुल गनी खां (रहम.), जिन्हें वे पुत्रवत प्यार करते थे, को बुलाया और उन विद्वान के प्रश्नों का उत्तर देने को कहा और फ़रमाया अंत में अपनी तरफ़ से भी एक प्रश्न पूछ लेना। हजरत मौलवी अब्दुल गनी खां (रहम.) ने अर्ज किया कि मुझे तो कुछ नहीं आता तो आप ने कहा कि तुम्हे कुछ नहीं करना, बस वहाँ जाकर मेरा ख्याल कर लेना। उन्होंने वैसा ही किया और उन विद्वान के सभी प्रश्नों का कुशलता से उत्तर दिया और आखिर में अपनी तरफ़ से एक सवाल पूछ लिया। वे बगलें झाँकने लगे, तब हजरत मौलवी अब्दुल गनी खां (रहम.) ने उस प्रश्न का भी उत्तर दिया। उन विद्वान ने आपकी बड़ी प्रशंसा की और बोले जब तुम्हारा यह हाल है तो तुम्हारे पीर कितने ज्ञानी होंगे ?

आपने 4 नवम्बर 1889 को अपना शरीर त्यागा। आपकी समाधि कायमगंज में कब्रिस्तान नन्दू खां में स्थित है। आपने हुज़ूर महाराज को अपने पास सोलह वर्ष रखा और रूहानी दौलत से मालामाल कर अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया।

मौलवी अहमद अली खां की समाधि (कायमगंज) (सबसे बायीं ओर) (कुछ समय पहले)

मौलवी अहमद अली खां की समाधि (कायमगंज) (सबसे बायीं ओर) (वर्तमान में)

मौलाना फ़ज्ल अहमद खां (रहम.)

‘या इलाही तीरे वहदत से मुझे मज्रूह कर,
फ़ज्ल अहमद खां इमामुल अस्फिया के वास्ते’
(अदैव्तता के तीर से घायल कर मुझे, हे परमात्मा !
पूज्यनियों में अग्रसर फ़ज्ल अहमद खां के नाम पर)

हजरत मौलाना फ़ज्ल अहमद खां (रहम.) उर्फ़ जनाब हुज़ूर महाराज हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) उर्फ़ जनाब खलीफ़ा साहब के प्रिय शिष्य एवं आत्मिक उत्तराधिकारी थे। आपका जन्म उत्तरप्रदेश के फर्रुखाबाद जिले के कायमगंज तहसील में रायपुर नमक गाँव में 1837 में हुआ था। आपके पूज्य पिताजी जनाब गुलाम हुसैन साहब काश्मीर के महान सूफी संत हजरत मौलाना वलीउद्दीन (रहम.) से बैअत थे और उनके खलीफ़ा भी थे। वे फ़ौज में निशान-बरदार के पद पर कार्यरत थे। आपकी पूज्य माताजी हजरत मौलाना अफजल शाह नक्शबंदी, मुजद्दिदी, जो हजरत अबुल हसन (रहम.) के खलीफ़ा थे, से दीक्षित थीं। आप उनके बारे में फ़रमाया करते थे कि “मेरी बेटी ‘मशायते एजदी’ तब्दील कर देती है (वह ईश्वर की इच्छा और उसका विधान बदलने की क्षमता रखती है)। वे इन्तिहा दर्जे की नेक, सयंमी और सरल और अपने-पराये के भेद से अत्यंत निस्पृह थीं। एक बार आपके छोटे बेटे मौलवी विलायत हुसैन खां साहब और मौलवी अब्दुल गनी खां साहब दोनों कोई परीक्षा देने गये और दोनों ने पूज्य माताजी से अपने लिये दुआ करने की प्रार्थना की। पूज्य माताजी फरमाती थीं कि जब भी वे दुआ के लिये अपने बेटे का नाम लेना चाहतीं उनकी जगह मौलवी अब्दुल गनी खां साहब का नाम ही निकलता। यह उनके प्रेम की व्यापकता थी।

हुज़ूर महाराज ने मिडिल स्कूल परीक्षा और उसके बाद नार्मल ट्रेनिंग भी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। अरबी और फारसी की तालीम उन्होंने अपने पूज्य गुरुदेव हजरत मौलवी अहमद अली खां (रहम.) से ली। उस ज़माने में नार्मल ट्रेनिंग के बाद अध्यापक नियुक्त हो जाते थे लेकिन हुज़ूर महाराज ने इस ख्याल से कि इससे उन्हें अपने पूज्य गुरुदेव से दूर जाना पड़ेगा, अध्यापक बनना स्वीकार न किया और बच्चों को मुफ्त अरबी और फारसी की तालीम देने लगे। अच्छे परिवार के बच्चों से जो पारिश्रमिक मिल जाता उससे वे अपना गुजर बसर करते। अपने जीविकोपार्जन की एक घटना आपने अपनी पुस्तक ‘जमीमा हालात मशायख नक्शबंदिया’ में वर्णन की है कि एक बार वे बेरोजगार थे और दिसम्बर माह की दस तारीख हो गयी थी। आपके गुरुदेव ने पूछा कि कितनी तनख्वाह में गुजर हो जायेगा तो उन्होंने पांच रुपया माहवार बताया। पूज्य गुरुदेव ने कुछ विचार के बाद फ़रमाया कि तुम पहली तारीख से इस तनख्वाह पर मुलाजिम हो गये। उन्हें यकीन नहीं हुआ कि उन्हें पता भी नहीं

और वे पहली तारीख से नौकरी पर लग गये ? पूज्य गुरुदेव ने फ़रमाया कि अपने मकशफात (अध्यात्मिक साधना से जानी गयी गुप्त बातें) को सब लोगों से छिपाना चाहिये । देखो, तुम जैसा मुरीद मुख्लिस (निष्ठावान शिष्य) भी यकीन नहीं करता तो फिर औरों से क्या उम्मीद हो ? हुज़ूर महाराज ने लिखा है कि 'जब मैं हजरत से जुदा हुआ तो उसी वक्त अपनी नौकरी का हाल मालूम हो गया कि मुंशी बद्रीप्रसाद वकील ने जराद में नौकर करा दिया है । उसी वक्त अपने काम पर गया और बीस रोज बाद पूरी तनख्वाह (एक से इक्कतीस दिसम्बर तक) पाई ।'

वृद्धावस्था में आर्थिक स्थिति ठीक न रहने पर आपने फर्रुखाबाद के मिशन स्कूल में अध्यापक बनना स्वीकार कर लिया । वहाँ आपने मुफ़्ती साहब के मदरसे के नजदीक रहने के लिये एक कोठरी ले ली थी । यहाँ भी वे फुर्सत के वक्त मदरसे के लडकों को उर्दू-फारसी की शिक्षा देते थे ।

शुरु में हुज़ूर महाराज जनाब खलीफ़ा साहब के पास केवल किताबी ज्ञान प्राप्त करने के लिये आये थे, परन्तु धीरे-धीरे उन पर उनके आत्मज्ञान का रंग चढ़ता गया और वे 19 वर्ष की आयु में जनाब खलीफ़ा साहब से बैअत हुए और बीस वर्ष उनकी खिदमत में हाजिर होकर उनकी सोहबत से फैजयाब होते रहे । आपने लिखा है:

"हजरत खलीफ़ा साहब की शान उन पत्रों से जाहिर होती है जो हजरत सैय्यदना [हजरत सैय्यद अबुल हसन नसीराबदी (रहम.)-आपके पूज्य गुरुदेव] ने आपके नाम भेजे हैं और इस फ़क़ीर सरापा तक्सीर फ़ज्ल अहमद खां को इनायत फ़रमाया है और असल खतूत (पत्र) भी दिए और यह फ़रमाया 'यह सामान तुम्हारे काम का है, तुम रखो, अल्लाह मुबारक करे ।' एक पत्र में हजरत सैय्यदना फरमाते हैं कि 'तुमसे एक आलम (संसार) मुनव्वर (प्रकाशित) होगा' और यह आदेश आपके अध्यात्मिक तालीम, उपदेश तथा आदेश देने के लिये पूर्णरूप से अधिकार प्राप्त होने का प्रमाण है । दूसरी जगह लिखा है कि 'नास्तिक लोगों को, राह चलतों को, पापियों को और दुराचारियों को भी तवज्जोह दोगे तो वे भी सदाचारी और धर्म और ईश्वर में पूर्ण विशवास रखने वाले बन जायेंगे । तीसरी जगह फ़रमाया कि जो तुमको मिला इस जमाने में शायद किसी को मिला हो ।' मेरे गुरुदेव अहमद अली खां साहब ने जब बन्दा को इज़ाज़त और खिलाफ़त की इज्जत बख्शी तो पहले पत्र को फ़रमाया कि पढ़ लो । चुनाचें गुलाम ने पढ़ा ['तुमसे एक आलम (संसार) मुनव्वर (प्रकाशित) होगा'] । जब खत्म कर चुका तो फ़रमाया कि फ़ज्ल अहमद, यह बातें हमसे तो कुछ न हुयी । मैंने अर्ज किया कि अब अल्लाह तआला प्रकट कर देंगे । हजरत ने फ़रमाया कि अब हम गोर किनारह हुए, चंद दिनों के मेहमान हैं (हमारा अंतिम समय आ गया है) । बन्दा यह सुनकर रोने लगा तो आपने फ़रमाया, 'शाबास ! यह रोने का वक्त है ? तत्काल मेरे अन्दर आत्मिक आनंद का हल्का नशा पैदा हुआ । सुनकर फ़रमाया, यह बातें खाली न जाएँगी, इनका प्राकट्य अब तुमसे होगा । हजरत का यह इर्शाद सच हुआ । इस अहकर से अक्सर हिन्दुओं, ईसाईयों और शियाओं को फायदा पहुँचा । अलहम्दु लिल्लाह (तमाम तारीफ़ अल्लाह कि लिये है) । इसके बाद हजरत

मुर्शिदना खालीफ़ाजी साहब ने फ़रमाया कि 'अब तक तो तुम खूब आराम से रहे । अब मैं एक अजीम (बड़ा, श्रेष्ठ बोझ) और अम्र फखीम (प्रथिष्ठित कार्य) सुपुर्द करता हूँ । अगर बजा लाओगे तो अंबिया और औलिया के साथ मशहूर रहोगे (क़ियामत के दिन जिन्दा किये जाओगे), वरना यही खिर्क (वस्त्र, लिबास) दोजख को खींच ले जायेगा ।' कमतरीन बहुत रोया और अर्ज किया कि हजरत बन्दे को मुआफ़ फरमाइयेगा । खालीफ़ाजी साहब ने फ़रमाया 'ख़ुदा आसान करेगा' और गुलाम के वास्ते दुआ की । फिर हजरत सैय्यदना की अतीय: तबर्रुकात (प्रसाद और उपहार रूप में मिली वस्तुएं) तलब फ़रमा कर उसमें से हजरत की तस्बीह (जप करने की माला) और कुरता शरीफ की आस्तीन मुबारक और एक टुकड़ा दस्तार (पगड़ी) शरीफ और एक कुलाह (टोपी) और स्वयं अपना कुरता देने की कृपा की और यह फ़रमाया कि हर एक बुज़ुर्ग अपने खलीफ़ा को अपना तबर्रुक (प्रसाद) दिया करता है । वाह ! तुम्हारा सौभाग्य है कि तुम्हें हजरत सैय्यदना अबुल हसन साहब के तबर्रुकात मिले । शुक्र इस अतीय: (उपहार) का करना चाहिये ।"

उक्त विवरण पढ़ने से यह स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है कि जनाब खलीफ़ा साहब (रहम.) ने हुज़ूर महाराज (रहम.) को इज़ाज़त और खिलाफ़त बख्शते समय उन्हें जो आशीर्वाद दिया वह पूर्णतया सत्य घटित हो रहा है और यह नक्शबंदी मुजद्दिदी मजहरी रामचन्द्रिया सिलसिला धर्म, जाति और संकीर्णता से ऊपर उठकर मानवता के हित में प्रेम के मार्ग प्रशस्त करने में अपनी अहम भूमिका का निर्वाह कर रहा है ।

नक्शबंदी सिलसिले में हुज़ूर महाराज (रहम.) पहले ऐसे सूफी संत थे, जिन्होंने मुस्लिम सूफी संतों की इस गुप्त अध्यात्मिक विद्या का प्रचार बिना किसी तास्सुब (भेदभाव) के हिन्दुओं में किया । हालाँकि वे स्वयं इस्लाम धर्म के अनुयायी थे, परन्तु धार्मिक पक्षपात से पूर्णतया मुक्त थे । न वे कभी किसी धार्मिक वाद-विवाद में पड़ते, न कभी किसी धर्म की आलोचना करते । उनका फ़रमाना था कि दुनियाँ के सभी इंसानों में तर्जे रूहानियत (आध्यात्मिकता की धार) एक है लेकिन तर्जे माशरत (सामजिक रहन-सहन) अलग-अलग है । आपका फ़रमाना था कि रूहानियत मजहबी बन्धनों से पूर्णतया मुक्त है । वे बाहरी आडम्बरों के विरुद्ध थे । एक बार उनके एक हिन्दू शिष्य ने इस्लामी रहन-सहन ग्रहण कर लिया । जब वह उनके सामने पहुँचा तो उन्होंने फ़रमाया कि अब तुम मेरे काम के नहीं रहे । मैं अपनी फ़क़ीरी में धब्बा नहीं लगने दूंगा । या तो तुम जैसे रहते थे वैसे ही रहो या मुझसे वास्ता न रक्खो । धर्म-परिवर्तन को उन्होंने कभी पसंद नहीं किया ।

इसी तरह एक बार आपके प्रिय शिष्य और खलीफ़ा महात्मा श्री रामचन्द्रजी महराज (रहम.) को उनके एक मुस्लिम गुरुभाई ने कह दिया कि बिना धर्म परिवर्तन के रूहानियत में आगे नहीं बढ़ा जा सकता । उन्होंने इस बात का हुज़ूर महाराज (रहम.) की खिदमत में हाजिर होकर निवेदन किया और कहा 'मैं आपका हूँ । अगर इज़ाज़त हो तो जाहिर जहर (प्रत्यक्ष रूप से) भी आपका हो जाऊँ (अर्थात इस्लाम स्वीकार कर लूँ) ।' हुज़ूर महाराज (रहम.) यह सुनकर स्तब्ध रह गये और फ़रमाया कि 'ऐसा बेहूदा ख्याल फिर कभी अपने

दिल में मत लाना । मजहब रस्मों-रिवाज का नाम नहीं है । यह सब शरीअत (कर्म काण्ड) है, और शरीअत का दारोमदार मुल्की और मजलिसी (देश और समाज की) हालातों पर निर्भर होता है । मजहब वास्तव में हक़ीक़त (सत्य) और मारफ़त (ज्ञान) का नाम है, जिसका सम्बन्ध आत्मा से है, जो सबकी एक है, और इन बातों से ऊपर है । जो जिस मुल्क और मजहब में पैदा हुआ है उसका फ़र्ज है कि उस मुल्क और मजहब के रस्मों-रिवाज के मुताबिक जीवन व्यतीत करे । तुम हिन्दू हो, तुम्हे हिन्दुओं के धर्मशास्त्र का पालन करना चाहिये और मुझे मुसलमान होने की वजह से इस्लामी शरअ: का । तुमको इन ओछी बातों से बहुत ऊपर उठना चाहिये । मजहब फरागदिली (विशाल हृदयता) सिखाता है न कि तंग दिली । अगर तुमने ऐसा किया (धर्म परिवर्तन) तो अपने आप को आक (वंचित) समझना ।'

वे हिन्दू भाइयों से कहा करते थे कि 'तुम मेरे पास आत्म ज्ञान पाने आये हो, उसे पाओ लेकिन अपनी रहनी-सहनी अपने समाज के अनुकूल ही रक्खो, क्योंकि मेरा तुम्हारा सम्बन्ध आत्मिक है, दुनियावी नहीं ।' उन दिनों क्योंकि छुआछूत की प्रबलता थी, अत: वे अपने हिन्दू शिष्यों को सूखी मिर्च तक अपने हाथ से न देते और उनके लिये भोजन की अलग व्यवस्था रखते । आप जब कभी अपने प्रिय शिष्य और खलीफ़ा महात्मा श्री रामचन्द्रजी महराज (रहम.) के यहाँ फतेहगढ़ पधारते तो हाथ में लेकर ही खा लेते, बर्तन में न लेते ।

वे कहा करते थे कि यह साधना पद्धति (हृदय से हृदय को आत्मिक उर्जा का संप्रेषण-प्राणाहूति) प्राचीन हिन्दू-ऋषि-मुनियों में प्रचलित थी जो कालांतर में लुप्त हो गयी और अब पुन: उनके बीच प्रसारित की जा रही है । इस सन्दर्भ में महात्मा डॉ. चन्द्र गुप्ताजी (रहम.) का भी कहना था कि यह साधना पद्धति प्राचीन समय में हिन्दुओं में प्रचलित थी और योगीराज श्रीकृष्ण इस विद्या के सर्वोच्च आचार्य थे जिन्होंने हजारों गोपियों और ग्वालों के हृदय में अनहद नाद जागृत किया, जिसे प्रतीकात्मक रूप में बांसुरी की धुन कहा गया ।

यहाँ यह भी कहना सारगर्भित होगा कि इस साधना पद्धति का मुख्य: आधार है 'तवज्जोह' (हृदय से हृदय को आत्मिक उर्जा का संप्रेषण-प्राणाहूति) और अब तक के मानव इतिहास में सबसे प्रभावशाली तवज्जोह का उदाहरण है भगवान श्रीकृष्ण द्वारा युद्धक्षेत्र में अर्जुन को गीता का उपदेश । गीता में 700 श्लोक हैं और इनको जबानी कहने-सुनने में कम से कम दो-तीन घण्टे का समय लगना साधारण बात होती । इतने वक्त तक, और वो भी युद्ध आरम्भ होने के शंखनाद के बाद, शत्रुदल का रुके रहना तर्कसंगत नहीं लगता, जिससे यह सिद्ध होता है कि गीता का उपदेश आत्मिक स्तर पर तवज्जोह द्वारा दिया गया था ।

इसी सन्दर्भ में जनाब खलीफ़ा साहब (रहम.) ने एक बार हुजूर महाराज (रहम.) से फ़रमाया था कि 'मेरे गुरुदेव हजरत सैय्यदना अबुल हसन (रहम.) ने फ़रमाया था कि मेरे पास एक हिन्दू लड़का आएगा, जिससे यह विद्या हिन्दुओं में बहुत प्रचलित होगी, लेकिन मेरे पास ऐसा कोई हिन्दू लड़का नहीं आया । शायद उन्होंने मुझमें तुम्हारी छवि देखी होगी और अब तुम्हें इस आज्ञा का पालन करना होगा ।'

हुज़ूर महाराज (रहम.) का आचरण धर्मशास्त्र का एक जीती-जागती मिसाल था और वे हर हालत में प्रसन्न रहते । जिस हालत में परमात्मा रखे उसमे वे खुश रहते । उनका जीवन अनेक विलक्षण घटनाओं से भरा था । उनका तवज्जोह देने का तरीका और उसका प्रभाव हजरत बाकी बिल्लाह (रहम.) जैसा था । ना वे किसी से कोई भेंट स्वीकार करते ना कभी किसी से अपने पाँव छुआते ।

हुज़ूर महाराज (रहम.) बड़े दयालु प्रकृति के थे । किसी को भी कष्ट में देखकर तुरंत तन-मन-धन से उसकी सेवा में लग जाते । उनकी स्वयं की आर्थिक स्थिति अच्छी न थी पर वे किसी भी जरूरतमंद की मदद करते हुए हिचकिचाते नहीं थे । तकाजा करना तो दूर रहा, कर्जदार जिस गली में रहता उस गली से गुजरने में भी बहुत संकोच करते कि कहीं उस कर्जदार से आमना-सामना न हो जाये और उस बेचारे को उनके सामने शर्मिंदा होना पड़े । एक बार आपके पास कहीं से साढ़े आठ रूपये आये । कुछ ऐसा संयोग हुआ कि उस दिन जरूरतमंद लोग आते रहे और आपने आठ रूपये उन्हें दे दिए यद्दपि यह वह दिन था जबकि वे अपने पूरे परिवार सहित तीन दिन से बिना खाने के रह रहे थे । शेष आठ आने आप हाथ में उछालते रहे, जिन्हें आपकी माताजी ने घर में आईं महात्मा श्री रामचन्द्रजी महराज (रहम.) की पत्नी और उनके छोटे भाई की पत्नी को चूड़ियाँ दिलाने में खर्च कर दिया यद्दपि वे दोनों पहले से ही खूब चूड़ियाँ पहने हुए थीं । यह थी हुज़ूर महाराज (रहम.) की दानशीलता और उनकी माताजी की अपनी उक्त दोनों बहुओं के प्रति हार्दिक प्रेम की उदात्त भावना ।

उनका हृदय बड़ा कोमल था । मांस खाने की बात तो दूर रही, वे प्राय: गाय का दूध तक न पीते थे । जब कभी बीमारी या कमजोरी की हालत में मजबूरन गाय का दूध पीना पड़ जाता तो ग्वाले को अपने सामने गाय को दुहने को कहते । जब देखते कि आधा दूध रह गया है दुहना बंद करा देते और अपने सामने बछड़े को पिलवा देते और पूरे दूध का दाम ग्वाले को दे देते । इस प्रकार वे बछड़े और ग्वाले दोनों का ख्याल रखते ।

पास में पैसे होने पर भी वे कर्जा ले लेते और कहते इससे हम कर्ज देनेवाले के अहसानमंद तो रहते ही हैं साथ ही हमें घमंड भी नहीं रहता कि किसी के कर्जदार नहीं हैं ।

एक बार हुज़ूर महाराज (रहम.) के पूज्य गुरुदेव ने उनको भिक्षा मांगने का हुक्म दिया । कई रोज वे अपने पूज्य गुरुदेव की आज्ञानुसार भिक्षा मांगते रहे लेकिन उन्हें तनिक भी संकोच न हुआ । फिर एक दिन उनके पूज्य गुरुदेव ने उनसे यह फरमाते हुए भिक्षा मंगवाना बंद कर दिया कि 'बेटे हम तुमसे बहुत खुश हैं, तुम इस इम्तिहान में पास हुए ।'

शुरु में हुज़ूर महाराज (रहम.) के पास कुछ ही लोग आते थे । उनमें से एक नौजवान एक तवायफ के पास जाते थे । अन्य सतसंगियों ने शिकायत की तो आपने फ़रमाया कि अब जब वह नौजवान अगली बार जाये तो उन्हें बता दिया जाये । अगली बार जब वह नौजवान वहाँ गया तो हुज़ूर महाराज (रहम.) को खबर कर दी गयी । आप नहाकर सफ़ेद वस्त्र पहन और कोई खुशबू लगाकर उन लोगों के साथ वहाँ पहुँचे । तवायफ हुज़ूर महाराज (रहम.) को जानती थी, उसे बड़ा आश्चर्य हुआ पर उसने अपनी समझ से उनके लायक एक-दो गाने

सुनाये । इसके बाद हुज़ूर महाराज (रहम.) ने उससे पूछकर उसका एक रात का पारिश्रमिक अदा कर दिया और बाकी सब लोगों को वहाँ से वापस भेज दिया । फिर वे उस स्त्री से बोले कि अब तुम्हें जैसा मैं कहूँगा, करना होगा । हुज़ूर महाराज (रहम.) उस समय करीब साठ वर्ष के थे । हुज़ूर महाराज (रहम.) ने कहा कि 'मुझे तुम्हारे ये गहने अच्छे नहीं लग रहे, इन्हें उतारकर रख दो ।' इसके बाद उन्होंने उसे नहाकर आने को कहा और अपने साथ लाये अपनी पत्नी के वस्त्र पहनकर आने को कहा । जब वह नहाकर आ गयी तो आपने उसे पांच नमाज़ पढ़ने के लिये कहा । वह बोली 'मैंने तो कभी नमाज़ नहीं पढ़ी । मैं तो जानती भी नहीं कि नमाज़ कैसे पढ़ी जाती है ।' हुज़ूर महाराज (रहम.) ने फ़रमाया आज रात तुम मेरी खिदमत में हो, जैसा मैं कहूँगा तुम्हे करना होगा । अब तुम जैसा मैं करूं, वैसे करो । तवायफ की मजबूरी थी । जब हुज़ूर महाराज (रहम.) नमाज़ में सज्दे में झुके तो उसने भी माथा टेका । हुज़ूर महाराज (रहम.) ने दुआ की 'या अल्लाह ! मैंने तेरे फ़ज्लो करम से इसे यहाँ तक ला दिया, अब तू जाने और यह जाने ।' इसके बाद वे उठकर अपने घर तशरीफ़ ले गये लेकिन वह स्त्री सज्दे की हालत में ही झुकी रह गयी । सुबह के वक्त उसकी माँ ने झकझोरा तो वह उठी । पहले तो वह भोचक्क होकर इधर-उधर देखती रही, इसके बाद अपनी माँ से बोली, 'मुझसे जो कुछ कमाई हो सकी, वह तुम्हें दे चुकी । तुम्हारे गहने भी यह रखे हैं, यह कपड़े जो पहने हूँ, तुम्हारे नहीं हैं, बस अब मैं चली ।'

हुज़ूर महाराज (रहम.) के घर के सामने एक नीम का पेड़ था । करीब दस-ग्यारह बजे वह वहाँ आकर बैठ गयी । हुज़ूर महाराज (रहम.) ने उसे देखा तो अपनी पत्नी से उसे भीतर लिवा लाकर कुछ खिलाने-पिलाने को कहा । जब वह खा-पी चुकी तो हुज़ूर महाराज (रहम.) ने उससे पूछा कि 'क्या तुम्हारा इरादा अपनी राह बदलकर एक पवित्र और बाइज्ज़त जीवन बिताने का नहीं है ? वह तुरंत रजामंद हो गयी । तब हुज़ूर महाराज (रहम.) ने उससे गुनाहों के लिये तौबा कराई और उस नौजवान को बुलाकर समझाया कि अगर तुम्हेँ यह लडकी पसंद है तो इससे निकाह करके एक पवित्र जिन्दगी बसर करो । उन्होंने दोनों का निकाह पढ़वा दिया । कुछ ही दिनों में दोनों ने हुज़ूर महाराज (रहम.) से दीक्षा प्राप्त की और एक भक्तिमय व पवित्र जीवन बिताने लगे ।

महात्मा श्री रामचन्द्रजी महराज (रहम.) का फ़रमाना था कि "हमारे सद्‌गुरुदेव (हुज़ूर महाराज) का यह हाल था कि वह चलते-फिरते जिनसे भी दुआ-सलाम का अवसर मिलता था, अपनी आत्मिक तवज्जोह उन सभी पर डाल दिया करते थे और फ़रमाया करते, 'अमाँ, इसमें मेरा क्या जाता है ? उस शख्स में संस्कार पड़ जाता है । कभी न कभी, कहीं न कहीं उभराव काम आएगा ही ।'" इस प्रसंग में उनके गुरुभाई हजरत मौलवी अब्दुल गनी खां साहब (रहम.) ने फ़रमाया कि एक दिन वे हुज़ूर महाराज (रहम.) के साथ कहीं जा रहे थे कि रास्ते में उनके एक बचपन के साथी मिल गये जो आतिशबाजी बनाया करते थे । आपने उन्हें दूर से ही देखकर उनका आधा नाम लेकर बुलाया और हँसते हुए कहने लगे कि 'मैंने सुना है कि तुम वली (संत) हो गये हो, देखना अपने पुराने दोस्तों को भूल न जाना ।' यह बात उन्होंने

हँसी में कही थी लेकिन बाद को वास्तव में उन्होंने अपने उस साथी को वली बना दिया। इसी तरह एक बार यह सोचकर कि यह कब्र उनकी एक खादिमा की है, उन्होंने एक तवायफ कि कब्र पर फातिहा पढ़ दिया और उसकी रूह को माग्फिरत (मोक्ष) मिल गयी।

एक बार अपनी तालीम के ज़माने में बदायूं में आपने एक 111 वर्षीय मजज़ूब को अपनी आंतरिक तवज्जोह से चेता दिया। अवधूत प्रेम के जज्बे में डूबे मस्त फ़क़ीरों को कहते हैं। वे जिनकी क्षमता से अधिक यह जज्बा होता है, उनका दिमाग बेकार सा हो जाता है, वे अवधूत कहाते हैं और वे स्वयं अपनी उन्नति करने में विवश होते हैं। लेकिन जो इनसे ऊँची अवस्था में होते हैं, हंस या परमहंस की, वे अपने प्रियतम की गोद में बालकों के समान रहकर परमात्मा के प्यार व आनंद में रहने का ज्ञान रखते हैं, वे प्रेम और जज्ब के मार्ग के बादशाह, कलंदर कहाते हैं और उन्नति करते रहते हैं। उन अवधूत साहब ने पलटकर ऐसी तवज्जोह फरमायी कि हुज़ूर महाराज (रहम.) को ऐसा लगने लगा जैसे उनके भीतर बड़े ही वेग से चक्की चल रही हो। सम्भव था कि वे हुज़ूर महाराज (रहम.) को अपने रंग व जज्बे में ढालने की पूरी कोशिश कर जाते, पर तुरंत हुज़ूर महाराज (रहम.) को यह महसूस हुआ कि अचानक प्रकाश के एक पर्दे ने उन्हें पूरी तरह ढक दिया और अपने स्वरूप में उन्होंने अपने गुरुदेव को पूर्ण रूप से देखा। वे तपस्वी अवधूत भी एकदम बोल उठे कि' "शाबाश, तुम बड़े होनहार हो। मालिक का बड़ा फ़ज्लो करम तुम्हारे ऊपर है। सच तो यह है कि फ़नाफिल शैख़ (गुरु में लीन शिष्य) तो बहुत देखने में आते हैं, परन्तु फ़नाफिल मुरीद (जिसमें गुरु स्वयं लय हो) बहुत कम देखने में आते हैं। वाह ! मुरीद भी हो तो तुम्हारे जैसा और पीरो मुर्शिद भी ऐसे हों जैसे तुम्हारे हैं। जाओ, तुम्हारी जात से एक आलम (संसार) मुनव्वर (प्रकाशवान) होगा।"

हुज़ूर महाराज (रहम.) बहुत ही निडर स्वाभाव के थे। जिन दिनों वे मुफ़्ती साहब के मदरसे में कोठरी में रहते थे, महात्मा श्री रामचन्द्रजी महराज (रहम.) और कुछ अन्य हिन्दू उनके पास सतसंग के लिये आने लगे। शहर के कट्टरपंथी मुसलमान इस बात से उनसे चिढ़ने लगे और द्वेष रखने लगे। उनमें से कुछ ने उन पर घातक हमला करने के लिये शहर के एक बदनाम गुंडे को तैयार कर लिया और उस गली को भी दिखा दिया जिससे होकर हुज़ूर महाराज (रहम.) बाज़ार को जाया करते थे। एक दिन वह गुंडा उन पर हमला करने बीच गली में पहुँच गया। हुज़ूर महाराज (रहम.) उसे देखते ही जोर से चिल्लाकर बोले, "रुक बदमाश, अभी तुझे देखता हूँ।" यद्यपि वह गुंडा भारी भरकम था और हुज़ूर महाराज (रहम.) उसकी तुलना में बहुत पतले-दुबले, लेकिन हुज़ूर महाराज (रहम.) की ललकार से वह इतना भयभीत हो गया कि उलटे पाँव भागा और भागते हुए एक-दो जगह गिर भी पड़ा। उस दिन से फिर किसी का इस तरह का साहस नहीं हुआ कि उनके साथ ऐसी हरकत करता।

हुज़ूर महाराज (रहम.) की यह आदत थी कि वे थके हुए सतसंगी भाइयों के पैर दबाने लगते थे और अगर कोई संकोच करता और मना करता तो आप फरमाते कि अब तुम भी हमारे पैर दबाने के हक़दार हो गये। आप सबके साथ बराबरी का व्यवहार करते। इम्तियाज

(एक को दुसरे पर तर्जीह देना) बिलकुल पसंद न करते । सबके साथ एक फर्श पर बैठते और तकिया वैगरह न लगाते । अपने शिष्यों की ओर टाँगे न फैलाते और ऊँची जगह न बैठते । जब कभी सतसंगी भाइयों को सिरहाने बैठाते और अगर कोई न बैठता तो नाराज होते । कहीं जाते समय सबके साथ-साथ चलते, आगे-आगे चलना आपको नापसंद था । जो सब खाते आप भी वही खाते । भोजन के बारे में तकक्लूफ़ आपको पसंद न था, जो कुछ बना होता वही भोजन कर लेते । घर में अगर सूखी रोटियां या सूखे भुने चने होते तो वही बड़े चाव से खा लेते । बहुत स्पष्टवादी थे और जो मन में आता फ़ौरन कह देते ।

महात्मा श्री रामचन्द्रजी महराज (रहम.) के यहाँ एक बार आप तीन-चार दिन रुकने के इरादे से गये लेकिन उनके लिये कुछ विशेष भोजन की व्यवस्था करने के कारण आपने तुरंत लौटने का फैसला कर लिया और फ़रमाया जब तक तुम्हारा यह भोजन याद रहेगा, तब तक मैं यहाँ नहीं आऊँगा ।

हुजूर महाराज (रहम.) बहुत सफाई पसंद थे । आप अक्सर अँधेरे में गंगा स्नान करने के लिये जाते और अँधेरे में ही वापस आ जाते । गर्मी में शाम को भी नहाने जाते । दूसरे को कभी भी अपने वस्त्र धोने को नहीं देते । खुद अपने कपड़े साफ़ करते और साफ़ कपड़े पहनते । बच्चों के साथ बच्चों की तरह खेला करते और अक्सर खेलते समय बच्चों को बताशा बाँटते थे, परन्तु जब चाहते तो सभी बच्चे चुपचाप अदब के साथ बैठ जाते और ध्यानपूर्वक पढ़ने लगते । बच्चों को कभी दण्डित नहीं करते । फरमाते थे “बा-अदब बा-नसीब, बे-अदब बे-नसीब” (शिष्ट लोग भाग्यशाली होते हैं और अशिष्ट लोग अभागे ही रह जाते है) ।

हुजूर महाराज (रहम.) एक अच्छे शायर भी थे । शायरी में आपका तखल्लुस (उपनाम) ‘मज्रूह’ था । आपके एक उच्चकोटि के शायर होने का प्रमाण तो आप द्वारा रचित शज्र: शरीफ (सिलसिले के महापुरुषों की वंशावली) से मिलता है, जो आपने उर्दू में कविता के रूप में लिखा है । यह शज्र: शरीफ हुजूर महाराज (रहम.) की श्रेष्ठ काव्य रचना होने के साथ-साथ इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें सूफी मत के सभी सिद्धांतों का इतना सुन्दर समावेश मिलता है, जो अन्यत्र एक ही काव्य रचना में मिलना दुर्लभ है ।

आपने नक्शबंदी सिलसिले की गुरु परम्परा के हालात एकत्र किये थे और उन्हें पुस्तक रूप में छपवाने का आपका इरादा था । इसी बीच आपको मालूम चला कि एक बहुत ही उपयुक्त पुस्तक “हालत मशायख नक्शबंदिया मुजद्दिदिया” मौलाना मुहम्मद हसन साहब, निवासी कोटा, कीरतपुर, जिला बिजनौर ने लिखी है तो आपने अपनी पुस्तक छपवाने की जरूरत न समझी । लेकिन उस पुस्तक में नक्शबंदिया सिलसिले के शज्र: के अनुसार तीन महापुरुषों के हालत नहीं थे । अत: आपने इन तीन महापुरुषों-हजरत शाह मुरादुल्लाह साहब (रहम.), हजरत सैय्यद अबुल हसन साहब (रहम.) और हजरत अहमद अली खां साहब (रहम.) के हालात इस पुस्तक के एक जमीम: के रूप में ‘जमीम: हालत मशायख नक्शबंदिया मुजद्दिदिया, मजहरिया’ नाम से छपवाया ।

हुज़ूर महाराज (रहम.) ने अपना पार्थिव शरीर 30 नवम्बर 1907 को त्यागा । आपकी समाधि कायमगंज से करीब पांच कि. मी. कम्पिल कि तरफ़ रायपुर खास गाँव में ईदगाह के निकट स्थित है ।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

हर शख्स को भीतर से लामजहब (धार्मिक संकीर्णता से मुक्त) और बाहर से अपने मजहब के उसूलों की पूरी-पूरी पाबंदी करनी चाहिये ।

अगर मुरीद बराबर ये ख्याल रखे कि पीरो मुर्शिद को क्या चाहिये तो ख़ुदा चाहे तरक्की बहुत जल्द होती है ।

मौत के समय जो हालत होती है वह बयान से बाहर है । शरीर छोड़ने के बाद मिट्टी व रूह के बारे में जो बातें क़ुरआन शरीफ़ में लिखी हैं वह सब सही हैं लेकिन इन सब बातों के बावजूद भी ख़ुदा की हक़ीक़त कुछ और ही है ।

मुरीद माने होता है गुलाम । कोई किसी का गुलाम नहीं है, सब आपस में भाई-भाई हैं ।

गुरु पथ प्रदर्शक है । जिस्म को पीर नहीं समझना चाहिये । वह जो चीज है, वह है अर्थात गुरु की आत्मिक शक्ति जो शिष्य के अन्त:करण की अज्ञानता के अन्धकार को दिव्य प्रकाश में बदल दे वही पीर है ।

जिस ने प्रभु की याद में भोजन बनाया और खाया, वही एक दिन प्रभु को भी पायेगा ।

हर मजहब में नबी व अवतार हुए हैं, उन सबकी एक सी इज्जत करनी चाहिये । ऊपर सब एक हैं, कोई छोटा-बड़ा नहीं है ।

जिसने एक ख़ुदा पर पूरा यकीन कर लिया वही सच्चा मुसलमान है । एक ख़ुदा पर यकीन करने वाले सब सच्चे मुसलमान हैं चाहे जिस मजहब के मानने वाले हों ।

इस रास्ते में शोहरत (प्रचार) न करे । ईश्वर पर भरोसा कर एक जगह पर बैठ जाये । लिसे ईश्वर चाहेगा भेज देगा । शोहरत की ख्वाहिश करने से वह चीज जाती रहती है और कोरे के कोरे रह जाते हैं ।

बीमारी या तक्लीफ़ में सबसे बड़ा अमल यह है कि जो शख्स जो जबान जानता हो उसी में ख़ुदा से दुआ करे । अगर उसे मंजूर है तो वह अच्छा कर देगा ।

करामात करना अनुचित है । हाँ, खास जरुरत पड़ने पर बीच में कोई आड़ देकर (गुप्त रूप से) करते हैं ताकि उस शख्स को पता न चले और वह ईश्वर से दूर न हो जाए । सीधे-सीधे किसी को दिखाकर उसका उपकार करना भक्तजनों को शोभा नहीं देता ।

जिसको मजहब से लगाव बाकी है उसकी फ़क़ीरी में जरुर कुछ कमी है ।

जब तक पीर की खिदमत में जान जाने का ख्याल है तब तक बैअत कैसे हुई और पीर कैसे जिम्मेदार हो सकता है ?

खिदमत करना सीखो, खिदमत लेना नहीं ।

मुख्य: रूप से जिक्रे क़ल्ब (हृदय से अन्दर ही अन्दर गुरु द्वारा बतलाये हुए ढंग से ईश्वर का नाम जप) करना चाहिये । तसुव्वरे शैख़ (गुरु का ध्यान) तथा मुराक़ब: (ध्यान) भी संग

में लिये रहने से असल अभ्यास में बड़ी मदद मिलती है। जब जिक्रे क़ल्ब में मन रमने लगे तो बीच-बीच में तसुव्वरे शैख़ का आह्वान बड़े प्रेम से करते रहना चाहिये ताकि जो आत्मिक चैतन्य शक्ति उनके हृदय में पूर्ण रूप से प्रकाशमान हो रही है, उसका बिजलीनुमा प्रभाव अपने हृदय को जगमगा दे और प्रभु प्रेम का जज्बा हमारे हृदय में बराबर भड़कता व उमड़ता रहे । जब गुरु के ध्यान व गुरु की तवज्जोह से हृदय जागृत हो जायेगा और आत्मिक जज्बात पैदा होने लगेंगे तब सचमुच गुरु व परमात्मा के प्रेम का आनंद अनुभव होगा । इससे पहले जो प्रेम था वह केवल मानसिक व भावना तुल्य था। अब हृदय में चैतन्य शक्ति फूट पड़ेगी और वह प्रेम और ब्रह्मलीनता में परिणीत हो जाएगी।

गुरु द्वारा बताये अभ्यास को तरतीब (क्रम व सिलसिले) व तादीब (अदब के साथ) से करना चाहिये न कि अपने मन मुताबिक वरना फायदे की जगह नुक्सान भी हो सकता है । साधक में खब्ती या मजज़ूब की सी हालत पैदा हो सकती है ।

बहस करने वालों को यह विद्या बहुत देर से और सोच समझकर बतलानी चाहिये ।

दुनियाँ में कोई ऐसा काम नहीं है जिसे हम हिम्मत करें और न हो ।

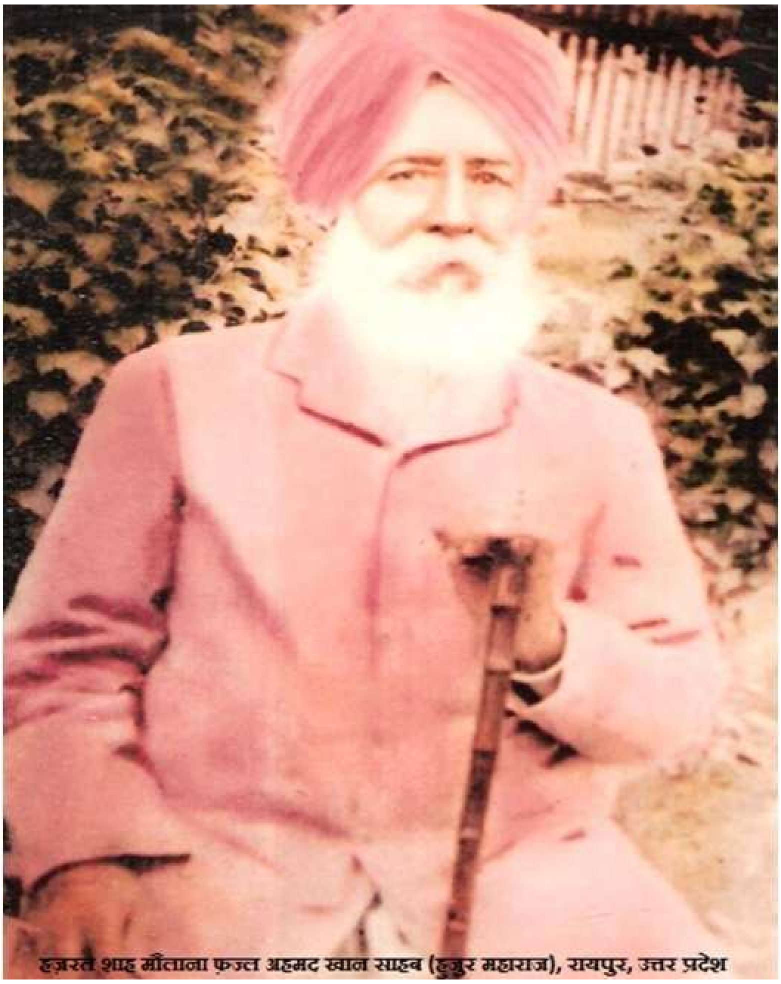

हज़रत शाह मौलाना फ़ज़्ल अहमद खान साहब (हुज़ूर महाराज), रायपुर, उत्तर प्रदेश

शाह मौलाना फ़ज्ल अहमद खां की समाधि (रायपुर, कायमगंज) (बायीं ओर)

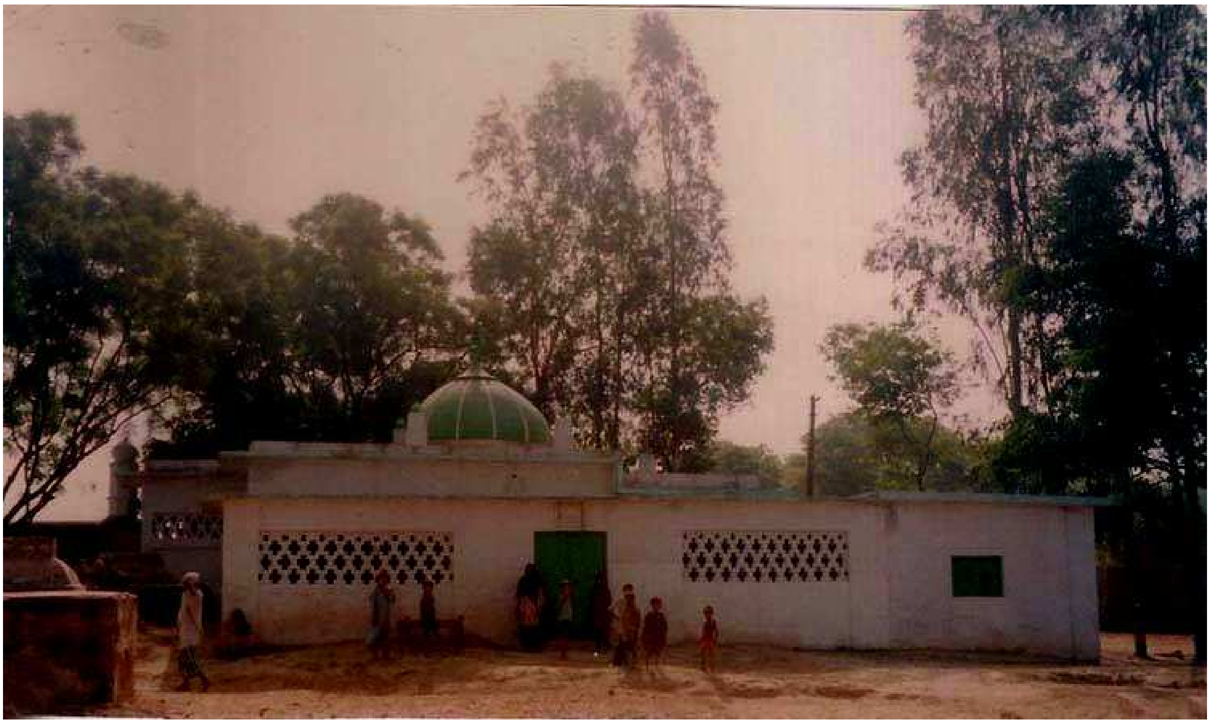

शाह मौलाना फ़ज्ल अहमद खां का समाधि परिसर (रायपुर, कायमगंज)

मुफ़्ती साहब के मदरसे में हुजूर महाराज की कोठरी (फर्रुखाबाद)

मौलवी अब्दुल गनी खां (रहम.)

‘या इलाही शाद हों दारैन में अब्दुल गनी,
फ़ज्ल अहमद खां मुर्शिदे बेरियां के वास्ते’
(दोनों जहाँ में प्रसन्न हों अब्दुल गनी, हे परमात्मा !
निष्कपट सतगुरु फ़ज्ल अहमद खां के नाम पर)

हजरत मौलवी अब्दुल गनी खां (रहम.) हजरत मौलवी अहमद अली खां उर्फ़ जनाब खलीफ़ा साहब (रहम.) के प्रिय शिष्य और इस सिलसिले के एक महान आचार्य थे। आप हजरत मौलाना फ़ज्ल अहमद खां साहब (रहम.) के गुरु भाई थे और आपकी पूर्णता भी उन्हीं के द्वारा हुई। आपका जन्म 7 फरवरी 1867 को क़स्बा कायमगंज, जिला फर्रुखाबाद, उत्तरप्रदेश में एक संपन्न पठान परिवार में हुआ था। आपके जन्म के पहले ही एक नुजूमी (ज्योतिषी) ने आपका तमाम हुलिया और मुखमंडल की बनावट आदि बता दी थी और यह भी बताया कि आप असाधारण प्रतिभा वाले अर्थात साहबे-कमाल होंगे। आप अपने माता-पिता की एकमात्र संतान थे और आपकी प्रारम्भिक शिक्षा वहीं के एक मदरसे में हुई। कुछ बड़े होने पर आपके पूज्य पिताजी आपको जनाब खलीफ़ा साहब (रहम.) की खिदमत में ले गये, जो वहीं कस्बा कायमगंज में ही रहते थे।

जनाब खलीफ़ा साहब (रहम.) ने उन्हें अपनी शागिर्दी में लेना स्वीकार कर लिया और थोड़े ही दिनों में आपको दुनियावी तालीम में इतना पारंगत कर दिया कि उनकी उम्र का कोई लड़का पढ़ाई में उनकी बराबरी नहीं कर सकता था। आपने उर्दू, अरबी और फारसी में दक्षता प्राप्त करने के बाद वर्नाक्युलर मिडिल स्कूल में प्रवेश लिया। वहाँ की फाइनल परीक्षा में आप प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए और चार विषयों में विशेष योग्यता प्राप्त की। जब आप मिडिल की परीक्षा देने जाने लगे तो आपने जनाब खलीफ़ा साहब (रहम.) से अर्ज किया कि मैंने कुछ ठीक से पढ़ा नहीं। उत्तर मिला-“मैंने तो पढ़ा है, चिंता क्यों करते हो ?” आपको उस परीक्षा में उत्तर प्रदेश भर के विद्यार्थियों में प्रथम स्थान मिला।

इसके बाद आप ने नार्मल ट्रेनिंग की परीक्षा भी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की और पूरे सूबे में प्रथम स्थान प्राप्त किया। आपको सहायक अध्यापक के पद पर मिडिल स्कूल, शिकोहाबाद में नियुक्ति मिल गयी। इसके बाद आपके तबादले होते रहे और आपको विभिन्न जगहों पर रहने का मौका मिला। सहायक अध्यापक के पद से आप कुछ वर्षों बाद मिडिल स्कूल के प्रधान अध्यापक के पद पर पदोन्नत हो गये और अंत में आप सब डिप्टी इंस्पेक्टर मदारिस के पद से रिटायर हुए।

आप जहाँ भी रहे अपनी विद्वता और शिक्षण कार्य के लिये जाने गये । आप अपने सदाचार से सबका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर लेते । आपका जलाल (तेज) अद्भुत था । आपके सामने किसी को कोई गुस्ताखी करने की या गलत बात करने या कहने की हिम्मत न होती । जो भी आपके सामने आता आपके तेज से प्रभावित हुए बिना न रहता । आपकी सुन्दर सुडौल बड़ी-बड़ी आखें जिधर घूम जाती, प्रकाश ही प्रकाश बिखेर देती । किसी को प्यार की दृष्टी से देख लेते तो वह निहाल हो जाता । आपके आत्मविश्वास और हिम्मत का यह हाल था कि आप किसी कार्य को कठिन न समझते थे । अपने गुरुदेव में आपका विशवास इतना दृढ़ और अडिग था कि जिस कार्य को जैसा चाहते वैसा ही होता । आपके प्रियजन यदि कोई इच्छा मन में लेकर आपके पास आते तो आप फरमाते, “इंशाल्लाह जो चाहते हो वही होगा” और वैसा ही हो जाता । भक्त का भगवान् के यहाँ ऐसा ही आदर होता है ।

जब आप शिकोहाबाद में हेडमास्टर के पद पर थे तो जिस मकान में आप रहते थे वहाँ एक भूत रहता था । वह कष्ट भी देता था । आप दालान में बिस्तर पर लेटे तो सहन में एक सेंजने का पेड़ था वह हिलने लगा । फिर जोर से हिलने लगा । आप ‘अच्छा आप है’ कहते हुए उठे और खूँटी से हंटर उतारकर उस पेड़ को जोर-जोर से मारना शुरु कर दिया । आप मन्त्र पढ़ते और मारते जाते । उस पेड़ की शाखाएं जमीन से लग-लग जाती पर जब तक आप थक नहीं गये, उसे मारते रहे । फिर आकर अपने बिस्तर पर लेट गये । वह आसेब मार से बेहाल हो चुका था, आकर आपके पैर दबाने लगा । आपने फ़रमाया, “आइन्दा शरारत देखी तो जिन्दा जला दूँगा ।” आप जब तक वहाँ रहे वह आसेब आपकी सेवा करता रहा । तबादला होते समय उसकी सेवा से प्रसन्न होकर आपने उसे उसकी योनि से मुक्ति दिला दी ।

शुरु में मौलवी अब्दुल गनी खां (रहम.) जनाब खलीफ़ा साहब (रहम.) के पास स्कूली सिक्षा ग्रहण करने के लिये उपस्थित हुए थे लेकिन थोड़े ही दिनों बाद यह बात मालूम हो गयी कि जनाब खलीफ़ा साहब (रहम.) एक उच्चकोटि के सूफी फ़क़ीर हैं । उनके विनम्र निवेदन पर जनाब खलीफ़ा साहब (रहम.) ने उन्हें अपनी शरण में ले लिया और बैअत भी कर लिया । मौलवी अब्दुल गनी खां (रहम.) अपने पूज्य गुरुदेव के प्रिय शिष्यों में थे । जनाब खलीफ़ा साहब (रहम.) ने अपने विसाल से कुछ समय पहले उन्हें हुज़ूर महाराज (रहम.) के सुपुर्द कर उनके बारे में फ़रमाया था कि “यह मुझे बहुत प्यारा है, इसका हमेशा ख्याल रखना ।” जनाब खलीफ़ा साहब (रहम.) के विसाल के बाद मौलवी अब्दुल गनी खां (रहम.) ने हुज़ूर महाराज (रहम.) को अपना पीरो मुर्शिद स्वीकार कर इस अध्यात्म विद्या की पूर्णता हासिल की । यह पूर्णता और सम्पुर्ण इज़ाज़त आपको किस प्रकार मिली इसका जिक्र उन्होंने नवम्बर 1942 में कानपुर में सतसंगी भाइयों से इस प्रकार किया था:

“जनाब खलीफ़ा साहब (रहम.) के वास्ते जैसे जिन्दा वैसे मुर्दा, सब बराबर थे उनकी तवज्जोह के आगे । आपके एक मुरीद थे । उन्होंने आपसे अर्थात जनाब खलीफ़ा साहब (रहम.) से अर्ज किया कि साहब आप मुझे बैअत करके तवज्जोह दीजिये । आपने मगर उसको बैअत नहीं किया और न तवज्जोह दी । जब उन सज्जन का शरीरान्त हो गया तो

जनाब खलीफ़ा साहब (रहम.) ने उनकी कब्र पर जाकर तवज्जोह दी और बैअत भी किया और वहीँ की वहीँ वली (संत) बना दिया । ऐसा ही वाक्या मेरी इज़ाज़त के वास्ते हुआ । एक बहुत ही अमीर दरोगा का बेटा मेरे पास पढ़ने आता था और खुद अपने हाथों मेरी खिदमत करता था । वह मुझसे तवज्जोह देने के लिये कहा करता था । मैं कहा करता कि भाई मुझे तो इसकी इज़ाज़त नहीं है । तब वह कहता कि आप भी मुझे तवज्जोह नहीं देंगे, मेरे मरने के बाद देंगे जैसे कि दादा गुरु महाराज (जनाब खलीफ़ा साहब) ने उन साहब के साथ किया था । मैं कहता, 'क्या कहते हो बेटे, ख़ुदा तुम्हारी उम्र दराज (दीर्घायु) करे ।' मगर वह जैसा कहता था वैसा ही निकला । बैगर मेरी तवज्जोह के उसका इन्तकाल हो गया । उसके माता-पिता को अजहद रंज हुआ । जब मैं उसे कब्र में रखने लगा तो मैं रो पड़ा और कहा कि 'बेटा, अगर मुझको इज़ाज़त होती तो अभी तुझको नूर ही नूर से भर दिया होता ।' मैं बहुत ही गमजदा और परेशान रहने लगा । एक दिन उस लड़के के पिता ने मुझसे कहा कि आप बहुत ही परेशान हैं, न हो तो अपने पीरो मुर्शिद साहब के पास हो आएं और मुझको बहुत कह-सुनकर भेज दिया । जब मैं उनकी [हुजूर महाराज (रहम.) की] खिदमत में हाजिर हुआ तो देखा कि वहाँ सभी भाई लोग मेरा इन्तजार कर रहे थे क्योंकि हुजूर महाराज (रहम.) ने पहले ही सबसे यह कह दिया था कि आज वह आते होंगे । वह एक-दो रोज ही ठहरेंगे और इस वजह से वह सबके यहाँ तो खाना खाने नहीं आ सकते । आप सब लोग एक-एक खाने की चीज बनवा कर ले आयें । ज्यों ही मैं पहुँचा हुजूर महाराज (रहम.) ने फ़रमाया 'लो भाई वह आ गये ।' आपने खाना खाने के वक्त फ़रमाया, 'भाई इस खाने में हर चीज थोड़ी-थोड़ी अवश्य खा लो, क्योंकि हर भाई अपने यहाँ से एक-एक चीज बनवा कर लाये हैं ।' जब मैं खा चुका तो मैंने आपसे चुपके से अर्ज किया कि आप इन भाइयों से यह फरमाइयेगा कि मैं आपके मुरीदों में से हूँ । आपने यह सुनते ही सबसे मेरी खूब तारीफ़ करना शुरु कर दी और फ़रमाया कि ये हमारे गुरुभाई हैं और ऐसे हैं...। रात को दस बजे सभी भाइयों को घर जाने की इज़ाज़त दी । फिर आपने मुझसे फ़रमाया कि भाई उस दरोगा के लड़के का हाल कहो । तुमको इस कदर अफ़सोस क्यों हुआ ? उस लड़के को जनाब गुरु महाराज (जनाब खलीफ़ा साहब) ने पहले ही नूर से भर दिया । मैंने अर्ज किया कि आपको कैसे पता लगा तो आपने फ़रमाया कि तुम यहाँ खुद तो आये नहीं, उन्हीं के हुक्म से आये हो । उन्होंने ख्वाब में सब कुछ मुझसे फ़रमा दिया है और तुमको इज़ाज़त दे देने का हुक्म दिया है ।"

उक्त घटना से स्पष्ट है कि हुजूर महाराज (रहम.) ने जनाब खलीफ़ा साहब (रहम.) के विसाल के बाद उन्हीं के हुक्म से मौलवी अब्दुल गनी खां (रहम.) को इज़ाज़त अता फरमाई । आगे चलकर हुजूर महाराज (रहम.) ने उन्हें इज़ाज़त ताम्मा (गुरु पदवी के समस्त अधिकार) प्रदान की ।

हुजूर महाराज (रहम.) ने अपने विसाल के चन्द रोज पहले महात्मा श्री रामचंद्रजी महाराज से फ़रमाया था कि 'देखो बेटे, मेरे बाद अपने गुरु-चचा (मौलवी अब्दुल गनी खां साहब) को

मेरी तरह तुम सब लोग समझना और मुझे पूरी उम्मीद है कि वे भी तुम सबसे ऐसी ही मुहब्बत से पेश आयेंगे ।

हुजूर महाराज (रहम.) की आज्ञानुसार महात्मा श्री रामचंद्रजी महाराज और उनके छोटे भाई महात्मा श्री रघुवर दयालजी दोनों ने ही मौलवी अब्दुल गनी खां साहब की पीरो मुर्शिद की तरह इज्जत की और उनके जीवन काल में समय-समय पर उनकी खिदमत में हाजिर होकर उनसे फैजयाब होते रहे । यही नहीं महात्मा श्री रामचंद्रजी महाराज के सुपुत्र महात्मा जगमोहन नारायनजी और महात्मा रघुवर दयालजी के तीनो सुपुत्रों ने मौलवी अब्दुल गनी खां साहब की खिदमत में हाजिर होकर रूहानियत की तालीम हासिल की । मौलवी अब्दुल गनी खां साहब ने महात्मा जगमोहन नारायनजी, महात्मा बृजमोहन लालजी और महात्मा राधामोहन लालजी साहब को इज़ाज़त भी अता फरमाई ।

महात्मा जगमोहन नारायनजी साहब के सुपुत्र महात्मा श्री दिनेश कुमार सक्सेना साहब फरमाते हैं कि उन्होंने जब वे बच्चे थे मौलवी अब्दुल गनी खां साहब को अपने घर पर कई बार देखा है और उनमें से एक खुशबू आती थी और सोकर उठने के बाद भी उनके कपड़े मुसे हुए नहीं होते थे न ही चादर में कोई सिलवट दिखाई देती थी । ऐसा लगता था जैसे वे सोये ही नहीं हों ।

मौलवी अब्दुल गनी खां (रहम.) बड़े प्रेम से महात्मा श्री रामचंद्रजी महाराज और महात्मा श्री रघुवर दयालजी साहब से फ़रमाया करते कि हम तो तुम्हारे घर में बिक चुके हैं । एक बार आपने संकेत किया था कि यदि हम अपने विसाल के बाद आम जनता के कब्रिस्तान में रहेंगे तो जो हिन्दू लोग हमारे दर्शनार्थ आयेंगे उनको हमें देखने के लिये उस स्थान पर जाने में संकोच होगा । महात्मा श्री रघुवर दयालजी महाराज ने अपना एक बागीचा जो भोगांव, जिला मैनपुरी में है, तुरंत भेंट कर दिया । इस पर आप बहुत प्रसन्न हुए ।

एक बार एक हिन्दू अनुयायी ने आपसे उनके चित्र के लिये प्रार्थना की । आपका उत्तर था, मेरा फोटो ? इंशा अल्लाह, मेरे जनाजे का भी फोटो नहीं लिया जा सकेगा, मेरा फोटो कौन ले सकता है ? और ऐसा ही हुआ ।

आपने 30 मार्च 1952 को अपनी पार्थिव देह का त्याग किया । आपकी पवित्र समाधि भोगांव में उसी बागीचे में बनी हुयी है । भोगांव से करीब दो कि. मी. बेवर की तरफ़ जी. टी. रोड पर बायीं ओर खेतों में आपकी समाधि स्थित है । अब तो इस जगह आपके नाम का बोर्ड भी लग गया है ।

मौलवी अब्दुल गनी खां की समाधि (भोगांव, जिला मैनपुरी)

मौलवी अब्दुल गनी खां की समाधि (भोगांव, जिला मैनपुरी)

महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज

'या इलाही फ़ज्ल से दे मुझको फ़ज्ले अहमदी,
राम फ़ज्ली और रघुवर बाअता के वास्ते'
(कृपा कर फ़ज्ल अहमद की कृपा दे, हे परमात्मा !
कृपापात्र रामचन्द्र और रघुवर दयाल के नाम पर)

महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज उर्फ़ जनाब लालाजी महाराज प्रथम पूर्ण अधिकार प्राप्त हिन्दू सूफी संत थे जिन्हें हजरत मौलाना फ़ज्ल अहमद खां साहब (रहम.) ने बाकायदा सभी संत-महपुरुषों की सहमती और इज़ाज़त के साथ अपना उत्तराधिकारी घोषित किया और इसके साथ अपने गुरुदेव जनाब खलीफ़ा साहब का यह इर्शाद कि 'तुमसे एक आलम (संसार) मुनव्वर (प्रकाशित) होगा' सच कर दिखाया । महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज और उनके छोटे भाई महात्मा श्री रघुवर दयालजी महाराज उर्फ़ जनाब चच्चाजी साहब और उनकी शिष्य परम्परा से आज यह नक्शबंदी मुजद्दिदी मजहरिया रामचंद्रिया सिलसिला अनेक हिन्दुओं सहित पूरे देश और विश्व के कोने-कोने में प्रचारित-प्रसारित हो रहा है ।

जनाब लालाजी महाराज के पूज्य पिताजी चौधरी हरबख्श राय चूंगी विभाग में अधीक्षक पद पर कार्यरत थे । वे शुरु में भोगांव में रहते थे लेकिन 1857 की गदर की घटनाओं के बाद वे फर्रुखाबाद में निवास करने लगे । चौधरी हरबख्श राय साहब के घर में यूँ तो सब कुछ था लेकिन आपको कोई संतान न थी । आपकी धर्मपत्नी बहुत ही नेक धर्मपरायण और ईश्वर भक्त थीं । वे अक्सर फ़क़ीरों और संतों के सतसंग में जाया करतीं और कभी-कभी कोई संत आकर उनके यहाँ भी ठहरते ।

एक बार एक मजज़ूब (अवधूत) मुसलमान फ़क़ीर का फर्रुखाबाद में आना हुआ । वे चौधरी हरबख्श रायजी के दरवाजे पर भी आये और भोजन में मछली खाने की इच्छा प्रकट की । चौधरी हरबख्श रायजी की धर्मपत्नी शाकाहारी थीं लेकिन चौधरी हरबख्श रायजी मांस का सेवन करते थे । संयोग की बात थी कि उस दिन उनके लिये नवाब साहब के यहाँ से दो मछली भेजी गयी थीं । वे मछली उन अवधूत साहब को परोस दी गयीं । एक पुरानी नौकरानी जो वहाँ मौजूद थी उसने बड़ी नम्रता से हाथ जोड़कर निवेदन किया कि 'बहूजी के पास सब कुछ मौजूद है, सिर्फ औलाद की कमी है । ऐसी दुआ दीजिये कि बहूजी के लड़का हो ।' वे जोर से ठहठहाकर हँसे । उन्होंने 'अल्लाहो अकबर' कहकर दुआ के लिये हाथ उठाये और 'एक, दो' कहते हुए एक तरफ़ को चल दिए । परमात्मा की कृपा और फ़क़ीर की दुआ से 3 फरवरी 1873, बसंत पंचमी के दिन महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज का जन्म हुआ

और दो वर्ष बाद 7 अक्टूबर 1875 को उनके छोटे भाई महात्मा श्री रघुवर दयालजी महाराज का जन्म हुआ ।

महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज का लालन-पालन बड़े लाड़-चाव से हुआ । आपकी माताजी रामायण का पाठ करती और आप बैठकर सुनते, जिसका नतीजा यह हुआ कि आपको गाने का शौक बचपन से ही हो गया । आवाज में इतना सुरीलापन और मिठास थी कि जिसने एक बार सुन लिया वह उम्र भर नहीं भूल सका । एक बार आपने फ़रमाया था कि हमारा गाना रूहानी है और हमें यह अभ्यास है कि दूसरे का गाना एक दफ़ा सुनकर हम हू-ब-हू वैसा ही गा सकते हैं । कभी-कभी ध्यान कराते वक्त आप ईश्वर प्रेम में मस्त होकर गाने लगते थे तो एक अजीब कैफियत पैदा हो जाती थी । जहाँ-जहाँ आवाज जाती परमात्मा के प्रेम का स्रोत उमड़ पड़ता था और सब उसमे डुबकियाँ लगाने लगते और मदहोष हो जाते । आत्मा अपने प्रियतम के चरणों में जा पहुँचती और तमाम रूहानी चक्र जागृत हो जाते ।

जब वे सात वर्ष के ही थे कि आपकी माताजी चल बसीं । बाद में उनका लालन-पोषण एक मुसलमान खातून ने किया जो बहुत होशियार थी और उनसे बहुत प्रेम करती थी । इन खातून की वे अंत समय तक बड़ी खातिर और इज्ज़त करते रहे । जब कभी वे उनको देखने आतीं उनकी बड़ी खातिर करते और चलते समय भेंट देते ।

छोटी उम्र में आपने उर्दू फारसी घर पर ही एक मौलवी साहब से पढ़ी । विद्यार्थी जीवन में जिस मकान में आप रहते थे वह छोटा था, इसलिए आपने मुफ़्ती साहब के मदरसे में एक कोठरी किराये पर ले ली थी । उस कोठरी के बगल में दूसरी कोठरी में हुजूर महाराज (रहम.) रहते थे । आप उस वक्त आठवी कक्षा में पढ़ते थे और कभी-कभी पढ़ाई की मुश्किलें हल करने के लिये हुजूर महाराज (रहम.) के पास चले जाया करते थे । हुजूर महाराज (रहम.) उनके साथ बड़े प्रेम से पेश आते क्योंकि आप उनकी रहनी-सहनी और ईश्वर प्रेम से वाकिफ थे । जनाब लालाजी महाराज को भी हुजूर महाराज (रहम.) की सोहबत में एक खास आनंद मिलता था लेकिन वे नहीं जानते थे कि हुजूर महाराज (रहम.) एक परम संत हैं ।

कुछ समय बाद जनाब लालाजी महाराज का विवाह हो गया और थोड़े दिनों बाद उनके पिताजी का स्वर्गवास हो गया । यद्दपि काफ़ी जायदाद उनके पिताजी ने बेच दी थी फिर भी बहुत कुछ बचा था जिसे वे दुर्भाग्यवश राजा मैनपुरी से एक मुकदमे में हार गये । जनाब लालाजी महाराज जो हमेशा घोड़ा गाड़ियों और पालकियों में चलते थे, अब नंगे पाँव या लकड़ी कि चट्टी पहनकर चलते और घर का गुजारा बड़ी मुश्किल से ज्यूँ-त्यूं करके होता । फतेहगढ़ के कलेक्टर आपके पिताजी के वाकिफ थे, उन्होंने दस रूपये महीने पर आपको कचहरी में पेड-अपरेंटिस लगवा दिया । फतेहगढ़ और फर्रुख्बाद में चार मील की दूरी है, इस तरह आपको रोज 8-10 मील चलना पड़ता था ।

जनाब लालाजी महाराज के अध्यात्मिक जीवन की शुरुआत तो उनकी पूज्य माताजी की गोद में ही हो गयी थी । बाद में वे अपने साथियों के साथ अक्सर स्वामी ब्रह्मानन्दजी के पास जाया करते थे, जो उस समय 150 वर्ष के हो चले थे । वे अक्सर अपनी बातचीत में

हुज़ूर महाराज (रहम.) का जिक्र करते थे और कहा करते थे कि वे फर्रुखाबाद के संत-शिरोमणि हैं लेकिन जनाब लालाजी महाराज को यह नहीं मालूम था कि जिन सूफी संत का वे जिक्र करते हैं वे उनकी कोठरी की बगल वाली कोठरी में रहने वाले हुज़ूर महाराज (रहम.) ही हैं ।

नौकरी मिलने के कुछ महीने बाद एक दिन महात्मा श्री रामचन्द्रजी को फतेहगढ़ कचहरी से लौटने में देर हो गयी । अँधेरी रात थी, बादल गरज रहे थे, बिजली चमक रही थी और मूसलाधार बारिश हो रही थी । जाड़े के दिन थे, आप बारिश में बुरी तरह भीग गये थे और बहुत दयनीय स्थिति में थे । जब आप बड़े दरवाजे से होकर अपनी कोठरी की तरफ़ जा रहे थे, हुज़ूर महाराज (रहम.) की प्रेम भरी दृष्टी आप पर पड़ी । उनको बड़ी दया आई और बोले "इस तूफ़ान में इस वक्त आना ।" महात्मा श्री रामचन्द्रजी कहा करते हे कि इन शब्दों में बड़ा प्रेम भरा हुआ था । आपने बड़ी विनम्रता से आदाब पेश किया । हुज़ूर महाराज (रहम.) ने दुआ दी-अल्लाह अपना रहम करे और बोले-"बेटे जाओ भीगे कपड़े बदल डालो, फिर हमारे पास आना और थोड़ी देर आग से हाथ-पैर सेंक कर फिर घर जाना ।" महात्मा श्री रामचन्द्रजी ने ऐसा ही किया और आपके पास हाजिर हुए । हुज़ूर महाराज (रहम.) ने तब तक मिट्टी की अंगीठी में आग सुलगा रखी थी । महात्मा श्री रामचन्द्रजी ने सलाम अर्ज किया । हुज़ूर महाराज (रहम.) ने आँख उठाकर देखा । आँख से आँख का मिलना था कि महात्मा श्री रामचन्द्रजी के शरीर में सर की चोटी से लेकर पाँव की उँगलियों तक एक बिजली सी दौड़ गयी । तन-बदन का होश जाता रहा । ऐसा मालूम होता था कि दोनों आत्माएं मिलकर एक हो गयी हैं । हुज़ूर महाराज (रहम.) ने बड़ी कृपा करके उन्हें अपने बिस्तर पर बैठा लिया और अपनी रजाई ओढा दी । महात्मा श्री रामचन्द्रजी कहा करते थे कि "उस वक्त एक अजीब आनंद का अनुभव हो रहा था और एक कैफियत मस्ती की थी । शरीर बहुत हल्का मालूम होता था और ऐसा लगता था कि मैं आसमान में उड़ रहा हूँ और सारा शरीर प्रकाश से दैदीप्यमान है ।" आप लगभग दो घंटे इसी हालत में बैठे रहे । इतने में बारिश बंद हो गयी और आप आज्ञा लेकर घर चले आये । कोठरी के बाहर यह मालूम होता था कि प्रकाश फैला हुआ है, जिसमें दरख्त, दरो-दीवार, जानवर और सभी वस्तुएं नाच रहीं हैं । उनके पिण्डी और ब्रह्माण्डी तमाम चक्रों से ॐ शब्द जारी था और ऐसा मालूम होता था कि उनकी जगह हुज़ूर महाराज (रहम.) ने ले ली है ।

घर आने पर खाना खाने को तबियत नहीं चाहती थी । बैगर खाए ही सो रहे । रात को स्वप्न में आपने फ़क़ीरों का एक बड़ा समूह देखा और समूह में हुज़ूर महाराज (रहम.) और स्वयं को भी देखा । एक सिंहासन आसमान से उतरा, जिस पर एक तेजस्वी महापुरुष विराजमान थे । सब लोग उन्हें देखकर खड़े हो गये । हुज़ूर महाराज (रहम.) ने आपको उनकी सेवा में पेश किया । उन महापुरुष ने बड़ी मुहब्बत से आपकी ओर देखा और फ़रमाया कि इनका रुझान शुरु से ही परमात्मा की तरफ़ है ।

दूसरे दिन आपने यह सब हुज़ूर महाराज (रहम.) को सुनाया । आप बहुत प्रसन्न हुए और थोड़ी देर ध्यान-मग्न हो गये और फिर फ़रमाया, "यह स्वप्न नहीं है । तुम्हारी हस्ती जन्म से ही परमात्मा कि ओर मायल (झुकी हुयी) है । तुमको इस वंश के पूर्ववर्ती महापुरुषों ने अपनाया है । तुम्हारा जन्म भूले-भटके हुए जीवों को सच्चे रास्ते पर लाने के लिये हुआ है । ऐसी आत्माएं मुद्दतों बाद आती हैं । तुम्हारी जो हालत पहली ही बैठक में हुयी, वह मुद्दत की तपस्या के बाद किसी-किसी की होती है । जब कभी तुम मेरे सामने से निकलते थे और आदाब पेश करते थे, मेरी तबियत तुम्हारी तरफ़ खिंचती थी । प्रेम का एक सैलाब सा उमड़ता था और इस तरह तुम बराबर मुझसे फैजयाब होते रहे । अल्लाह ने चाहा तो बहुत जल्दी फ़नाफिलशैख़ ही नहीं, फ़नाफिलमुरीद का दर्जा हासिल करोगे । अगर नागवार खातिर (आपत्ति) न हो और फुर्सत हो और तबियत चाहे तो इस फ़क़ीर के पास आते रहो ।"

इसके बाद महात्मा श्री रामचन्द्रजी बराबर हुज़ूर महाराज (रहम.) की सेवा में हाजिर होते रहे । 23 जनवरी 1896 को हुज़ूर महाराज (रहम.) ने आपको अपनी शरण में लेकर बैअत किया और 11 अक्टूबर 1896 को कुल्ली इज़ाज़त अर्थात पूर्ण आचर्य पदवी प्रदान की ।

महात्मा श्री रामचन्द्रजी ने अपनी धर्मपत्नी के बारे में लिखा है कि उन्हें अपनी पत्नी के रूप में एक सती स्त्री मिली । आपने एक घटना के बारे में लिखा है कि जब उनकी सबसे छोटी सुपुत्री सुशीला एक वर्ष की हो गयी तो एक रात उनकी धर्मपत्नी ने एक श्यामल व्यक्ति को जिसका मुकुट सूर्य की भांति कांतिवान था और लाल वस्त्र पहिने था स्वप्न में देखा । उसके हाथ में एक रस्सी थी और वह उनकी ओर उन्मुख था । वह कौन है, पूछने पर उसने बताया कि वह यमराज हैं और उन्हें लेने आये हैं । उन्होंने कहा कि भगवन इस कार्य के लिये तो आपके दूत आते हैं तो यमराज ने उत्तर दिया कि 'आप एक सती स्त्री हैं व सभी सद्‌गुणों से संपन्न हैं, मेरे दूत आपको ले जाने की योग्यता नहीं रखते, अत; मुझे स्वयं इस कार्य के लिये आना पड़ा ।" इसके बाद वे उनकी आत्मा (सूक्ष्म शरीर) को निकाल (जो अंगूठे जितनी बड़ी थी) दक्षिण दिशा की ओर चल दिए ।

महात्मा श्री रामचन्द्रजी ने लिखा है कि वे रोजाना सुबह 4 बजे उठकर अपनी पत्नी के साथ सतसंग के लिये बैठते थे । लेकिन उस दिन वे न उठीं तो महात्मा श्री रामचन्द्रजी ने उन्हें जगाना चाहां तो उन्हें प्राणहीन पाया । वे अपने आपको बहुत असहाय महसूस कर रहे थे और लग रहा था कि वे स्वयं पत्नी हैं और उनकी पत्नी उनका पति, जिसके बिना उनका जीवन सूना हो गया था । कहा जाता है कि एक गोपी को शंका हो गयी की यदि कृष्ण के बारे में विचार करते-करते वह स्वयं कृष्णमय हो गयी तो उनके प्रेम में डूब जाने का आनंद फिर कैसे मिलेगा ? दूसरी गोपी ने उत्तर दिया, यदि तुम कृष्ण का ध्यान करते-करते कृष्ण बन गयी तो चिंता मत करो, कृष्ण तुम्हारा ध्यान करते-करते गोपी बन जायेंगे और यह प्रेमानंद इसी तरह बना रहेगा ।

वे अभी इन्ही विचारों में खोये हुए थे कि उन्होंने आश्चर्यपूर्वक देखा कि उनकी पत्नी में जीवन के चिन्ह धीरे-धीरे लौट आये हैं । वे धीरे-धीरे उठीं, उन्हें प्रणाम किया और फिर उन्हें अपना स्वप्न सुनाने लगीं ।

"मुझे जिस स्थान पर ले जाया गया उस स्थान पर केवल प्रकाश दृष्टिमान था, अन्य कुछ भी नहीं । वहाँ पूर्ण शांति थी । फिर मेरी चेतना को लगा जैसे कोई दिव्य वाणी मुझे सम्बोधित कर रही है । तुम्हारी आयु निश्चित रूप से पूरी हो चुकी है लेकिन तुम्हारा कार्य अभी अधुरा है । तुम एक सत्यनिष्ठ व्यक्ति हो अत: तुम्हे शाश्वत जीवन का वरदान दिया जाता है । तुम्हारे पति भाग्यशाली और सतपुरुष हैं । तुम उनके कार्य में सहयोगी और पूरक बनो । तुम्हे दिव्यता का वरदान दिया जाता है । जाओ और इसी तरह से अपना जीवन व्यतीत करो । तुम्हारे सत्कर्मों के कारण तुम्हारा मोहपाश खत्म हो चुका है । अब जब तक चाहो तुम अपनी इच्छा से जी सकती हो । एक मुर्दे की भांति जी कर सभी बन्धनों से मुक्त रहो और जब चाहो नश्वर संसार को त्यागकर तुम वापस आ सकती हो ।"

महात्मा श्री रामचन्द्रजी ने आगे लिखा है कि यह स्वप्न सुनाकर उनकी पत्नी ने अपनी कमर के ऊपरी भाग पर एक गोल लाल चिन्ह दिखाया, जो कि उनकी पीठ पर उन्हें वापस भेजने से पहले लगाया गया था । ईश्वर का विचित्र विधान है जिसमें शंका का कोई स्थान नहीं है । उस दिन से हमारे सम्बन्धों ने एक नया मोड़ ले लिया । वे एक पूर्ण संत थीं जिनका हृदय दया-करुणा से परिपूर्ण एवं चरित्र हिमालय की तरह अडिग था । उन्होंने सतसंग को एक नई दिशा दी ।

महात्मा श्री रामचन्द्रजी ने अपनी आत्मकथा में यह भी लिखा है कि उनकी पत्नी गम्भीर स्वभाव की थीं व बचपन से ही रस्मो-रिवाज की पाबन्द । उनके स्वभाव में निर्भीकता और समर्पण के कारण वे स्वयं उनसे एक तरह के संकोच में रहते थे और इसी कारण वे उन्हें एक बहुत ही महत्वपूर्ण बात कभी न बता पाये । उन्होंने लिखा है कि हजरत क़िब्ला मौलवी फ़ज्ल अहमद खां साहब उनके सतगुरु, पथ प्रदर्शक एवं सर्वस्व हैं लेकिन इस सबके और हृदय में उनका ख्याल आते ही आनंद की लहरें उठने के बावजूद भी कहीं एक ऐसी भावना थी जो उन्हें विकल किये रहती थी । उन्होंने अपने भीतर इसका कारण खोजने की बहुत चेष्टा की । केवल एक असत्य भावना के कारण उनका अब तक का सब प्रयास उन्हें विफल लगने लगा । उन्हें लगने लगा कि इस परिस्थिति में केवल उनकी पत्नी ही उनकी सहायता कर सकती थी ।

उन्हें लगता जैसे कोई उनकी इस मानसिक दशा, इस क्लेश का मखौल उड़ा रहा है, उन पर हंस रहा है व खुश हो रहा है । उन्हें लग रहा था कि वे संसार के सबसे कमजोर व्यक्ति हैं और चोर उनके भीतर ही कहीं छिपा है । उन्हें नहीं मालूम कि कब और कैसे यह भावना उनके हृदय में घर कर गयी थी कि उनके गुरुदेव जो उनके पथ प्रदर्शक एवं सर्वस्व और इहलोक और परलोक दोनों के मालिक हैं, वे मुस्लिम हैं । यह धार्मिक संकीर्णता की भावना जो उनकी दृष्टी में बहुत बड़ा अपराध थी, उन्हें बेचैन किये रहती । उन्होंने लिखा है कि तब

तक वे ना इस्लाम को और ना ही हिन्दू धर्म को ठीक से समझ पाये थे। वे हुज़ूर महाराज (रहम.) को एक कट्टरपंथी समझते थे। लेकिन उनकी इस विडम्बना को उनकी धर्मपत्नी ने ही समझा और उन्हें उससे उबारा।

महात्मा श्री रामचन्द्रजी आगे लिखते हैं कि यह उनकी जिन्दगी का सबसे बड़ा भ्रम, घोर असत्य और सबसे बड़ा गुनाह था कि उनके भीतर बैठा चोर उन्हें कह रहा था कि उनका रहनुमा मात्र एक मुसलमान है। उनकी पत्नी जो कट्टर हिन्दू संस्कारों में पली बढ़ी थी, जब उसे मालूम चलेगा कि उन्होंने अपना सर्वस्व एक मुसलमान के चरणों में समर्पित कर दिया है तो वह क्या सोचेगी ? उनके पास इस प्रश्न का कोई उत्तर न था, न ही उनकी बुद्धि इस विषय में कुछ सोच पा रही थी। उन्होंने आगे लिखा है कि "मैं संसार का सबसे कायर व्यक्ति निकला। लेकिन अंत में मैंने निश्चय कर लिया कि इस बात को मैं अपनी पत्नी से और नहीं छिपाऊंगा। जब मैं उनकी ओर उन्मुख हुआ तो मुझे लगा जैसे एक चोर अपने अपराध की स्वीकारोक्ति कर रहा हो। एक बच्चे की मासूमियत के साथ मैंने उसे अपनी पूरी व्यथा-कथा कह सुनाई और मेरे हृदय में जो उथल-पुथल हो रही थी और अपनी हीनभावना सभी कुछ उनके सामने खोलकर रख दिया। मेरी पत्नी ने आहूत शांतचित्त से मेरी बात सुनी। लगता था जैसे उसे इस बात का अन्दाजा नहीं था कि मेरे भीतर क्या चल रहा है। उसने एक दक्ष न्यायाधीश की तरह सब कुछ सुनकर अपना फैसला सुनाया कि तुमने जो किया बहुत अच्छा किया और फिर मेरी शाश्वत अनुगामिनी की भाँती बहुत विनम्रता से कहा कि 'मुझे भी अपने साथ उन महान संत के पास ले चलें। मैं आपकी खिदमत में हूँ। मेरे जीवन को भी सफल होने का मौका दीजिये। पत्नी का धर्म पति का अनुसरण करना है। मेरे बिना आपकी यह इच्छा फलवती न हो पायेगी, ऐसा शास्त्रों में लिखा है।'

यह सुनकर मैं भूल गया कि मेरे दिमाग में क्या चल रहा था। मैं खुश था कि वह खुश थी। उसने न केवल मुझे डूबने से बचा लिया था बल्कि मुझे सही रास्ता भी दिखा दिया। उसके धीर गंभीर शब्द कि संतों का कोई मजहब नहीं होता, वे सभी बन्धनों से मुक्त होते हैं, मेरे हृदय में गहरे पैठ गये थे। वर्षों तपस्या के बाद भी जो अवस्था मुश्किल से प्राप्त होती वह मुझे एक क्षण में प्राप्त हो गयी। ईश्वरीय कृपा के लिये मैं उचित पात्र तो न था, लेकिन मेरे सतगुरु की कृपा से मेरा यह संस्कार एक ही क्षण में खत्म हो गया। जब मैं अगली सुबह अपनी पत्नी को हुज़ूर महाराज के पास लेकर गया तो वे बहुत प्रसन्न हुए। पूरे दिन हमें सर-आखों पर रखा गया। वे बारम्बार गुरुमाता (अपनी धर्मपत्नी) को कह रहे थे, देखो कौन आया है, हमारी बहु और बच्चे आये हैं। हम लोग खुश किस्मत हैं कि हमारे बच्चों के साथ उनके बच्चे भी आये हैं। हमारा घर आज खुशियों से भर गया है। बहू के लिये चूड़ियाँ लाओ। पूरी-सब्ज़ी बनाओ। इन्हें भी सासू का घर याद रहना चाहिये। वे प्रेम की प्रतिमूर्ति बन गये थे और मैं उस प्रेम व करुणा के सागर में डूबा जा रहा था। मेरी आत्मा अपने उद्‌गम में खो जाने के लिये बेकरार हो रही थी। इस अनोखे उत्सव में हम दोनों ने अपने आपको उनके श्रीचरणों में पूर्ण रूप से समर्पित कर दिया। अब तक केवल मैं

अकेला था लेकिन आज मुझे यह अमूल्य उपहार मिला । हुज़ूर महाराज ने मेरी पत्नी को भी स्वीकार कर दीक्षा दी ।”

एक दिन महात्मा श्री रामचन्द्रजी अपने पूज्य गुरुदेव हुज़ूर महाराज (रहम.) के साथ फर्रुखाबाद शहर से फतेहगढ़ वाली सडक पर टहलते हुए चले जा रहे थे । रास्ते में वे अपने दुःख-दर्द तथा घर की आर्थिक कठिनाइयों की बातें हुज़ूर महाराज (रहम.) से करते जा रहे थे । बढपुर ग्राम के थोड़ा आगे सड़क की पुलिया पर पहुँच कर हुज़ूर महाराज (रहम.) के हृदय में करुणा उमड़ आई । दोनों उसी पुलिया पर बैठ गये । हुज़ूर महाराज (रहम.) ने बड़े प्रेम से अपना सीधा हाथ महात्मा श्री रामचन्द्रजी के कन्धे पर रख दिया और फ़रमाया-“तुम बहुत भाग्यशाली हो । परमपिता परमात्मा का कृतज्ञ होना चाहिये कि तुमने बहुत सस्ते दामों में यह बड़ी दौलत (रूहानी दौलत) हासिल कर ली, जिसका कोई मोल नहीं हो सकता ।” इसके बाद फ़रमाया ‘अपने चारों ओर देखो ।’ महात्मा श्री रामचन्द्रजी कहा करते थे कि एक अजीब दृश्य सामने था । चारों ओर प्रकाश ही प्रकाश था, जिसमें एक अजीब आनंद और आकर्षण था, जो वर्णन में नहीं आ सकता । सारी सृष्टि, घर-दीवार, जीव-जंतु, सारे प्राणी उसी प्रकाश में नाचते हुए दिख रहे थे । अजीब मस्ती सब पर छाई हुयी थी । महात्मा श्री रामचन्द्रजी ने अपनी यह हालत हुज़ूर महाराज (रहम.) से वर्णन की । उन्होंने फ़रमाया ‘शुक्र है, रास्ता गलत साबित नहीं हुआ । यही तुम्हारा असल है और यही लक्ष्य है । इसमें ही अपने को गुम (लय) कर दो ।’ महात्मा श्री रामचन्द्रजी कहा करते थे कि जब मैं सैर के लिये जा रहा था, उस समय दुनियाँ और उसकी चिन्ताएं मेरे साथ थीं और जब मैं वापस हुआ तो दुनियाँ और दुनियाँ की सारी चिन्ताएं सदा के लिये छूट गयीं और उनकी जगह ईश्वर प्रेम ने ले ली ।

महात्मा श्री रामचन्द्रजी को हजरत मौलाना फ़ज्ल अहमद खां साहब (रहम.) ने किस प्रकार सभी संत-महपुरुषों की सहमती और इज़ाज़त के साथ अपना उत्तराधिकारी घोषित किया इसके बारे में आपने लिखा है कि “हुज़ूर महाराज (रहम.) ने 9, 10 व 11 अक्टूबर 1896 को एक उर्स का आयोजन किया जिसमें सभी धर्म व सम्प्रदायों के संत व महात्माओं को बुलाया गया । उर्स के अंतिम दिन 11 अक्टूबर 1896 को एक अति विशिष्ट व्यक्तियों की सभा हुयी जिसमें दूर-दूर से आये हुए सभी धर्म व सम्प्रदायों के हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई, कबीर-पंथी, जैन, बोद्ध इत्यादि तत्कालीन पीर-मुर्शदना, प्रमुख संत-सतगुरु, मठाधीश इत्यादि की पदवियों से विभूषित व पदासीन महानुभाव सम्मिलित थे । सबके सामने मुझ अकिंचन को प्रस्तुत करते हुए हुज़ूर महाराज ने घोषणा की-‘इस फ़क़ीर को बुज़ुर्गाने सिलसिला आलिया नक्श्बंदिया-मुजद्दिदिया-मजहरिया की तरफ़ से यह हुक्म हुआ है कि अजीज रामचन्द्र को इज़ाज़त ताम्मा दे दी जाये । लिहाजा बुज़ुर्गान ! ब राहे मेहरबानी, बाद इम्तहान इसकी तस्दीक या तर्दीद (रद्द करना) फ़रमा देवें । इसके बाद मेरे सरकार ने मेरा घरेलू नाम लेकर अत्यंत ही स्नेहमयी भाव के साथ संबोधन किया-बेटे पुत्तू लाल ! इन्हें तवज्जोह दो और जो भी सवाल ये तुमसे पूछें उनका ठीक-ठाक उत्तर देना । मालिक तुम्हें कामयाबी दे ।’ अपने हजरत क़िब्ला की आज्ञापालन में मैंने तनिक भी देर न की । मेरी आखें माँनो स्वत: ही मुंद

गयीं । तदन्तर धुंए कि मानिंद विचारों की श्रृंखला का एक सोता मेरे अंतर से फूट निकला । सम्भवत: गुरुदेव के प्रति आभार प्रदर्शन का यह स्थूल रूप था । 'इतना ही बहुत था, तुमने मुझे अपने चरणों में आश्रय दिया, मुझ अधम को अपनाया । मुझ अपात्र पर तुम्हारी प्रीती की बारिश, जो प्रतिक्षण मुझे शीतलता देती है । तुम्हारे अपार वात्सल्य और प्यार में मैं डुबकियाँ लगा रहा हूँ-कहीं कुछ ओर-छोर नहीं मिलता । आज तक जो भी मुझसे हुआ है अथवा जब से तुम मेरी बात-बात पर अपार अहेतुकी कृपा की वृष्टि सी करने लगते हो, इसमें मेरा कुछ भी तो नहीं, नहीं प्रयास भी मेरा नहीं । जो कुछ भी है, तुम्हारी ही प्रेरणा की अमर-बेलि के पत्र पुष्प हैं-शायद तुमने पहचाना नहीं होगा । तुम्हारे प्यार ने जैसा चाहा, वैसा ही मुझसे हुआ । मेरे सर्वस्व के मालिक ! मेरी दृष्टी तो एकमात्र तुम्हारी ही ओर है । तुम्हारी ही इच्छा पूर्ण हो ।'

इसके बाद स्थूलता के बादल खुद ही छटने लगे और कुछ क्षणोंपरांत मानों पौ सी फटी । गुनगुना प्रकाश दृष्टिगत हुआ और उसी के पार, मैंने पहचान भी लिया, कि यह मेरे सतगुरु कृपा का सूक्ष्म रूप था जो भावों की स्थूलता से वापस आकर अब इस पार झांक रहा था । गुरु-कृपा के ऐसे मनोहारी और तांडव नृत्य से यह मेरी पहली पहचान थी । मुझे क्या पता था कि ये ही प्रलय से साक्षात्कार के क्षण थे; गजब हो गया । विचार-शून्यता अब बढ़ते-बढ़ते, तम के स्तर पर पहुँच रही थी । मुझे अपने स्वयं का स्वरूप और शनै:-शनै: उसका अहसास भी समाप्त प्राय: सा होता प्रतीत होने लगा व बीच-बीच में जब ध्यान सुधि के स्तर पर वापस आता तो वहाँ भी अपने प्रियतम गुरुदेव के अतिरिक्त कुछ न पाता था । धीरे-धीरे इसी (उन्हीं का अस्तित्व) का विस्तार होता प्रतीत हुआ, और इस सीमा तक कि मानों सारी सृष्टि ही उसमें समाहित हो जाएगी । एक अपूर्व आलौकिक आनंद की स्थिति थी । अपनी वंश परंपरा के सभी गुरुजन, एक प्रकाशपुंज के उस पार, गुपचुप, लुकाछिपी के मध्य स्पष्ट दृष्टिगोचर होते रहे । ऐसा लगता था मानों प्रकृति स्वयं अपनी पूर्ण गरिमामयी नृत्य अवस्था में हो और आनंद ही आनंद छितरा हुआ था । कुछ समय तक सतनाम की गूँज उसी दृश्य में अवस्थित रह कर बड़ी ही मनोहारी-संगीतमयी आभा के मध्य अपना विश्राम देती रही । बाद में यह भी न रही । जो भी था, न वहाँ प्रकाश था, न अन्धकार । कोई रंग न था, कोई ध्वनी न थी । रंगहीन प्रकाश पिंघल-पिंघल कर समस्त सृष्टि को अपने अस्तित्व में समेट लेना चाहता था । ऐसा जगमग वातावरण जिसमें असंख्य सूर्यों का प्रकाश व कांति कम पड़ रही हो । प्रेम व आनंद से सरोबार इसी सोते में वे सभी भीगते रहे, उतरते रहे । लगभग एक घण्टे के बाद ऐसा लगा कि हम पुन: अपनी सामान्य चेतना में वापस लौट रहे थे । इसी बीच मैंने अनुभव किया कि हुज़ूर महाराज भी वहाँ लीलारत थे व उनके आदेश ने मेरी चेतना को छुआ-'अब बस करो ।'

धीरे-धीरे सभी ने आखें खोल दी । सभी के चेहरों पर एक अभूतपूर्व प्रसन्नता और तुष्टिभाव की स्वीकारोक्ति की झलक थी । अब बधाइयों की बौछार हो रही थी, मेरे हजरत क़िब्ला पर । शब्द कम पड़ रहे थे जिनकी पूर्ती नम आखें करती-कभी उनकी तो कभी किसी

तीसरे या चौथे या किसी अन्य की । पूरे वातावरण में एक 'होली' जैसा माहौल था । सभी का मिला-जुला निर्णय था-'इन्होने (इस अकिंचन दास ने) कमाल हासिल किया है । सतपद तक रसाई ही नहीं, उसमें लय अव्स्था प्राप्त की, स्थिरता और वहाँ का अधिकार प्राप्त किया है ।"

इसके बाद उनसे कुछ सवाल पूछे गये, जिनके आपने विस्तार से संतुष्टिजनक उत्तर दिए । छोटे-छोटे प्रश्नों से अब बारी जा पहुँची बड़े-बड़े और कठिन प्रश्नों की । महात्मा श्री रामचन्द्रजी के शब्दों में:

"प्रश्न जो मेरे सामने रखा गया था वह यह था कि-मृत्यु क्या है ? उसके बाद की स्थिति क्या है ? मेरे हजरत क़िब्ला ने मेरी पीठ थपथपायी और वहीं पीछे एक ओर बैठ गये । आँखों ही आँखों में इशारा हुआ और मैं यंत्रवत शुरु हो गया । ये मेरे जीवन के सबसे कीमती क्षण थे और मैं महसूस कर रहा था कि मेरी वाणी के परोक्ष में वह चमत्कार हुजूर महाराज के अतिरिक्त अन्य किसी का नहीं हो सकता । सभी मन्त्र-मुग्ध होकर सुन रहे थे और बोलते-बोलते लगभग एक घण्टे बाद जब मेरे पास शब्दों की कमी पड़ने लगी तो उनका स्थान भावावेश ने ले लिया और उसी के मध्य न जाने कैसे और किस के बलबूते पर मैंने घोषणा कर डाली-ऐ मेरे सम्मानीय विद्वानों और संतों ! मौत के बारे में शब्दों के माध्यम से जितनी भी जानकारी संभव थी, मैंने आपके सामने प्रस्तुत की । अब यह अकिंचन दास, मौत की वास्तविकता का आभास आप सब के अनुभव में उतारने की कोशिश करता है । और इसी बीच यंत्रवत ही सभी कि आँखे धीरे-धीरे स्वत: ही मुंदती गयीं और गहरे सन्नाटे के मध्य उन सब को मृत्यु की वास्तविकता के दर्शन हुए । आँखें खुली मेरे हुजूर के चमत्कारिक आदेश के अनुरूप । अभी भी वहाँ पर एक अनुपम दृश्य था । सभी की आँखों से प्रेमाश्रु झर रहे थे । यह कैसा पागलपन था, यह कौन सा जुनून था । इस अन्नमय भौतिक शरीर में जीवात्मा के 'कारण शरीर' का आभास और उससे साक्षात्कार इसी जीवन में मृत्यु के दर्शन और उससे पार के दृश्यों का अवलोकन । सभी कुछ एक महान आश्चर्य ही नहीं, विश्व की आध्यात्मिकता के इतिहास में एक ऐसा अध्याय था जो नवीन तो था ही, विलक्षण और अविश्वसनीय भी । महफिल एक बार फिर गरम हो चुकी थी । गहमागहमी और कसरत बधाइयों की थी । जी, हाँ, बधाईयाँ इस बार भी मेरे सरताज, मेरे गुरुदेव को ही दी जा रहीं थी । मैं आवाक और किंकर्तव्यविमूढ़, उनके एक ओर बैठा इस प्रतीक्षा में था कि कुछ भी ऐसा हो और मैं सशरीर उनके अस्तित्व में विलीन हो जाऊं । मैं नहीं जानता कितनी देर तक यह सब चलता रहा ।

कुछ क्षणोंपरान्त रंग फिर बदला और एक सामूहिक प्रश्न उभरकर आया जो अब मेरे लिये न होकर मेरे सरकार के लिये था । पूछा जा रहा था, कैसा अनुराग है, यह कहाँ का दीवानापन है, उर्जा का यह कौन सा संवेग है कि एक नक्शबंदी सूफी जिसे अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर रहा है वह वेदांती हो ? यह कैसे हो सकता है ? वेदांती भी वहाँ उपस्थित थे । उनकी जिज्ञासा थी वेद और उपनिषदों का ऐसा व्यवहारिक ज्ञान अभी तक

सूफियों के यहाँ क़ैद कैसे रह पाया और वह भी इतना शांत और गुपचुप कि किसी को भनक भी नहीं लग पाई कि इतनी बड़ी आवश्यकता अभी तक क्रान्ति क्यों नहीं बन पायी ?

पूरे तीन दिन के इस अविस्मर्णीय अधिवेशन की यह अंतिम सभा थी और उसका उपसंहार भी । इसी बीच जिस उमंग व प्रसन्नता के वे (हुजूर महाराज) पर्याय बने हुए थे, सब कुछ अब भावशुष्कता में बदल चुकी थी और उसी के मध्य वे अति सहज भाव से रू-ब-रू हुए- "दुनियाँ के सभी इंसानों में तर्जे रूहानियत (आध्यात्मिकता की धार) एक है लेकिन तर्जे माशरत (सामजिक रहन-सहन) अलग-अलग है ।" आपने अपने संक्षिप्त से सम्भाषण में एक रहस्य उद्घाटन भी वहीँ पर, उन सभी के सामने किया कि बात पुरानी है । एक बार जब स्वामी दयानन्दजी महाराज कायमगंज पधारे थे उस समय एक अति विशाल जलसा हुआ था । उसमें आर्यसमाजियों के अतिरिक्त अन्य धर्मों के संत व विद्वान भी सम्मिलित हुए थे और उसी क्रम में वे स्वयं भी अपने पीरो-मुर्शदना हजरत मौलवी अहमद अली खां साहब (रहम.) के साथ उनके भाषणों को सुनने गये थे । उस आर्य-सम्मलेन के बाद जब वे वापस हो रहे थे, तब रास्ते में जनाब खलीफाजी साहब (मेरे दादा गुरुदेव) ने पूज्य गुरुदेव को आदेश दिया था-'तुम भी इस सिलसिले आलिया के मिशन की तरक्की के वास्ते ऐसा ही कोई जवाँ मर्द तैयार करना । दादागुरु का निर्देश था-'ठीक स्वामी दयानन्दजी के जैसा ।' प्रत्युत्तर में गुरुदेव ने सर झुकाकर इतना ही कहा था-'खादिम ने तो एक बबूल का पेड़ लगाया है ।' पूज्य दादा गुरुदेव ने आसमान की तरफ़ हाथ उठाकर दुआ पढ़ी थी और इसके बाद भविष्यवाणी की थी-'इंशा अल्लाह वही इतना फले फूलेगा कि दुनियाभर की तंगियों, दुखों और तक्लीफ़ो को अपनी रूहे-क़ल्ब में उतारकर जमीन पर हरियाली और सुकून बरपा कर देगा ।'

इस घटना के वर्णन के बाद हुजूर महाराज ने एक बार फिर 'आमीन' पढ़ा और लगभग दो मिनट तक मौन हो अतीत में खोये रहे । पूज्य गुरुदेव ने अपने दोनों हाथों को उलट-पुलट कर देखा और अपने चेहरे पर खूब अच्छी तरह फिराया और फिर मुझे निहारकर फ़रमाया कि उस दिन के बाद, अजीज रामचन्द्र का रोज बिला नागा इन्तजार ही मेरी अपनी इबादत बन गया । वह मेरे लिये निहायत ही तसल्ली बख्श था जिस दिन शाम आंधी-पानी ने घमासान अँधेरा कर रखा था और अजीज रामचन्द्र मेरे कहने पर मेरी कोठरी में आये और उन्होंने वह सारा किस्सा दोहराया ।

मैं समझ सकता हूँ कि हुजूर महाराज के सम्मुख उस सभा की सामूहिक जिज्ञासा के प्रत्युत्तर में उनके बयान से वातावरण इतना संवेदनशील हो जायेगा । किसी को भी ऐसी आशा न थी । मैं स्पष्ट अनुभव कर रहा था कि गुरुजनों की सम्पूर्ण श्रृंखला द्वारा आहूत आशीर्वाद ओस के मोतियों के भांति झर रहे थे जिनसे एक ओर सम्पूर्ण वातावरण को एक स्वर्गीय चांदनी ने ढक लिया था वहीँ दूसरी ओर सभी के अंतर में एक अद्भुत प्रेम का ज्वार अपनी हिलोरे ले रहा था । सभी उसमें कूक रहे थे, थकते न थे ।

कुछ देर के बाद सभा का समां और मौसम धीरे-धीरे बदलने लगा और सभी शांत और चुपचाप बैठे थे । पूज्य गुरुदेव ने मुझे अपने और अधिक निकट बुलाकर बैठा लिया । उनके

एक ओर एक फाइल रक्खी हुयी थी जिसमें कुछ अत्यंत अच्छी व आकर्षक लिखावट में पहले से लिखे हुए पत्र व दस्तावेज सुरक्षित रखे थे । उन पत्र-प्रपत्रों में से उन्होंने दो को, जिनको उन्होंने अति महत्वपूर्ण समझा वे बाहर निकाले और उसमे से एक उन्हीं के द्वारा पढ़ा गया । उसमे जो भी अंतर्वस्तु थी वह इस अकिंचन दास के बारे में ही थी । उसमें यह स्पष्ट किया गया था कि पूज्य गुरुदेव के द्वारा मुझे ब्रह्मविद्या के किन-किन विषयों की जानकारी व किन-किन अध्यात्मिक केन्द्रों तक पहुँच व स्थायित्व प्राप्त कराया गया है । उसमें यह भी अंकित किया गया था कि उनके इस मुरीद ने दुसरे जिज्ञासु स्त्री-पुरुषों को किस-किस केंद्र (चक्र या लातायफ़) तक की यात्रा व पहुँच करा देने की योग्यता व क्षमता प्राप्त कर ली है । दूसरा पत्र सेवक के पक्ष में लिखा हुआ इजाज़तनामा था जो कि पहले सुनाये गये 'योग्यता प्रमाण-पत्र' के आधार पर था । दोनों ही प्रमाणपत्रों पर वहाँ उपस्थित संत-महानुभावों द्वारा, आम राय से सहमती प्रदान की गयी और सेवक को अनेकानेक आशीर्वाद प्रदान किये गये । क्योंकि वहाँ पर उपस्थित संत व गुरुजन अनेक धर्म-सम्प्रदायों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे अत: इस अकिंचन दास की पूरी-पूरी जांच व परीक्षा के बाद सभी ने अपनी-अपनी ओर से भी 'इजाज़तनामे' लिख-लिखकर हुज़ूर महाराज के हाथों से दिलवाए ।

सभी में प्रमाणित किया गया था कि 'रामचन्द्र' नाम के इस सेवक को 'हिरण्यगर्भ' की स्थिति सुलभ व प्राप्त हुयी है । उन सभी प्रमाणपत्रों को मेरे पूज्य गुरुदेव ने, एक-एक शब्द पर ऊँगली रख-रखकर पढ़ा । उसके बाद उन्होंने वहाँ पर उपस्थित एक वेदान्ती संत से 'हिरण्यगर्भ' की स्थिति संक्षिप्त में बताने के लिये कहा । उन संत ने बताया, 'हिरण्यगर्भे एस्टी यस्य स: हिरण्यगर्भ': । हिरण्य जिसके गर्भ से है वह हिरण्यगर्भ है । हिरण्य एक तेज, वर्चस्व, प्रभुत्व की शक्ति है, जिसे परमात्मा कहें, परमसत्ता कहें । यह शक्ति ही सूर्य में समाहित है, इस कारण यह हिरण्यगर्भ है । इसे सुनकर पूज्य गुरुदेव की मुखाकृति व उनकी आभा, उसकी कांति अब देखने लायक थी । फरमाने लगे 'रामचन्द्र ! आज तुम्हारी जात से तुम्हारे वालदैन और तमाम बुज़ुर्गाने सिलसिला-ऐ-नक्श्बंदिया-मुजद्दिदिया-मजहरिया का रुतबा बढ़ा है । गर मैं तुम्हें इस्लाम कुबूल करवाता तो महज एक आम मुसलमान बन कर रह जाते । लेकिन तुम्हारी निस्बत से आज जो बातें आसमान, आफताब, और जमीन की की जा रही हैं, ख़ुशी से मेरा सीना फटा जाता है । 'बेटे ! वक्त आएगा । जरूर आएगा । तुम आफताब की तरह चमकोगे । तुम्हारी जात से, इंशा अल्लाह आलम मुनव्वर होगा । तुम्हारी पीढ़ी-दर-पीढ़ी, तुम्हारे पोते-दर-पोते वली और पीर व महात्मा होते रहेंगे । बेटे ! यह बहुत बड़ी बात है ।' सभी उपस्थित जनों ने 'आमीन' पढ़ा । हुज़ूर महाराज आवेग के साथ उठ खड़े हुए । मैं भी और तमाम लोग जो वहाँ पर बैठे हुए थे । मेरे हजरत क़िब्ला ने मुझे सीने से लगाया और अपनी अति मधुर वाणी से किन्तु गले को थोडा खंखार कर फ़रमाया-'लो बेटे ! खुश रहो । बहुत-बहुत मुबारक हो तुम्हे' कहते हुए उन्होंने 'इजाज़तनामा' मेरे हाथों में थमा दिया । वे सभी भी भावुक हो रहे थे । 'बेटे ! आज तुम्हें यह फ़क़ीर अपनी तमाम उम्र की कमाई सौंप रहा है । तमाम बरकतें तुम्हारी तवज्जोह के इंतज़ार में हैं ।' उसके बाद वे थोडा गम्भीर

होकर बोले-'बेटे ! आज के बाद और अभी इसी वक्त से मुझमें और तुममें कोई फ़र्क़ नहीं रह गया। मैं तुम्हारी जात में और तुम्हारी जात अब उस अजीम हस्ती में फ़ना हो चुकी है जहाँ पर मेरे क़िब्ला ओ काबा, एक लम्बे अरसे से तुम्हारी राह देख रहे थे।'

फिर कुछ ठहर कर कहने लगे-'देखो बेटे इन बातों का ख्याल रखना-

1. मखदूम (स्वामी) बनने से हमेशा बचना और दूर रहना;

2. खादिम (सेवक) बनकर दूसरों की सेवा करना; और

3. कभी किसी से वायदा न करना कि इतने दिनों मे फलाँ मुकाम तक सिखा या पहुँचा दूंगा। बल्कि खिदमत बे-लौज होकर करना और किसी बात का दावा कभी मत करना।

फिर आपने अपनी मनमोहिनी सूरत पर चार चाँद लगाने वाली दाढ़ी पर बड़ी तसल्ली से हाथ फिराया और फ़रमाया कि जो शख्स तालिबे-दुनिया (दुनियावी ख्वाहिशे रखने वाला) हो, उसको बाहर ही बाहर निबटा कर दरवाजे से ही रुखसत कर देना। ज्यादा मुँह मत लगाना, न बैअत करना, इंशा अल्लाह सिलसिला कभी रुकेगा नहीं। चलते समय हुज़ूर महाराज (रहम.) ने वे सभी उपहार (टोपी, पगड़ी, कुरते की आस्तीन इत्यादि) जो उन्हें अपने पूज्य गुरुदेव जनाब खलीफ़ा साहब (रहम.) से प्राप्त हुए थे, अपने इस सेवक को एक कीमती धरोहर के तौर पर दिए। मैं धन्य हुआ।"

हुज़ूर महाराज (रहम.) के विसाल के बाद जनाब लालाजी महाराज का तबादला 1908 में कायमगंज से फतेहगढ़ हो गया। आपने इस वक्त एकांत सेवन आरम्भ कर दिया। दफ्तर के काम के अलावा सारा समय परमात्मा की याद में व्यतीत करने लगे। आप कभी-कभी छुट्टियों में हजरत मौलवी अब्दुल गनी खां (रहम.) की सेवा में मैनपुरी या भोगांव हाजिर होते और मौलवी साहब भी कभी-कभी स्वयं आपके पास आते रहते।

आरम्भ में कुछ अध्यापक आपकी ओर आकर्षित हुए, फिर कुछ लड़के भी आने लगे। इनमे कुछ उद्धण्ड लड़के भी थे। थोड़े ही समय में इन लडकों के चरित्र में आश्चर्यजनक परिवर्तन ने लोगों का ध्यान आपकी और आकर्षित किया और धीरे-धीरे लोगों ने सतसंग के लिये आपके पास आना शुरु कर दिया। जो भी आता आपके महान चरित्र से प्रभीवित होता। जो एक बार भी आ गया आपके प्रभाव से खाली न गया। आप फ़रमाया करते थे कि हमारा काम तो धोबी और भंगी का है, जो भी आ गया उसके मन को धो डाला। साफ़ होने पर अपने संस्कार के अनुसार कोई न कोई पथ-प्रदर्शक मिल ही जायेगा। देखा गया कि आपके थोड़ी देर के सतसंग के प्रभाव से सैकड़ों लोगों का जीवन बदल गया और उनका जन्म सफल हो गया।

जनाब लालाजी महाराज के जीवन के साथ बहुत सी चमत्कारिक घटनाये जुड़ी हुयी हैं। यहाँ एक घटना दी जा रही है जो उनके सुपौत्र महात्मा श्री दिनेश कुमार सक्सेना साहब ने स्वयं सुनाई थी। एक बार वे फतेहगढ़ से कानपुर ट्रेन से जा रहे थे। उन्हीं के डिब्बे में कुछ बाहर से आये मुस्लिम मुसाफिर भी बैठे हुए थे। वे उन्हें नहीं जानते थे। ट्रेन जब महात्मा श्री रामचन्द्रजी की समाधि के सामने से गुजर रही थी (आपकी समाधि के सामने से ही रेल

लाइन जाती है) तो उन्होंने सलाम पेश किया और आपस में जनाब लालाजी महाराज के बारे में बात करने लगे कि कैसे महान संत थे। उन लोगों ने एक वाकिये का वर्णन किया कि 1906 में इस इलाके में प्लेग फ़ैल गया था जिससे काफ़ी लोगों की मृत्यु हो गया थी। इस तबाही से बचने के लिये कई साधू-संतों ने आपस में विचार-विमर्श किया व यह तय पाया कि इस मुसीबत से केवल जनाब लालाजी महाराज ही बचा सकते हैं। उनके पास जाने पर पहले तो उन्होंने मना किया लेकिन जोर देने पर उन्होंने किसी ऐसे व्यक्ति को लाने को कहा जो शरीर और हिम्मत दोनों से मजबूत हो। उससे उन्होंने कहा कि पास ही के एक गाँव में जाना है जिसमें बस्ती काफ़ी कम थी। उसे उन्होंने तीन बंद लिफाफे दिए। कहा उस गाँव में तुम्हें रात को बारह बजे जश्न मनता हुआ दिखेगा। वहाँ तुम्हें अन्दर नहीं जाने देंगे। लेकिन क्रमश: तीन दरवाजों पर एक-एक लिफाफा देना, वे जाने देंगे। वह व्यक्ति वहाँ गया और उसने वहाँ विवाहोत्सव की तरह जश्न मनते देखा। दरवाजों पर उसे रोका गया लेकिन लिफाफे देने पर तीनों दरवाजों से अन्दर जाने दिया गया। वहाँ अन्दर एक मुखिया बैठा था, उसे उसके सामने ले जाया गया। मुखिया ने वे तीनों लिफाफे खोलकर उनके अन्दर जो लिखा था पढ़ा। पढ़कर उसने अपना हाथ जोर से नीचे मारा। तुरंत वह जश्न समाप्त हो गया। लौट कर आने पर उस व्यक्ति को उस जश्न का अता-पता न मिला। सब चीजें गायब थी, न दरवाजे न जश्न का कोई निशान। अगले दिन से प्लेग की महामारी खत्म हो गयी, लोगों का मरना बंद हो गया।

जनाब लालाजी महाराज ने 14 अगस्त 1931 को अपना शरीर त्यागा। आपकी समाधि फतेहगढ़ में कानपुर रोड पर निवेदिया में मुख्य सड़क पर ही बायीं ओर स्थित है।

जनाब लालाजी महाराज ने बहुत सा अध्यात्मिक साहित्य लिखा, जिसमें 'मजहब और तहकीकात' और 'कमाल इंसानी' बहुत महत्वपूर्ण हैं और कुछ साहित्य नए कलेवर में 'तत्व प्रबोधिनी', 'द पाथ ऑफ़ सूफ़ीज एंड सेंटस' इत्यादि नाम से प्रकाशित हुआ है, लेकिन काफ़ी कुछ साहित्य अब उपलब्ध नहीं है। आपकी आत्मकथा 'दिव्य क्रांति की कहानी' नाम से हिंदी में और 'ऑटोबायोग्राफी ऑफ़ ऐ सूफ़ी' नाम से अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित हुयी हैं।

हुज़ूर महाराज (रहम.) के ये शब्द 'बेटे ! वक्त आएगा। जरूर आएगा। तुम आफताब की तरह चमकोगे। तुम्हारी जात से, इंशा अल्लाह आलम मुनव्वर होगा' जनाब लालाजी महाराज ने पूर्णतया चरितार्थ किये। इनके इस कार्य में सहयोगी बने उनके गुरुभाई और उनके शिष्य परंपरा के लोग जिन्होंने सतसंग, लेखन और अन्य तरीकों से इस विद्या का प्रचार व प्रसार किया। इन में से कुछ बहुचर्चित नाम हैं महात्मा श्री रघुवर दयाल जी साहब (जनाब चच्चाजी महाराज), परमसंत डॉ. कृष्ण स्वरुप जी साहब, श्री चिम्मनलालजी साहब (मुख्तियार साहब), महात्मा श्री बृजमोहन लालजी साहब, महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब, महात्मा श्री जगमोहन नारायनजी साहब, परमसंत ठाकुर रामसिंहजी साहब, महात्मा श्री प्रभुदयालजी पेशकार, डॉ. श्री कृष्ण लालजी साहब, महात्मा श्री रामचन्द्रजी (जनाब बाबूजी महाराज, शाहजहाँपुर), डॉ. चतुर्भुज सहायजी, डॉ. हरनारायण सक्सेनाजी, महात्मा श्री हरिवंश लाल

त्रिपाठीजी, श्री शिवनारायणदास गांधी साहब, श्री भवानी शंकरजी साहब, डॉ. श्यामलालजी साहब, पंडित मिहीलालजी साहब, महात्मा डॉ. चन्द्र गुप्ताजी साहब, परमसंत सरदार करतार सिंहजी साहब, हजरत मंजूर अहमद खां साहब, हजरत अब्दुल जलील खां साहब, महात्मा श्री अखिलेश कुमारजी साहब, श्री भोलेनाथजी भल्ला साहब, श्री अच्युदानंदजी साहब, श्री यशपालजी साहब, डॉ. हरफूल सिंहजी साहब, महात्मा श्री रवींद्र नाथजी साहब, महात्मा श्री दिनेश कुमारजी सक्सेना एवं उनकी धर्म पत्नी श्रीमती सुमन सक्सेनाजी, महात्मा श्री नरेन्द्र नाथजी साहब, महात्मा श्री सत्येन्द्र नाथजी साहब, महात्मा श्री ओंकार नाथजी साहब, पंडित रामेश्वर प्रसादजी, श्री पार्थसारथी राजगोपालालाचारीजी साहब (श्री चारीजी साहब), स्वामी श्री सत्यनारायण चिल्लापाजी, श्रीमती कस्तुरीजी, डॉ. के. सी. वर्दाचारीजी, महात्मा श्री कृष्ण कुमारजी गुप्ता, श्री बाल कुमारजी खरे साहब, डॉ. प्रकाश चन्द्रजी वर्मा, श्री विनोद बिहारी लालजी, डॉ. वीरेन्द्र कुमार सक्सेना, श्री विनय कुमारजी एवं श्री समीर कुमारजी सक्सेना, श्री नंदकिशोरजी पारीक, डॉ. प्रेम सागरजी, श्री चिरंजिलालजी बोहरा साहब, श्री शार्दूल सिंहजी कविया, श्री यशपालजी जौली साहब एवं श्री कृष्ण कुमारजी मेहरोत्रा आदि । आज यह नक्श्बंदिया-मुजद्दिदिया-मजहरिया-रामचन्द्रिया (नक्शमुमरा) सिलसिला विभिन्न नामों से यथा 'लालाजी निलयम', 'रामरघुवर आश्रम', 'अखिल भारतीय संत-मत', 'श्री रामचन्द्र मिशन', 'सहज मार्ग', 'रामाश्रम सतसंग (मथुरा)', 'रामाश्रम सतसंग (गाज़ियाबाद)', 'रामाश्रम सतसंग (सिकन्दराबाद)', 'रामसमाधि आश्रम सतसंग (जयपुर)', 'सोऽहं ध्यान केंद्र (जयपुर)' और बिना किसी नाम या संस्था के भी अनेकानेक मुमुक्षओं के बीच बुजुर्गों के इस कृपा-प्रसाद को बाँट रहा है और इस प्रयास में उपरोक्त महानुभावों के परिवारजन एवं अनेक सतसंगी भाई बहन भी अपना अमूल्य योगदान दे रहे हैं ।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

केवल पुस्तकों के पढ़ने या प्रवचन सुनने से विशेष लाभ नहीं होने वाला जब तक आंतरिक अभ्यास न किया-कराया जाये ।

चित्त की वृतियों को रोकने का प्रयास करना चाहिये ।

अनन्य प्रेम से हर वक्त ईश्वर की याद बनी रहे । कोई भी स्वांस उसकी याद से खाली न निकले ।

दिल का जाप अन्य सभी अभ्यासों से बेहतर है । जाप या जिक्र शुरू करने से पहले की जरुरी बातें हैं-

1. तौबा या पश्चाताप करना कि अब तक जो किया सो किया लेकिन अब आइन्दा के लिए हमेशा के लिए वादा करता हूँ कि अब ऐसी बातें कभी नहीं करूंगा जो अब तक धर्म के विरुद्ध की हों ।

2. दिल को मुतमैयन और शांत रखना ।

3. पाक-साफ़ होकर साफ़ कपड़े पहनकर साफ़ जगह पर बैठ कर जिक्र या जाप करना ।

4. अपने शैख़ यानी गुरु से मदद लेना ।

5. यह बात जानना कि गुरुदेव से मदद लेना ऐसा ही है जैसे इष्टदेव से।

जिक्र या जाप के वक्त की बातें यह हैं-

1. आसन के साथ बैठना-यह तबियत की बात है कि दो-जानू बैठे जैसे नमाज़ में बैठते हैं या किसी दुसरे आसन में। सबसे अच्छा सिद्द आसन में बैठना मालूम देता है और दोनों हाथों को दोनों रानों पर रखना।

2. जिक्र या जाप करने की जगह को सुगन्धित करना, धुप या लोबान सुलगाकर या हवन करके और खुशबूदार फूल वैगरह रखकर।

3. शैख़ या गुरुदेव को दिल में हाजिर रखना।

4. शब्द (अनहद नाद) को सुनने का प्रयास करना।

5. जो बातें दुनियावी आकर्षण में उलझाएँ, उनकी वास्तविकता जानकर उनसे दूरी रखना।

6. जैसे-जैसे साधक आगे बढ़ता है, उसका मन पवित्र होता जाता है और दुनियावी संकल्प-विकल्प से दूर होता जाता है। और आगे बढ़ने पर उसे जीवनी-शक्ति से उदासीनता महसूस हो सकती है। ऐसी दशा में उसे अपनी साधना के अनुकूल कोई उपयुक्त संकल्प जिसे 'शिव-संकल्प' कहा जाता है, अपना लेना चाहिए।

7. जिक्र में दृढ़ता से रम जाने पर साधक को भौतिक-चेतना और मोह एवं अहम् से ऊपर उठने की प्रार्थना करनी चाहिए।

8. प्रार्थना करते समय साधक को हुजूरी की अवस्था प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए और महसूस करना चाहिए कि सभी इच्छाएं विगलित होकर हृदय नूर और दिव्यता से भर रहा है।

9. हृदय में दिव्य प्रेम की अनुभूति की गहनता के साथ साधक को इस ख्याल में डूब जाना चाहिए कि केवल एकमात्र परमात्मा का ही अस्तित्व है, ना उसके स्वयं का ना दुनिया का।

जिक्र या जाप के बाद की बातें यह हैं-

1. जिक्र या जाप के बाद कुछ देर शांत और मौन होकर बैठना चाहिए।

2. कुछ समय श्वास को रोक कर या धीरे-धीरे लेना चाहिए।

3. कुछ समय के लिए ठंडी हवा और ठंडे पानी से बचना चाहिए ताकि दिल की गर्मी जाती न रहे और जिस्म की रगों के मुँह खुल जाने से उनमे सर्दी न भिद जाए।

सात्विकी वृतियां जब तक नहीं आती हैं, तब तक समझ लो कि हम उसके स्वर्ग मंदिर से बहुत दूर हैं। सतोगुण ही उस जीने का द्वार है कि जिस पर चढ़ कर हम वहाँ पहुंचेंगे। संत ध्रुव पद को प्राप्त होते हैं, यह स्थान माया और पंच कोषो से ऊपर है। इसी को वास्तव में मोक्ष कहते हैं।

मनुष्य मात्र की सेवा करना ही ईश्वर की पूजा है, इसका बड़ा फल मिलता है। जो सच्चे हृदय से सेवा करता है और सेवा लेने से बचता है, वही ईश्वर का प्यारा बनता है। अपने

लिये कुछ भी न करो, जो कुछ भी तुम्हारा हो, दूसरों के लिये हो। खिदमते खल्क में तमाम उपासनाएं खत्म हो जाती हैं।

मनुष्य का यह कर्तव्य है कि जिस आश्रम में वह रह रहा है उसके धर्म को पूरी तौर से निभाए। यदि ऐसा नहीं करता तो पाप का भागी है।

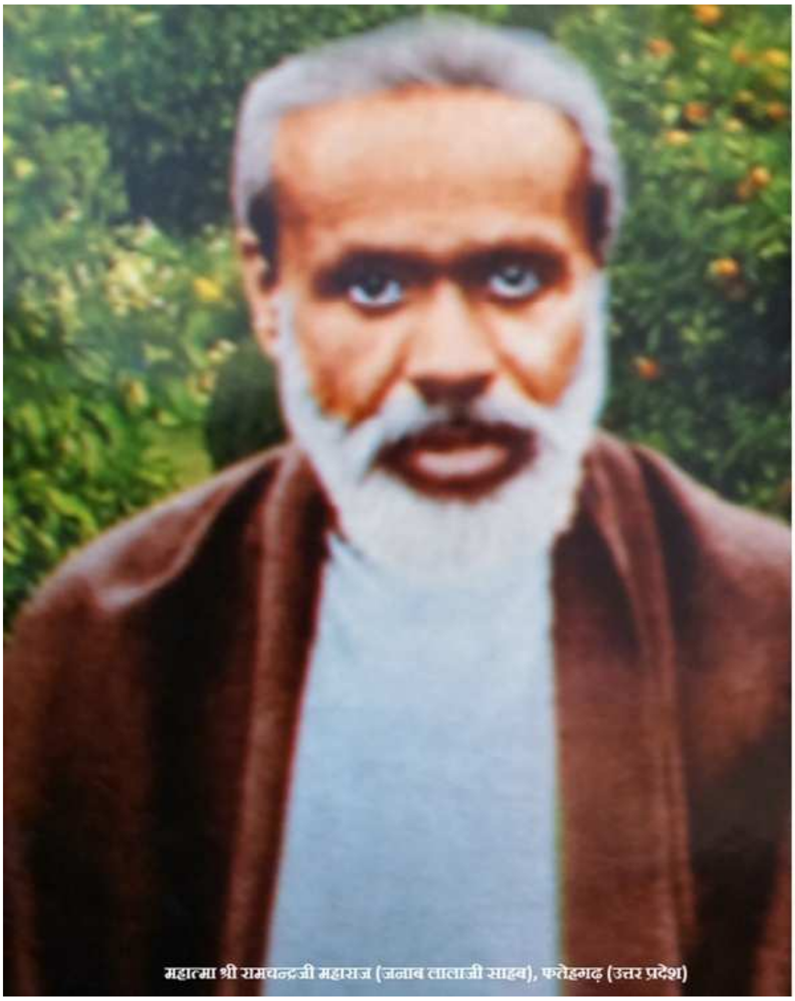

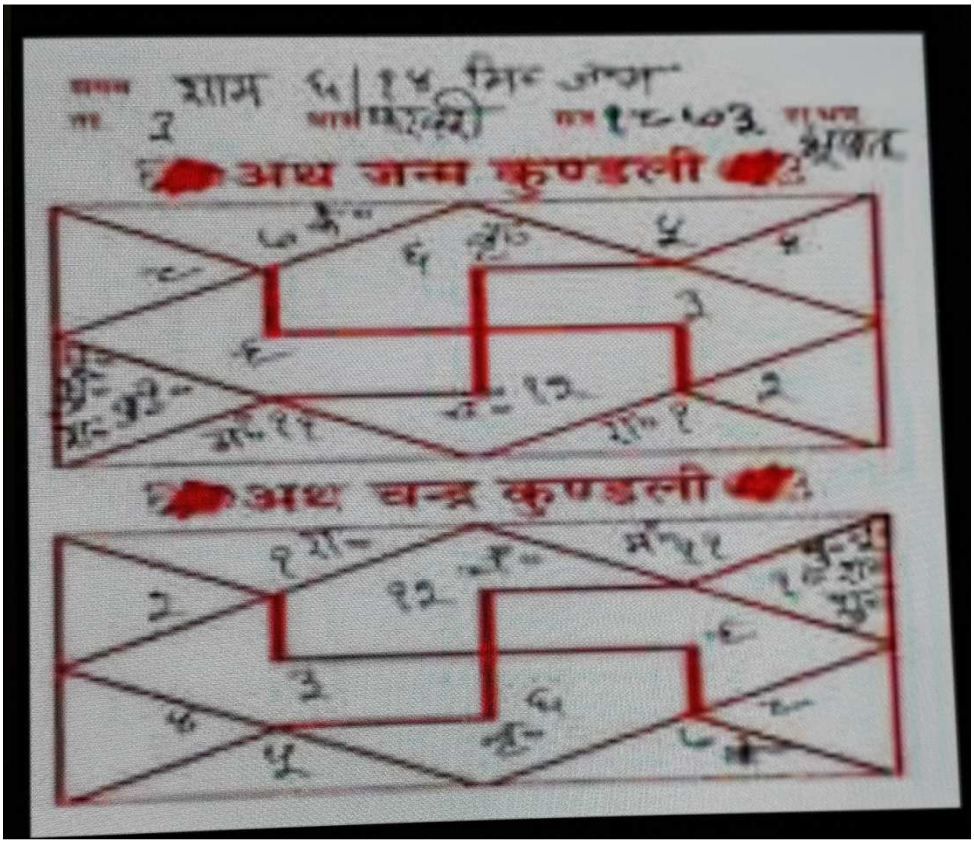

महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज की जन्मकुंडली

महात्मा रामचन्द्रजी महाराज की समाधि (फतेहगढ़)

महात्मा श्री रघुवर दयालजी महाराज

'हूँ फनाफिल शैख़ मैं, बर-सदके रघुवर दयाल,
या इलाही ! रामचन्द्रजी रहनुमा के वास्ते'
(लय हूँ सतगुरु मैं अपने, रघुवर दयाल के सदके,
पथ-प्रदर्शक रामचन्द्रजी के नाम पर, हे परमात्मा !)

महात्मा श्री रघुवर दयालजी महाराज (जनाब चच्चाजी साहब) महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज के छोटे भाई थे। आप चच्चाजी नाम से सतसंगी भाइयों में लोकप्रिय थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा भी हुज़ूर महाराज (रहम.) द्वारा हुयी। हुज़ूर महाराज (रहम.) ने आपको सन 1896 में बैअत किया। महात्मा श्री रघुवर दयालजी महाराज का जन्म 7 अक्टूबर 1875 को हुआ और सन 1924 तक वे अपने बड़े भाई महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज के साथ ही रहे। 1924 में उनके बड़े सुपुत्र महात्मा श्री बृजमोहन लालजी व मंझले सुपुत्र महात्मा श्री राधामोहन लालजी को सरकारी नौकरी मिल जाने पर वे उनके पास कानपुर चले गये और वहीँ स्थायी रूप से रहने लगे। आपका स्वभाव बड़ा हँसमुख व मिलनसार था, हमेशा खुश रहते। बहुत से सतसंगी भाई आपको हमेशा घेरे रहते, लेकिन वे एक साधारण गृहस्थ की तरह, मान-सम्मान की इच्छा से कोसों दूर, सबको अपनी प्रेम रुपी अमृत वर्षा से धन्य करते रहते। उनका रूहानी तालीम देने का तरीका निराला था। बातों ही बातों में वे सतसंगी भाइयों को गहरा गोता लगवा देते।

हुज़ूर महाराज (रहम.) उन्हें बहुत प्यार करते थे और फरमाते थे कि "यह तो हमारा खिलौना है।" शरीर त्यागने से पहले हुज़ूर महाराज (रहम.) ने उनसे फ़रमाया कि अपने बड़े भाई महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज की सेवा और आज्ञा पालन अपने पिता व गुरु की तरह करें। उन्होंने इस आज्ञा का पालन जीवन भर किया।

आपके जीवन का कुछ वक्त ग्राम अलीगढ़ जिला फतेहगढ़ में मुंशी चिम्मनलाल साहब (मुख्तियार साहब) के सान्निध्य में गुजरा, जिनके पास वे अध्यात्मिक अभ्यास भी करते रहे। श्री चिम्मनलाल साहब हुज़ूर महाराज (रहम.) के सतसंगी थे और स्वभाव के कठोर थे। श्रीमान चच्चाजी साहब उनके पास मुहर्रिर के तौर पर नौकरी करते रहे। मुंशी चिम्मनलाल साहब उन्हें दिन भर किसी न किसी काम में लगाये रखते और देर रात घर जाने के लिये छुट्टी देते। श्रीमान चच्चाजी साहब को घर की देखभाल के लिये भी मुश्किल से समय मिलता। उनकी धर्मपत्नी का स्वास्थ्य भी ठीक नहीं रहता था। एक बार वे मुंशी चिम्मनलाल साहब के पास दो दिन तक न जा पाये, परिणाम स्वरूप उन्हें नौकरी से निकाल दिया गया। श्रीमान चच्चाजी साहब को मजबूरन अपनी धर्मपत्नी के गहने बेचकर घर का काम चलाना

पड़ा । इसके बाद वे अलग से अदालत में अर्जीनवीस का काम करने लगे । इस सबके बावजूद श्री चिम्मनलाल साहब के प्रति उनके मन में कोई दुर्भावना न आने पाई बल्कि उन्होंने इसे अपनी रूहानी तालीम का ही एक हिस्सा माना । श्री चिम्मनलाल साहब ने भी फ़रमाया कि 'भाई मैं तो केवल मुख्तियार ही रहूँगा, लेकिन तुम्हें अपने समय का महान आचार्य बनना है ।'

गुरु और उनके परिवारजनों के अदब के बारे में श्रीमान चच्चाजी साहब हजरत उमर फारुकी से सम्बन्धित एक किस्सा सुनाया करते थे । हजरत उमर फारुकी पैगम्बर मुहम्मद साहब (सल्ल.) के द्वितीय खलीफ़ा थे और उनके चौथे खलीफ़ा उनके भतीजे और दामाद हजरत अली (रजि.) थे । एक बार हजरत उमर फारुकी और हजरत अली (रजि.) दोनों के सुपुत्र साथ-साथ खेल रहे थे । खेल में हजरत अली (रजि.) के सुपुत्र ने हजरत उमर फारुकी के सुपुत्र से कह दिया कि 'हालाँकि तुम एक गुलाम के गुलाम हो, लेकिन बात मुझसे बराबरी की करते हो ।' हजरत उमर फारुकी के सुपुत्र को यह बात चुभ गुई और उसने आकर अपने पिता से इसकी शिकायत की । हजरत उमर फारुकी ने अपने सुपुत्र से यह बात हजरत अली (रजि.) के सुपुत्र से एक कागज पर लिखवाकर लाने को कहा । हजरत अली (रजि.) के सुपुत्र ने बिना किसी हिचक के यह लिखकर उसे दे दिया ।

जब हजरत हजरत उमर फारुकी के सुपुत्र ने वह कागज लाकर अपने पिता को दिया तो वे इतने प्रसन्न हुए मानों कारू का खजाना मिल गया हो । उन्होंने उस कागज को अपने सर आँखों पर लगाया और अपने पुत्र को बाँहों में भरकर बोले कि मैं दुआ करता हूँ कि ख़ुदा सबको तुम जैसा होनहार बेटा दे । फिर कहने लगे, 'बेटे, हजरत अली के पुत्र मेरे शैख़ की बेटी के पुत्र हैं अत: वे मेरे मालिक हैं और मैं इस परिवार का एक गुलाम हूँ । मैं वसीयत करता हूँ कि मेरी मृत्यु होने पर इस कागज के टुकड़े को मेरे सीने पर रख दिया जाए ताकि फ़रिश्ते जान जायें कि मैं अपने मालिक का एक गुलाम हूँ और वे मुझे शान्ति से उनके कदमों में रहने दें ।'

श्रीमान चच्चाजी साहब अपने गुरुदेव की याद में तथा अध्यात्मिक ध्यान में हर समय खोये रहते थे और उन्हें खुद की कोई सुध-बुध न रहती थी । एक बार वे शाहजहाँपुर अपनी ससुराल में बाबु नेमचन्द्र साहब रईस के मकान में रात को लेटे थे । न मालूम किस तरह चारपाई में आग लग गई । आप निहायत इत्मीनान से सो रहे थे । पास में लेटे हुए एक मुंशी जी की आँखें खुल गयी । वे चिल्लाये, तब बड़ी देर में आपने आँखें खोली और निहायत इत्मीनान से आप चारपाई से बाहर आये । कई कनस्तर पानी डाला गया तब आग बुझी । चारपाई और कालीन काफ़ी जल गया था लेकिन आप ईश्वर कृपा से बाल-बाल बच गये, कोई खरोच तक न आई । गुरु कृपा के कमाल का यह एक दृष्टांत है ।

श्रीमान चच्चाजी साहब अध्यात्म के गूढ़ तत्वों को भी इतनी सरल भाषा में समझा देते कि बड़े-बड़े विद्वान आश्चर्यचकित रह जाते । अधिकारीयों को अध्यात्म की ऊँची से ऊँची स्थिति में अपनी शक्ति से पहुँचा कर समझा देते कि यह अमुक स्थान तथा अवस्था है इसे

समझ लीजिये । आपके दरबार में यदि एक बार भी कोई पहुच जाता तो अध्यात्म का संस्कार लिये बिना न लौटता ।

आप हुक्के का सेवन करते थे और फरमाते थे कि यह भी एक अजीब शै है, खीचों तो 'अल्लाह' और फूंकों तो 'हू' है अर्थात हुक्का पीते समय हुक्के के साथ आप 'अल्लाह हू' के जप का निरंतर अभ्यास करते रहते थे । आप फरमाते थे:

"हुक्के का पीना खलल आबरू है,
मगर इसमें एक बड़ी नेक खूँ है,
खीचों तो 'अल्लाह', फूंकों तो 'हू' है ।"

एक बार ठाकुर शिवनायक सिंहजी को राजस्थान जाने का अवसर मिला । आप श्रीमान चच्चाजी साहब के पास होते हुए गये । चलते हुए श्रीमान चच्चाजी साहब ने फ़रमाया कि जब तुम अजमेर जाना तो ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती साहब (रहम.) की दरगाह पर हो आना । जब ठाकुर साहब अजमेर पहुँचे तो स्टेशन पर ही जनाब ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती साहब (रहम.) अपने भानजे के साथ उनको मिलने के लिये आये और दुआ-सलाम के बाद आपने फ़रमाया कि तुमको हमारे यहाँ मेहमान भेजा गया है इसीलिए हम आये हैं । जब सदर दरवाजे पर पहुँचे तो कहने लगे यहाँ से हमारा इलाका शुरु होता है ।

ठाकुर साहब ने कहा कि मैं कल हाजिर होऊंगा । अगले दिन ठाकुर साहब दरगाह पहुँचे तो वहाँ पर कव्वालियाँ हो रहीं थी । ठाकुर साहब कुछ देर तक बैठे रहे और ख्वाजा साहब और उनके भानजे को भी वहीं बैठे देखा । इसके बाद दरगाह को देखा तो वहाँ पर एक छोटी सी कब्र देखी जो ख्वाजा साहब के भानजे की थी । जब ठाकुर साहब लौटे तो ख्वाजा साहब उनको छोड़ने के लिये स्टेशन पर आ गये । वापस आकर आपने सब बातें श्रीमान चच्चाजी साहब को बतायीं ।

एक बार ठाकुर साहब का फिर अजमेर जाना हुआ, तब तक श्रीमान चच्चाजी साहब शरीर छोड़ चुके थे । दरगाह पर गये तो ख्वाजा साहब को नहीं पाया । वे सोचने लगे कि अबकी ख्वाजा साहब से मुलाक़ात नहीं हुयी । इतना ख्याल आते ही ख्वाजा साहब (रहम.) आ पहुँचे और फरमाने लगे कि कहीं पर उर्स हो रहा है, वहाँ गया था ।

इसी तरह एक बार किसी सतसंगी बहन ने आपसे अर्ज किया कि उनकी काबा के दर्शन की बड़ी इच्छा है । श्रीमान चच्चाजी साहब ने आपको ध्यान में बैठाया और ध्यान में उन्हें काबा शरीफ़ के साक्षात् दर्शन करवा दिए ।

एक बार आप रात में अपने कमरे में सतसंग में बैठे थे । एक सतसंगी भाई आप के कमरे में चले गये तो क्या देखते हैं कि कमरे में बहुत से हंडे जले हुए रखे हैं । सुबह श्रीमान चच्चाजी साहब ने फ़रमाया कि उस समय उनकी आँख खुल गयी थी वरना उन सतसंगी भाई को नुक्सान हो सकता था, हंडों के रूप में बहुत सी रूहें (जिन्न) सतसंग में विराजमान थीं ।

श्रीमान चच्चाजी साहब ने अपने बड़े भाई जनाब लालाजी महाराज को हमेशा अपने गुरु के समान दर्जा दिया व इस सूफी परम्परा में उन्हें पूर्ण आचार्य पदवी उन्हीं से प्राप्त हुयी ।

जनाब लालाजी महाराज भी उन्हें बहुत प्यार करते थे और दोनों एक-दूसरे को देखे बिना बहुत दिनों तक नहीं रह सकते थे। एक बार श्रीमान चच्चाजी साहब फतेहगढ़ में बहुत गंभीर रूप से बीमार पड़ गये। उनके बचने की उम्मीद बहुत कम थी। जनाब लालाजी महाराज बहुत अधिक चिंतित हो गये। कहा जाता है कि उन्होंने अपने गुरुदेव से प्रार्थना की कि उनकी आयु का एक हिस्सा उनके छोटे भाई को बख्श दिया जाए। उनकी प्रार्थना स्वीकार हुयी और श्रीमान चच्चाजी साहब स्वस्थ हो गये। वे जनाब लालाजी महाराज के विसाल के बाद 16 वर्ष जीवित रहे।

आपने अपना शरीर 7 जून 1947 को त्यागा। आपकी समाधि कानपुर में हमीरपुर रोड पर 11 वे कि. मी. के माइल स्टोन के पास स्थित है। आपके शरीर को अग्नि स्नान न कराकर एक गुफानुमी भवन में दफनाया गया। गुफा को बंद करते समय लोगों ने उनकी नाक से ताजा खून निकलते देखा जबकि उन्हें शरीर छोड़े 24 घंटों से अधिक का समय हो गया था। सूफ़ियों में इसे ईश्वर की राह में शहीद होने की निशानी माना जाता है।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

आप फ़रमाया करते थे-'हँसते रहो, हँसाते रहो, बसते रहो, बसाते रहो।'

ईश्वर प्रेम रूप है। माता-पिता भी उतना प्रेम नहीं करते जितना प्रेम ईश्वर करता है।

ईस्वर स्मरण जो जबान से किया जाता है, वह आकाश से ऊपर नहीं जाता, जबान और ख्याल दोनों से किया जप प्रजापति तक पहुँचता है और जो आत्मा से (दिल से) किया जाता है, वह ईश्वर तक पहुँचता है।

हे ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो यह महामंत्र है और समाधि की पराकाष्ठा है।

ईश्वर से ईश्वर के सिवाय कोई दूसरी इच्छा नहीं करनी चाहिये।

अकेले में ईश्वर के सामने रोओ, पश्चाताप करो और क्षमा प्रार्थना करो। हृदय में किंचित भी मैल न रहने पावे, उससे प्रार्थना करके साफ़ कर डालो।

ईश्वर की इच्छा पर संतुष्ट रहना यह भक्ति का मार्ग है।

भक्तजन कुछ नहीं चाहते, चक्रों के खोलने और भीतर के चमत्कारों की ओर दृष्टी नहीं करते, केवल ईश्वर को चाहते हैं। सच्ची फ़क़ीरी मजहबी बू-बास से मुबर्रा (मुक्त-विरक्त होना) है। जब तक चक्रों के खुलने वैगरह की तरफ़ ख्याल है तब तक अजायब परस्ती है, ईश्वर भक्ति नहीं।

आत्मिक उन्नति में मुख्य बात श्री गुरुदेव से प्रेम की है। जिन्हें उनके दीदार का हरदम शौक बना है, उन्हें सभी कुछ प्राप्त है।

जब तक निज कृपा नहीं होती, गुरु कृपा और ईश्वर कृपा नहीं होती । निज कृपा होने पर ईश्वर कृपा होती है और दोनों गुरु कृपा में लय हो जाती हैं । गुरु किसी शख्सियत का नाम नहीं है, जो अन्धकार को रोशनी में बदल दे, वही गुरु है ।

सतसंग में बैठे तो अपना सब कुछ गुरुमय करके बैठे । अपने आपको गुरुदेव के हवाले कर दे । गुरुदेव की हर आज्ञा में कल्याण की दृष्टी रखे, चाहे कभी-कभी वह धर्म विरुद्ध भासे ।

शिष्य का एकमात्र कर्तव्य गुरुदेव की आज्ञा पालन करना है ।

जिसको प्रेम नहीं, कुछ भी नहीं । प्रेम गुरुदेव की याददाश्त कायम रखने को कहते हैं । इस सिलसिले में मेहनत सिर्फ प्रेम को कहते हैं । हर कदम गुरुदेव की याद में ही उठे ।

खाना खाने से पहले सभी प्राणियों को ख्याल से भोजन पहुंचाना चाहिये ।

मन के साथ लड़ाई न करके, उसे प्रेम से जीतने का प्रयास करना चाहिये ।

जो केवल अपने कल्याण के लिये तत्व ज्ञान पाने की चेष्टा करता है, वह मंदगति है ।

दूसरों के ऐब खोलना मानों अपने ऐब खोलना है । ईश्वर को यह मंजूर नहीं । रजा के कूचे से कभी न हटो ।

जिन्होंने ईश्वरीय भेद को सबके सामने प्रकट किया, वह कृपाधार से वंचित हो जाता है । अपने विषय में इष्ट मित्रों को भी संदेह बना रहे कि वह भक्त है या ईश्वर को प्यारा है । कभी यह इच्छा ना करे कि मेरे पास कोई ज्ञान प्राप्त करने आये । हाँ अगर कोई ईश्वर इच्छा से आ जाये तो उसकी सेवा अपने को तुच्छतम समझकर करे ।

खाना-सोना उसकी याद में हो, इससे बहुत जल्दी तरक्की होती है ।

आँख और जबान को काबू में रखो, बेजा कहीं नजर न जाये न कभी जरुरत से ज्यादा बात करें । बस यही धर्म है ।

जालिम को जुल्म करने से बचाना, पीड़ित की फरियाद सुनना और भूखों का पेट भरना, ये तीनों भक्ति में मदद करती हैं ।

इनकी क्षमाँ नहीं होती-1. सूदखोर (अर्थात किसी की मजबूरी का फायदा उठाने वाला), 2. पीठ पीछे बुराई करने वाला, 3. ऐब खोलने वाला, 4. नशा करने वाला, 5. परस्त्रीगामी और 6. अपने लिये धन संचय करने वाला ।

जैसी वस्तु हो, वैसी ही ख्याल में आना ज्ञान है ।

दिल जाकिर होना बहुत बड़ी बात है, बड़े-बड़े महात्मा भी इसकी इच्छा करते हैं, पाते नहीं ।

सब आशाओं से मुक्ति ही आसन है ।

जब-जब अवसर मिले, चाहे दो मिनट का ही क्यों न हो झट भीतर रुजू होकर उपासना में लग जावे । इस तरह अभ्यास से सहज समाधि भंग न होगी और दुनिया के सब काम सुन्दर रीति से पालन होते चले जायेंगे ।

हृदय के शब्द (अनहद नाद) को निरंतर उठते-बैठते, खाते-पीते, चलते-फिरते, सभी समय कुछ भी करते हो, ध्यान में रखें । इसी को जिक्र कहते हैं ।

महात्मा श्री रघुवर दयालजी (1875-1947)

महात्मा श्री रघुवर दयालजी का समाधि परिसर (कानपुर)

महात्मा श्री बृजमोहन लालजी

इस गुनहगार को कबीर पंथी, नानक पंथी व अन्य संतों से जो इजाजतें व ज्ञान प्राप्त हुआ, वे सब भी अपने स्वयं के अनुभवों के साथ तुम्हें दिए जाते हैं-महात्मा श्री रामचन्द्रजी

महात्मा श्री बृजमोहन लालजी महात्मा श्री रघुवर दयालजी (जनाब चच्चाजी महाराज) के सबसे बड़े सुपुत्र थे । जनाब चच्चाजी महाराज को विवाह के पश्चात बहुत समय तक कोई संतान न हुयी । उनके परिवार वाले, विशेषकर ससुराल वाले इस बात से बहुत चिंतित रहते थे । उन्होंने रामेश्वरम जाकर विशेष पूजा कर भगवान का आशीर्वाद प्राप्त करना चाहा और उसकी तैयारियाँ करने लगे । संयोग से उन्हीं दिनों हुजूर महाराज (रहम.) का उनके यहाँ आना हुआ । कहीं जाने की तैयारी देख उन्होंने इस बारे में पूछा । जनाब लालाजी महाराज ने बहुत ही विनम्रता से निवेदन किया कि “मेरे छोटे भाई को बहुत समय से कोई संतान प्राप्ति नहीं हुयी है । हम सब जिस हाल में परमात्मा रखे उसमें खुश हैं लेकिन उसके ससुराल वाले उन्हें रामेश्वरम ले जाकर विशेष पूजा करवाना चाहते हैं ताकि परमात्मा की कृपा से उन्हें संतान प्राप्त हो सके । मैं और मेरा छोटा भाई दोनों ही जाना नहीं चाहते, लेकिन हम विवश हैं, केवल आप ही इस दुविधा से उबार सकते हैं ।” यह कहते-कहते उनकी आँखें भर आईं । हुजूर महाराज (रहम.) का दिल दया और सहानुभूति से भर आया और वे दोनों भाइयों से बोले, “जो परमात्मा रामेश्वरम में है, वही यहाँ भी मौजूद है । वह अपनी कृपा बख्शने के लिये मक्का, मदीना या रामेश्वरम, किसी जगह का मोहताज नहीं है ।” फिर आपने पानी लाने को कहा और परमात्मा से प्रार्थना कर जनाब लालाजी महाराज से कहा कि “जाकर यह पानी मेरी बेटी (महात्मा श्री रघुवर दयालजी की धर्मपत्नी) को पिला दो और परमात्मा की कृपा का इन्तजार करो ।”

ऐसा ही किया गया और कुछ दिनों बाद सबको खुशखबरी मिली लेकिन सातवें-आठवें महीने में गर्भपात की विकट आशंका आ खड़ी हुयी । जनाब लालाजी महाराज ने एक पत्र लिखकर किसी नौकर के हाथ वह पत्र हुजूर महाराज (रहम.) के पास भेजा । अगले दिन नौकर पत्र का उत्तर लेकर लौटा । हुजूर महाराज (रहम.) ने लिखा था, “मुझे परमात्मा की कृपा पर पूर्ण विशवास है । जब उसने इस गुनहगार की प्रार्थना सुनी है तो किसी तरह कोई शक की गुंजाइश नहीं है । वह परम दयालु है । इंशा अल्लाह मेरे पोता होगा और मैं उसका नाम बृजमोहन लाल रखता हूँ ।” हुजूर महाराज (रहम.) की दुआ रंग लाई और सन 1898 में अप्रैल महीने में रामनवमी के शुभ दिन श्री बृजमोहन लालजी का जन्म हुआ ।

एक बार हुजूर महाराज (रहम.) श्री बृजमोहन लालजी को अपनी गोद में लेकर खड़े थे । जनाब लालाजी महाराज भी वहीँ उपस्थित थे । हुजूर महाराज (रहम.) उनसे मुखातिब होकर बोले, “देखो बेटे, इस बच्चे की परवरिश और इसकी रूहानी तालीम तुम्हारे जिम्में है । इंशा

अल्लाह यह मेरा खलीफ़ा होगा । जब परमात्मा मुझसे पूछेगा कि मैं अपने साथ दुनियाँ से क्या लाया हूँ तो मैं उसके सामने तुम्हें और इसे कर दूंगा ।"

बड़े होने पर एक बार श्री बृजमोहन लालजी ने जनाब लालाजी महाराज की अलमारी में से निकालकर 'तहकीकुल धर्म' नामक पुस्तक पढ़ना शुरु कर दिया । जब जनाब लालाजी महाराज घर लौटे तो आपने उनके हाथ से किताब छीनकर रख दी । कुछ दिनों बाद श्री बृजमोहन लालजी जनाब लालाजी महाराज के लिखे कुछ अध्यात्मिक नोट्स पढ़ते पाये गये तो जनाब लालाजी महाराज ने वे नोट्स लेकर बिना कुछ कहे वापस रख दिए । तीसरी बार, दस-बारह दिन के बाद जब जनाब लालाजी महाराज दफ्तर गये हुए थे और शाम को लौटने वाले थे, श्री बृजमोहन लालजी ने उन नोट्स को निकालकर बड़े ध्यान से पढ़ना शुरु कर दिया । दिन के करीब बारह बजे जनाब लालाजी महाराज अकस्मात वापस लौट आये । आपने उनके हाथ से वे नोट्स छीनकर डांटकर फ़रमाया, :क्या जनाब का दिमाग ख़राब हो गया है ? अभी तक होश नहीं आया ? मनमत्ता और नफ्स की गुलामी का यह जोर है ।"

अचानक पकड़े जाने से श्री बृजमोहन लालजी घबरा गये और रो पड़े । जनाब लालाजी महाराज के पैरों पर सर रखकर क्षमा प्रार्थना करने लगे । जनाब लालाजी महाराज का हृदय करुणा से भर आया । वे बोले तुम पर भगवान और सतगुरुओं की कृपा मालूम होतो है कि तुम्हारे सुधार के लिये यह सब कुछ हो रहा है । अचानक एक बड़े अधिकारी का स्वर्गवास हो जाने के कारण दफ्तर बंद कर दिया गया और मुझे वापस आना पड़ा । यहाँ आकर तुम्हें फिर किताब पढ़ने में लगा देखकर तुम्हारे मन-मत्त भाव पर बड़ा क्रोध आया और साथ ही परमात्मा और सतगुरुओं की कृपा व दया पर जी उमड़ आया । याद रखो और खूब समझ लो कि जिन्दा किताब सदा नहीं मिलती । फिर पता नहीं सौभाग्य से हाथ आने पर न मालूम कब तक कायम रहे और फिर छूट जाये । यह किताबें तो महज सूखी हुयी हड्डियाँ हैं जो फिर भी मिल सकती हैं ।

इसके बाद महात्मा श्री बृजमोहन लालजी साहब की आँखें खुल गयीं और उनके कल्बी जज्बात का नक्शा ही बदल गया । किताबों का सहारा छोड़, वे जनाब लालाजी साहब के प्रेम व आज्ञा तथा उनके चैतन्यमय स्वरुप को अपने में पूर्ण रूप से उतारने में प्रेमपूर्वक डूबे रहने लगे ।

एक समय महात्मा श्री बृजमोहन लालजी साहब को एक ऐसी अवस्था प्राप्त हो गयी कि वे बिना प्रयास दूसरों के हृदय की बात जान लेते । अक्सर जब किसी से भेंट होती, उसके भाव उनके हृदय में उतर आते । कभी-कभी वे घर में भी बता देते कि कौन आने वाला है आदि-आदि । इस स्थिति को देख वे समझने लगे कि कोई बड़ा कमाल हासिल कर लिया है । एक दिन जनाब लालाजी महाराज किसी रूहानी ख्याल में खोये हुए थे । महात्मा श्री बृजमोहन लालजी साहब चुपचाप उठकर भीतर गये और हजरत शैख़ अहमद फारूकी साहब की पुस्तक मक्तूबात लाकर उसमें से वही विषय निकालकर जनाब लालाजी महाराज के सामने पेश कर दिया । जनाब लालाजी महाराज ने बड़े गौर से उसे पढ़कर सर उठाकर

महात्मा श्री बृजमोहन लालजी को घूर कर देखा। किताब बंद कर दी व वहाँ से उठ खड़े हुए। महात्मा श्री बृजमोहन लालजी को हुक्म दिया कि हमारे साथ आओ। आपका रुख व लहजा देख महात्मा श्री बृजमोहन लालजी सहम गये। वे जनाब लालाजी महाराज के पीछे-पीछे चल दिए। ऊपर जाकर जनाब लालाजी महाराज महात्मा श्री बृजमोहन लालजी से बड़े जज्बे की हालत में पूछने लगे, "जनाब किस हाल में रहते हैं, और जिस हाल में आप हैं क्या उसको कमाल समझते हैं ? क्या हमारे दिल का हाल जान जाने से अपने को बड़ा कश्फ़ वाला और बाकमाल समझने लगे हैं ?" महात्मा श्री बृजमोहन लालजी रूआंसे हो गये और अपना सब हाल जनाब लालाजी महाराज से निवेदन किया। यह भी अर्ज किया कि उन्हें कोई भी चीज बंद हो या ढकी हो या कोई भी स्त्री-पुरुष वस्त्र पहने हो तो भी वे उसके आर-पार देख सकते हैं व उनके विचार मालूम चल जाते हैं।

जनाब लालाजी महाराज यह सुनकर बहुत दुखी हुये व बोले, "राम-राम ! तुम एक बड़े खतरनाक मुकाम पर जा पहुँचे हो, जहाँ से स्वयं अपने प्रयास से निकलना मुश्किल है। हमारे व तुम्हारे ऊपर बुजुर्गों की कृपा व प्रेम है कि आज यह वाक्या पेश आया। जिसे तुम कमाल समझ रहे हो वह माया का धोखा है जो रूहानी कमाल का पहलू दिखा कर तुमको पूरी तौर पर अपने अधीन लाकर पटक देगी।" इसके बाद महात्मा श्री बृजमोहन लालजी की यह हालत जाती रही।

हुजूर महाराज (रहम.) की आज्ञानुसार महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज महात्मा श्री बृजमोहन लालजी की अध्यात्मिक प्रगति का विशेष ध्यान रखते रहे एवं उन्हें सर्वोच्च स्थिति पर पहुँचा दिया। इसके बाद आपने उन्हें मौलवी अब्दुल गनी खां साहब (रहम.) की सेवा में पेश किया। मौलवी अब्दुल गनी खां साहब (रहम.) ने उन्हें दीक्षित कर दो-तीन वर्ष अपनी सेवा में रखा और उन पर और मेहनत की। तीसरे वर्ष एक रात उन्हें हुजूर महाराज (रहम.) के दर्शन हुए। हुजूर महाराज (रहम.) ने अपनी टोपी महात्मा श्री बृजमोहन लालजी साहब के सर पर रखने का व उन्हें सम्पूर्ण इज़ाज़त (इज़ाज़त ताम्मा) बख्शने का आदेश दिया।

अगले दिन मौलवी अब्दुल गनी खां साहब (रहम.) ने अपने स्वप्न के बारे में लिखकर एक पत्र महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज के पास भेजा व उन्हें महात्मा श्री बृजमोहन लालजी साहब के साथ तुरंत उनके पास पहुँचने की ताकीद की। महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज अपने छोटे भाई महात्मा श्री रघुवर दयालजी साहब व महात्मा श्री बृजमोहन लालजी साहब व अन्य लोगों को लेकर तुरंत उनकी सेवा में हाजिर हुए। उन दिनों उर्स मनाया जा रहा था और उर्स में भाग लेने के लिये बहुत से लोग इकट्ठे हुए थे। अगले दिन मौलवी अब्दुल गनी खां साहब (रहम.) हुजूर महाराज (रहम.) की वह टोपी अपने सर पर पहने हुए आये जो स्वयं उनकी इज़ाज़त ताम्मा बख्शने के वक्त हुजूर महाराज (रहम.) ने उन्हें पहनाई थी। वहाँ आकर उन्होंने महात्मा श्री बृजमोहन लालजी को अपने पास बुलाया, कुछ क्षण उनकी तरफ़ अपनी तवज्जोह की, फिर महात्मा श्री बृजमोहन लालजी के सर पर जो टोपी थी उसे उतारकर अपने सर पर से वह टोपी उतारी और उनके सर पर पहना दी। महात्मा श्री

बृजमोहन लालजी के होशो-हवास जाते रहे व उनकी आँखों की पुतलियाँ ऊपर चढ़ गयीं। आस-पास उपस्थित लोग सहम गये। मौलवी अब्दुल गनी खां साहब (रहम.) ने अपना रुमाल उनके सीने पर रख दिया और फ़रमाया कि किसी को भी चिंता करने की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि यह इज़ाज़त गैबी (बुजुर्गों की इच्छानुसार) है और ये जल्दी ही होश में आ जायेंगे।

31 जनवरी 1929 को महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज ने भी अपनी समस्त अध्यात्मिक सम्पदा महात्मा श्री बृजमोहन लालजी को सौंप दी। उन्होंने फ़रमाया कि "परमात्मा की कृपा से आज मैंने अपनी जिम्मेदारी पूरी कर दी। यह सम्पदा मैंने तुम्हारे लिये ही संभाल कर रखी थी जो आज तुम्हे दे दी गयी है। अब इस तरीकत की जिम्मेदारी तुम्हारी है।" इसके बाद आपने फ़रमाया, "इस गुनहगार को कबीर पंथी, नानक पंथी व अन्य संतों से जो इजाजतें व ज्ञान प्राप्त हुआ, वे सब भी अपने स्वयं के अनुभवों के साथ तुम्हें दिए जाते हैं।" इसी प्रकार 14 जुलाई 1929 को महात्मा रघुवर दयालजी ने भी अपनी तरफ़ से उन्हें पूर्ण इज़ाज़त बख्शी।

सेवानिवृति के बाद महात्मा श्री बृजमोहन लालजी साहब लखनऊ में ही निवास करने लगे। विभिन्न धर्मों के कई लोग उनके पास सतसंग के लिये आने लगे। उनसे विशेष प्रभावित होने वालों में ख्याति प्राप्त संगीत निदेशक श्री नौशाद के श्वसुर श्री अब्दुल वाहिद भी थे, जिन्होंने अपनी संपत्ति का एक हिस्सा भी सतसंग के लिये भेंट कर दिया था। उनके अलावा हकीम अब्दुल हालिम व अन्य सूफी-संत उनके पास निरंतर आने लगे।

महात्मा श्री बृजमोहन लालजी साहब ने अपना आखिरी सतसंग 17 जनवरी 1955 को बम्बई में किया। वे उस सतसंग में बहुत ही प्रेम से एवं भाव-विभोर होकर भगवान राम के विषय में चर्चा कर रहे थे। मर्यादा पुरुषोत्तम राम के उदार ह्रदय का वर्णन करते हुए आपने बहुत ही भावावेश से फ़रमाया, "ऐसी मिसाले रूहानी दायरे में बहुत कम हैं। देखिये, भगवान राम ने रावण के अंतिम समय उसको कितना ऊंचा आदर दिया। अपनी शक्ति लक्ष्मणजी को उससे उपदेश लेने के लिए भेजा और आदेश दिया कि रावण नीति शास्त्र का बहुत बड़ा पण्डित है। तुम जाओ और उससे उसके जीवन का निचोड़ पूछ कर आओ -शत्रु भाव छोड़कर, जिस भाव से किसी से सीखा जाता है, उसी भाव से उससे शिक्षा लो। जब लक्ष्मणजी रावण के पास पहुँचे होंगे तो रावण का काला ह्रदय आपके तेजस्वी प्रभाव-नूर-से भर गया होगा। आपकी विशालता और आपके अवतार पद का उसी समय उसको अनुभव हुआ होगा, और उस अवस्था में जब उसका सब कुछ लुट चूका था, तो आपकी महानता का अनुभव करके उसका दिल फुदक कर मर्यादा पुरुषोत्तम राम के चरणों में आ गया होगा।"

यह फरमाते हुए आपने चुटकी बजाकर तीन बार फ़रमाया कि "उसका दिल फुदक कर भगवान राम के कदमों में आ गया होगा।" यह कहते ही आप खामोश हो गये। यही आपके आखिरी शब्द थे। आपकी गर्दन नीचे झुक गयी थी। बहुत देर तक सभी सतसंगी ख्याल करते रहे कि आप ध्यान मग्न हैं परन्तु हकीक़त में आपका सफ़र, मंजिले मकसूद की तरफ़

प्रारम्भ हो गया था। दो उच्चकोटि के मण्डलेश्वर स्वामी आपके विषय में सुनकर आपसे मिलने पधारे थे। आपके पार्थिव शरीर के पास दो घण्टे ध्यानमग्न होकर उन्होंने यह घोषणा की कि "ऐसे संत और फ़क़ीर हमने जिन्दगी में नहीं देखे। हमारी जहाँ तक पहुंच है, ये उससे बहुत आगे जा चुके हैं। वहाँ से इन्हें वापस लाना हमारे लिये सम्भव नहीं है।"

21 जनवरी 1955 के पायोनियर समाचार पत्र में निम्नलिखित समाचार छपा था:

"कबीर का पुनर्जन्म-कबीर के जीवन व मृत्यु को एक बार फिर से दोहराया गया जब हिन्दू व मुस्लिम दोनों समुदाय के लोगों ने एक संत जिन्हें हिन्दू स्वामी बृजमोहन लाल व मुस्लिम बाबा शमसुद्दीन कहा करते थे, के अंतिम अवशेषों को प्राप्त करना चाहा।

कहा जाता है कि ये संत एक गृहस्थ सन्यासी थे, जो सूफियों के नक्शबंदी सम्प्रदाय से सम्बंधित थे। उनके प्रशंसक व शिष्य दोनों ही समुदाय के लोगों में से थे।

तीन दिन पुर्व वे ध्यानमग्न अवस्था में बम्बई में अपने शरीर को छोड़ परमात्मा में लीन हो गये। उनके पार्थिव शरीर को लखनऊ लाया गया। हिन्दू व मुस्लिम दोनों सम्प्रदाय के लोगों ने शव यात्रा में भाग लिया। पार्थिव देह को श्मशान घाट ले जाया गया, जहाँ दाह संस्कार से पहले मुस्लिम दरवेशों द्वारा नमाज़-ऐ-जनाजा अदा की गई व बाद में अस्थियों का एक हिस्सा दफनाने के लिये ले जाया गया।"

आपकी समाधि लखनऊ में ऐश बाग में स्थित है और समाधि मंदिर के नाम से प्रसिद्द है।

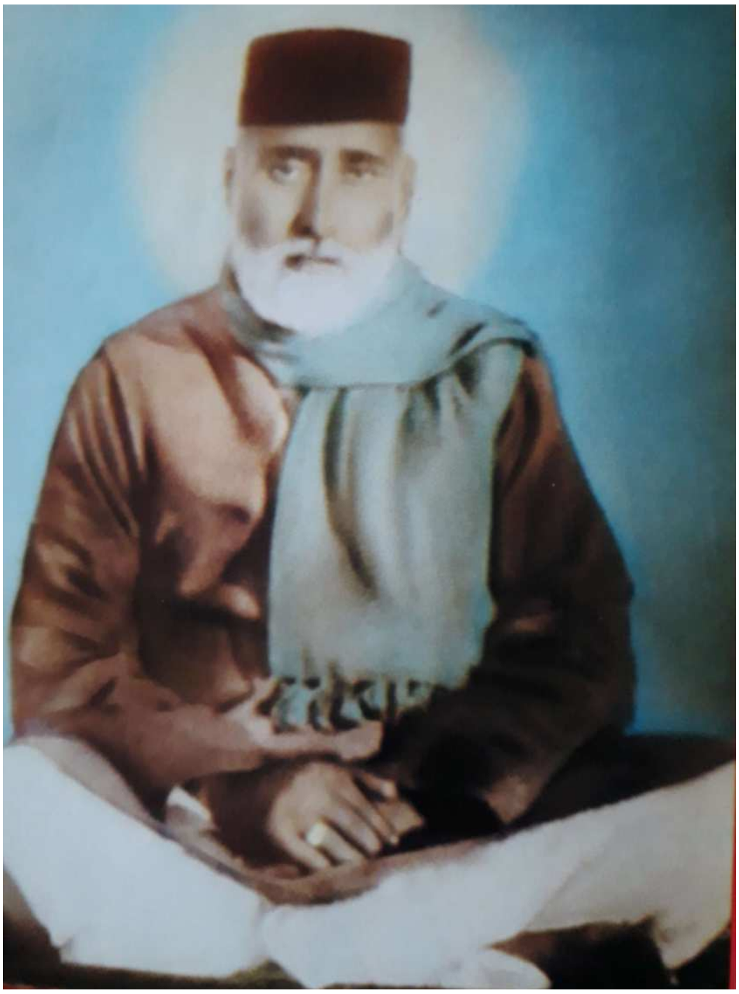

महात्मा श्री बृजमोहन लालजी (1898-1955)

महात्मा श्री बृजमोहन लालजी की समाधि (लखनऊ)

महात्मा श्री राधामोहन लालजी

'अता कर बसारत कि हर शै में तू ही तू नजर आये,
या इलाही ! महात्मा राधामोहन लालजी रहनुमा के वास्ते'
(दे नजर कि देखूं तुझे ही हर चीज में, हे परमात्मा !,
पथ-प्रदर्शक महात्मा राधामोहन लालजी के नाम पर)

महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब (जनाब मुंशी भाईसाहब) महात्मा श्री रघुवर दयालजी साहब (जनाब चच्चाजी महाराज) के मंझले सुपुत्र थे। आपका जन्म 24 अक्टूबर 1900 को फतेहगढ़ में हुआ था। बचपन का आपका अधिकतर समय महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज एवं महात्मा श्री रघुवर दयालजी महाराज के सान्निध्य में बीता। महात्मा श्री रघुवर दयालजी महाराज फरमाते थे कि आप (महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब) बचपन में बहुत संकोची एवं शर्मीले स्वाभाव के थे लेकिन बड़े होने पर बहुत तेज दिमाग के, निर्भयी और नि:संकोची हो गये थे। महात्मा श्री रघुवर दयालजी महाराज के अलीगढ़ (फतेहगढ़ जिले का एक क़स्बा) चले जाने के कारण आप वहाँ से प्रतिदिन फतेहगढ़ पढ़ने के लिये आते थे और कभी-कभी वहीं अपने ताउजी (महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज) के पास रुक भी जाते थे। हाई स्कूल की परीक्षा पास करने के बाद आपकी नौकरी कानपुर कचहरी में लग गयी।

अपने पिताजी और ताऊजी के साथ रहने से सतसंग के संस्कार आपमें बचपन से ही पड़ गये थे और तभी से ही वे अपने पिताजी के साथ सतसंग में समय दिया करते थे। आपकी दीक्षा किस प्रकार हुयी, आप ही के शब्दों में-"जब मैं छोटा था, तब घर में सतसंग के लिये बहुत से लोग आते-जाते रहते थे। मैं बहुत संकोची स्वभाव का था, इसलिए लोगों के सामने जाने से बचता था। जब मैं करीब 9 वर्ष का था, मेरे पिताजी के गुरु महाराज अर्थात हजरत मौलवी अब्दुल गनी खां साहब (रहम.) घर पर ठहरे थे लेकिन मैं संकोच के कारण कमरे से बाहर ही नहीं निकलता था। मेरी माताजी मुझे उनके पास जाने के लिये प्रेरित करतीं पर मैं उनसे दूर ही रहता था। लेकिन एक दिन मेरा उनसे सामना हो गया। वे बाहर कुर्सी पर बैठे थे। मैं बाहर निकला तो वे उठकर प्यार से मुझे अपने कमरे में ले गये। उन्होंने मुझसे कुछ बातें की और रात में आने के लिये कहा। मैं सोच में पड़ गया कि कैसे जाऊँगा पर जाना तो था ही। शाम होने के बाद मैं अपने पिताजी के साथ उनके पास सतसंग में गया और कुछ देर बैठा रहा। यह क्रम चार-पांच दिन तक चलता रहा और फिर वे भोगांव लौट गये। कुछ दिनों बाद वे वापस आये और मेरा कुछ देर उनके पास बैठने का क्रम चलता रहा। कुछ दिनों में मेरा संकोच काफ़ी कम हो गया। करीब एक वर्ष में मेरा संकोच और भय जाता रहा। उसके बाद जब आप आते तो मैं नि:संकोच उनके पास बैठ उनकी बातें ध्यान से सुनता।

एक बार रात में आपने मुझे अपने पैर दबाने के लिये कहा। जब मैं आपके पैर दबा रहा था तो आपने मेरे सर पर हाथ रखा। उसके बाद क्या हुआ, मुझे नहीं मालूम। सुबह अपने आप को उनके पास सोते पाया। उस दिन से मेरा उनके पास बैठना नित्य का नियम हो गया। फिर एक दिन 15 फरवरी 1920 को वह शुभ दिन आया जब मेरे पूज्य पिताजी ने हजरत मौलवी अब्दुल गनी खां साहब (रहम.) से मुझे दीक्षा दिलवाई। यहाँ से मेरी जिंदगी का सफ़र एकदम से बदल गया। मैं अपना पूरा ध्यान पूजा और गुरु महाराज में लगाए रहता।"

दीक्षा मिलने के बाद आपका प्रात: 2.30-3.00 बजे उठकर पूजा में बैठने का नियम बन गया। वे कड़ी मेहनत करते अध्यात्मिक जीवन बिताने लगे। जब भी मौका मिलता तो गुरु महाराज के पास जाकर उनकी सेवा में हाजिर हो जाते। उन्होंने जीवन में सब चीजें छोड़ दीं और केवल गुरु महाराज और पिताजी साहब की सेवा में लगे रहते। उनका सम्बन्ध सबसे था लेकिन किसी के साथ भी लिप्त न होते। कुछ ही वर्षों बाद 28 फरवरी 1926 को आपको हजरत मौलवी अब्दुल गनी खां साहब (रहम.) द्वारा इजाज़त खिलाफ़त बख्शी गयी। 7 जून 1947 को अपने पिताजी के विसाल के बाद आपने कानपुर में सतसंग का कार्यभार संभाला। सतसंगियों को परिवार के सदस्यों की तरह प्यार दिया और धीरे-धीरे सतसंग का कार्यभार बढ़ता गया। आप कहीं आना-जाना पसंद नहीं करते थे। सन 1958 में आपको यूनेस्को से बुलावा आया पर आपने इन्कार कर दिया।

कुछ ही समय में आपकी ख्याति देश-विदेश में भी फैलने लगी और विदेशों से भी लोग सतसंग के लिये आने लगे। इन विदेशी अभ्यासियों ने आपका नाम विदेश में भी फैलाया। इनमें प्रमुख रूप से 1948 में फ्रांस से आई मिस लिलियन एवं 1961 में आई मिस इरीना ट्वीडी का नाम है। मिस लिलियन ने 18 वर्ष आपके सतसंग में व्यतीत किये और अपने देश वापस जाकर अपने गुरुदेव महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब के नाम से संस्था खोली और इस सिलसिले का प्रसार किया। मिस इरीना ट्वीडी को महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब ने डायरी लिखने को कहा था जो बाद में ब्ल्यू डालफिन पब्लिशिंग, अमेरिका द्वारा 'डॉटर ऑफ़ फायर' नाम से पुस्तक रूप में प्रकाशित की गई।

आपके प्रिय शिष्य महात्मा डॉ. चन्द्र गुप्ता आपके बारे में कहा करते थे कि आप बादशाह-फ़क़ीर थे और जलाली एवं जमाली संत थे अर्थात तेज व शान्ति दोनों से परिपूर्ण।

महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब ने मानव शरीर में आत्मिक उर्जा के नए केन्द्रों की खोज की। वे कहा करते थे कि शास्त्रों में सभी आत्मिक चक्रों का वर्णन नहीं है, न ही समस्त गुह्य विद्या किसी एक ही समय में उजागर की जाती है। जैसे-जैसे मानवता अपने पथ पर अग्रसर होतो है, नवीन ज्ञान का प्रकाश होता जाता है। इंसान का समस्त जीवन भी सभी चक्रों को स्फुरित और जाग्रत करने के लिये पर्याप्त नहीं है। लेकिन इस सिलसिले में सभी आत्मिक चक्रों को इसी जीवन में ध्यान द्वारा स्फुरित और जाग्रत किया जाता है। उन्होंने अपने गुरुदेव हजरत मौलवी अब्दुल गनी खां साहब (रहम.) और अपने पिताजी जनाब चच्चाजी साहब की सहमती से ध्यान साधना करने की पद्धति में बहुत सुधार किया।

आपका फ़रमाना था कि सन्यासी अधिकतर आज्ञा चक्र से कार्य करते हैं, लेकिन उनमें प्रेम का जज्बा कुछ ख़ास नहीं होता । इस नक्शबंदी सिलसिले में मुख्यतया हृदय चक्र का प्रयोग किया जाता है जो प्रेम का स्रोत है । जब हृदय चक्र को जाग्रत किया जाता है तो उससे ऐसी उर्जा प्रवाहित होती है कि साधक बाकी सब बातों को भूल जाता है । हृदय चक्र जाग्रत कर सतगुरु द्वारा अपनी आत्मिक शक्ति से शिष्य के हृदय में प्रेम उत्पन्न किया जता है । यह पद्धति उत्प्रेरण की है जिसमें गुरु अपनी उच्च आत्मिक उर्जा द्वारा शिष्य के हृदय में प्रेम का जज्बा प्रकट कर देता है । परिणामस्वरूप साधक की समस्त प्रगति केवल हृदय चक्र मात्र के जागरण से होने लगति है जो धीरे-धीरे अन्य सभी चक्रों को जागृत कर देता है ।

सूफीमत के विषय में आपका कहना था कि यह ना ही तो कोई धर्म-विशेष है, ना ही कोई फलसफा, यह तो जीने का एक तरीका है । सभी धर्मों के मानने वालों में सूफी-संत हुए हैं । हिन्दू सूफी, मुस्लिम सूफी एवं ईसाई सूफी हैं । उनका कहना था कि इस सिलसिले में आत्मिक उन्नति के लिये शिष्य को अपने प्रयास पर निर्भर नहीं रहना पड़ता । सतगुरु स्वयं अपनी कृपा से शिष्य के लिये समस्त प्रयत्न करता है । शिष्य का प्रयास उसे कहीं नहीं ले जाता है । सच्चा सतगुरु जानता है कि शिष्य के चरित्र को किस प्रकार ढाला जा सकता है । सतगुरु अपनी कृपादृष्टी मात्र से शिष्य को भीतर गहराई से परिवर्तित कर देता है लेकिन सतगुरु अपने शिष्य पर पाबंदियां नहीं लगाता, वह तो प्रेम करने वाली माँ के समान होता है । बच्चा माँ से रूठ सकता है, क्रोधित हो सकता है लकिन माँ इसे गम्भीरता से नहीं लेती, वह अपने बच्चे को फिर भी उतना ही प्यार करती है । इसी तरह कभी-कभी शिष्य अपने सतगुरु से दूर जा सकता है और चला भी जाता है लेकिन सतगुरु से ऐसी उम्मीद नहीं की जा सकती क्योंकि गुरु-शिष्य का सम्बन्ध हमेशा के लिये होता है । यदि शिष्य प्रतिबद्ध है तो वह कहीं नहीं जा सकता । सतगुरु एक कुशल घुड़सवार की तरह होता है जो घोड़े को अपनी इच्छानुसार कहीं भी ले जाता है । लेकिन शिष्य गुलाम नहीं होते । वे स्वतंत्र होते हैं । यदि उनका व्यक्तित्व उन्हें पथ से अलग ले जाना चाहे तो यह भी कठिन है, परमात्मा सबकी बेहतरी जानने वाला है । यह मुक्ति का पथ है, पूर्णतया बंधन मुक्त होने का, लेकिन अक्सर लोग इसे समझ नहीं पाते, क्योंकि उन्हें अपने तौर पर कुछ नहीं करने को कहा जाता, कोई यम-नियम नहीं, कोई बंधन नहीं, कोई मन्त्र-जाप नहीं, कुछ भी नहीं । हम दिमाग की दुनियाँ में रहते हैं । ज्यादातर लोगों के लिये उनका दिमाग ही उनका नियंत्रक होता है, अत: वे तब तक संतुष्ट नहीं हो पाते और स्वीकार नहीं कर पाते जब तक कम-से-कम उसके लिये उन्हें कोई सपष्टीकरण न दे दिया जाए । यही कारण है कि यह साधना मार्ग कुछ ही लोगों तक सिमटा रहा व बहुत प्रचारित नहीं हुआ । इस मार्ग में ज्ञान का प्रकाश सिर्फ उत्कट प्रेम के कारण सतगुरु के हृदय से शिष्य के हृदय में प्रसारित हो जाता है ।

आप 1966 में अचानक से बीमार हो गये और 21 जुलाई 1966 को आपने अपना शरीर त्याग दिया । आपको दाग नहीं दिया गया और आपकी सदेह समाधि आपके पिताजी महात्मा

श्री रघुवर दयालजी साहब के पैरों की तरफ़ उसी स्थान पर (कानपुर में हमीरपुर रोड पर 11 वे कि. मी. के माइल स्टोन के पास) बनायी गई ।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

यदि तुम परमात्मा से मित्रता रखते हो तो फिर तुम कभी नहीं मरोगे ।

प्रार्थना, चाहे वह साधारण से साधारण ही क्यों न हो, अवश्य करनी चाहिये । लेकिन सच्ची प्रार्थना है स्वयं को परमात्मा में विलीन कर देना ।

इस सिलसिले में मुख्य बात है चरित्र का पूरी तरह ढल जाना । यदि सतगुरु के जीवन काल में ही व्यक्तित्व में पूर्ण बदलाव का मौका मिल जाये तो आत्मीय निस्बत सतगुरु के शरीर त्यागने से समाप्त नहीं हो जाएगी । उस स्थिति में सतगुरु से मिलने वाली उर्जा कहीं अधिक तेज हो जाएगी । लेकिन यदि चरित्र में पूर्ण बदलाव नहीं हुआ तो सतगुरु के उत्तराधिकारी के पास जाना होगा ।

प्रेम करने वाला (जीव) अपूर्ण है, इसलिए परमात्मा जो सर्वशक्तिमान है और परिपूर्ण है, जीव में समा जाता है ।

सतसंग से ही सब कुछ मिलता है । यदि उड़ना चाहते हो तो वायुयान का टिकट लेना होगा । अध्यात्मिक पूँजी प्राप्त करने के लिये प्रयास जरुरी है, और यह प्रयास है सतसंग में शामिल होना ।

लोगों की आपस में तुलना कर हम उनके प्रति अन्याय करते हैं । किसी भी व्यक्ति की किसी अन्य से तुलना नहीं की जा सकती । कुछ भी समय के एक ही मापदण्ड से नहीं मापा जा सकता । तुम्हारा शरीर की कोशिका का समय, तुम्हारा समय का अपना माप दण्ड, और सौरमण्डल के समय का माप दण्ड, दोनों अलग हैं पर अनुपात रूप में समान ।

सत्य जिसे कोमलता से न कहा जा सके, सत्य नहीं है । यदि आपने स्वयं को लय कर दिया (आत्म-भाव प्राप्त कर लिया) तो आप दूसरों को चोट नहीं पहुंचाएंगे ।

सूफियों के लिये अदब का बहुत महत्व है । अपने गुरु के प्रति अदब अत्यंत आवश्यक है ।

मैं कुछ नहीं जानता; यदि हम कुछ जानते हैं तो उसे पीछे छोड़ना, उसे भुलाना जरुरी है क्योंकि उसका कोई मूल्य नहीं है । भूल जाना सबसे बड़ी योग्यता है; परीक्षा में अवश्य सफलता प्राप्त होगी; तुम इस जगह फिर लौटकर नहीं आओगे । वे जो चले गये हैं, लौटकर नहीं आयेंगे, न ही वे वहाँ से कोई संदेशा भेजते हैं । वे मात्र तुम्हारी सहायता करते हैं, बिना किसी तरह की आशा के । वे अपनी दया, कृपा एवं आनंद का प्रसाद हम लोगों के लिये छोड़ जाते हैं, जो हमारे साथ रहता है ।

आदर्श मनुष्य वही है जिसने अपनी इच्छाओं से पार पा लिया हो । इच्छा अपूर्णता से पैदा होती है । हम स्वाभाविक रूप से अपूर्णता को दूर करना चाहते हैं । हमें केवल परिपूर्णता ही संतुष्ट कर सकती है ।

आदमी को हमेशा प्रार्थना करते रहना चाहिये, परमात्मा को याद करते रहना चाहिये और जो समय बचे उसमे दूसरों कि सेवा करनी चाहिये । अन्य मनुष्यों की, जानवरों की, पेड़-पौधों

की, सभी जीवित प्राणियों की । लेकिन इसमें मनुष्य का स्थान पहले है । परमात्मा को वह सबसे प्रिय है ।

सूफी इतिहास मानवता के इतिहास जितना ही पुराना है, यह प्राचीन ज्ञान है ।

विशवास सतगुरु द्वारा प्रदान किया जाता है, उन्हें जिन्हें वह विशवास बख्शना चाहता है । वह स्वतंत्र है । हमे सतगुरु को प्रसन्न करने का प्रयत्न करना चाहिये । सही मनोभावना, सेवा, आज्ञापालन, सही रहन-सहन, ये सब उन्हें प्रसन्न करने में सहायक हैं । ध्यान सबको नहीं बख्शा जाता, यह सबके लिये है भी नहीं । यह स्वत: अनायास होना चाहिये, वरना यह सम्मोहन की अवस्था होगी ।

गुरु एवं शिष्य के बीच द्वैत भाव तिरोहित हो जाता है । साधक को अपने अहं का त्याग करना होता है । पूर्णतया । जहाँ दुई शेष है, वहाँ आत्म-साक्षात्कार संभव नहीं । धन-दौलत का त्याग सरल है, लेकिन मन का समर्पण अत्यंत कठिन है । मन के समर्पण का अर्थ है अपना स्वयं का कोई मन न होना, सतगुरु के हाथों में स्वयं को मृत की भांति सौंप देना । यदि तुम्हें कुछ चाहिये तो द्वैत भाव बना ही रहेगा, लेकिन सच्चा भक्त कुछ नहीं चाहता, वह तो शुद्ध प्रेम का प्रतिरूप होता है ।

महात्मा श्री राधामोहन लालजी मिस लिलियन के साथ चच्चाजी की समाधि परिसर में

महात्मा श्री राधामोहन लालजी (1960-1966)

महात्मा श्री जगमोहन नारायनजी

चि. जगमोहन नारायन, मेरे एकमात्र पुत्र के रूप में मेरे साकार स्वप्न हैं । अथाह शक्ति की ज्योति उनके अन्तर में निरंतर प्रज्वलित होती रहती है । वे भावी आचार्य पद की भूमिका वहन करने के लिये सक्षम हैं, क्योंकि वह एक आदर्श साधक भी हैं-महात्मा श्री रामचन्द्रजी

महात्मा श्री जगमोहन नारायनजी महात्मा श्री रामचन्द्रजी (जनाब लालाजी महाराज) के सुपुत्र थे । जनाब लालाजी महाराज को आठ पुत्रियाँ व दो पुत्र हुए । आपके बड़े सुपुत्र श्री हरिश्चंद्र दो-तीन वर्ष ही जीवित रहे । महात्मा श्री जगमोहन नारायनजी दुसरे सुपुत्र थे । आपका जन्म 2 नवम्बर 1901 को हुआ । जनाब लालाजी महाराज ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि मेरे एकमात्र पुत्र चि. जगमोहन नारायन के अतिरिक्त मेरे सभी भतीजे भी जिनके नाम बृजमोहन, राधामोहन, ज्योतीन्द्र मोहन, नरेन्द्र मोहन और राजेन्द्र मोहन हैं, मुझे प्राणों के समान अति प्रिय हैं । मेरे अन्य भतीजों के अतिरिक्त जो अभी छोटे हैं, चि. बृजमोहन लाल मुझे इसलिए अधिक प्रिय हैं क्योंकि वे भी मुझे अत्यंत ही प्रेम करते हैं और मेरे जीवन की प्रत्येक आकांक्षा को पूरा करने और अपने में उतारने की चेष्टा करते हैं और साथ ही अति उत्साही भी हैं । उनकी कल्पनाएँ अनेक हैं, परमात्मा उन्हें बनाये रखे ।

चि. बृजमोहन लाल बड़ी अवधि तक मेरे पास रहे हैं । उनमें व मेरे पुत्र जगमोहन नारायन में अनेकानेक असंगतियों के होते हुए भी दोनों भाइयों में एक-दूसरे के प्रति जीवंत प्रेम की आदर्श भावना वास करती है । चि. जगमोहन नारायन ऊपर से दिखने में राजसी ठाठ-बाट में सजे-सजाये एक संसारी राजकुमार किन्तु अन्तर में एक सम्पूर्ण सन्यासी व त्यागी, ठीक इसके विपरीत चि. बृजमोहन लाल ऊपर से आकार-प्रकार में एक विरक्त फ़क़ीर किन्तु अन्तर में राजयोग का उच्च आदर्श तथा ममतामय संस्कार, सत्य चाहे जो भी हो, दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं व दोनों मुझे दो आँखों के समान प्रिय व आत्मीय हैं ।

चि. जगमोहन नारायन, भाइयों के मध्य जग्गू बाबु के नाम से पुकारे जाते हैं एवं अपने गुणों के आधार पर सभी में अति लोकप्रिय हो गये हैं । वह भारतीय मनीषा के अनन्य आराध्य व उच्चकोटि के कार्यकर्ता हैं । त्याग व सेवा का मार्ग उन्होंने अपनाया है और अब तो उस पर अग्रसर हो वह पर्याप्त आगे निकल गये हैं । बड़े ही निर्भीक और उत्साही हैं । उन जैसे कभी न थकने वाले अडिग व अटल स्वयं-सेवक से अनेकों आशायें हैं । सभी की निगाहें उन पर लगी हुयी हैं ।

अनेकानेक गुणों की खान वह मेरे संकुल के दीपक हैं । हमारे भावी समाज के स्तम्भ स्वरूप हैं । चित्रकारी व अनेकानेक ललित कलाओं पर उनका पूर्ण अधिकार है । अपना काम वह स्वयं अपने हाथों से करने की क्षमता रखते हैं । इतने सारे गुणों की एक-रस एक व्यक्ति में संपन्नता अभूतपूर्व उपलब्धी है, यही कारण था कि मेरे हजरत क़िब्ला (मौलाना फ़ज़्ल

अहमद खान साहब) को भी वह भा गये। मेरा रोम-रोम कृत-कृत्य हो गया। जो मेरे आराध्य देव को लुभा सका उसकी सेवा व परवरिश अब मेरी आराधना बन गयी है। जिस जीव का गर्भाधान संस्कार महान उद्धेश्य से होगा, उसी का जीवन महान होगा और उसी की सब प्रवृतियां, क्रियाएं एवं कर्म भी महान होंगे।

एक समय की बात है मैं सपरिवार अपने हजरत क़िब्ला के चरणों में उपस्थित हुआ। हम सभी अपने प्रेम-संयोग का लाभ उठा रहे थे। उनकी रूप-माधुरी झर रही थी। हम उसमें स्नान कर रहे थे, अति मग्न व आत्म-गम्भीर हो मानों अपनी सुधि-बुधि खोकर उन्हीं में लीन, उन्हीं के प्रेम में छके हुए, उन्हीं के आलिंगन में डूबे हुए, उस अभूतपूर्व प्रवाह में गोते लगा रहे थे। उधर मेरा लाल, जग्गू, अपनी ही दुनियाँ में खोया हुआ था। हुज़ूर महाराज की खड़ाऊओं को जिन्हें वे अपने प्रयोग में लाते थे, उसने एक रस्सी में बाँध रखा था और बड़ी ही तल्लीनता से उनकी देख-रेख में लगा हुआ था। घूमते-घूमते हजरत क़िब्ला उधर आये, उस पर एक दृष्टी पड़ते ही मुस्कराए एवं प्रश्न किया-'क्यों मिया, यह क्या हो रहा है ?' अपनी ही तल्लीनता में मग्न मेरे लाडले का उत्तर था-'मेरे घोड़े बंधे हैं, भाग न जाएँ।' इस उत्तर से अनायास ही उस पर ऐसे मुग्ध हुए कि चलती बेर वह अपने खडाऊं उसे देना न भूले। वे खडाऊं आज भी उसकी धरोहर हैं, जिनके लिये मैं अपना सर्वस्व और अपनी समस्त उपलब्धियां न्यौछावर करने को तत्पर था किन्तु न पा सका और उधर मेरे लाल ने साधना के प्रथम चरण में ही उन्हें पा लिया।

"प्रभु करि कृपा पाँवरी दीन्ही"

प्रथम आहुति में ही सम्पूर्ण जीवन-यज्ञ के फल की प्राप्ति हो गयी। मेरा रोम-रोम कृत-कृत्य हो रहा था। जीवन प्राण परमानन्द की दिव्य चेतना के मध्य स्नान कर रहे थे। न जाने कौन से गुण पर दयानिधि रीझ जाते हैं। मुझे अपने पुत्र के माध्यम से, अपने सर्वस्व, अपने जीवन-प्राण, अपने सद्‌गुरुदेव के जो दर्शन हुए, मैं सर्वथा उसका कोई अधिकारी नहीं था।

मेरे हजरत क़िब्ला ने अनेकानेक कृपाकर मेरे नन्हें शिशु चि. जगमोहन नारायन को अपनी पादुकायें देकर मानों उस पतंगे और अनेकानेक धन-धान्य व विषय-भोग रुपी सुन्दर और मनोहर प्रतीत होने वाले दीपक की लौ के बीच एक लम्बा पर्दा डाल दिया। उनका यह उपकार उसे आजीवन संसारिकता के ताप से बचाए रहा। सहज सुहृद उन आनंद घन-सच्चिदानंद ने दया करके मेरे नन्हें साधक को भोगों के भीषण दावानल से बचाने के लिये भोग वस्तुओं का अभाव कर उनसे विछोह करा दिया।

चि. जगमोहन नारायन, मेरे एकमात्र पुत्र के रूप में मेरे साकार स्वप्न हैं। सारे सतसंग समाज को उनसे अनेकानेक आशाएं हैं। अथाह शक्ति की ज्योति उनके अन्तर में निरंतर प्रज्वलित होती रहती है। बड़ी ही सूझ-बूझ के साथ मेरे सद्‌गुरुदेव की लगाईं वाटिका को हरा-भरा रखने में वह मेरे अभिन्न सहायक भी हैं। वे भावी आचार्य पद की भूमिका वहन करने के लिये सक्षम हैं, क्योंकि वह एक आदर्श साधक भी हैं। सारे सतसंग समाज के दिशा-

निर्देशन में वह समर्थ हैं । बाहर से आये हुए जिज्ञासुओं व साधकों की सेवा में वे ऐसे तल्लीन हो जाते हैं कि उन्हें अपनी स्वयं की भूख-प्यास, नींद या अन्य सुख-सुविधाओं का ध्यान ही नहीं रहता । सतसंग के वार्षिक उत्सवों व साधना-शिविरों के अवसर पर उन्हें तीन-तीन दिन तक रात-दिन जाग कर काटते देखा गया है । यदा-कदा बाहर से आये हुए भाइयों के निमित्त अपने बिस्तर इत्यादि देकर स्वयं टाट पर रात बिताते भी वे रहे हैं पर कानों-कान किसी को भी इसकी सूचना नहीं ।

महात्मा श्री जगमोहन नारायनजी को सम्पूर्ण इजाज़त हजरत मौलवी अब्दुल गनी खां साहब (रहम.) द्वारा महात्मा श्री रामचन्द्रजी के विसाल के बाद 10 सितम्बर 1931 को दी गई । महात्मा श्री जगमोहन नारायनजी अपने पिता महात्मा श्री रामचन्द्रजी की आशाओं और आकांक्षाओं पर खरे उतरे और करीब बारह वर्ष सतसंग का काम सँभालते रहे । आपने 28 अगस्त 1944 को अपना शरीर त्यागा । आपकी समाधि भी अपने पिता महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज की समाधि के साथ ही बनी हुयी है ।

महात्मा श्री जगमोहन नारायनजी (1901-1944)

महात्मा श्री जगमोहन नारायनजी की समाधि (फतेहगढ़)

परमसंत ठाकुर रामसिंहजी

'पीर से उल्फत हो मुझको, हूँ फनाफिल शैख़ मैं,
या इलाही ! ठाकुर रामसिंहजी, मेरे गुरु भगवान के वास्ते'
(सतगुरु से प्रेम हो और लय हो जाऊं मैं उनमें,
ठाकुर रामसिंहजी, मेरे गुरु भगवान के नाम पर, हे परमात्मा !)

परमसंत ठाकुर रामसिंहजी साहब महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज के प्रिय शिष्य थे । आपका जन्म 3 सितम्बर 1898 को मनोहरपुरिया, सांगानेर, जयपुर में एक रावलोत भाटी परिवार में हुआ था । आपके पिताजी ठाकुर मंगलसिंहजी भाटी बड़े धर्मपरायण और ईश्वर भक्त थे और जयपुर रियासत में किलेदार के पद पर कार्यरत थे । तत्कालीन महाराज माधोसिंह आपका बड़ा आदर करते थे । आप अन्तरदृष्टि प्राप्त महापुरुष थे । आप एक दिन यकायक जोर-जोर से आवाज लगाने लगे कि पानी लाओ, आग लगी है, पानी लाओ । परिवार के सदस्य चकित ही इधर-उधर देखने लगे लेकिन उन्हें कहीं आग दिखाई नहीं दे रही थी । पूछने पर आपने बताया कि उनकी भतीजी के ससुराल जो जावली में था, वहाँ आग लगी है और आप उधर की तरफ़ मुँह कर जमीन पर पानी डालते रहे । पता लगाने पर जानकारी मिली कि उसी दिन ठीक उसी समय जावली गाँव में आग लगी थी । ठाकुर रामसिंहजी साहब की पूज्य माताजी भी बड़ी धर्मपरायण और साहसी महिला थीं । उन्हें एक पुत्र ठाकुर रामसिंहजी एवं एक पुत्री हुए ।

माता-पिता के संस्कारों ने पुत्र पर भी अपना प्रभाव दिखलाया और फलस्वरूप ठाकुर रामसिंहजी को बचपन से ही धार्मिक प्रवृतियों में गहरी रूचि हो गयी । आपके पूज्य पिताजी को ध्यानावस्था में श्री सीताराम के युगल दर्शन हुआ करते थे । आपने भी अपने पूज्य पिताजी से श्री सीताराम के दर्शन कराने का अनुरोध किया और तभी से आपमें भी परमात्मा के प्रति जिज्ञासा जागृत हो गयी और धीरे-धीरे आपको यह आभास होने लगा कि श्री राम उनके साथ रहते हैं ।

ठाकुर रामसिंहजी साहब को विद्याध्ययन ले लिये नोबल्स स्कूल में भरती करवाया गया । हिंदी के अतिरिक्त उर्दू, फारसी और अंग्रेजी में भी आपकी अच्छी पकड़ हो गयी ।

उस जमाने में विवाह छोटी उम्र में ही कर दिए जाते थे । ठाकुर रामसिंहजी साहब का विवाह भी सत्रह वर्ष की आयु में हो गया । धर्मपत्नी थीं ठाकुर एडीसाल सिंहजी की सुपुत्री गोपाल कंवरजी । एडीसाल सिंहजी खेतड़ी के राजा अजीतसिंह के सतसंगी थे और उन्हें गुरुवत मानते थे । इस नाते राजा साहब के परममित्र स्वामी विवेकानंदजी के सतसंग का लाभ भी एडीसाल सिंहजी उठा चुके थे ।

ठाकुर रामसिंहजी साहब ने जयपुर राज्य पुलिस में कांस्टेबल के पद पर नौकरी आरम्भ की और थोड़े ही समय में अपनी इमानदारी, कर्तव्यपरायणता और सच्चाई के कारण तरक्की कर आप थानेदार पद पर पहुँच गये । सन 1944 में 46 वर्ष की आयु में स्वैच्छिक सेवा निवृति लेने से पहले आपने कई स्थानों पर नौकरी की व अपने व्यक्तित्व की अमिट छाप छोड़ी ।

पुलिस की नौकरी और वह भी उस जमाने की, राजा के राज की, जिसमें कोड़ा और जूता कोतवाली में दीवार पर प्रतीक रूप में टंगे रहते थे । लेकिन ठाकुर रामसिंहजी साहब ठीक इसके विपरीत । आपके सरल हृदय और मधुर भाषण को देखकर कोई नहीं कह सकता था कि आप पुलिस में हैं और थानेदार हैं । आप संत थानेदार के नाम से जाने जाने लगे जो प्राणिमात्र के साथ सहानुभूतिपूर्वक व्यवहार करते थे । पुलिस थाने में आपने कभी किसी अपराधी के विरुद्ध बल प्रयोग नहीं किया । यदि कोई मुलजिम पकड़ कर लाया गया तो स्वयं अपने हाथ से भोजन बनाकर उसे भोजन कराते । जैसा भोजन स्वयं करते वैसा ही उसे भी कराते । मुलजिम को खिलाकर ही स्वयं भोजन ग्रहण करते । साफ़-सुथरे रहते, स्वच्छ मन, स्वच्छ तन और स्वच्छ वातावरण आपकी अभिरुचि थी । यदि सफाई वाला ना आया तो आप स्वयं सफाई कर लेते । जिस थाने में जाते, वहाँ का वातावरण बदल जाता, उसमे एक दिव्यता आ जाती ।

उन दिनों थाने में सवारी के लिये ऊँट रहते थे । जो सिपाही ऊँट रखता वह शुतुरसवार कहलाता और उसे वेतन के अतिरिक्त ऊँट रखने का भत्ता मिलता । थानेदार ठाकुर रामसिंहजी साहब जिस ऊँट पर सवार होकर दौरा करने जाते, शुतुरसवार को अपने साथ भोजन कराते और ऊंटों को अपनी जेब से चारा चराते । कभी कोई खाने की वस्तु भी देता तो आप न लेते । जहाँ पानी पीते, वहाँ चाहे सार्वजनिक कुआं ही क्यों न हो, पहले पैसे रख देते ।

ठाकुर रामसिंहजी साहब बड़े कर्तव्यनिष्ठ और साहसी व्यक्ति थे । सामान्य जीवन में भी आपने कभी सत्य का आश्रय नहीं छोड़ा । आपको अनेक बार कोर्ट में शहादत (गवाही) देने के लिये जयपुर आना होता । जिस दिन संध्या को जयपुर से अपने गाँव चले जाते उस दिन का दैनिक भत्ता नहीं लेते । सदा किफ़ायत से काम लेते और बचा हुआ पैसा परमार्थ में लगा देते । कोई खोटा सिक्का यदि हाथ में आ जाता तो उसे जमीन में गाड़ देते । जीवन में आपने कभी कोई अनुचित मार्ग नहीं अपनाया । जब तक आपको यकीन नहीं होता तब तक किसी को मुलजिम करार नहीं देते । जब पूरे सबूत मिल जाते तभी कोर्ट में चालान पेश करते । सदा निर्दोष का पक्ष लेते ।

ठाकुर रामसिंहजी साहब के हृदय में प्राणिमात्र के प्रति करुणा की अजस्त्र धारा प्रवाहित होतो रहती थी । नए पेड़ लगाने और पेड़ों को पानी देने में आपकी बड़ी अभिरुचि थी । कोई अगर हरे भरे पेड़ों को सताता तो आपको बड़ी पीड़ा होती । पुलिस थानों के परिसरों में आपने अनेक पेड़ लगाए और उनकी परवरिश की । पक्षियों को दाना चुगाना तो आपका नित्यकर्म

बन गया था । चिड़ी-कमेड़ी, मोर-कबूतर आपसे बहुत हिल-मिल गये थे । थाना सवाई-माधोपुर में तो बुलबुल आपकी हथेली पर से किशमिश उठा ले जाती । अपनी आय का कुछ भाग सदा गरीबों कि सेवा में व्यतीत करते और यह इतना गुप्त होता कि किसी को पता न लगने देते । यहाँ तक कि सेवानिवृति के बाद भी पेंशन का एक भाग आप परमार्थ में लगाते और स्वयं अभाव में भी रह लेते । कभी किसी से कुछ लेना तो आपने सीखा ही नहीं, जहाँ तक बन पड़ा, स्वयं कष्ट उठाकर भी औरों की सेवा करने में आनंद मनाया ।

ठाकुर रामसिंहजी साहब के सदाचार, नैतिक व्यवहार और सत्यपरायाणता की सुगंध जयपुर राज्य में फ़ैल गयी थी । न्यायालय भी इस अलौकिक सुगंध से अछूते न रहे । न्यायाधीश श्री शीतला प्रसाद बाजपेयी ठाकुर रामसिंहजी साहब को बड़े सम्मान की दृष्टी से देखते थे ।

शेखावाटी के नाजिम इकराम हुसैन ठाकुर रामसिंहजी साहब की सच्चाई और ईमानदारी से इतने प्रभावित थे कि जिस केस में ठाकुर रामसिंहजी साहब ने चालान पेश कर दिया, उनकी बात को सच मानकर फैसला कर देते । उस समय निजामत का नाजिम दीवानी और फौजदारी का बड़ा अधिकारी माना जाता था । झुंझुनू के नाजिम इकराम हुसैन ने एक चोर को केवल ठाकुर रामसिंहजी साहब के बयान पर मुजरिम करार देकर सजा दे डाली । इस सजा के विरुद्ध जयपुर राज्य के चीफ कोर्ट में अपील हुई और सुनवाई प्रधान न्यायाधीश श्री शीतला प्रसाद बाजपेयी ने की । दोनों पक्षों को सुनने के बाद आपने नाजिम के फैसले को बहाल रख और सजा बरकरार रखी । बचाव पक्ष की दलील थी कि 'एक सब-इंस्पेक्टर पुलिस के बयान को प्रमाण मानकर सजा देना उचित नहीं है । फौजदारी कानून में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है ।' प्रधान न्यायाधीश ने इस दलील को यह कहकर अस्वीकार कर दिया कि 'यह बयान ठाकुर रामसिंह जैसे सत्यनिष्ठ सब-इंस्पेक्टर का है । इस थानेदार का बयान कानून के प्रावधानों से कहीं ज्यादा वजनदार है ।'

सन 1926 में ठाकुर रामसिंहजी साहब निवाई पुलिस चौकी नियुक्ति पर आये । कुछ दिनों में यह बात फ़ैल गयी कि नया थानेदार बहुत ईमानदार आदमी है, किसी से एक पैसा भी नहीं लेता । यह सुनकर वहाँ के एक रेलवे कर्मचारी श्री कृष्णचन्दजी भार्गव बहुत प्रभावित हुए और उनसे मिलने आये । ठाकुर रामसिंहजी साहब को भी उनसे मिलकर बहुत प्रसन्नता हुयी । समान विचारधारा होने के कारण दोनों में स्नेह बढ़ता ही गया और वे परस्पर काफ़ी घुल-मिल गये और यह मिलन ठाकुर रामसिंहजी साहब के लिए अत्यंत शुभ रहा ।

एक दिन श्री कृष्णचन्दजी भार्गव ने उनसे पूछा कि आपका कोई गुरु है या नहीं ? ठाकुर रामसिंहजी साहब ने फ़रमाया कि जिस किसी से कोई बात सीखने को मिल जाय उसे ही गुरु मान लेता हूँ । इस पर श्री कृष्णचन्दजी भार्गव ने कहा यह बात और है, सतगुरु की बात दूसरी है । मेरे तो बड़े समर्थ सतगुरु हैं । श्री कृष्णचन्दजी भार्गव ने अपने गुरुदेव का परिचय दिया और दूसरे दिन महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज (जनाब लालाजी साहब) का एक फोटो उन्हें लाकर दिया । वह फोटो ठाकुर रामसिंहजी साहब ने अपनी टेबल पर रख ली । वे फोटो

को निहारते रहते और उन्हें उस फोटो से ही फैज़ (आत्मिक उर्जा की धार) प्राप्त होने लगता । जब वे लेटते तो वही तसव्वुर-अजीब मस्ती छा जाती ।

आपने जनाब लालाजी साहब को पत्र लिखा जिसमें आपने मेसमेरेजम सीखने की इच्छा प्रकट की । जनाब लालाजी साहब ने उत्तर में लिखा, "अजीजे मन ! मैं तो केवल आधार हूँ । परमात्मा की तरफ़ मुँह किये हूँ । मेसमेरेजम नहीं जानता ।" ठाकुर रामसिंहजी साहब ने अगले पत्र में लिखा कि मैं तो आपका हो चुका हूँ । प्रत्युत्तर में जनाब लालाजी साहब ने लिखा कि शरीर स्थूल है, एक बार मिलना जरुरी है ।

ठाकुर रामसिंहजी साहब ने छुट्टी मिलने में असमर्थता जतलाई तो उनके सद्‌गुरुदेव महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज स्वयं अपने प्रेमी शिष्य से मिलने चले आये । ठाकुर रामसिंहजी साहब तब तक चौकी पलसाना आ गये थे और भार्गव साहब भी निवाई से बांदीकुई चले आए थे । पूज्य लालाजी साहब भार्गव साहब के पास बांदीकुई आ ठहरे । सूचना मिलने पर ठाकुर रामसिंहजी साहब तुरंत बांदीकुई पहुँचे और हाजिर होकर अर्ज किया "मैं रामसिंह हूँ ।"

पूज्य लालाजी साहब ने देखते ही फ़रमाया, "तुम हू-ब-हू वैसे ही हो जैसा हमने तुम्हें देखा था । तुम्हारा प्रेम मुझे यहाँ तक खींच लाया । प्रेम ऐसी चीज है जो सातवें आसमान को चीर कर निकल जाता है ।" पूज्य लालाजी साहब उनके साथ ही पलसाना आये और वहाँ से अगले दिन जयपुर । जयपुर में वे सांथा ठाकुर साहब की हवेली में ठहरे ।

इसके आगे का हाल एक दिन स्वयं ठाकुर रामसिंहजी साहब ने सिटी पैलेस, जयपुर में अपने श्रीमुख से इस प्रकार बताया-"दूसरे दिन जब मैं चांदी की टकसाल से इक्के में बैठा आ रहा था तो तांगे वाले ने एक शेर पढ़ा-

'अजब तेरे इश्क का यह असर देखता हूँ,
कि तरक्की पे दर्दे-जिगर देखता हूँ,
समाया है जबसे तू मेरी नज़र में,
जिधर देखता हूँ, तुझे देखता हूँ ।'

यह शेर बिल्कुल मेरी हालत बयान कर रहा था । अगले दिन जब मैं बड़ी चौपड़ से छोटी चौपड़ की ओर आ रहा था तो ऐसा लगा कि मैं उनकी तरह चल रहा हूँ, उन्हीं की तरह देखने लगा हूँ । जब लालाजी महाराज जयपुर से अजमेर पधारने लगे तो मैंने रेलगाड़ी में एक गुलाब का गुलदस्ता भेंट किया । इस पर लालाजी महाराज ने फ़रमाया, 'तुम्हारा यश गुलाब के फूल की तरह फ़ैल जायेगा' और आशीर्वाद दिया कि 'फनाफिल मुरीद' (अर्थात वह शिष्य जिसमें गुरु स्वयं लय हो गया हो) हो ।'"

इस तरह ठाकुर रामसिंहजी साहब ने तीन दिन अपने गुरुदेव का सतसंग लाभ उठाया और इन तीन दिनों में ही वे तद्रूप हो गये, द्‌वैत भाव दूर होकर लय अवस्था प्राप्त हो गयी, जीवन में शान्ति और आनंद की वर्षा होने लगी ।

ठाकुर रामसिंहजी साहब अपने गुरु भगवान (वे अपने सद्‌गुरुदेव को गुरु भगवान ही कहा करते थे) के पास फतेहगढ़ भी हाजिर हुए । उन दिनों आप (ठाकुर रामसिंहजी साहब) सिगरेट

पिया करते थे और जेब में डब्बी थी। सतसंग के दौरान जनाब लालाजी महाराज ने फ़रमाया कि उन्हें ऐसे लोग पसंद नहीं जो छिप-छिप कर ऐब करें। आप तुरंत उठे और बाहर जाकर वह सिगरेट की डब्बी फेंक दी और फिर कभी सिगरेट को हाथ न लगाया।

उर्स के दौरान जनाब लालाजी महाराज स्वयं अपने हाथों से पानी खींच-खींचकर शौचालय को मुँह अँधेरे साफ़ किया करते थे, ताकि किसी को मालूम न चले। ठाकुर रामसिंहजी साहब ने यह देख लिया और उनका हाथ बटाना चाहां लेकिन जनाब लालाजी महाराज ने मना कर दिया। जनाब लालाजी महाराज के विसाल के बाद ठाकुर रामसिंहजी साहब जब वार्षिक उर्स के अवसर पर आपकी समाधि पर हाजिर होते तो महात्मा जगत नारायणजी साहब के कथनानुसार समस्त सतसंगी भाइयों के नहाने-धोने के लिये कुएँ से स्वयं पानी खींच-खींचकर रखते रहते, किसी और को हाथ भी न लगाने देते। वे अपने साथ दो तौलिया भी ले जाते, एक बड़ा और एक छोटा। बड़े तौलिया से सुबह-सुबह समाधि को धोते और छोटे तौलिया से उसे पोंछते। फिर सारे साल उन तौलियों का स्वयं इस्तेमाल करते। बड़ा तौलिया जब तक चलता काम लेते उसके बाद उसकी रस्सी बनाकर उस पर कपड़े सुखाते। छोटे तौलिया को तकिये पर रखकर सोते, मानों अपने गुरु-भगवान की गोद में सर रखा हो।

एक बार जनाब लालाजी महाराज बीमार पड़ गये। ठाकुर रामसिंहजी साहब फतेहगढ़ आपके पास हाजिर थे। आपने चाहा कि जनाब लालाजी महाराज की बीमारी सल्ब (खींच) कर स्वयं अपने ऊपर ले लें, लेकिन सफल न हुए। बाद में आपने जनाब लालाजी महाराज को 2 जून 1931 को पत्र लिखा। आपने अपने पत्र में लिखा-"....हे स्वामी ! सब सेवकों की तो आप फ़ौरन सुन लेते हैं और उनका सब दुःख दूर करते हैं, मगर हुजूर की तबियत नासाज है। इसका खाकसार को बहुत दुःख है। इसलिए हे करुणा-सागर कृपा करके इस चरण-सेवक को इतनी शक्ति अता फरमावें कि सिर्फ हुज़ुरेवालाशाह की तक्लीफ़ो को अपने शरीर में ले सकूं और बहुत हर्ष के साथ उनको अपने शरीर में जगह दूं और भोगूँ।

हे स्वामी ! मुन्दरजा जैल हालत अर्ज करना खाकसार मुनासिब नहीं ख्याल करता था मगर मजबूरन इस वजह से अर्ज की जाती है कि खाकसार उसमे नाकाम रहा, सो क्यों ?

इसकी सेहत फ़रमा दी जावे ताकि आइन्दा कामयाब होकर अपने-आपको खुशनसीब समझूं। ..."

जनाब लालाजी महाराज ने 30 जून 1931 को पत्र के उत्तर में लिखा था, 'आपका हमदर्दी से भरा हुआ ख़त मिला, तकबियत हुई।'

जयपुर में जनाब लालाजी महाराज आपके घर मनोहरपुरा भी पधारे थे। बहुत वर्षों बाद जनाब लालाजी महाराज के सुपौत्र महात्मा श्री दिनेश कुमार सक्सेना साहब, जब वे छोटे ही थे उस घर में पधारे। ऊपर कमरे में जाने पर उन्हें वह कमरा कुछ हिलता हुआ सा लगा। आपने ठाकुर रामसिंहजी साहब से कहा कि कहीं यह कमरा गिर न जाये ? ठाकुर रामसिंहजी साहब ने उत्तर में फ़रमाया. 'इस कमरे में हुज़ुरेवालाशाह (उनके गुरु भगवान) के कदम पड़े

हैं, यह कमरा कभी नही गिर सकता ।' यह थी आपकी अपने श्रीगुरुचरणों में दृढ़ विशवास की एक मिसाल ।

अध्यात्म का अथाह समुद्र होते हुए भी ठाकुर रामसिंहजी साहब अपने आप को लोगों से छिपाए रहते थे । कुछ ही लोगों के सिवाय शायद ही किसी ने उनकी हकीक़त के बारे में जाना हो । लेकिन फिर भी जो भी उनके सम्पर्क में आया, उनसे प्रभावित हुए बिना न रहा । सन 1934 में राजावत कुशलसिंह पुलिस थाना मालपुरा में थानेदार थे और उन्हीं दिनों ठाकुर रामसिंहजी साहब नवलगढ़ थाने में नियुक्त थे । संयोगवश दोनों को ही एक साथ जयपुर ट्रेनिंग में जाने का मौका मिला । दोनों का पुराना परिचय था अत: ट्रेनिंग में भी साथ-साथ समय बिताते । राजावतजी एक सीधे-सच्चे ईमानदार थानेदार थे । उनमें बहुत से गुण थे लेकिन उन्हें शराब का व्यसन था, जिसने सब गुणों पर पानी फेर दिया था । शाम होते ही बोतल खोल कर बैठ जाते । वे रईस तबियत के व्यक्ति थे, खुद पीते और साथियों को भी पिलाते । ठाकुर रामसिंहजी साहब ने एक बार उन्हें टोका तो उन्होंने बात हँसी में उड़ा दी । फिर दुबारा जब ऐसा संयोग हुआ तो राजवातजी ने कहा-'आप क्या जानो शराब का मजा । एक दिन पीकर देखो, स्वर्ग उतर कर धरती पर आ जायेगा ।' यह सुनकर ठाकुर रामसिंहजी साहब बोले, 'शराब हम भी पीते हैं, पैसे भी नहीं लगते और मजा भी चौगुना आता है ।' राजावतजी बोले क्या ऐसी भी कोई शराब होती है / ठाकुर रामसिंहजी साहब ने फ़रमाया, 'होती है, शाम को आना, पिलायेंगे ।'

शाम को राजावत कुशलसिंह ठाकुर रामसिंहजी साहब के कमरे पर आ गये । आपने उन्हें हाथ-पैर धोकर आने को कहा । फिर दोनों आमने-सामने बैठ गये, बातें होने लगे । राजावतजी पर नशा छाने लगा । वाणी ने मौन धारण कर लिया, पलकें बंद हो गयीं और शरीर की सुध-बुध जाती रही । अंतर में प्रकाश छा गया । जब आँखें खुली तो सामने बैठे ठाकुर रामसिंहजी साहब मुस्कुरा रहे थे । राजावतजी ने आनंद विभोर होकर ठाकुर रामसिंहजी साहब के पाँव पकड़ लिये । कहते हैं कि उन्हें सात दिन-रात यही नशा चढ़ा रहा । आँखों में एक अजीब मस्ती आ बसी । मित्र पूछने लगे कि क्या आजकल दिन में भी पीते रहते हो ? राजावतजी को शराब से हमेशा के लिये छुटकारा मिल गया । उसकी जगह इस दिव्य अनुभव ने ले ली और उन्हें ठाकुर रामसिंहजी साहब का प्रथम सतसंगी होने का सौभाग्य मिला ।

राजावत कुशलसिंहजी के बाद ठाकुर रामसिंहजी साहब के दूसरे सतसंगी होने का सौभाग्य भी पुलिस महकमे के ही एस. पी. मूलसिंहजी को प्राप्त हुआ । वे एक खुश मिजाज व्यक्ति थे और उन्हें भी मदिरापान के व्यसन ने जकड़ रखा था, जो पुलिस विभाग में एक आम बात थी । एक बार आपने अपनी इस कमजोरी का जिक्र ठाकुर रामसिंहजी साहब के सामने किया । ठाकुर रामसिंहजी साहब ने कहा, 'कोतवाल साहब, इस नशे से गहरा एक और नशा है । शराब का नशा तो चढ़ता-उतरता रहता है लेकिन यह नशा चढने के बाद फिर नहीं उतरता ।' मूलसिंहजी बोले, 'यदि आप जैसा व्यक्ति मेरी सहायता नहीं करेगा तो फिर किस से आशा

की जा सकती है । आप जिस नशे में विभोर रहते हैं, उसकी कुछ घूँट मुझे भी पिलाने की कृपा करें ।'

तीर निशाने पर लगा । उसी शाम दोनों सज्जन एक तख्त पर आमने-सामने बैठ गये । ध्यान शुरु हुआ । करीब एक घण्टे बाद जब मूलसिंहजी की आँख खुलीं तो वे बोले आज आपने यह अमृत वर्षा कर मेरा जीवन धन्य कर दिया । मूलसिंहजी के अपने शब्दों में उन्होंने बाद में अपने इस प्रथम अनुभव का इस प्रकार वर्णन किया । "मुझे महसूस हो रहा था कि आनंद की तरंगे आ-आकर मुझसे टकरा रही हैं । मुझे समय की कोई सुध-बुध न रही और मैं आनंद के सागर में डूब गया । जब ध्यान समाप्त होने के बाद मैं चलने लगा तो मेरा शरीर काँप रहा था । पूरी बोतल पीने के बाद भी मेरे साथ कभी ऐसा नहीं होता था । न जाने उस देवता पुरुष ने क्या कर दिया कि मेरे जीवन की दिशा ही बदल गयी । शराब पीने की मेरी आदत एकदम छूट गयी और उसकी जगह समय ईश्वर भजन में गुजरने लगा ।"

ठाकुर रामसिंहजी साहब अपने-आप को किसी पर जाहिर नहीं होने दिया करते थे लेकिन जो आपके संपर्क में एक बार भी आ गया, उसका जीवन बदल गया और वह परमार्थ की राह में लग गया । आपने सुपात्रों पर दिल खोलकर अपनी कृपा वृष्टि की । इन्हीं सौभाग्यशाली व्यक्तियों में एक थे डॉक्टर चन्द्र गुप्ता जो महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब से दीक्षित थे लेकिन ठाकुर रामसिंहजी साहब ने स्वयं आगे बढ़कर आपको अपनी कृपा से मालामाल किया ।

शुरुआती दिनों में ठाकुर रामसिंहजी साहब ने डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को आगाह किया था कि वे उनके बारे में अन्य लोगों को नहीं बताएँ। लेकिन डॉक्टर चन्द्र गुप्ता उनके पास कई लोगों को ले गये। एक दिन जब डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ठाकुर रामसिंहजी साहब के पास सिटी पैलेस हाज़िर हुए तो ठाकुर रामसिंहजी साहब नीचे फर्श पर विराजमान थे और पास ही एक कुर्सी रखी हुई थी। ठाकुर रामसिंहजी साहब ने उन्हें कुर्सी पर बैठने के लिये इशारा किया। डॉक्टर चन्द्र गुप्ता एक क्षण के लिये कुर्सी पर बैठे और तुरंत उतरकर नीचे फर्श पर उनके सामने बैठ गये। ठाकुर रामसिंहजी साहब ने पूछा 'डॉक्टर साहब मैंने आपको कुर्सी पर बैठने का हुक्म दिया था, लेकिन आप उतरकर नीचे बैठ गये। बताएँ आपको क्या सजा दी जाये ?' डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने उत्तर दिया, 'महाराज, मैं पहले कुर्सी पर बैठा, आपके हुक्म की तामील की, फिर क्योंकि आप नीचे फर्श पर विराजमान थे नीचे उतरकर अदब की तामील की।' इस उत्तर को सुनकर ठाकुर रामसिंहजी साहब ने कहा, 'डॉक्टर साहब मैंने आपको मना किया था कि मेरे बारे में आप किसी को नहीं बताएँगे लेकिन आप मेरे पास अमुक-अमुक सज्जन को लेकर आये, और उन्होंने उन सब लोगों के नाम गिना दिए जिन्हें डॉक्टर चन्द्र गुप्ता उनके पास लेकर आये थे, और फिर बोले बताइए आपको क्या सजा दी जाये ?' लगता था उस दिन ठाकुर रामसिंहजी साहब डॉक्टर साहब को सजा देने का मन बनाये हुए थे। डॉक्टर साहब ने सब शांति से सुना और फिर बोले महाराज सजा मुझे ही मिलेगी ना, उनको तो नहीं जिन्हें मैं आपके पास लेकर आया ? ठाकुर रामसिंहजी साहब ने कहा नहीं उन्हें कोई सजा

नहीं मिलेगी। तब डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने कहा, 'सजा वो ही जो मिज़ाज़े यार में आये। लेकिन महाराज सजा देने से पहले यह सोच लीजिये जहाँ मैं हूँ वहाँ आप हो, और जहाँ आप हैं वहाँ मैं हूँ।' यह निडर और विश्वासपूर्ण उत्तर सुनकर ठाकुर रामसिंहजी साहब बहुत खुश हुए। उन्होंने डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को अपने सीने से लगा लिया और फ़रमाया, 'डॉक्टर साहब, आज से आपके सारे गुनाह माफ़।'

ठाकुर रामसिंहजी साहब के रामगंज, जयपुर के सूफी संत बाबा अल्लाह जिलाय के साथ भी बड़े अच्छे सम्बन्ध थे। हाजी बाबा बगदादी की भी उन दिनों काफ़ी चर्चा थी और हाजी भाई अब्दुल्ला शाह और अहमद शाह ठाकुर रामसिंहजी साहब से उम्र में बड़े होने पर भी, उनका बहुत आदर करते थे और उनका आगे बढ़कर स्वागत करते और अपने साथ अपने आसन पर बिठलाया करते थे। एक बार ठाकुर रामसिंहजी साहब डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को अपने साथ किसी गाँव में सतसंग के लिये ले गये। सतसंग रात भर चलना था। रात 12 बजे करीब डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को नींद आने लगी तो ठाकुर रामसिंहजी साहब ने उन्हें ऊपर छत पर जाकर सो जाने के लिये कहा। लगभग 2 बजे जब उनकी आँख खुली तो उन्होंने देखा ठाकुर रामसिंहजी साहब स्वयं उन्हें चादर ओढाने के लिये ऊपर छत पर आये हुए थे और ठाकुर साहब को ऊपर जाते देख वह संत भी जिनके यहाँ सतसंग हो रहा था उनके पीछे-पीछे चले आये। उन्होंने डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को कहा, 'डॉक्टर साहब आप बहुत भाग्यशाली हैं। ठाकुर साहब आपको इतना प्यार करते हैं कि और सबको नीचे छोड़ वे आपको चादर ओढ़ाने स्वयं ऊपर आये हैं।' इसके बाद उन तीनों का सतसंग ऊपर छत पर ही चलता रहा।

आप किस तरह अपने आश्रितों की रक्षा करते थे इस सम्बन्ध में श्रीमती सुषमा मित्तल (डॉ. चन्द्र गुप्ताजी की सुपुत्री) लिखती हैं:

"सितम्बर, 1972 की घटना है। तब तक गुरु भगवान (ठाकुर रामसिंहजी साहब) समाधि ले चुके थे। मेरे दूसरे पुत्र का जन्म हुआ था और मैं हॉस्पिटल से घर वापस आ गयी थी। उसी दिन शाम को दोनों वक़्त मिलने के समय मुझे बहुत अजीब अहसास हुआ। मेरा कमरा पीछे की तरफ़ था और उसी के दरवाज़े के सामने मकान मालिक के कमरे का दरवाज़ा था, जो बाहर बरामदे से होकर आता था। मुझे लगा की उनके कमरे से निकलकर, एक वृद्ध व्यक्ति, जिसकी लम्बी सफ़ेद दाढ़ी थी और एक दम सफ़ेद कपडे पहने हुआ था और बहुत गोरा था, वो मेरे कमरे में मेरी चारपाई के पास आकर खड़ा हो गया और बोला कि या तो अपने बच्चे को दो या पति को। मैं सब कुछ देखती-सुनती पर मेरी अवस्था जड़ हो जाती और मैं कुछ नहीं कर पाती थी। उसके जाने के बाद मैं फिर सामान्य अवस्था में आ जाती। यह सिलसिला कई रोज चला, मैं कुछ नहीं कर पाती, कोई जवाब ना दे पाती और सोचती यह एक ही सपना, एक ही समय में मैं रोजाना क्यों देखती हूँ, मेरी हालत ऐसी क्यों हो जाती है ? मेरे पास इसका कोई जवाब नहीं था। मैं बहुत परेशान रहने लगी। तभी एक शाम मैंने देखा कि जब वह बूढ़ा व्यक्ति मेरे पास आया और उसने अपना सवाल दोहराया तो उसी वक़्त मेरे और उसके बीच गुरु भगवान स्वयं साक्षात् आकर खड़े हो गए । उन्होंने उससे

कहा-'जा यहाँ से, तुझे कुछ नहीं मिलेगा।' यह सुनते ही वो वहाँ से चला गया। उसके बाद वो मुझे कभी नहीं दिखा। बस उसी क्षण से गुरु भगवान मेरे जीवन में आ गये, उनके प्रति अटूट आस्था दिल में पैदा हो गई। उस बूढ़े व्यक्ति का जिक्र मैंने अपनी मकान मालकिन से किया तो वो तुरंत बोली, मैंने तो इसे मन्त्रों से बंधवाया था, शायद उसका असर समाप्त हो गया है। इसी ने इस घर में आते ही मेरे बेटे की बलि ले ली थी, ना जाने तुम कैसे बच गयी। अब मैं फिर मंत्रोपचार करवाउंगी और उन्होंने करवाया। तब मैंने उन्हें गुरु भगवान के बारे में बताया।"

आप हर वक्त अपने गुरु भगवान की याद और प्रेम में ही मग्न रहा करते थे और फ़रमाया करते थे कि गंवार गोपियों ने उस सर्व-शक्तिमान को अपने प्रेम से ही पाया था। आप ने 14 जनवरी 1971 को महाप्रयाण किया। आपकी समाधि जगतपुरा, जयपुर में है। प्रति वर्ष 14 और 15 जनवरी को वहाँ उर्स (भण्डारा) आयोजित होता है, जिसमें अनेक श्रद्धालु आपकी कृपा प्राप्त करने के लिये हाजिर होते हैं।

आपके कुछ मुख्य: ईर्शाद (उपदेश):

दुनिया में रहें पर निर्लिप्त भाव से, जैसे पानी में रहकर भी मुर्गाबी उड़ते समय बिलकुल खुश्क होती है।

परमात्मा परम-पिता है और कोई पिता अपनी संतान को दुखी नहीं देखना चाहता। हमे सुखी देखने के लिये वह सब कुछ करता है।

परमात्मा भाव के भूखे हैं, वे प्रेम से रीझते हैं। वे नुक्ता-नवाज हैं, न जाने कब किस बात पर रीझ जायें।

जिस तरह स्त्री अपने ससुराल जाकर पति के नाते सबसे नाते-रिश्ते निभाती है, उनकी सेवा करती है, बस इसी तरह हम सारे संसार का सम्बन्ध उससे जोड़ दें, सबमें उसी की अनुभूति करें।

खुश-मिजाजी और जिन्दा-दिली बड़ी दौलत है। ज़िन्दगी जिन्दा-दिली का नाम है, मुर्दा-दिल क्या खाक जिया करते हैं ? हम ईश्वर के अंश हैं, हमारी उदासी से विश्वात्मा को तक्लीफ़ होती है। राज़ी-ब-रजा रहना चाहिये। वह हमारा हित बेहतर जानता है। उसकी मर्जी पर निर्भर हो जाना चाहिये। वह सब तरह हमारी देख-भाल करता है।

सब तरह से सतगुरु के आश्रित हो जाना चाहिये। प्रयत्न और पुरुषार्थ मनुष्य का कर्तव्य है और ईश्वर पर भरोसा रख निश्चिन्त होना समर्पण है।

सारा साधन-भजन केवल इस मन को सुलझाने के लिये है। खुद को उनके हवाले करने की जरुरत है। मन को भी उन्हीं के सुपुर्द कर दो। जीते-जी यह काम हो जाना चाहिये।

अपने ऐब नजर आते रहें, उसकी याद बनी रहे, और दया की प्रार्थना होती रहे, यही पर्याप्त है।

संतोष बहुत बड़ी बात है। हर हाल में उसका शुक्रिया अदा होता रहे। हर बात में उसकी कृपा का एहसास होता रहे।

हँसते रहो, हंसाते रहो; बसते रहो, बसाते रहो ।

यह प्रेम और समर्पण का रास्ता है । मन-मुख से गुरु-मुख हो जाना चाहिये । मन में प्रेम का जज्बा पैदा होने से आत्मिक चढ़ाई आसान हो जाती है । प्रेम का असर अनोखा है, यह सात आसमान चीरकर पहुँच जाता है । सच्चा प्रेम ईश्वरीय गुण है । सतगुरु से प्रेम होने पर हर समय उनकी याद बनी रहती है, उनका ख्याल बना रहता है, बिजली के तार की तरह मन उनसे जुड़ा रहता है और काम आसानी से बन जाता है ।

यदि हम उसकी ओर एक कदम बढ़ाते हैं तो वह सौ कदम आगे आता है । वह परमपिता है, केवल भाव का इच्छुक ।

सुबह-शाम 15-20 मिनट ध्यान में बैठना चाहिये । ध्यान का अर्थ है गुरु-कृपा की ख्वाहिश, उसका इंतज़ार । ख्याल करना चाहिये कि उनके हृदय से कृपा-धार प्रवाहित होकर हमारे रोम-रोम को प्रकाशित कर रही है, उनकी दया-कृपा ने हमे अपने आगोश में ले रखा है । आपा भूल गुरु-रूप, तद्रूप हो जाना चाहिये ।

ध्यान के लिये कोई समय निश्चित कर लें । निश्चित समय ध्यान करने से, उस समय के पहले ही एक किस्म का ध्यान लगने लग जाता है । जब फालतू विचार कम होने लगें तो समझ लेना चाहिये कि तरक्की हो रही है ।

बीती बातों का पछतावा नहीं करना चाहिये । जब दिल में बुरे ख्याल आवें तो ईश्वर या सतगुरु का ख्याल कर लेना चाहिये, वे हट जायेंगे ।

डर का डर नामर्दों को होता है, प्रेम का डर असली डर है ।

यदि ध्यान करते समय कोई विचार आने लगे और हटाये न हटे तो तुरंत आँखे खोल देनी चाहिये और मन ही मन जाप करना चाहिये ।

कभी किसी संत-महात्मा के पास जाएँ तो अपने सतगुरु भगवान को याद रखें, इससे सुरक्षा होती है ।

विश्वास सबसे बड़ी चीज है । यदि दृढ़ विश्वास रखें और सही नियत से अपने कर्तव्य का पालन करते रहें तो परमात्मा स्वयं हमारे योग-क्षेम का ख्याल रखता है ।

भोजन नेक कमाई का ही होना चाहिये । शुद्ध भोजन का असर आत्मा पर भी पड़ता है । भोजन उसकी याद में करना चाहिये । उसकी याद में किया भोजन भजन बन जाता है और उसकी याद में सोना भी भजन बन जाता है ।

गृहस्थ ही पंच तप या पांच धूनी तपना है । दुनियादारी को यथायोग्य निभाना बहुत बड़ी तपस्या है । सबके साथ यथायोग्य व्यवहार ईश्वर की पूजा के समान है ।

जब वह दुश्मनों तक का ख्याल रखता है तो दोस्तों को कैसे महरूम रखेगा ।

कभी गरूर नहीं करना चाहिये, न अच्छे कामों का न अच्छे विचारों का । गरूर से गिरने का अंदेशा रहता है । जो विनम्र है वह सदा कृपा का पात्र बनता है ।

जैसे का विचार करोगे, वैसे ही भाव मन में आ जायेंगे। अत: हमेशा गुरु-भगवान या ईश्वर की याद बनाये रखनी चाहिये। ईश्वर की तरफ़ तवज्जोह होते ही कृपाधार स्वयंमेव बरसने लगती है।

सूफी वह है जो मुहब्बते-इलाही (ईश्वर प्रेम) में डूबा रहे। लेकिन सच्चा प्रेमी प्रेम को छिपाये रखता है, प्रकट नहीं करता। प्रेम में सारी मंजिले अपने-आप तय हो जाती हैं। लेकिन यह भी सही है कि प्रेम कभी छिपाये नहीं छिपता।

यह संसार ईश्वर का बागीचा है और संत इसकी सफाई करने वाले माली। वे गंदगी को हटा, बागीचे में फूलों की महक को स्थापित करने वाले होते हैं।

शरीर से त्याग, त्याग नहीं है, असली त्याग मन से माना जाता है। किसी बात की अति अच्छी नहीँ है। गृहस्थ के सब धर्मों का पालन करते हुये भी मनुष्य परमार्थ कमा सकता है।

सेवा बहुत बड़ी चीज है। जिस पर उसकी कृपा होती है, उसी में सेवा भाव पैदा होता है। संसार की सेवा, प्राणी मात्र की सेवा ही ईश्वर सेवा है।

जिस जगह पर भजन होता है, वहाँ के सब दोष दूर हो जाते हैं।

पहले खुद को बनाओ, फिर परिवार को और बाद में पड़ोसियों को और धीरे-धीरे सबको।

वह जर्रे-जर्रे में मौजूद है, बस विशवास पक्का होने की देर है। मिलने की तलब हो तो वह अपने पास ही है।

साधना का मतलब है बाहर से भीतर जाना, उसी में लय होना। यही जिन्दगी का असली मकसद है।

प्रार्थना करनी चाहिये कि हे प्रभु ! आपकी इच्छा पूर्ण हो, अपनी इच्छानुसार मुझे चला लीजिये और मुझे अपना प्रेम प्रदान कीजिये।

परमतत्व किसी साधन से नहीं मिलता। गुरु कृपा ही एक मात्र साधन है, तभी इसकी अनुभूति होती है। जिसका गुरु से प्रेम हो गया, उस पर परमात्मा प्रसन्न होता है। फिर सभी पर्दे धीरे-धीरे हटने लगते हैं।

परमात्मा कहीं खोया हुआ नहीं है कि उसे ढूंढना हो। उसे अपने से दूर समझना ही सबसे बड़ा भ्रम है। इसी भ्रम को तोडना है। हर वक्त उसे मौजूद जानना और उसकी याद बनी रहना ही साधना है।

'गुरु भगवान फरमाते थे कि जो कुछ भी शास्त्रों में है, संतों के हृदय में मौजूद है, लेकिन जो संतों के हृदय में है, वह शास्त्रों में ढूँढने से भी नहीं मिलता।

समस्त साधना का सार है जैसे भी हो गुरु भगवान से प्रेम अर्थात उनकी याद हर समय बने रहना। और यह याद ऐसे ही है जैसे कोई खजान्ची तिजोरी में चाभी लगी भूल जाये तो फिर वह कहीं भी जाए उसका ध्यान उस चाभी पर ही रहता है, या जैसे माँ बच्चे से कितनी ही दूर चली जाय, कुछ भी करती रहे, उसके मन में बच्चे का ध्यान बना ही रहता है।

सतगुर का स्मरण करने से उनके गुण शिष्य में उतरने लगते हैं, सब तरह सुरक्षा होती है और मन भीतर की ओर मुड़ने लगता है, अंतर्मुखी होने लगता है ।

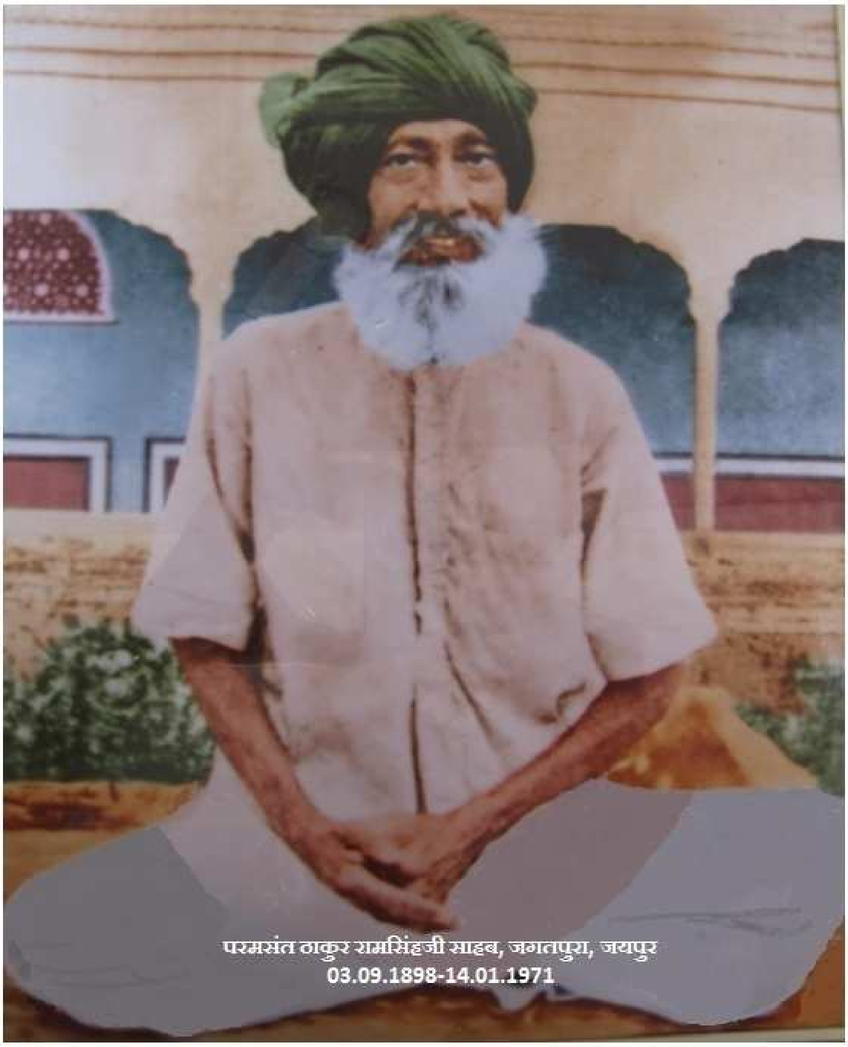

परमसंत ठाकुर रामसिंहजी की समाधि (जगतपुरा, जयपुर)

महात्मा डॉक्टर चन्द्र गुप्ताजी

‘या इलाही ! अता कर अपनी रहमत हम सबको तू,
महात्मा राधा-राम और पीर साहब के लाडले डॉ. चन्द्र गुप्ता के वास्ते’
(नवाज अपनी कृपा से हम सबको तू, हे परमात्मा !,
महात्मा राधा-राम और पीर साहब के लाडले डॉ. चन्द्र गुप्ता के नाम पर)

अपने वक़्त के पूर्ण कामिल सतगुरु महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब ने डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को सन 1958 में अपनी शरण में लेकर और बैअत कर अपना शिष्य स्वीकार किया। डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को हजरत अहमद अली खान साहब के दोनों जानशीन हजरत मौलाना फ़ज्ल अहमद खान साहब एवं हजरत मौलवी अब्दुल गनी खान साहब की निस्बत परमसंत ठाकुर रामसिंहजी साहब एवं महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब की कृपा एवं माध्यम से प्राप्त हुई।

बचपन से ही डॉक्टर चन्द्र गुप्ता का रुझान अध्यात्म की ओर था और वे साधू-संतों की ओर आकर्षित रहते थे। सेवा भाव भी उनमें शुरु से ही था एवं रुग्न या घायल पशु-पक्षियों की देखभाल करना या दवा देना उनके स्वभाव में शामिल था।

डॉक्टर चन्द्र गुप्ता का जन्म 12 फरवरी 1916 को महम, जिला रोहतक, में लाला निरंजन लालजी के घर में हुआ। हालाँकि लाला निरंजन लालजी राजा टोडरमल के वंशज थे पर कालांतर में राज-पाट सब जाता रहा। उनके परिवार को रायबहादुर रायचौधरी कानूनगो की उपाधि मिली हुई थी और उनके पास बहुत जमीन-जायदाद थी लेकिन उचित संरक्षण नहीं मिलने के कारण वह सब अन्य लोगों ने अपने कब्ज़े में ले ली। डॉक्टर चन्द्र गुप्ता की पूज्य माताजी श्रीमती पार्वतीदेवी एक पतिव्रता एवं सती स्त्री थीं। वे हनुमानजी की भक्त थीं और रामायण का पाठ किया करती थीं। उन्हीं के दिए संस्कारों से उनके परिवार में अध्यात्म की यह पावन धारा बहने लगी।

डॉक्टर चन्द्र गुप्ता अपने परिवार के सबसे छोटे पुत्र थे। उनके सबसे बड़े भाई श्री कल्याण चन्दजी स्वयं एक महात्मा पुरुष थे और पूर्व जन्मों से योगसाधना करते आ रहे थे। उन्होंने बहुत ही अल्प आयु में अपना शरीर त्याग दिया। डॉक्टर चन्द्र गुप्ता जब लगभग दो वर्ष के थे, उन्हें श्री कल्याण चन्दजी की गोद में बैठाया गया। श्री कल्याण चन्दजी ने आत्मिक तौर पर उन्हें स्वीकार किया और कहा कि तुम मेरे हो।

डॉक्टर चन्द्र गुप्ता का बचपन कठिन परिस्थितियों में गुजरा। जब वे छोटे ही थे, उनकी माता श्रीमती पार्वतीदेवी का देहांत हो गया और पिता लाला निरंजन लालजी का भी आय का कोई निश्चित साधन नही था, उनकी नौकरी छूटती और जल्दी-जल्दी बदलती रहती थी।

डॉक्टर चन्द्र गुप्ता की शिक्षा मैट्रिक तक हुई । मैट्रिक के बाद उनकी नौकरी बीकानेर में महकमा हिसाब में लग गयी । कालांतर में इस विभाग के अन्य विभागों में बंट जाने पर उनका तबादला ऐ. जी. आफिस, जयपुर हो गया और वे सन 1949 के आसपास जयपुर चले आये और यहीं के हो रहे ।

सन 1926-27 में रोहतक में प्लेग फ़ैल गया था । तब डॉक्टर चन्द्र गुप्ता की उम्र 10-11 वर्ष थी, उन्हें भी प्लेग ने अपनी चपेट में ले लिया । डॉक्टर हर घर में जाकर मरीजों को मुफ्त देख रहे थे । डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को लगभग 105 डिग्री बुखार था । वे बेहोश पड़े थे, बचने की उम्मीद नहीं थी और उनकी माँ व अन्य लोग रो रहे थे । बेहोशी की हालत में उन्हें आभास हुआ की उन्हें पीठ के बल नंगा कर तलवार की धार पर लटकाया हुआ है और बहुत से आदमी लाठी लिये उन्हें मारने को तैयार खड़े हैं । कोई मदद के लिये नहीं है । इतने में कारण शरीर धारी एक संत पधारे, जिनकी शोभा अवर्णनीय थी । उन्होंने उन्हें तलवार पर से उतार दिया और वे सब आदमी भाग गये । वे संत भी अंतर्ध्यान हो गये और अपनी याद डॉक्टर चन्द्र गुप्ता के दिल में हमेशा के लिये छोड़ गये । आँख खुली तो प्लेग से छुटकारा मिल चुका था ।

डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने उन महापुरुष को हनुमानजी मानकर ध्यान करना शुरु कर दिया जो 1958-59 तक चला । बाद में उन महापुरुष द्वारा बताए अनुसार जब गुरु भगवान मिल गये तो उन महापुरुष ने निर्देश देना बंद कर दिया क्योंकि अपनी ड्यूटी उन्होंने महात्मा श्री राधामोहन लालजी एवं ठाकुर रामसिंहजी साहब को सौंप दी थी । इससे पहले वे महापुरुष डॉक्टर चन्द्र गुप्ता की साये की तरह मदद करते रहे ।

बचपन से ही डॉक्टर चन्द्र गुप्ता हनुमानजी के उपासक रहे और कई साधु-संतों के सान्निध्य का आपने लाभ उठाया । महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब से बैअत होने से पहले अध्यात्म मार्ग में उन्हें सरदार सावनसिंहजी और श्री रामसहायजी से सहायता मिली ।

करीब अट्ठारह वर्ष की आयु में (1933-35) डॉक्टर चन्द्र गुप्ता अपनी बड़ी बहन विद्यावती के साथ व्यास (पंजाब में) राधास्वामी पंथ के महापुरुष महात्मा सरदार सावनसिहजी के पास हाज़िर हुए । उन्होंने डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को पांच नाम वाला मंत्र (ज्योति निरंजन, औंकार, रारंकार, सोऽहं, सतनाम) दिया और फ़रमाया कि वे आज्ञा चक्र पर गुरु के रूप का ध्यान करें । डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने अर्ज़ किया कि वे अपना जन्म नाम और रूप के ध्यान में बर्बाद नहीं करना चाहते और उनसे कहा कि अगर दे सकते हैं तो उन्हें अनहद नाद की बख्शीश दें । इस पर सरदार सावनसिहजी चुप हो गये । डॉक्टर चन्द्र गुप्ता कभी-कभी इस मंत्र का जाप करते रहे व उन महापुरुष का जो उन्हें स्वप्न में निर्देश देते थे ध्यान करते रहे । वे पांच नाम वाला मंत्र लोगों को भी बतलाते रहे । अनहद नाद की आवाज़ महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब से बैअत होने के बाद सन 1959 में ठाकुर रामसिंहजी साहब ने उन्हें बख्शी । इसका उल्लेख उन्होंने अपनी डायरी में किया है ।

श्री रामसहायजी रामानुज संप्रदाय के मानने वाले एक समर्पित भक्त थे और उन्होंने आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन किया। वे डॉक्टर चन्द्र गुप्ता के पड़ोस में ही रहते थे और अपना अधिकांश समय वे रामायण पढ़ने में व्यतीत किया करते थे। करीब एक वर्ष तक उन्होंने डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को रामायण सुनाई और उनका विश्वास पक्का करवाया। बाद में डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने भी रामायण पाठ को अपने जीवन का एक अनिवार्य अंग बना लिया। उन्होंने अपनी डायरी में लिखा है कि कई वर्षो बाद बुढ़ापे में उन्होंने संत तुलसीदास हाथरस वालों की इलाहाबाद से छपी घट रामायण पढ़ी और अनेक वाक्यात उनके गुरु भगवान की कृपा से उनके जीवन में आसानी से गुजरे।

जयपुर में शुरुआती दिनों में वे बाबा हरिश्चंद्र मार्ग पर रहते थे। वहाँ से बाहर निकलकर चांदपोल की तरफ़ जाने वाले मार्ग पर हनुमानजी का एक मंदिर है। आते-जाते डॉक्टर चन्द्र गुप्ता नित्य-प्रति हनुमानजी को नमन करते। फलस्वरूप उन्हें एक सिद्धि प्राप्त हुई, उन्हें अगले दिन सट्टे में खुलने वाले नंबर का पता चल जाता था। इसका अहसास होने पर उन्होंने हनुमानजी से प्रार्थना की कि वे उस सिद्धि को उनसे वापस ले लें और उन्हें अपने सच्चे प्रेम से नवाजें। उसी दिन से उनकी यह सिद्धि जाती रही।

नक्शबंदी सूफी सिलसिले में ऐसे कई उदहारण मिलते हैं जब उपयुक्त साधकों को एक से अधिक शैखों द्वारा ज्ञान प्राप्त हुआ। गुरु-शिष्य सम्बन्ध की तुलना बहुत हद तक पति-पत्नी के रिश्ते से की जा सकती है। जिस तरह पत्नी के लिये पति उसका सर्वस्व होता है, उसी तरह शिष्य के लिये उसका गुरु उसका सर्वेसर्वा होता है। फिर भी यह सत्य है कि जिस तरह पति के रिश्ते के कारण ही अन्य नाते-रिश्तेदार उसकी पत्नी को अपना स्नेह और आशीर्वाद देते हैं, ठीक उसी तरह बुज़ुर्गान-ऐ-सिलसिला व अन्य संतजन अपने गुरु पर पूर्णत: आश्रित शिष्य पर उसके गुरु की निस्बत (आत्मिक सम्बन्ध) के कारण, अपनी कृपा की वर्षा करते हैं। यह सब गुरु कृपा का ही दूसरा रूप है।

इस बात में कोई संदेह नहीं की शिष्य के लिये गुरु के प्रति एकनिष्ठ होना ही एकमात्र साधन है। शिष्य की गुरु के प्रति एकनिष्ठा उसे अन्य संत-महात्माओं का भी कृपापात्र बना देती है। ऐसा ही कुछ डॉक्टर चन्द्र गुप्ता के साथ घटित हुआ। वे महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब से बैअत हुए थे लेकिन उन्हें परमसंत ठाकुर रामसिंहजी की पूर्ण कृपा भी प्राप्त हुई जिसे उनके गुरु महाराज महात्मा श्री राधामोहन लालजी ने बिरादराना-सुलूक का नाम दिया और ठाकुर रामसिंहजी के माध्यम से हजरत अब्दुल रहीम साहब उर्फ़ मौलवी साहब के भी वे कृपापात्र बने।

डॉक्टर चन्द्र गुप्ता का सौभाग्य अपने चरम पर सन 1958 में पहुँचा जब दिसम्बर माह में महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब ने उन्हें महात्मा श्री हरनारायण सक्सेना साहब के घर पर बैअत कर सिलसिला-ऐ-आलिया नक्शबंदिया में दाखिल किया। इस सिलसिले से उनका परिचय जयपुर में महात्मा डॉ. चतुर्भुज सहायजी साहब के एक शिष्य श्री सागरचन्दजी वकील साहब के माध्यम से हुआ। महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब आसानी से किसी

को बैअत नहीं करते थे । जब डॉक्टर चन्द्र गुप्ता उनसे मिलने के लिये श्री हरनारायण सक्सेना साहब के घर जा रहे थे, महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब ने अपने पास बैठे सतसंगी भाइयों से कहा था कि आज मेरी चीज मेरे पास आ रही है, देखना मेरी क्या दुर्गति होती है । वहाँ पहुंचकर डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने उनसे उन्हें अपना शिष्य बनाने की प्रार्थना की । महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब ने फ़रमाया कि वे किसी को अपना शिष्य नहीं बनाते । उस वक़्त वे नीचे फर्श पर विराजमान थे । वे उठने लगे तो डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने उन्हें उठने नहीं दिया और कहा कि जब तक वे उन्हें अपना शिष्य बनाना स्वीकार नहीं करते, वे वहाँ से उठकर नहीं जा सकते । महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब ने फ़रमाया ठीक है पर शिष्य बनना महंगा सौदा है । शिष्य बनना है तो कल मेरे लिये रेशमी कपडे, मिठाई वगरह लेकर आना तब मैं तुम्हें अपना शिष्य स्वीकार करूँगा । डॉक्टर चन्द्र गुप्ता अपनी पत्नी से सलाह लेने घर की ओर चल पड़े । वे महीने के आखिरी दिन थे । घर में पैसों की तंगी थी । उनकी धर्मपत्नी ने उस सब सामान की व्यवस्था होने में असमर्थता जताई और बोलीं कि अगर सच्चे संत होंगे तो आपको चार आने की रेवड़ी में ही शिष्य बना लेंगे । डॉक्टर चन्द्र गुप्ता अगले दिन महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब के पास हाज़िर हुए और निवेदन किया कि वे उन्हें अगली बार शिष्य बनाने की कृपा करे । कारण पूछने पर उन्होंने सच बात बता दी कि पैसों का इंतजाम नहीं हो पा रहा । यह सुनकर महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब मुस्कुराए और फ़रमाया ‘पहले तुम मुझे अपना बनाने के लिये कहते हो और फिर भूल जाने के लिये कह रहे हो । यह नहीं हो सकता । मुझे कुछ नहीं चाहिये । मैं केवल प्रेम चाहता हूँ । जाओ और चार आने की रेवड़ी प्रसाद के लिये ले आओ । मैं तुम्हारे लिये ही कानपुर से यहाँ आया हूँ ।’ डॉक्टर चन्द्र गुप्ता की खुशी का ठिकाना ना था । वे तुरंत जाकर प्रसाद और फूल माला लेकर वापिस हाज़िर हुए और उसी दिन महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब का शिष्य बनने का सौभाग्य उन्हें मिला ।

शिष्य रूप में स्वीकार होते ही महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब से डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को दो आशीर्वाद मिले । पहला कि दस वर्ष की मुसीबत एक वर्ष में कट जाये और दूसरा यह कि दिमाग का संतुलन कभी ना बिगड़े (हमेशा मन की शांति बनी रहे) । फिर दो-तीन साल बाद फ़रमाया कि तुम (डॉक्टर चन्द्र गुप्ता) बुज़ुर्ग हो, सेवा मत करो, सेवा लो । यही बात परमसंत ठाकुर रामसिंहजी ने कायम रखी । डॉक्टर चन्द्र गुप्ता उन्हें पानी पिलाने के लिये उठने ही वाले थे कि आपने वही शब्द दोहराए कि डॉक्टर साहब आप बुज़ुर्ग हैं, सेवा मत करो, सेवा लो ।

डॉक्टर चन्द्र गुप्ता महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब की सेवा में कुछ ही दफ़ा हाज़िर हो सके क्योंकि महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब का निवास कानपुर में था और डॉक्टर चन्द्र गुप्ता जयपुर में रहते थे । ऐसे ही एक मौके पर महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब ने आशीर्वाद दिया की उनकी भक्ति दिन-रात बढ़े ।

जयपुर में डॉक्टर चन्द्र गुप्ता के घर के पास ही इंग्लिश व फ्रेंच के शिक्षक श्री गोपालजी मास्टर साहब रहते थे जो डॉक्टर चन्द्र गुप्ता की बड़ी सुपुत्री पुष्पलता एवं बड़े सुपुत्र कृष्ण कुमार को पढ़ाया करते थे । वे एक अच्छे ज्योतिषी भी थे । उन्होंने उन्हें बताया की तुम्हारे पिता डॉक्टर चन्द्र गुप्ता के हाथ में मारकेश रेखा है और वे अधिक दिनों तक जीवित नहीं रहेंगे । इसी समय के आसपास महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब ने डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को कानपुर बुलाया और भंडारे में शामिल होने को लिखा । पैसों की कमी होने के कारण डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुए पत्र लिखा । उत्तर में महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब ने डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को एक कड़ा पत्र भेजा जिसमें लिखा था 'आपने भंडारे में शामिल होने की मज़बूरी जाहिर की है । वजह यह बताई है कि कुछ कर्जा है जो मार्च तक अदा हो जायेगा । वाकई हम लोग इस कदर बचत करने वाले हैं कि जब वक़्त और रुपयों की जरुरत होती है तो धार्मिक कार्यों को बंद कर देतें हैं । हम दुनियादार वाकई दुनिया के कामों को सबसे ज्यादा अहमियत देतें हैं और इसी में खुश रहतें हैं । ख़ुदा बचाए हमें ऐसे शैतान के धोखे से और अपनी सही राह पर चलाये । आतंरिक भंडारा एक बहुत बड़ी नियामत है, यदि जिन्दा रूह की मौज़ूदगी में किया जाय तो ईश्वर की कई गुना मेहरबानियाँ उस पर होतीं हैं । ऐसे मौके पर जो फायदा होता है वो दूसरे वक़्त में नहीं हो सकता । हमने असलियत की खबर आपको दे दी, जैसा मुनासिब हो वैसा करें ।' यह पत्र मिलने पर डॉक्टर चन्द्र गुप्ता पैसों का इंतजाम कर कानपुर भंडारे में शामिल हुए । रास्ते में जिस बस से वे जा रहे थे उसका एक्सीडेंट हो गया लेकिन किसी को चोट नहीं लगी । जब वे कानपुर पहुँचे उनके सिर मे तेज दर्द हो रहा था । वे सीधे महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब के सामने हाजिर हुए । वे उस समय नाश्ता कर रहे थे । अपने नाश्ते की प्लेट से ही उन्होंने कुछ डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को खाने के लिये दिया और नाश्ते के बाद आराम करने की आज्ञा दी । सतसंग में शामिल ना होने के लिये और खाने में उस दिन बनी उड़द की दाल ना खाने को कहा । शाम तक डॉक्टर चन्द्र गुप्ता बिल्कुल स्वस्थ हो गये । वे कानपुर दो-तीन दिन रुके । वापस लौटने पर उनके जीवन पर छाए खतरे का समय बीत चुका था । गुरु कृपा से इसके बाद भी कई वर्षों तक वे सकुशल जीवित रहे । यह गुरु कृपा का एक ऐसा उदहारण है, जो बताता है कि पुर्ण गुरु की कृपा से मृत्यु भी उनके शिष्य का कुछ नहीं बिगाड़ सकती एवं गुरु के आदेश के बिना मृत्यु भी उसे अपने साथ नहीं ले जा सकती ।

सन 1959 में वे परमसंत ठाकुर रामसिंहजी की कृपा के पात्र बने । डॉक्टर चन्द्र गुप्ता का संपर्क श्री सागरचन्दजी वकील साहब जो महात्मा श्री चतुर्भुज सहायजी के शिष्य थे से था और वे उनके यहाँ सतसंग में भी जाया करते थे । डॉक्टर चन्द्र गुप्ता उन दिनों होमियोपैथी दवाखाना चलाया करते थे । यूँ तो वे ऐ. जी. ऑफिस में कार्य करते थे पर ऑफिस से इज़ाज़त लेकर वे लोगों को दवा भी दिया करते थे । एक शाम वे श्री सागरचन्दजी वकील साहब के साथ अपने दवाखाने में बैठे हुए थे कि तभी अचानक ठाकुर रामसिंहजी साहब वहाँ आ पहुँचे और फ़रमाया 'डॉक्टर साहब, डॉक्टर तो बहुत मिल जाते हैं पर मरीज नहीं मिलता

।' श्री सागरचन्दजी ठाकुर रामसिंहजी साहब का तात्पर्य समझ गये । इन शब्दों का अर्थ था की सच्चे जिज्ञासुओं को संत लोग स्वयं खोजकर उनकी सहायता करते हैं । ठाकुर रामसिंहजी साहब भी स्वयं इसी उद्धेश्य से डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को आमंत्रित करने आये थे । श्री सागरचन्दजी ने डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को बताया कि ठाकुर साहब आपको निमंत्रण देकर गए हैं ।

हालाँकि डॉक्टर चन्द्र गुप्ता महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब के दीक्षित शिष्य थे लेकिन ठाकुर रामसिंहजी साहब स्वयं उन्हें बुलाने आये थे । अध्यात्म के उच्च शिखरों पर संतजन अपने-पराये में भेद नहीं करते, वे तो उचित पात्रों को स्वयं खोजकर उन्हें अपनी कृपा रुपी अमृत धार से सींचने के लिये तत्पर रहतें हैं । डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने इस बारे में अपनी डायरी में लिखा है कि-'इसके (बैअत होने के) 5-6 माह बाद ठाकुर रामसिंहजी ने मुंशी भाईसाहब की इज़ाज़त से अपनी शरण में ले लिया ।' महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब ने ठाकुर रामसिंहजी के पास पत्र भेजा जिसमें लिखा था की यही बिरादराना सलूक है और इसे आगे भी निभाइए । उन्होंने यह भी लिखा कि डॉक्टर चन्द्र गुप्ता के लिये दोनों दर खुले रहेंगे । ठाकुर रामसिंहजी साहब ने पत्र को सीने से लगाया और डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को फ़रमाया कि 'यू आर माय ब्लड नाउ' (अबसे आप मेरा ही खून हैं) और ध्यान कराना शुरु कर दिया । महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब ने ठाकुर रामसिंहजी साहब के सम्बन्ध में अपने एक पत्र में लिखा है-'श्री कुंवर रामसिंहजी भक्त हैं । हमारे बड़े महापुरुषों में बैठे हुए हैं । उनकी सेवा का लाभ उठाये हुए हैं । आपका ह्रदय हर वक़्त परमात्मा के प्रकाश से लबालब भरा रहता है । पत्र व्यवहार अधिक नहीं है पर ख्याल बना रहता है । खूब गौर कर लीजिये । प्रेम कभी छिपाए नहीं रहता है ।'

डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ठाकुर रामसिंहजी साहब के पास रोजाना हाज़िर होने लगे और उनका यह नियम बन गया कि ऑफिस से लौटकर खाना खाकर वे ठाकुर रामसिंहजी साहब के पास सिटी पैलेस पहुँच जाते । घर गृहस्थी की सब जिम्मेदारी उन्होंने अपनी धर्मपत्नी श्रीमती दर्शना देवी पर छोड़ ही रखी थी । उनके पास एक पुरानी साइकिल थी उसी से वे ऑफिस जाते थे और उसी से सिटी पैलेस भी । पुरानी होने के कारण साइकिल कुछ आवाज़ करती थी और साइकिल की यही आवाज़ उनके पहचान वालों में उनके आने का संकेत बन गयी थी ।

ठाकुर रामसिंहजी साहब का घर जगतपुरा, सांगानेर में था जो जयपुर से करीब 10-12 किलोमीटर दूर है लेकिन वे अक्सर सिटी पैलेस में ही निवास करते थे । वहाँ उनके ज्येष्ठ सुपुत्र श्री हरिसिंहजी को जयपुर राज्य की तरफ़ से रहने के लिये स्थान मिला हुआ था, ठाकुर रामसिंहजी साहब उसी में रहते ताकि डॉक्टर चन्द्र गुप्ता और उनकी तरह अन्य साधक उनके सतसंग का लाभ ले संके । यह संतों का स्वयं कष्ट सहकर भक्तों पर कृपा करने का एक अनुपम उदहारण है ।

जयपुर में ही मौलवी हिदायत अली खान साहब नक्शबंदी सूफी परम्परा के एक बड़े संत हुए हैं । उनके सुपौत्र मौलवी अब्दुल रहीम साहब (पीर साहब, मौलवी साहब) भी इसी परम्परा

के एक महान सूफी संत हुए जो ठाकुर रामसिंहजी साहब के समकालीन थे और देश विदेश में लोग उन्हें बहुत आदर की दृष्टी से देखते थे। ठाकुर रामसिंहजी साहब ने एक दफ़ा डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को उनके दर्शन कर आने को कहा। डॉक्टर चन्द्र गुप्ता तब बाबा हरिश्चंद्र मार्ग पर रहते थे और मौलवी अब्दुल रहीम साहब नजदीक ही खेजडे वालों के रास्ते में रहते थे। डॉक्टर चन्द्र गुप्ता उनके पास हाज़िर हुए, दुआ-सलाम हुई और उन्होंने यह कहते हुए कि उनके गुरु महाराज ने उनके (मौलवी अब्दुल रहीम साहब) के दर्शन की आज्ञा दी थी तुरंत लौटने की इज़ाज़त चाही। उस दिन उन दोनों के बीच कोई विशेष बात नहीं हुई और डॉक्टर चन्द्र गुप्ता मौलवी साहब के दर्शन कर वापस लौट आए।

कुछ दिनों बाद डॉक्टर चन्द्र गुप्ता खेजडे वालों के रास्ते से गुजर रहे थे कि सामने से मौलवी साहब आते दिखाई दिए। मौलवी साहब डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को अपने साथ अपने घर लिवा ले गये और पूछा कि आज आपके गुरु महाराज की क्या आज्ञा है ? डॉक्टर चन्द्र गुप्ता अपने गुरु महाराज की आज्ञा पालन करने में बहुत सावधान रहते थे और उसका दृढ़ता से पालन करते थे। पहली दफ़ा उनके गुरु महाराज ने उन्हें मौलवी साहब के दर्शन मात्र की आज्ञा दी थी और डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने उसका पालन कर दर्शन के तुरंत बाद लौटने की आज्ञा चाही थी। इस बार ऐसी कोई आज्ञा नहीं थी अत: डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने मौलवी साहब से निवेदन किया कि आज उनके गुरु महाराज की तरफ़ से कोई निर्देश नहीं है। मौलवी साहब ने फ़रमाया 'मांगो, क्या मांगते हो?' डॉक्टर चन्द्र गुप्ता कुछ ना बोले, चुप रहे। वे अपने गुरु महाराज के सिवाय किसी अन्य से कुछ नहीं चाहते थे। मौलवी साहब ने फिर दोबारा कहा 'मांगो, क्या मांगते हो?' इस बार भी डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने जवाब नहीं दिया। तब मौलवी साहब ने तीसरी बार वही शब्द दोहराए। संत-मत में किसी संत द्वारा तीन दफ़ा पूछने पर भी उत्तर ना देना बेअदबी समझा जाता है। जब मौलवी साहब ने तीसरी बार भी वही प्रश्न दोहराया तो डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने प्रतिप्रश्न किया, 'क्या आप मुझे जो मांगूंगा देंगे ?' मौलवी साहब ने फ़रमाया, 'आज आसमान जमीन पर आ सकता है, मांगो, क्या मांगते हो ?' डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने उनसे दो मिनट का समय माँगा, अपने गुरु महाराज को याद किया और मौलवी साहब से निवेदन किया, 'यदि आप मुझे देना ही चाहते हैं तो मुझे अपने गुरु का प्रेम बख्शें।' यह उत्तर सुनकर मौलवी साहब बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को अपने सीने से लगाकर कहा, 'आज से मैं भी तुम्हारा गुरु हूँ।' मौलवी साहब ने केवल डॉक्टर चन्द्र गुप्ता पर ही नहीं वरन उनके पूरे परिवार पर भी अपनी कृपावृष्टि की। अन्य सतसंगियों को भी जिन्हें डॉक्टर चन्द्र गुप्ता मौलवी साहब के पास ले गये, मौलवी साहब ने अपनी कृपा से धन्य किया।

डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने अपनी डायरी में लिखा है कि ठाकुर रामसिंहजी साहब ने 'उस रोज से (महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब का पत्र मिलने के दिन से) मुझे विशेष तवज्जोह देना शुरु कर दिया। पहले मुझको मुंशी भाईसाहब (कानपुर वालों का घर का नाम) में लय करवाया और कहते थे कि तुम मुंशी भाईसाहब बन गये। बाद में कानपुर पत्र लिखकर मुझे

इज़ाज़त दिलवाई । फिर बाद में 1970 में हुक्म फ़रमाया जो काम मेरे मरने के बाद करना है सो अब करो ।' डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने अपनी डायरी में यह भी लिखा है कि मुझे महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब ने जो हद-बेहद के दर्जे को पार किये हुए थे और बड़े जलाली थे बाकायदा बैअत करके ठाकुर रामसिंहजी साहब के जेरे साया रखा । ठाकुर रामसिंहजी साहब शांति के अवतार थे । आपने मेरा कल्ब जाकिर किया और बड़ा कष्ट उठाकर इल्लत-जिल्लत-किल्लत के महीन मरहलों से मुझे पार कराया । मैं ज्यादातर जलाल की हालत में रहा, जिस की वजह से मैं बदनाम भी रहा । आपने अपनी जिन्दगी में हजरत अब्दुल रहीम साहब जयपुरी की खिदमत में रखा । आप ने मेरी बड़ी मदद की और गुरु पर विश्वास पक्का कराया और समझाया कि गुरु की असल खिदमत यह है कि जैसे तुम्हारा कल्ब जाकिर हुआ, उसी तरह औरों का भी कल्ब जाकिर करके तालिब को अपने गुरु के हवाले कर दो और खुद पर्दे में रहो । सिद्धियों से बचो और खुद तक्लीफ़ उठाकर दूसरों को राहत पहुँचाओ । दिखावे से बचो ।

डॉक्टर चन्द्र गुप्ता की एक बहुत बड़ी विशेषता थी उनकी सपष्टवादिता, निडरता और बुजुर्गों का दिल से अदब । एक बार ठाकुर रामसिंहजी साहब को टायफ़ायड हो गया । जब डॉक्टर चन्द्र गुप्ता सिटी पैलेस पहुँचे तो उनके एक सतसंगी श्री चिरंजीलालजी जिन्होंने उनकी बहुत सेवा की, ठाकुर रामसिंहजी साहब के लिये रोटियां बना रहे थे । डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने तुरंत वे सभी रोटियां उठाकर फेंक दी । ठाकुर रामसिंहजी साहब बोले डॉक्टर साहब यह क्या कर रहे हो ? डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने उत्तर दिया-'इस वक़्त मैं आपका डॉक्टर हूँ । आप रोटी नहीं खा सकते ।' ठाकुर रामसिंहजी साहब चुप हो गये ।

ठाकुर रामसिंहजी साहब के सबसे छोटे सुपुत्र श्री विष्णुसिंहजी जो गृहस्थ थे, उन्होंने विवाह के कुछ वर्षों बाद अपनी पत्नी और बच्चों को छोड़ नाथ संप्रदाय स्वीकार कर लिया । गेरुँआ वस्त्र पहन और कानों में नाथ संप्रदाय के प्रतीक कुंडल पहन वे अपने गुरूजी के साथ जंगल में रहने लगे । उनके परिवार की दुर्दशा देख, डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को उनका यह आचरण अत्यंत अनुचित लगा । एक दिन वे उनके आश्रम जा पहुँचे । उन्होंने विष्णुसिंहजी के गुरु महाराज से उन्हें (विष्णुसिंहजी) को वापस अपने परिवार के पास लौट जाने को कहने के लिये कहा लेकिन उनके गुरूजी इसके लिये नहीं माने । बहुत कहने-सुनने पर भी जब विष्णुसिंहजी वापस लौटने को तैयार नहीं हुए तो डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने उनके कानों के कुंडल तोड़ डाले और उन्हें जबरन अपने साथ ले आने लगे । यह सब देख विष्णुसिंहजी के गुरुजी बोले, 'डॉक्टर साहब, क्या आप जानते हैं आपने क्या पाप किया है ? कुंडल तोड़ना शिवलिंग को तोड़ने के समान है । आपको मालूम है शिवजी कौन हैं ? डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने कहा, 'हाँ, मुझे मालूम है शिवजी कौन हैं, मैं ही शिव हूँ ।' विष्णुसिंहजी के गुरुजी ने पूछा क्या आपको मालूम है ब्रह्माजी कौन हैं ? डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने कहा, 'हाँ, मुझे मालूम है ब्रह्माजी कौन हैं, मैं ही ब्रह्मा हूँ ।' यह क्रम इसी तरह चलता रहा । विष्णुसिंहजी के गुरुजी विभिन्न देवी-देवताओं के नाम लेते रहे और डॉक्टर चन्द्र गुप्ता कहते रहे की वे सब देवी-देवता वे ही हैं ।

अंत में विष्णुसिंहजी के गुरुजी ने हाथ में जल लेकर श्राप दिया, 'डॉक्टर साहब, आप सात दिन में मर जायेंगे ।' सब बातों से बेपरवाह डॉक्टर चन्द्र गुप्ता विष्णुसिंहजी को अपने साथ वापस लिवा लाये और शाम को हमेशा की तरह ठाकुर रामसिंहजी साहब के दरबार में हाज़िर हो सब घटना उन्हें कह सुनाइ । श्राप देने की बात सुनकर ठाकुर रामसिंहजी साहब ने फ़रमाया, 'बस, इतनी सी बात पर श्राप दे दिया । यह भी नहीं देखा कि ये तो मस्त हैं ?' सात दिनों में डॉक्टर चन्द्र गुप्ता का तो कुछ नहीं बिगड़ा पर सातवें दिन विष्णुसिंहजी के गुरुजी स्वयं परलोक सिधार गये । कुछ वर्षों बाद विष्णुसिंहजी पुन: नाथ संप्रदाय में लौट गये ।

एक बार ठाकुर रामसिंहजी साहब के पास सिटी पैलेस में एक सतसंगी साहब ने उनके द्वारा लिखी पुस्तक की एक प्रति भेजी । शाम को जब डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ठाकुर रामसिंहजी साहब के पास हाज़िर हुए तो डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने उस पुस्तक को उलट-पुलटकर देखा और वापस रख दिया । ठाकुर रामसिंहजी साहब ने पूछा डॉक्टर साहब क्या देखा ? डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने उत्तर दिया 'लिखने वाला हराम की औलाद है ।' कुछ और लोग भी सतसंग के लिये आये हुए थे । डॉक्टर चन्द्र गुप्ता का ऐसा कथन सुनकर वे लोग हैरान रह गये । ठाकुर रामसिंहजी साहब तो कुछ ना बोले, लेकिन एक सतसंगी ने पूछ लिया, डॉक्टर साहब, आप ऐसा कैसे कह सकते हैं । डॉक्टर साहब ने कहा, 'लिखने वाले ने किताब में कहीं भी अपने गुरु महाराज का न नाम लिखा न उनका जिक्र किया, इसलिए वो हराम की औलाद है । डॉक्टर चन्द्र गुप्ता के गुरु महाराज स्वयं न कहकर अपनी बात उनके मुहं से कहलवा दिया करते थे । वह किताब इस सिलसिला-ऐ-आलिया में स्वीकृत नहीं हुई ।

टी. बी. हो जाने के कारण ठाकुर रामसिंहजी साहब टी. बी. सनेटोरियम के कोटेज वार्ड में भरती थे । उनके प्रिय सतसंगी श्री गोवर्धनलालजी एवं श्री चिरंजीलालजी उनकी सेवा-टहल किया करते थे । ठाकुर रामसिंहजी साहब उनकी सेवा से बहुत खुश थे । रोज की तरह एक दिन डॉक्टर चन्द्र गुप्ता अपनी साइकिल पर टी. बी. सनेटोरियम पहुँचे । ठाकुर रामसिंहजी साहब कोटेज के चबूतरे पर एक कुर्सी पर बैठे दातुन कर रहे थे, श्री चिरंजीलाल पास ही पानी का लौटा हाथ में लिये खड़े थे । डॉक्टर चन्द्र गुप्ता चबूतरे के नीचे ही रुक गये । ठाकुर रामसिंहजी साहब ने फ़रमाया-'पधारो ।' डॉक्टर चन्द्र गुप्ता निश्चल खड़े रहे । उन्होंने फिर फ़रमाया-'पधारो ।' डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने अर्ज किया-'महाराज, राजस्थानी में पधारो के दो अर्थ हैं (आने को भी पधारो कहा जाता है और जाने को भी), मैं नहीं समझा आपका क्या हुक्म है ? ठाकुर रामसिंहजी साहब एक क्षण चुप रहे फिर बोले-'डॉक्टर साहब, पधारो ।' इस पर डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने एक शेर पढ़ा-

'जेरे दिवार खड़ा हूँ, तेरा क्या लेता हूँ,
देख लेता हूँ तपिश दिल की बुझा लेता हूँ'

शेर सुनते ही ठाकुर रामसिंहजी साहब ठठाकर हंस पड़े, उनका बांया हाथ श्री चिरंजिलालजी के सीने पर लगा और वे पास ही के खम्बे से टकरा गये । ठाकुर रामसिंहजी साहब हंसी में

लोट-पोट हो गये। फिर खुश होकर फ़रमाया-'डॉक्टर साहब के आने से रोम-रोम खिल जाता है, यह खूबी इन्हीं में है।'

एक बार डॉक्टर चन्द्र गुप्ता अपनी धर्मपत्नी श्रीमती दर्शना देवी के साथ सिटी पैलेस पधारे। रास्ते में उन्होंने कुछ केले और दो संतरे ख़रीदे। वे रिक्शा में जा रहे थे। गर्मी के कारण प्यास लगने पर एक संतरा उन्होंने रास्ते में ही खा लिया। बाकी फल सिटी पैलेस पहुंचकर अन्दर कोठरी में रख दिए। थोड़ी देर बाद ठाकुर रामसिंहजी साहब ने श्री चिरंजिलालजी से कहा कि वे केले बांट दें। वे उठे और केले व संतरा बाँटने के लिये उठा लिये। डॉक्टर चन्द्र गुप्ता उन्हें टोकते हुए बोले-'चिरंजिलालजी महाराज ने केवल केले बाँटने के लिये हुक्म फ़रमाया है, संतरा नहीं।' ठाकुर रामसिंहजी साहब यह सुनकर बोले-'मुझे तो इनका झूठा भी खाना पड़ेगा। मेरा तो सारा खून ही डॉक्टर साहब का है, यदि इन्होनें एक बूँद भी मांग लिया तो मैं कहाँ से दूंगा?'

एक बार ठाकुर रामसिंहजी साहब के एक परिचित कर्नल केसरी सिंह जो एक जाने-माने शिकारी थे और बहुत से शेरों का शिकार कर चुके थे, जिनका वे बहुत आदर करते थे, गंभीर रूप से बीमार हो गये। आपको टी. बी. सनेटोरियम में दिखाया गया। आपको टी. बी. हो गयी थी, मालूम चलने पर आप बेहोश होगये और लकवा मार गया। महारानी गायत्री देवी के कहने पर आपको सवाई मानसिंह हॉस्पिटल, जयपुर में भरती कराया गया। ऑक्सीजन दी जा रही थी, बचने की उम्मीद कम थी। ठाकुर रामसिंहजी डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को साथ लेकर उन्हें देखने हॉस्पिटल गये। वहाँ पहुंचकर ठाकुर रामसिंहजी ने डॉक्टर साहब को बाहर ही रुकने को कहा और स्वयं भीतर चले गये। कुछ देर बाद वे बाहर आये और डॉक्टर चन्द्र गुप्ता से कहा, 'डॉक्टर साहब, मैंने उन्हें देख लिया है। आप उन्हें दवा दे दें। देखना चाहें तो देख लें।' डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने कहा, 'महाराज, जब आपने उन्हें देख लिया है तो मुझे अब उन्हें देखने की जरुरत नहीं है।' डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने अपने गुरुदेव की आज्ञानुसार घर आकर उन्हें कुछ दवा दे दी। पहली ही खुराक में उन्हें होश आगया और वे स्वस्थ होने लगे। यह घटना एक तरफ़ तो ठाकुर रामसिंहजी की विनम्रता और निराभिमानता का उदहारण है जिसमें वे अपनी कृपा को छिपाकर सारा श्रेय डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को दे रहे थे, वहीँ दूसरी ओर यह डॉक्टर चन्द्र गुप्ता का अपने गुरु भगवान के शब्दों पर अटूट विश्वास का भी एक अनुपम उदहारण है। ठाकुर रामसिंहजी के शब्द थे, 'डॉक्टर साहब, मैंने उन्हें देख लिया है। आप उन्हें दवा दे दें। देखना चाहें तो देख लें।' उनके गुरु महाराज ने मरीज को देख लिया था और डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को उन्हें दवा मात्र देनी थी। डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने यही किया, जो दवा समझ में आई दे दी। अपने गुरु महाराज के हुक्म का पालन किया। उनके लिये स्वयं मरीज को देखने का कोई प्रश्न ही नहीं था।

ठाकुर रामसिंहजी साहब ने डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को फ़रमाया-'डॉक्टर साहब, जयपुर में बसों और बसाओ।' सन 1973 में डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने सेठी कॉलोनी में अपना मकान बनवाया और उसमें रहने लगे, रविवार को सतसंग कराने लगे और धीरे-धीरे उनके परिवार के अन्य

सदस्य और सतसंगी भाई-बहन भी जयपुर में स्थायी रूप से बस गये । अपने अंतिम दिनों में ठाकुर रामसिंहजी साहब ने फ़रमाया था, 'डॉक्टर साहब, आप मेरा खून हो । जो कुछ भी आपको बड़े घर से (महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब से) दिलवाना था, दिलवा दिया । जो कुछ भी मुझे देना था, दे दिया । अब सतसंग का काम आप देखें ।'

पूर्ण आचार्य पदवी और इज़ाज़त-ताम्मा के बारे में उन्होंने अपनी डायरी में लिखा है, 'इस अरसे में बहुत ही आफतों से गुजारा गया, जो बयान से बाहर है । 31.03.80 को मैं भाईसाहब हरनारायणजी के साथ कानपुर गया । 01.04.80 को भाईसाहब सत्येंद्रनाथजी जो महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब के सुपुत्र एवं जानशीन (खलीफ़ा-उत्तराधिकारी) हैं की खिदमत में गया । आपने ध्यान कराया व 02.04.80 को समाधि पर ले जाकर मुंशी भाईसाहब (महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब) के आदेश पर 'गुलाम' (डॉक्टर चन्द्र गुप्ता) को इज़ाज़त-ताम्मा (सम्पूर्ण आचार्य पदवी) बख्शी और हुक्म फ़रमाया हमारे खानदान की तरफ़ से पूर्ण आचार्य पदवी दी गई । दूसरी दुनिया में इंशा-अल्लाह हम साथ-साथ एक तख़्त पर बैठेंगे । गुलाम को अपने बराबर दर्जा सिर्फ गुरु ही बख्शता है । मेरी यह इच्छा है गुलामी के पट्टे की लाज आप ही हैं और आप ही दया करेंगे । जो भी मेरे पास आवे आप कुबूल फरमावें और उस का दिल जाकिर करके अपना जैसा बना लेवें और गुलाम के अच्छे व बुरे कर्म आप के अर्पण । सारी लाज आपकी व खानदान के महापुरुषों की है ।'

यहाँ यह लिखना भी अप्रासंगिक नहीं होगा की महात्मा श्री रवीन्द्र नाथजी (महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब के ज्येष्ठतम सुपुत्र) ने अपनी पुस्तक 'अध्यात्म मार्ग' में डॉक्टर चन्द्र गुप्ता का नाम महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब के प्रमुख शिष्यों में लिखा है और यह भी लिखा है कि जो भी लोग लालाजी साहब, चच्चाजी साहब व उनके सुपुत्रों के सतसंग में लम्बे समय तक लगन व निष्ठापूर्वक अपने गुरुजनों से संपर्क बनाये रक्खे, वे अंत में अध्यात्म विद्या में प्राय: पूर्ण होकर ही निकले ।

डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने अपनी डायरी में लिखा है कि ठाकुर रामसिंहजी साहब के आदेशानुसार यह सिलसिला उनके बाद श्री कृष्ण कुमार गुप्ता (उनके बड़े सुपुत्र) को जायेगा और इस परिवार में लगभग तीन पीढ़ियों तक रहेगा । उनके जीवन में ठाकुर रामसिंहजी साहब के स्थान के बारे में डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने अपनी डायरी में लिखा है कि 'वे (ठाकुर रामसिंहजी साहब) मेरे (डॉक्टर चन्द्र गुप्ता) फाइनल गुरु भगवान हैं' और 'सब संतों को मेरे गुरु भगवान ठाकुर रामसिंहजी साहब के हमशक्ल मानता हूँ ।'

डॉक्टर चन्द्र गुप्ता अपने गुरुजनों की धरोहर को मुक्त हस्त से योग्य पात्रों में ता-उम्र बांटते रहे । साधारण गृहस्थ का जीवन यापन करते, अपनी होमियोपैथी दवाइयों के रूप में वे अपने गुरु भगवान का प्रसाद ही बांटते थे । उनके पास आने वाले अनेक आर्त, अर्थार्थी एवं जिज्ञासु जिनका जरा भी संस्कार या झुकाव अध्यात्म की तरफ़ रहा, वे डॉक्टर साहब के हो रहे और डॉक्टर साहब उनके हो रहे ।

डॉक्टर चन्द्र गुप्ता किस तरह प्यार से सतसंगियों को ढालते थे, इसका उदहारण इस बात से मिलता है कि उनके एक अत्यंत प्रिय सतसंगी किमाम का पान खाते थे । डॉक्टर चन्द्र गुप्ता अक्सर उनके साथ, उनके स्कूटर पर बैठ आदरणीय पीर साहब के यहाँ जाया करते थे । ऐसे ही एक मौके पर उन सतसंगी भाई ने किमाम का पान जो वे हर वक़्त अपने साथ रखते थे निकाल कर खाना चाहा । डॉक्टर चन्द्र गुप्ता बोले-'यह क्या है ? मुझे भी दो ।' उन्होंने कहा, बाउजी ((महात्मा डॉ. चन्द्र गुप्ताजी)) यह आपके मतलब का नहीं है । इस पर डॉक्टर चन्द्र गुप्ता बोले-'अगर ये मेरे मतलब का नहीं है, तो तुम्हारे मतलब का कैसे हो सकता है ?' सतसंगी भाई ने तुरंत वे पान के बीड़े फेंक दिए और उस दिन से उनकी वह किमाम का पान खाने की आदत जाती रही । बाद में उन्होंने इन सतसंगी भाई को आदरणीय पीर साहब से उनकी सेवा व प्रेम से प्रसन्न होकर इज़ाज़त भी दिलवाई यह कहकर कि मैं इन्हें चाहता हूँ अत: आप इन्हें इज़ाज़त बख्शें ।

डॉक्टर चन्द्र गुप्ता के लिये उनके गुरु महाराज से इतर और कोई अन्य भगवान नहीं थे, उन्होंने अपने गुरु में ही परमात्मा के दर्शन किये । उन्होंने अपने पत्र दिनांक 27.09.88 में अपने पुत्र राजेन्द्र को लिखा था, 'देयर इज नो अनादर गॉड फॉर मी एक्सेप्ट माय गुरु भगवान' (मेरे लिये मेरे गुरु भगवान के अतिरिक्त कोई और भगवान नहीं है) ।

वे अपने सतगुरु में 17.08.91 को पूर्णतया लीन हो गये । इस बात का आभास उनकी सुपुत्री श्रीमती सुषमा मित्तल एवं उनके पुत्र राजेन्द्र को भी हो गया था । श्रीमती सुषमा मित्तल के शब्दों में-'अगस्त 1991 के दूसरे सप्ताह की बात है । सुबह के करीब चार बजे थे, मैं गहरी नींद में थी । तभी मैंने एक सपना देखा । सपने में मैंने देखा कि एक बहुत बड़ा आँगन था । एक तरफ़ सफ़ेद चमकदार रंग से पुता बहुत बड़ा सा संगमरमर का कमरा और उसकी छत से नीचे उतरती सीढियाँ । मैं सीढियों से नीचे उतर रही हूँ और नीचे आँगन में एक शव रखा है, सफ़ेद वस्त्र से ढ़का हुआ । वो वस्त्र ऐसा था जिससे सफ़ेद किरणें सी निकल रहीं थी और सीढियों की ओर पीठ व शव की ओर मुहं किये हुए सतगुरु महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब और बहुत से अन्य संत जिनके शरीर प्रकाशवान थे एक लाइन में बैठे थे और उन्हीं के साथ माँ और बाउजी (डॉक्टर चन्द्र गुप्ता) भी बैठे थे । मैंने नीचे आकर बाउजी से पूछा कि ये किसका शव है? बाउजी ने कहा कि मैं ही हूँ । मैंने कहा कि लेकिन आप तो यहाँ हैं और मेरी नींद खुल गई । मैं दोपहर में बाउजी से मिलने गई, मन बहुत बेचैन था । बाउजी मुझे घर पर ही मिल गये और बोले बेचैनी क्यों? तुमने भी देख लिया । मैं सन्न रह गई बोली नहीं ये सच नहीं हो सकता । बाउजी बोले तुम्हारी माँ ने मुझे सीमा की शादी का काम सौंपा था, मेरा काम पूरा हो गया और मुस्कुरा दिए । दूसरी बातें करने लगे । इस प्रकार उन्होंने हमें पहले ही आभास करा दिया था लेकिन मुझे फिर भी यकीन नहीं था कि ऐसा होगा । 4-5 दिन के बाद ही बाउजी नहीं रहे ।'

कुछ इसी तरह का आभास उनके पुत्र राजेन्द्र को भी हुआ । अपनी धर्मपत्नी की मृत्यु के बाद डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने भी यह संसार छोड़ने का मन बना लिया था । वे अपनी धर्मपत्नी

के लिये कहा करते थे की वे केवल उनकी जीवनसंगिनी ही नहीं थी बल्कि उनके अध्यात्मिक सफ़र में भी उनकी बराबर की साथी थीं । मार्च 1990 में जब उनकी धर्मपत्नी के फूल हरिद्वार ले जाये जा रहे थे तो वे भी हरिद्वार जाना चाहते थे । उनका स्वास्थ्य और अन्य बातों को ध्यान में रखकर उन्हें हरिद्वार जाने से रोका गया । तब उन्होंने इस प्रकार की बात कही जिससे लगा कि वे यह संसार तुरंत ही छोड़ देना चाहतें हैं । राजेन्द्र के साथ यह बहस चल रही थी कि उसने कहा-'आप जिन गुरु महाराज के शिष्य हैं, मैं भी उन्हीं का शिष्य हूँ । आप अपनी मर्जी से नहीं जा सकते ।' बात आई-गई हो गयी । उसके बाद करीब डेढ़ वर्ष गुजरा । उनके पुत्र राजेन्द्र के शब्दों में-'15 अगस्त को छुट्टी थी । मैं अपने मायापुरी के सरकारी फ्लैट में दीवान पर लेट रहा था । शाम का सा वक़्त था । मेरी आँख लग गयी और स्वपन में मैंने बाउजी की उम्र गिन डाली कि उनका 76 वा वर्ष चल रहा है । गुरु महाराज तो 73 वर्ष की आयु में ही चले गये थे, अब उन्हें भी चले जाना चाहिये और मन में जो अवरोध था वो मिट गया । तुरंत उठकर बाउजी से टेलीफोन पर बात की, सब ठीक था, लेकिन उसी रात फोन पर उनके ब्रेन हमरेज़ की सूचना मिली और रात को डेढ़ बजे हम जयपुर के लिये निकल पड़े । दो दिन बाउजी हॉस्पिटल में रहे और 17 अगस्त को आप गुरु भगवान में लीन हो गये । इन दोनों दिन बाउजी का ख्याल आते ही महात्मा श्री राधामोहन लालजी साहब का ख्याल आने लगता ।'

डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने स्वयं अपनी डायरी में 09.08.91 को लिखा है-'आज सुबह 5 बजे स्वप्न में गुरु भगवान व श्री हरनारायण सक्सेनाजी एक दरिया में बैठे दिखाई दिए । पानी बहुत कम और साफ था । गुरु भगवान ने आज पूर्ण सतसंग की इज़ाज़त बख्शी । दर्शना भी बैठी थी । किताब पूर्ण का भी हुक्म फ़रमाया और और भी बख्शिशें बख्शीं । मैंने दोनों के चरण छुऐ, हुक्म फ़रमाया आइन्दा किसी के पाँव ना छूना ।'

डॉक्टर चन्द्र गुप्ता की समाधि उन्हीं के निवास सी-47, सेठी नगर, जयपुर में बनी है । प्रति वर्ष 17 अगस्त को वहाँ भंडारा होता है और प्रत्येक रविवार को सुबह सतसंग होता है ।

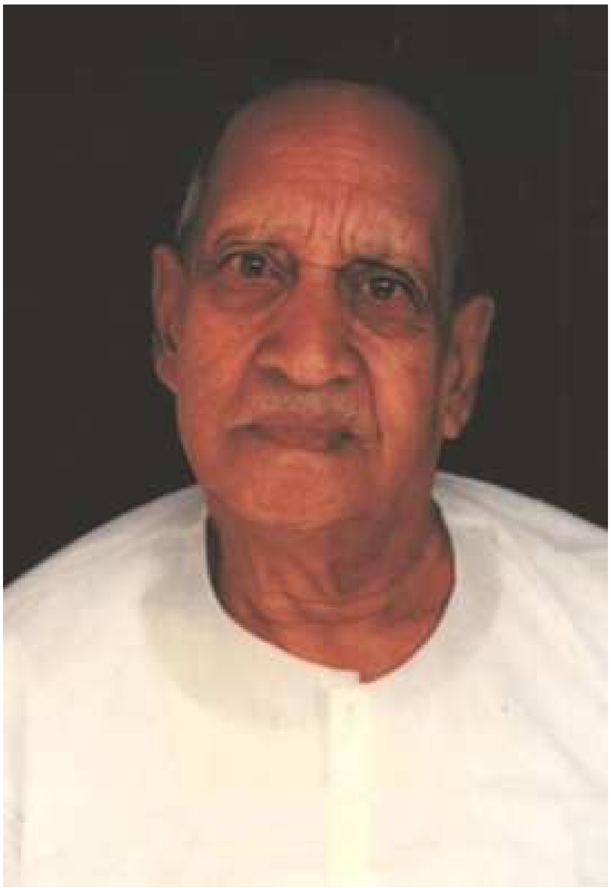

महात्मा डॉ. चन्द्र गुप्ताजी (1916-1991)

महात्मा डॉ. चन्द्र गुप्ताजी की समाधि (जयपुर)

महात्मा डॉ. चन्द्र गुप्ता एवं श्रीमती दर्शन देवी परमसंत ठाकुर रामसिंहजी की समाधि पर

महात्मा श्री कृष्ण कुमार गुप्ताजी

'एक तू और तेरी याद, तेरी ही चर्चा हो सदा,
'या इलाही ! हजरत अब्दुल जलील और श्री कृष्ण कुमार के वास्ते'
(तेरी ही याद और तेरी चर्चा होती रहे सदा, हे परमात्मा !,
हजरत अब्दुल जलील और श्री कृष्ण कुमार के नाम पर)

डॉक्टर चन्द्र गुप्ता हर रविवार सुबह अपने घर पर सतसंग कराते थे। बहुत से सतसंगी भाई-बहन सतसंग के लिये पधारते। वैसे तो उनका दरवाजा हमेशा खुला ही रहता था और सतसंगी भाई-बहन जब चाहें, जिस वक़्त चाहें, बेरोक-टोक उनके पास आ सकते थे। सतसंग के लिये उन्होंने कभी किसी को किसी भी वक़्त मना नहीं किया और प्रसन्न मन से सबको अपने प्रेम और सेवा से निहाल किया। उनके बाद सतसंग उनके सबसे बड़े सुपुत्र महात्मा श्री कृष्ण कुमार गुप्ता (भाईसाहब) ने उन्हीं की तरह सम्भाला और आगे बढ़ाया। डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को ठाकुर रामसिंहजी साहब की ओर से यह निर्देश मिल गया था कि उनके बाद उनका ताज श्री कृष्ण कुमार गुप्ता को जायेगा और इस परिवार में लगभग तीन पीढ़ियों तक रहेगा।

यहाँ यह कहना अप्रासंगिक नहीं होगा की डॉक्टर चन्द्र गुप्ता के यहाँ श्री कृष्ण कुमार से पहले दो और पुत्र हुए थे, राजकुमार एवं रामकुमार। इन दोनों पुत्रों की मृत्यु दो माह के होने पर हो गयी, डॉक्टर चन्द्र गुप्ता से धर्मराज उन्हें मांगकर ले गये। डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को उनके द्वारा यह बता दिया गया था कि एक साल बाद उनका भाई डॉक्टर चन्द्र गुप्ता के यहाँ जन्म लेगा और उनके पास रहेगा, उसके माथे पर तिलक होगा और उसका नाम कृष्ण कुमार होगा। तदानुसार 9 जुलाई 1943 को उनके यहाँ श्री कृष्ण कुमार का जन्म हुआ। जन्म के समय उनके माथे पर तिलक का निशान दिखता था।

सन 1970 में डॉक्टर चन्द्र गुप्ता को स्वपन में निर्देश मिला की ठाकुर रामसिंहजी साहब का सतसंग भाईसाहब श्री नारायणसिंहजी (ठाकुर रामसिंहजी साहब के सुपुत्र) और कृष्ण कुमार चलायेंगे। सतसंग दो टुकड़ो में बंट जायेगा। हुआ भी ऐसा ही। ठाकुर रामसिंहजी साहब के समाधि-स्थल पर भंडारा श्री नारायणसिंहजी 14-15 जनवरी को करने लगे और डॉक्टर चन्द्र गुप्ता के यहाँ 13 जनवरी को भंडारा होने लगा, जो बाद में 15 जनवरी को होने लगा।

श्री कृष्ण कुमार गुप्ता को ठाकुर रामसिंहजी साहब का सतसंग लाभ उठाने का अच्छा सुअवसर प्राप्त हुआ। वे सिटी पैलेस में उनके पास हाज़िर होते। कभी-कभी तो वे बाबा हरिश्चंद्र मार्ग वाले तिमंजिले मकान के नीचे आकर बैठ जाते। उस मकान में नीचे दो गौखे

(बैठने के लिये स्थान) बने हुए थे। वे वहाँ जाकर बैठ जाते और अपने गुरु महाराज ठाकुर रामसिंहजी साहब को याद करते। अक्सर ठाकुर रामसिंहजी साहब आ पधारते और अपनी कृपावृष्टि करते। एक बार श्री कृष्ण कुमार गुप्ता ने ठाकुर रामसिंहजी साहब से विनती की कि वे उन्हें अपने जैसा बना दें। ठाकुर रामसिंहजी साहब ने विनती कुबूल की और फ़रमाया- 'गुरु भगवान आपको अपना जैसा बनाएँ।'

एक बार उन्होंने किसी बात पर गुरु महाराज से कहा कि उनके साथ ऐसा क्यों हो रहा है तो ठाकुर रामसिंहजी साहब ने फ़रमाया-'किशन बाबू, ये तो जन्म-जन्म के संस्कार हैं, चाहे हंसकर इस जन्म में भुगत लो, या जन्म-जन्म भुगतते रहो।' एक बार श्री कृष्ण कुमार गुप्ता ठाकुर रामसिंहजी साहब के घर जगतपुरा गये हुए थे। शाम होने पर उन्होंने ठाकुर रामसिंहजी साहब से वापस लौटने की इज़ाज़त चाही लेकिन उन्होंने उन्हें रुकने के लिये कहा। एक बार फिर पूछने पर भी आपने उन्हें रुकने के लिये कहा। जब श्री कृष्ण कुमार गुप्ता ने तीसरी बार इज़ाज़त चाही तो ठाकुर रामसिंहजी साहब ने फ़रमाया-'रुक जाते तो अच्छा था।' श्री कृष्ण कुमार गुप्ता साइकिल पर वापस आ रहे थे कि रास्ते में उनके होंठ पर ततैये ने कट लिया और उनका मुँह सूज गया। अगले दिन सिटी पैलेस में जब वे ठाकुर रामसिंहजी साहब के सामने हाज़िर हुए तो उन्होंने फ़रमाया 'अच्छा हुआ।' श्री कृष्ण कुमार गुप्ता ने कहा महाराज मुझे ततैये ने काट लिया, मुँह सूज गया और आप अच्छा कह रहें हैं तो ठाकुर रामसिंहजी साहब ने फ़रमाया-'किशन बाबू, ना जाने ट्रक से टक्कर हो जाती, अंग-भंग हो जाता, गुरु भगवान का शुक्र है।' समर्थ गुरु इसी तरह सूली की सजा शूल (कांटे) में ही भुगतवा देतें हैं।

श्री कृष्ण कुमार गुप्ता को ठाकुर रामसिंहजी साहब का ही नहीं वरन मौलवी अब्दुल रहीम साहब और महात्मा श्री अब्दुल जलील खान साहब (हजरत मौलवी अब्दुल गनी खान साहब के सुपौत्र और महात्मा श्री राधा मोहन लालजी साहब के खलीफ़ा) के सान्निध्य का भी अवसर मिला। महात्मा श्री अब्दुल जलील खान साहब स्वयं डॉक्टर चन्द्र गुप्ता के घर पधारे थे और उन्होंने वहाँ श्री कृष्ण कुमार गुप्ता को बैअत किया। श्री कृष्ण कुमार गुप्ता के यह कहने पर की वे ठाकुर रामसिंहजी साहब के शिष्य हैं, उन्होंने यह फरमाते हुए की 'वे (ठाकुर रामसिंहजी साहब) इस खानदान के आफताब हैं, और मैं तो बस एक चिराग हूँ,' श्री कृष्ण कुमार को बैअत कर अपना जानशीन बनाया। सन 1985 में मौलवी अब्दुल रहीम साहब ने श्री कृष्ण कुमार गुप्ता को ठाकुर रामसिंहजी साहब की तरफ़ से सम्पूर्ण शक्ति प्रदान की। डॉक्टर चन्द्र गुप्ता ने अपनी डायरी में लिखा है कि-'15 साल बाद कृष्ण कुमार पीर साहब (मौलवी अब्दुल रहीम साहब) के हुक्म से और भाईसाहब नारायणसिंहजी माताजी के हुक्म से काम कर रहें हैं।'

डॉक्टर चन्द्र गुप्ता के सन 1991 में पर्दा कर जाने के बाद से श्री कृष्ण कुमार गुप्ता ने सन 2005 तक अपनी जिम्मेदारी को बखूबी निभाया। उन्हें महात्मा श्री राधा मोहन लालजी

साहब (डॉक्टर चन्द्र गुप्ता की ओर से), ठाकुर रामसिंहजी साहब और महात्मा श्री अब्दुल जलील खान साहब तीनों की खिलाफत प्राप्त हुई ।

श्री कृष्ण कुमार गुप्ता को बहरूपिये वाला यह दृष्टांत बहुत प्रिय था । एक राजा के दरबार में एक बहरूपिया था जो तरह-तरह के स्वांग रचकर राजा और दरबारियों का मन बहलाया करता था । राजा जो इनाम दे देता उससे उसका गुजर-बसर होता । एक बार वह एक सन्यासी का रूप धरकर राजा के दरबार में आया और एक सन्यासी की तरह राजा को उसने उपदेश भी दिया । प्रसन्न होकर राजा ने उसे बहुत इनाम दिया लेकिन उसने उसे हाथ तक भी नहीं लगाया और राजा को आशीर्वाद देकर दरबार से चला गया । अगले दिन वह दरबार में हाज़िर हुआ और प्रणाम कर राजा से इनाम मांगने लगा । राजा को बहुत आश्चर्य हुआ और उससे पूछा कि कल तो तुम इतना सब इनाम बिना लिये चले गये थे और आज इनाम मांग रहे हो । बहरूपिये ने उत्तर दिया-'महाराज, कल में सन्यासी के रूप में था । सन्यासी के लिये वो सब बेकार था । आज मैं वही बहरूपिया हूँ ।' इसका सार यही है कि इन्सान को जो भी चरित्र वह अदा कर रहा है उसकी मर्यादा का पूर्ण रूप से पालन करना चाहिये । जब वह सतसंग में ईश्वर के सामने हाज़िर हो तो उसे दुनियावी ख्यालों को भुलाकर ईश्वर की याद में मग्न हो जाना चाहिये । जनाब चच्चाजी साहब (महात्मा रघुवर दयालजी) भी फ़रमाया करते थे-'झुट्ठल खेले सच्चल होवे, सच्चल खेले बिरला होवे ।' अर्थार्थ परमात्मा को सच्चे मन से चाहने वाला तो कोई बिरला ही होता है लेकिन झूठ-मूठ में भी उसे याद करने वाले को वह परमात्मा अपनी भक्ति बख्श देता है और उसके नाटक को सच कर दिखाता है ।

महात्मा श्री कृष्ण कुमार गुप्ता (भाईसाहब) के सम्बन्ध में उनके एक सतसंगी ने लिखा है:

भाईसाहब के मुख पर हमेशा एक तेज चमकता रहता था;

वह बड़े प्रेमी स्वभाव के थे;

किसी की गलती का आभास किसी और को नहीं होने देते थे;

यदि किसी से गलती हो जाय तो सबके सामने लज्जित नहीं करते थे, परन्तु अकेले में उसे समझा देते थे;

वे किसी की कमी या मुसीबत को तुरंत दूर कर देते थे;

भाईसाहब में कभी 'मैं' वाली बात नहीं आई;

किसी के ऊपर कोई घटना घटी या घटने वाली है उसका आभास उन्हें तुरंत हो जाता;

अपने परिवार और सतसंगियों के बीच कभी कोई फ़र्क़ नहीं किया;

सतसंगियों से हुई गलती को वे उदाहरण देकर समझाते थे;

बात को पूरी तरह सुनकर अपना मत व्यक्त करते थे; और

उनमें त्याग की भावना प्रबल थी ।

एक अन्य सतसंगी भाई ने लिखा है कि भाईसाहब इन बांतों को बार-बार कहा करते थे:

मानव में मानवता आ जाये;

खूंटा मजबूत होना चाहिये अर्थात सतगुरु के प्रति विशवास और समर्पण पक्का होना चाहिये ;

सब (अर्थात सम्पूर्ण गुरु-परंपरा) एक ही माला के मनियें हैं;

चौबीस घंटे ध्यान होना चाहिये, क्या मालूम कब गुरु भगवान तवज्जोह दे रहें हों; और

यह प्रेम-मार्ग है । प्रेम में सब बांतें समा जातीं हैं । जहाँ प्रेम है, वहाँ नियम टूट जातें हैं ।

महात्मा श्री कृष्ण कुमार गुप्ता के जीवन से जुड़े कुछ संस्मरण उनके सतसंगियों की ही जबानी यहाँ दिए जा रहे हैं ।

- 19 अप्रैल 1979 को मेरा अजमेर में आर. पी. एस. सी. का इंटरव्यू था । मैं उसके पहले कभी अजमेर नहीं गया था । इसलिए मैं 18 अप्रैल को ही अजमेर जाना चाह रहा था । पिताजी और अम्मा घर पर नहीं थे । बड़े भाईसाहब (श्री कृष्ण कुमार) घर पर थे । उन्होंने कहा कि अभी नहीं, कल सुबह जाना । मैं मान गया क्योंकि मुझे लगता था कि मैं बिलकुल अनुभवहीन हूँ, और देने को मेरे पास पैसा भी नहीं था, तो वैसे ही मेरा सिलेक्शन नहीं होना । अगले दिन भाईसाहब मुझे बस स्टैंड छोड़ने गये । टिकट विंडो पर लम्बी लाइन लगी थी और साथ ही बस में सीट भी घेरनी पड़ती थी । मुझसे आगे एक बुज़ुर्ग खड़े थे । उन्हें भी अजमेर जाना था । वो बोले तुम सीट घेर लो, मैं टिकट लेता हूँ । मैंने बस में सीट घेर ली, वे टिकट ले आये । रास्ते में कुछ बांतें होने लगी । मैंने बतलाया कि मैं आर. पी. एस. सी. इंटरव्यू देने जा रहा हूँ । उन्होंने बताया की मैं डॉक्टर एस. एन. गौड़, सी. एम. एच. ओ., बांसवाडा हूँ और मैं भी आर. पी. एस. सी., अजमेर किसी काम से जा रहा हूँ । रास्ते में उन्होंने मुझसे कुछ सवाल पूछे । मैंने जवाब दिए और उन्होंने कुछ सुधार करवाए ।

हम सुबह 8 बजे अजमेर पहुँच गये । वो मुझे अपने साथ अपने एक रिश्तेदार के घर ले गये । वहाँ हमने नाश्ता किया । डॉक्टर गौड़ बोले मुझे भी आर. पी. एस. सी. में काम है, सो हम साथ चलेंगे । आर. पी. एस. सी. बिल्डिंग के गेट पर पहुँचकर बोले, 'देखो आज मैं भी एक एक्सपर्ट की तरह आया हूँ । अगर तुम्हारा नंबर मेरे बैच में आ गया तो कोई दिक्कत नहीं, वर्ना मैं तुम्हारी सिफ़ारिश कर दूंगा ।' मेरा नंबर उन्हीं के बैच में था और उन्होंने वो बस में पूछे हुए सवाल ही पूछ लिये और मुझे सेलेक्ट कर लिया । यह सब पिताजी और भाईसाहब के आशीर्वाद से ही हुआ था । रिजल्ट आने पर भाईसाहब ने कहा कि तूने मेरे पाँव गुरु महाराज समझकर छूए थे । इसलिए तेरा सिलेक्शन होना ही था, जबकि डॉक्टर गौड़ ने जिन्दगी में किसी की मदद नहीं की थी ।

- नवम्बर 2000 में सुनीता का हिस्टरक्टोमी करवाना था क्योंकि उसे बहुत ब्लीडिंग होती थी । सुनीता को एक पंडित ने, जिसने उसकी जन्मपत्री भी बनाई थी कहा कि आपके दो ऑपरेशन होंगे और दूसरे ऑपरेशन में आप नहीं बचोगी । इस वजह से सुनीता को ऑपरेशन करवाने में बहुत उलझन लग रही थी । ऑपरेशन करवाना बहुत जरुरी हो गया था

। मैंने बड़े भाईसाहब (श्री कृष्ण कुमार) को कहा कि अगर आप जिम्मेदारी लो तो मैं उसका ऑपरेशन करवाऊंगा । भाईसाहब ने हाँ कह दी । ऑपरेट करते हुए डॉक्टर को बहुत दिक्कत हुई । सुनीता के टिश्यू इतने हार्ड थे कि उन्हें हेक्सा ब्लेड से काटना पड़ा था । इसी दौरान उसे करीब 10 मिनट तक कार्डियक अरेस्ट हो गया, जबकि 2 मिनट के कार्डियक अरेस्ट के बाद ही मृत्यु हो जाती है । सुनीता बिलकुल सही-सलामत रही । भाईसाहब ने बताया कि सुनीता की आत्मा तो शरीर छोड़कर बाहर आ गयी थी पर मैंने उसको वापस शरीर में भेजा । सुनीता को भी 10 मिनट के कार्डियक अरेस्ट के टाइम के अलावा पूरी सर्जेरी का हाल मालूम था कि उसके साथ क्या-क्या हुआ ।

- गोयल साहब को कैंसर हो गया था । एक बार तो ठीक हो गये, परन्तु पुन: एडवांस्ड स्टेज में कैंसर पहुँच गया । भाईसाहब भाभीजी के साथ हॉस्पिटल देखने आये और बताया प्रार्थना अस्वीकार हो गई है । गोयल साहब ने 12 दिसम्बर 2003 को प्रात: 4 बजे प्राण छोड़े और आत्मरूप से सीधे सेठी कॉलोनी भाईसाहब के पास पहुँचे । भाईसाहब ने बताया कि उन्होंने उनके शरीर से काला सा आदमी अलग किया और उनकी आत्मा को गुरु भगवान के सुपुर्द किया ।

सब सम्बन्धियों को लगता था कि मैं यह आघात सहन नहीं कर पाउंगी । यही बात भाईसाहब ने बाद में मुझे बताई कि आप शरीर छोड़ जाती, इसलिए हमें आपके दिल को कठोर करना पड़ा । वस्तुत: मेरी स्थिति बिलकुल शांत और स्थिर सी हो गई थी । भाईसाहब ने मुझे गीता पाठ करने को कहा था । मेरी माताजी शोकमग्न होतीं तो मैं उन्हें भी सांत्वना देती ।

एक दिन ध्यान में मैंने गोयल साहब को बहुत आतुर होकर पुकारा और कहा कि आप कहाँ हो, कृपया मुझे बताइये । मुझे स्वप्न में दिखाई दिया कि कोई पर्वतीय क्षेत्र जैसा स्थान है जहाँ बहुत से संत ध्यान में लीन हैं, वहीं गोयल साहब भी ध्यान लगाये बैठे दिखलाई दिए । मुझे भाईसाहब की बात स्मरण हो आई कि उन्होंने गोयल साहब को गुरु भगवान को सुपुर्द कर दिया है । मेरे मन को बहुत शांति प्राप्त हुई ।

- एक बार हम स्कूटर से सतसंग के लिये आ रहे थे कि रास्ते में मुझे दौरा पड़ गया लेकिन गुरु कृपा से स्कूटर सही दिशा में जाकर दीवार के सहारे खड़ा हो गया और हम सुरक्षित बच गये । जब गुरूजी (भाईसाहब) के पास पंहुचें तो उन्होंने हमें डांटकर कहा कि मैं कब तक बचाता रहूँगा? स्कूटर चलाना बंद करो, और यहाँ स्कूटर पर कभी नहीं आना । थोड़े दिनों बाद मैंने स्कूटर बेच दिया ।

- मेरठ में मेरे बैंक मेनेजर के साथ एक ग्राहक ने मार-पीट कर दी । मुझे गवाह बनाया गया । नाराज ग्राहक ने मुझे परेशान करने के लिये पुलिस में झूठी शिकायत कर दी । पूछताछ के लिये मुझे बार-बार थाने बुलाया जाने लगा । परेशान होकर थाने में ही मैंने मन ही मन भाईसाहब से प्रार्थना कर कहा कि ऐसे कब तक चलेगा? उस दिन के बाद उस मामले में मुझसे फिर कोई पूछताछ नहीं हुई ।

- मेरी बहन की शादी 9 मई 1993 को मोतीडून्गरी रोड पर थी । बारात आने के कुछ देर बाद ही आंधी-तूफ़ान आना शुरु हो गया । भाईसाहब शादी में पधारे और बोले आप तो अपना काम करते रहो और मैं तो चलता हूँ । इतना भारी तूफ़ान व बारिश आई कि आसपास दो-चार किलोमीटर में जो शादियाँ हो रहीं थीं कहीं पर टेंट उखड़ गये, कहीं पर लाइट चली गई, कहीं खाना ख़राब हो गया । लेकिन मेरे यहाँ गुरु कृपा से बिना किसी परेशानी के शादी का कार्यक्रम पूरा हो गया जब कि विवाह स्थल के बाहर एक बड़ा भारी नीम का पेड़ जड़ सहित उखड़ गया ।
- 16 सितम्बर 1997 की रात ढाई बजे की बात है । मैं चिकनी मिट्टी व ईंटों से बने अपने पुराने कमरे में सो रहा था । मुझे कमरे की टीन शेड पर बिल्लियों के लड़ने की सी आवाज़ आई । मेरी नींद खुल गई और मैंने सोचा कि उठकर बिल्लियों को भगा दूं । मैंने दरवाजे की कुण्डी पूरी खोली भी नहीं थी कि कमरे के उपर दादावाडी जैन मंदिर की पत्थरों से बनी 40 फिट लम्बी और 25 फिट ऊंची दीवार गिर पड़ी । मैं कमरे के भीतर ही था और ऊपर आसमान दिखाई दे रहा था । मेरी पत्नी और छोटा बेटा जो कमरे में ही दूसरे पलंग पर सो रहे थे, उस दीवार के मलबे के नीचे दब गये । मलबा इतना ज्यादा और भारी था कि 10-20 आदमी जो इकठ्ठे हुए मिलकर हटा नहीं सके । बहुत आवाज़ लगाईं पर कोई जवाब नहीं मिला और ना ही कोई रोने-चिल्लाने की आवाज़ आ रही थी । सब ने सोचा कि वे दोनों दब कर मर गये होंगे । मैंने लोगों से कहा कि इस साइड से मलबा हटाकर उन्हें निकालने की कोशिश करो । उस तरफ़ से उनको निकाला तो वे दोनों ऐसे निकले मानो कुछ हुआ ही नहीं हो । उनकी हड्डी टूटना तो दूर, खरोंच भी नहीं आई । दूसरे दिन भाईसहाब को आकर बताया तो वे बोले आपका मृत्यु योग था लेकिन गुरु भगवान की कृपा है कि आप बच गये ।
- हमारे पुरखों की आपसी लड़ाई व लापरवाही के कारण हम हमारी जमीन का मुक़दमा बिना पैरवी, सुप्रीम कोर्ट से एक-तरफ़ा हार गये । सन 1998 में कोर्ट के आदेश से पुलिस और जीती हुई पार्टी के साथ मजिस्ट्रेट अचानक से खाली जमीन का कब्ज़ा लेने आ पंहुचा । हमारे पास मकान खाली करने के अलावा कोई उपाय नहीं था । सभी परिवारवालों की आँखों में आंसू थे और डर के मारे सब के हाथ पाँव काँप रहे थे । हमें लग रहा था हमारा सामान बाहर फेंक दिया जायेगा और हमसे जबरन घर खाली करवा लिया जायेगा । पूरे समाज में बदनामी होगी और हम सामान लेकर कहाँ जायेंगे? मैंने बाउजी (महात्मा डॉ. चन्द्र गुप्ताजी) व भाईसाहब से मन ही मन प्रार्थना की कि अब क्या होगा? मजिस्ट्रेट व पुलिस वाले घर में घुसकर खड़े हो गये । 10-15 मिनट तक वे खड़े रहे फिर अचानक ऐसा चमत्कार हुआ कि मजिस्ट्रेट पुलिस फोर्स को लेकर बिना कार्यवाही किये वापस लौट गया । हम बिना परेशानी अभी भी वहीँ रह रहें हैं ।
- मेरे छोटे भाई की बेटी की शादी सन 2007 में हुई थी । शादी का लावणा बांटते समय उसकी सास मोटर साइकिल से उछलकर गिर गई, जिससे सिर में चोट लगने से वो कोमा में चली गई । बांगड़ हॉस्पिटल में इलाज करवाया परन्तु उन्होंने 10-15 दिन बाद छुट्टी

दे दी कि ना जाने इन्हें कब होश आएगा, घर ले जाकर सेवा करो । लड़की के ससुराल वालों ने लड़की को मनहूस मानना शुरु कर दिया और उसे ताने देने लगे । मैंने समाधि (बाउजी, अम्मा व भाईसाहब की समाधि जो सेठी कॉलोनी में है) पर आकर प्रार्थना की व भाभीजी को सब बांतें बताई । एक रात मुझे स्वप्न दिखा कि बच्ची की सास जहाँ गिरी थी वहाँ कभी कब्रिस्तान था । यदि तीन गुरुवार बच्ची अपने ही घर की छत पर एक कोने में रेवड़ी का प्रसाद रखे तो शायद ठीक हो जाये । पहले गुरुवार को प्रसाद रखते ही दूसरे दिन उसकी सास कोमा से बाहर आ गई और अगले गुरूवार प्रसाद रखने के बाद वो चलने-फिरने लगी । अब वो पूरी तरह ठीक हैं ।

- एक रिश्तेदार मेरे घर आये व मेरे पास आकर बैठ गये । आलमारी में रखी भाईसाहब की फोटो देखकर बोले कि इस फोटो में से प्रकाश आ रहा है । मैंने कहा आपको मजाक उड़ाने के लिये मैं ही मिला था ? मैंने या घरवालों ने किसी ने भी कभी प्रकाश निकलते नहीं देखा । वे बोले मजाक नहीं उड़ा रहा, बल्कि यह हकीक़त है । यह प्रकाश पहले आपकी तरफ़ जा रहा है व आपके पास से मेरे पास आ रहा है । भाईसाहब की फोटो से निकलते प्रकाश से वे बहुत प्रभावित हुए । एक दिन वे अपनी बेटी को लेकर आये जो न तो पूरा सुन पाती थी न बोल पाती थी । घर वाले परेशान थे की यह कैसे पढेगी और कैसे इसकी शादी होगी ? मैंने उन्हें उसे किसी अच्छे डॉक्टर को दिखाने के लिये कहा और बोला कि इसमें भाईसाहब क्या करेंगे ? इस पर वो बोले कि आप प्रार्थना तो कर दो । मैंने कहा प्रार्थना से क्या होगा, मानना ना मानना भाईसाहब की मर्जी पर है, मैं क्या कर सकता हूँ । लेकिन मेरी प्रार्थना स्वीकार हो गई । आज वो बच्ची खूब बोलती व सुनती है । बाद में उन्होंने बताया वो बच्ची के इलाज पर लाखों रूपये खर्च कर चुके थे ।
- भाईसाहब पिछले दो दिनों से मेरी पुत्रवधू के बारे में पूछ रहे थे, जो मायके गई हुई थी । इसके पीछे जरुर कोई कारण होगा, यह सोच मैं छुट्टी लेकर पुत्रवधू के मायके रींगस पहुँच गया । वहाँ अजब माजरा था । उसके पिताजी उसका इलाज झाड-फूंक वालों से करवा रहे थे । उसे लेकर पहले मैं अपने गाँव गया और डॉक्टर से दवा दिलवाई पर कोई फायदा ना होते देख, मैं उसे गाँव ही छोड़कर भाईसाहब के पास आ गया । उन्होंने फिर पूछा तो मैंने पुत्रवधू की हालत के बारे में बता दिया और यह भी कि मैंने सब गंडे-तावीज आग में फेंक दिए । भाईसाहब ने कहा कि पुत्रवधू को इधर ले आना । मैं गाँव जाकर अगले दिन भाईसाहब के ऑफिस जाने से पहले ही पुत्रवधू को लेकर उनके पास पहुँच गया ।

भाईसाहब ने दो मिनट सामने बैठाया, सिर पर हाथ रखा और कुछ प्रसाद खिलाया और बोले बहु को वापस छोड़ आओ । मैं उसे वापस छोड़ आया, वह अब बिलकुल ठीक थी । अगले दिन मैंने भाईसाहब से हिम्मत कर पूछा तो उन्होंने बताया कि उसके शरीर में दो-दो प्रेतात्माएं घुसी हुई थीं । एक आत्मा जो उनके घर के सामने कुआ है उससे और दूसरी तुम्हारे घर के पास से । बाद में मैंने पुत्रवधू के बुजुर्गों से पता किया तो उन्होंने बताया कि कुए में एक औरत गिरकर मर गई थी ।

- बड़े लड़के की शादी में 700 लोगों के खाने का इंतजाम किया था लेकिन 1300 से ज्यादा आदमी आ गये। पत्तल-दौने भी और मंगाने पड़े। हलवाई घबरा गये कि खाना कम पड़ जायेगा। मैंने खाना शुरु होने से पहले गुरु भगवान की थाली निकाली, दीपक जलाकर गुरु भगवान को भोग लगाया, भोग लगाते समय अश्रुधारा बह निकली कि आप जानो, आपका काम जाने। सब लोग जीम गये और 300 लोगों का खाना बच रहा। बाद में भाईसाहब ने कहा जब तुमने गुरु भगवान पर डाल ही दिया तो गुरु भगवान कैसे पीछे हटते। रिद्धि-सिद्धि अपने आप काम करने लगतीं हैं। यह सब विश्वास पर निर्भर है।
- भाईसाहब मेरे घर गाँव में दो बार गये। अपनी वैन में बैठाकर मुझे ले गये। गाड़ी कीचड़ में फंसकर गन्दी हो गई। वापस आते वक़्त छोटे भाई की दूकान पर जो रास्ते में ही चोमू में थी रुके। उसने गाड़ी सर्विस के लिये सामने ही गैराज में दे दी। इतनी देर भाईसाहब दूकान पर बैठे। दूकान बिलकुल नहीं चलती थी, खर्चा भी नहीं निकलता था। लौटते हुए भाईसाहब ने उसे एक रुपया दिया और बोले-'भगवान सहायजी एक रुपया दिया है, बरक़त तो करेगा ही।' दूकान ऐसी चली की कुछ ही वर्षों में वे करोड़पति हो गया और आज उसके पास दो-दो फक्ट्रियां हैं। एक दिन भाईसाहब ने पूछा कि तुम्हारा वो भाई आता नहीं है। मैंने कहा वो कुछ दिन आया था अब उसके बाद याद भी नहीं करता है। भाईसाहब बोले वह अभी माया में फंस गया है। खैर जो तुम्हारे पास है वो उसके पास नहीं।
- एक बार भाईसाहब से मैंने अपनी वर्षों पुरानी जिज्ञासा को शांत करने के लिये पूछा कि मैं 1969 में आर्मी में हैदराबाद ट्रेनिंग सेण्टर में ट्रेनिंग ले रहा था तब ग्राउंड में मेरे ऊपर एक दस फिट लम्बी-ऊंची दीवार, जिससे मैं चिपक कर बैठा था गिर गई थी। मुझे इतना पता था कि मैं दब गया हूँ लेकिन उसी क्षण किसी शक्ति ने मुझे बाहर फेंक दिया और मुझे खरोंच तक नहीं आई। जहाँ मैं पड़ा था वो दीवार का आखरी छोर था। मुझे किसने बचाया? भाईसाहब ने कहा कि तुम्हें हनुमानजी ने बचाया था और फिर मुझसे पूछा कि तब तुम क्या करते थे। मैंने बताया कि तब मैं हनुमानजी की ही पूजा करता था, उनका व्रत और सुबह शाम पूजा आदि करता था। भाईसाहब ने बताया कि देवता भी मनुष्यों की अप्रत्यक्ष रूप से मदद करते हैं, हमें मालूम भी नहीं चलने देते और गुरु भगवान हमारी साये की तरह मदद करते रहतें हैं।

श्री कृष्ण कुमार गुप्ता के शरीर छोड़ने का आभास भी गुरु भगवान ने पहले ही करा दिया था। उनके छोटे भाई राजेन्द्र के शब्दों में-'बड़े भाईसाहब का स्वास्थ्य कुछ दिनों से ठीक नहीं चल रहा था। लंग्स में इन्फेक्शन के कारण काफ़ी रुग्ण हो गये थे व आपने 16 .06 .05 को शाम 6.30-7 बजे समाधि ले ली। मैं 12.06.05 को थाईलैंड, बैंकाक चला गया था। वहीं सूचना मिली। भाईसाहब की सेहत के बारे में विपिन से ई-मेल पर जानकारी मिल रही थी। 13.06 को वे हॉस्पिटल में एडमिट हुए हैं, अनीता ने बताया था। 14.06.05 को उनकी तबियत स्टेबल व इम्प्रूव हो रही थी। 14.06 को रात में स्वप्न आया जिसमें बाउजी

(महात्मा डॉ. चन्द्र गुप्ताजी) व भाईसाहब दोनों दिखाई दिए । भाईसाहब बाउजी के साथ जयपुर के सेठी कॉलोनी वाले मकान में थे, लेटी हुई अवस्था में । बाउजी की आँखे बहुत प्रेम, करुणा व दया से परिपूर्ण थीं, जैसी कि उनकी एक फोटो में दिखतीं हैं, उससे भी अधिक तेजस्वी । मैं उनकी आँखों में कुछ देर से ज्यादा नहीं देख पाया । ऐसा आभास हुआ कि भाईसाहब अब सतसंग में ज्यादा देर नहीं बैठा करेंगे । इसके बाद बाउजी ने मेरे दांये हाथ की हथेली पर अपनी जीभ छुआई व कहा कि तुम्हें जो चाहिये था मिल गया । थोड़ी देर बाद आँख खुलने पर मैंने अपनी हथेली को उसी जगह से अपनी जीभ से छुआ व बाउजी के आशीर्वाद को पूर्ण रूप से आत्मसात किया ।

16.06.2005 की शाम को फोन द्वारा सुचना मिली की भाईसाहब ने समाधि ले ली है ।'

इस बारे में महात्मा श्री दिनेश कुमार सक्सेना साहब (महात्मा रामचन्द्रजी महाराज के सुपौत्र) ने बताया कि शरीर छोड़ देने के कुछ दिन बाद श्री कृष्ण कुमार गुप्ता उनके पास फतेहगढ़ में एक रात सशरीर हाज़िर हुए और बोले कि फतेहगढ़ उनके लिये तीर्थ जैसा है और वे उनसे मिले बिना नहीं जा सकते थे । महात्मा श्री दिनेश कुमार सक्सेना साहब ने उन्हें दही और शक्कर खिलाई ।

महात्मा श्री कृष्ण कुमार गुप्ता की समाधि भी उनके पिताजी और माताजी की समाधि के साथ सी-47, सेठी कॉलोनी, जयपुर में ही बनी है ।

महात्मा श्री कृष्ण कुमार गुप्ता (भाई साहब), जयपुर
09.07.1943-16.06.2005

महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज